राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
शनिवार 4 अप्रैल, 2026

दैनिक जागरण

अपनी प्रसन्नता का निर्धारक व्यक्ति स्वयं होता है

जन विश्वास विधेयक

लोकसभा के बाद राज्यसभा से भी जन विश्वास संशोधन विधेयक पारित होने से कानून के रूप में उसके अमल का रास्ता साफ हो गया। इसके माध्यम से उस व्यवस्था को विदा देने का जतन किया गया है, जिसमें छोटी-छोटी गलतियों या सामान्य नियम-कानूनों के उल्लंघन पर जेल की सजा का प्रविधान था। अब ऐसा होने पर आर्थिक दंड लगेगा। जन विश्वास विधेयक का मूल उद्देश्य जीवन सुगमता के साथ व्यापार सुगमता को बढ़ावा देना और न्याय व्यवस्था को ज्यादा मानवीय एवं व्यावहारिक बनाना है। इसी कारण प्रधानमंत्री ने इस विधेयक के पारित होने पर यह आशा व्यक्त की कि इसके जरिये भरोसे पर आधारित व्यवस्था का निर्माण होने के साथ आम नागरिक सशक्त बनेंगे। चूंकि इस विधेयक के जरिये 79 केंद्रीय कानूनों के 784 प्रविधानों में संशोधन किए गए हैं और 700 से अधिक छोटे अपराधों को अपराध की श्रेणी से बाहर किया गया है, इसलिए मुकदमों का बोझ हटेगा और न्यायिक तंत्र पर दबाव कम होगा। अब ड्राइविंग लाइसेंस की अवधि खत्म होने पर भी वह 30 दिन तक वैध रहेगा और राष्ट्रीय राजमार्ग पर जाम लगाने पर सजा के स्थान पर जुर्माने का प्रविधान होगा। इसी तरह अन्य अनेक मामलों में ऐसा होगा। इनमें से कई मामले कारोबारियों से भी जुड़े हैं, जैसे पहले ड्रग्स एवं कास्मेटिक नियमों के उल्लंघन पर जेल हो सकती थी, लेकिन अब केवल जुर्माना लगेगा। जो छोटे कारोबारी प्रायः जटिल नियम-कानूनों के अनचाहे उल्लंघन के कारण दंडित होने के दबाव में रहते थे, वे अब भयमुक्त होंगे।

वास्तव में कानून का शासन ऐसा होना चाहिए, जिसमें मामूली गलती या किसी गफलत या अनजाने में की गई भूल सजा का कारण नहीं बननी चाहिए। अब जब जन विश्वास विधेयक से हालात में व्यापक बदलाव की उम्मीद की जा रही है, तब यह आवश्यक हो जाता है कि इस विधेयक के प्रविधानों से आम जनता को अवगत कराया जाए, ताकि वह अधिकतम लाभ उठा सके और शोषण एवं भ्रष्टाचार से भी बच सके। ध्यान रहे आम लोग सशक्त तब होते हैं, जब वे नियम-कानूनों से भली तरह अवगत होते हैं। जनता को बदले हुए नियम-कानूनों से परिचित कराने का काम सरकार को करना चाहिए। इसी के साथ उसे इसे लेकर सावधान रहना होगा कि छोटे अपराधों में जेल भेजने वाले प्रविधानों की जगह चेतावनी देने और जुर्माना लगाने वाली नई व्यवस्था से समाज में ऐसा कोई संदेश न जाए कि नियम-कानूनों के उल्लंघन पर जुर्माना देकर बचा जा सकता है। यदि जुर्माना देकर नियम-कानूनों को हल्के में लेने की प्रवृत्ति बढ़ी तो इस विधेयक का उद्देश्य ही व्यर्थ हो जाएगा। लोगों को यह समझना आवश्यक है कि अधिकारों के साथ कर्तव्यों के पालन से ही कोई राष्ट्र प्रगति पथ पर तेजी से आगे बढ़ता है।

अर्धकुंभ की तैयारियां

हरिद्वार में जनवरी 2027 से शुरू होने वाले अर्धकुंभ की तैयारियां तेज हो गई हैं। श्रद्धालुओं की सुविधा के लिए बड़े पैमाने पर हरित घाट विकसित किए जा रहे हैं और घाटों पर हरित पट्टियां विकसित कर उन्हें पौधों से सजाया-संवारा जा रहा है। आवागमन आसान बनाने के लिए फ्लाईओवर और गंगा समेत अन्य नदियों पर पुलों का निर्माण हो रहा है। हाईवे एवं संपर्क मार्गों के चौड़ीकरण पर भी सरकार का विशेष ध्यान है, ताकि अर्धकुंभ के दौरान किसी तरह की असुविधा न हो। मुख्यमंत्री स्वयं निर्माण कार्यों की मानीटरिंग कर रहे हैं। मुख्य सचिव ने भी सभी निर्माण कार्यों को गुणवत्ता के साथ समय से पूर्ण करने, बुजुर्ग एवं दिव्यांगजनों की सुविधा के लिए घाटों पर रैंप, चेंजिंग रूम, प्रसाधन एवं अन्य जरूरी व्यवस्थाएं सुनिश्चित करने के लिए संबंधित निर्माण एजेंसियों को निर्देश दिए हैं। दरअसल, कुंभ मेलों के दौरान हरिद्वार में करोड़ों की संख्या में श्रद्धालु जुटते हैं, इससे अव्यवस्थाएं होना स्वाभाविक है। सबसे ज्यादा मुश्किलें तो स्थानीय लोगों को झेलनी पड़ती हैं। इन्हीं अनुभवों से सबक लेते हुए इस बार सरकार का ध्यान स्थायी व्यवस्थाएं जुटाने पर है। इसके लिए जगह-जगह बाईपास और भीड़भरे स्थानों में फ्लाईओवर निर्माण पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया है। ताकि भविष्य में भी कुंभ मेला क्षेत्र को इसका लाभ मिल सके। साथ ही यातायात भी सुव्यवस्थित ढंग से संचालित होता रहे। अर्धकुंभ के आयोजन में अभी वक्त है, इसलिए उम्मीद जानी चाहिए कि सभी कार्य समय सीमा के भीतर पूर्ण हो जाएंगे।

अर्धकुंभ के दौरान किसी प्रकार की अव्यवस्था न हो, इसके लिए कुंभ क्षेत्र में सड़कों के चौड़ीकरण पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है

सभ्यतागत प्रगति की प्रतिगामी दिशा

अश्विनी कुमार

जब तक दुनिया युद्ध की अमानवीय प्रकृति से मुक्त नहीं हो जाती, तब तक मानवीय विश्व व्यवस्था की स्थापना कपोल कल्पना ही रहेगी

ईरान युद्ध से दुनिया की परेशानी बढ़ गई है। इसे जल्द समाप्त करने के लिए पर्दे के पीछे भी तमाम प्रयास जारी हैं, पर उनसे किसी समाधान की उम्मीद कम ही है। संघर्ष का दायरा खाड़ी क्षेत्र तक फैल गया है। ईरान ने इस क्षेत्र में मौजूद अमेरिकी सैन्य ठिकानों को भी निशाना बनाया है। ईरान ने होर्मुज जलमार्ग की जिस तरह नाकाबंदी की हुई है, उससे कई अन्य देश भी इस संघर्ष में कूद सकते हैं। कोई भी युद्ध अपने साथ तबाही लेकर ही आता है तो यह लड़ाई भी कोई अपवाद नहीं। इसमें अब तक हजारों जिंदगियां भेंट चढ़ गई हैं। बड़ी-बड़ी मानव बस्तियां मलबे के ढेर में तब्दील हो गई हैं। अमेरिका और इजरायल ने ईरान की परमाणु आकांक्षाओं के दमन और अपनी आत्मरक्षा को आधार बनाकर यह हमला किया। उन्होंने ईरानी जनता के मानवाधिकारों और स्वतंत्रता के लिए सत्ता परिवर्तन की आवश्यकता भी जताई, पर उनकी छेड़ी इस जंग को न के बराबर नैतिक एवं कानूनी समर्थन मिल सका। वास्तविक अर्थों में तो यह युद्ध ऊर्जा संसाधनों पर कब्जे और अपनी ताकत का वर्चस्व स्थापित करने की एक कवायद भर है। यह इस पहलू को भी पुष्ट करता है कि है 1945 के बाद की अंतरराष्ट्रीय कानून व्यवस्था वर्चस्ववादी प्रयोग के समक्ष युद्ध रोकने और शांति बनाए रखने में पूरी तरह असमर्थ है। ट्रंप का वेनेजुएला अभियान और उनके द्वारा छेड़ा गया टैरिफ युद्ध उस वैश्विक कानूनी ढांचे के पतन का ही प्रमाण है, जिसका नेतृत्व संयुक्त राष्ट्र चार्टर और जिनेवा सम्मेलनों एवं अन्य संधियों में संहिताबद्ध कानून करते हैं। ईरान पर हमले की न तो संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद से अनुमति ली गई और न ही अमेरिकी संसद यानी कांग्रेस से अनुमोदन।

ईरानी नेताओं की हत्या और ईरान के भीतर नागरिक ठिकानों पर सैन्य हमलों का दायरा भी कई मौलिक सिद्धांतों का घोर उल्लंघन है। ईरान पर हमले के लिए इजरायल और अमेरिका वहां सत्ता परिवर्तन की जो दलील देते आए हैं, वह भी अंतरराष्ट्रीय कानून के उन बुनियादी सिद्धांतों के खिलाफ हैं, जो राष्ट्रों की क्षेत्रीय अखंडता, संप्रभुता की अक्षुण्णता पर आधारित हैं। इस मामले में अंतरराष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीश हार्डी डिलार्ड ने 1975 में 'पश्चिमी सहारा' मामले में एक अवलोकन प्रस्तुत किया था, जिसका मर्म यह था कि "जनता ही क्षेत्र की नियति तय करती है, न कि क्षेत्र जनता की नियति।' यह टिप्पणी ईरान के मामले में भी सटीक बैठती है। ईरान में सत्ताधीशों के अत्याचार की कतिपय पैमानों पर निंदा संभव है, पर इसके बावजूद किसी संप्रभु राष्ट्र के खिलाफ युद्ध छेड़ने के लिए 'सत्ता परिवर्तन' के संदिग्ध तर्क की वैधता को स्वीकारने का यही अर्थ होगा कि हम संयुक्त राष्ट्र चार्टर का पूरा खाका ही पलट दें।

हाल में यूक्रेन, गाजा, वेनेजुएला और ईरान में चल रहे टकराव के अलावा अमेरिका द्वारा टैरिफ युद्ध छेड़ने जैसी पहल ने हमें शक्ति की वास्तविकता एवं उसके स्वरूप संबंधी दर्शन पर मंथन की दिशा में उन्मुख किया है। इस क्रम में वैश्विक मंच पर विराजमान राजनीतिक नेतृत्व का मानवीय मुश्किलों के प्रति उदासीन रवैया यही संकेत करता है कि सभ्यतागत मोर्चे पर हुई प्रगति की दिशा प्रतिगामी हो चली है। एक ऐसे विश्व को जिसे शक्ति के उपयोग को लेकर स्वयं को और अधिक सभ्य बनाने की आकांक्षा रखनी चाहिए, वहां यह उलट दिशा में जाता दिख रहा है। याद रहे बमबारी से कभी शांति संभव नहीं। इतिहास भी हमें यही सिखाता है कि युद्ध स्वयं समस्या है, समाधान नहीं और किसी भी प्रकार का अन्याय या दमन अपने भीतर ही क्रांति के सूत्र समाहित किए होता है। जब तक दुनिया युद्ध की अमानवीय प्रकृति और विनाशलीला से मुक्त नहीं हो जाती, तब तक मानवीय विश्व व्यवस्था की स्थापना कपोल कल्पना ही रहेगी।

अवधेश राजपूत

प्रधानमंत्री मोदी द्वारा शांति की दिशा में आगे बढ़ने और तनाव घटाने के लिए बार-बार किया गया आह्वान वस्तुतः सशस्त्र संघर्षों के प्रति स्पष्ट अस्वीकृति और विवादों के मध्यस्थतापूर्ण समाधान की तात्कालिकता का ही संकेत देता है। यह राष्ट्रों के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व को बढ़ावा देने और संघर्ष समाधान के माध्यम के रूप में युद्ध से परहेज करने की भारत की नीति के अनुरूप है। इस बारीक दृष्टिकोण का एक आवश्यक पहलू यह होगा कि सत्ता के साम्राज्यवादी प्रयोग के विरुद्ध प्रभावी सुरक्षा कवच के रूप में अपेक्षाकृत कड़ी अंतरराष्ट्रीय कानून व्यवस्था का पालन सुनिश्चित किया जाए। यह उन लोगों की ओर से अंतरराष्ट्रीय कानूनों के निहितार्थों एवं प्रक्रियाओं के प्रति एक बाध्यकारी प्रतिबद्धता पर आधारित हो, जिनके पास वैश्विक न्याय को बनाए रखने की शक्ति है। यह भी सुनिश्चित किया जाए कि यह व्यवस्था अंतरराष्ट्रीय कानून की कसौटी एवं नैतिकता के मानदंडों पर पूरी तरह खरी उतरे। इस महत्वपूर्ण मोड़ पर भारत की भूमिका अपनी प्राचीन दार्शनिक विचारधारा 'वसुधैव कुटुंबकम्' और नेहरूवादी अंतरराष्ट्रीयवाद में निहित अपनी विदेश नीति की सर्वोत्तम परंपराओं के अनुरूप एक शांतिदूत की होनी चाहिए।

युद्ध की परिस्थितियां निरंतर नए मोड़ ले रही हैं। ऐसे में राष्ट्रीय हितों की रक्षा का प्रश्न और भी प्रासंगिक हो जाता है। चूंकि वर्तमान सरकार का यह नैतिक दायित्व है कि इन हितों को सर्वोत्तम रूप से कैसे सुरक्षित किया जाए, इसलिए उसके निर्णय और विवेक का सम्मान किया जाना चाहिए। निःसंदेह लोकतांत्रिक व्यवस्था में विदेश और रक्षा नीतियां भी बहस के दायरे से परे नहीं हैं, लेकिन सार्वजनिक विमर्श में यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि वर्तमान सरकार ही घरेलू लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु राष्ट्रीय शक्ति के कारकों का प्रभावी उपयोग करने में सर्वाधिक सक्षम है। ऐसी स्थिति में नेतृत्व और विदेश नीति प्रतिष्ठान पर दुर्भावना का आरोप लगाना न तो नीति-संगत है और न ही विवेकपूर्ण। स्मरण रहे कि कटुतापूर्ण आरोपों की तुलना में संयमित शैली में व्यक्त की गई असहमति कहीं अधिक प्रभावशाली होती है।

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वरिष्ठ अधि

लैंगिक समानता को बल देने वाली पहल

ऋतु सारस्वत

जल तक आसान पहुंच में सहायक जल जीवन मिशन महिलाओं का सशक्तीकरण भी कर रहा है

गर्मियां शुरू हो चुकी हैं और इसी के साथ जल संकट के दिन आने वाले है। ऐसे ही माहौल में बीते दिनों विश्व जल दिवस मनाया गया। 1993 से संयुक्त राष्ट्र द्वारा मनाया जा रहा यह दिवस जल को जीवन, विकास और मानव अधिकार के रूप में स्थापित करने के वैश्विक प्रयासों का प्रतीक है, किंतु इस औपचारिकता के पीछे एक कठोर सच्चाई आज भी यथावत है। यह सच्चाई केवल आंकड़ों में नहीं, बल्कि रोजमर्रा के जीवन में दिखाई देती है। फिजी के एक तटीय गांव में रहने वाली छह वर्षीय लैसानी घर के पास पानी के टैंक से वर्षा जल एकत्र करती है। वह प्लास्टिक की बोतलों में पानी भरकर घर लाती है, जहां पीने से पहले उसे उबाला जाता है। उसके परिवार के लिए वर्षा जल ही सुरक्षित पानी का मुख्य स्रोत है। इसे उपयोग योग्य बनाए रखना उनके दैनिक जीवन का अनिवार्य हिस्सा है। यह केवल एक परिवार की कहानी नहीं, बल्कि तथ्य बताते हैं कि विश्व में लगभग 1.8 अरब लोगों के घरों में पेयजल उपलब्ध नहीं है। हर तीन में से दो परिवारों में पानी लाने की जिम्मेदारी मुख्यतः महिलाओं और लड़कियों पर होती है। पानी लाने और उसके प्रबंधन में खपने वाला समय अक्सर लड़कियों की शिक्षा में बाधा, स्वास्थ्य जोखिमों में वृद्धि और सीमित अवसरों का कारण बनता है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार वैश्विक स्तर पर महिलाएं और लड़कियां प्रतिदिन लगभग 25 करोड़ घंटे पानी एकत्र करने में व्यतीत करती हैं। यह केवल समय का आंकड़ा नहीं, बल्कि वे असंख्य अवसर हैं, जो शिक्षा, कौशल विकास, मनोरंजन या आय अर्जित करने वाली गतिविधियों में परिवर्तित हो सकते थे। आंकड़े यह भी दर्शाते हैं कि 15 वर्ष से कम आयु की लड़कियों (7 प्रतिशत) के पानी लाने की संभावना समान आयु के लड़कों (4 प्रतिशत) की तुलना में अधिक है। यह लैंगिक असमानता को उजागर करता है।

यूएन वर्ल्ड वाटर डेवलपमेंट रिपोर्ट 2026 यह रेखांकित करती है कि जल संकट केवल संसाधनों की उपलब्धता का प्रश्न नहीं, बल्कि समान अधिकारों और अवसरों से जुड़ा हुआ एक गहरा सामाजिक प्रश्न है। घरों में सुरक्षित पेयजल की उपलब्धता के अभाव का सबसे अधिक भार महिलाओं और लड़कियों पर पड़ता है, जो अधिकांश परिवारों में पानी लाने की प्राथमिक जिम्मेदारी निभाती हैं। जब सुरक्षित जल घर के निकट उपलब्ध होता है, तो लड़कियों के स्कूल में बने रहने की संभावना बढ़ती है और महिलाओं को आर्थिक एवं सामाजिक गतिविधियों में भाग लेने के लिए समय मिलता है। शहरी झुग्गी बस्तियों और ग्रामीण क्षेत्रों में शौचालयों तथा मासिक धर्म स्वच्छता के लिए पर्याप्त जल का अभाव न केवल शारीरिक असुविधा का कारण बनता है, बल्कि महिलाओं और किशोरियों के लिए शर्मिंदगी, असुरक्षा और सामाजिक बहिष्करण की स्थिति भी उत्पन्न करता है। विडंबना यह है कि 50 से कम ही देशों में ऐसी नीतियां हैं, जो ग्रामीण स्वच्छता और जल संसाधन प्रबंधन में महिलाओं की भागीदारी का स्पष्ट उल्लेख करती हैं।

जल की उपलब्धता से जीवन हुआ सुगम। फाइल

जहां वैश्विक स्तर पर नीतिगत असंतुलन अब भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है, वहीं भारत ने इस चुनौती का समाधान खोजने की दिशा में उल्लेखनीय पहल की है। जल जीवन मिशन के माध्यम से भारत ने न केवल जल उपलब्धता के प्रश्न को संबोधित किया है, बल्कि जल प्रबंधन में व्याप्त लैंगिक असमानता को भी दूर करने का प्रयास किया है। 2019 में प्रारंभ जल जीवन मिशन, जिसे 'हर घर जल' के रूप में भी जाना जाता है, ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार तक नल से स्वच्छ जल पहुंचाने का एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम है। इसे दिसंबर 2028 तक बढ़ा दिया गया है। मार्च 2026 तक इस मिशन के अंतर्गत लगभग 15.82 करोड़ ग्रामीण परिवारों को उनके घरों में पाइप जल कनेक्शन उपलब्ध कराया जा चुका है, जो कुल ग्रामीण परिवारों का लगभग 81 प्रतिशत से अधिक है। इस तरह जल जीवन मिशन ने लैंगिक समानता की दिशा में एक अभूतपूर्व और अनुकरणीय कार्य किया है।

घर या घर के निकट जल उपलब्ध होने से महिलाओं का समय शिक्षा, आजीविका और अन्य उत्पादक गतिविधियों में लगता है। भारतीय स्टेट बैंक की रिपोर्ट के अनुसार, 'जल जीवन मिशन के परिणामस्वरूप लगभग नौ करोड़ महिलाओं को पानी लाने के दैनिक श्रम से मुक्ति मिली है। यह केवल श्रम में कमी नहीं, बल्कि उनके समय और ऊर्जा के पुनर्संयोजन का संकेत है। महिलाओं की कृषि एवं अन्य उत्पादक गतिविधियों में भागीदारी में वृद्धि दर्ज की गई है, जो यह स्पष्ट करती है कि जल तक आसान पहुंच सीधे तौर पर महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण से जुड़ती है। इस मिशन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इसका लैंगिक दृष्टिकोण है। ग्राम जल एवं स्वच्छता समितियों में 50 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी को अनिवार्य कर सरकार ने महिलाओं को केवल जल उपयोगकर्ता नहीं, बल्कि जल प्रबंधन की निर्णयकर्ता के रूप में स्थापित किया है। जल समाधान में महिलाओं की भागीदारी और नेतृत्व को केंद्र में रखा जाना आवश्यक है, ताकि वे केवल उपयोगकर्ता नहीं, बल्कि जल प्रबंधन और नीति निर्माण की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भागीदार बन सकें। भारत ने जल जीवन मिशन के माध्यम से इस विचार को व्यवहार में रूपांतरित करते हुए एक उदाहरण प्रस्तुत किया है, परंतु यह केवल आरंभ है और इस क्षेत्र में अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है।

ऊर्जा

आत्मज्ञान

समय के आधुनिकता की ओर गतिमान होने के साथ ज्ञान की परिभाषा संकीर्ण होती जा रही है। आज विभिन्न विधाओं और शास्त्रों की शाब्दिक व्याख्या या जानकारी को ही ज्ञान के रूप में परिभाषित किया जाने लगा है, जबकि आत्मज्ञान ही सभी प्रकार के ज्ञान का मूल है। आत्मबोध का अर्थ है स्वयं की अनंत क्षमताओं, दोषों और मूल स्वभाव को जानना। जब तक हम स्वयं को नहीं जानते हैं, तब तक सारा ज्ञान अधूरा है।

अज्ञानतावश मनुष्य स्वयं को केवल हाड़-मांस का शरीर या समाज द्वारा दी गई पद-प्रतिष्ठा पर आसीन व्यक्ति ही मान बैठता है। यही संकुचित दृष्टि अहंकार और दुखों का मूल कारण बनती है। अनुभव के आधार पर कहा गया है कि आत्मज्ञान के बिना शांति संभव नहीं है। जिस प्रकार कस्तूरी मृग अपनी ही नाभि से आने वाली सुगंध को बाहर के जंगलों में खोजता फिरता है, वैसे ही आनंद का स्रोत हमारे भीतर है, जिसे हम भौतिक वस्तुओं में तलाश रहे हैं। संत कबीरदास जी का दर्शन 'बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय। जो दिल खोजा आपना, मुझसे बुरा न कोय।' आत्मज्ञान की पहली सीढ़ी है। जब हम अपनी कमियों को पहचानकर उन्हें स्वीकार करते हैं, तभी आत्मिक रूपांतरण की प्रक्रिया आरंभ होती है। स्वयं का बोध होते ही परायापन समाप्त हो जाता है और व्यक्ति समस्त सृष्टि के साथ एकात्म भाव अनुभव करने लगता है। आत्मज्ञान कोई चमत्कार नहीं है, बल्कि निरंतर आत्मनिरीक्षण का परिणाम है। दैनिक जीवन के कोलाहल में मौन के कुछ क्षण निकालकर जब हम अंतर्मुखी होते हैं, तब बुद्धि स्थिर होती है और विवेक जागृत होता है। यही विवेक हमें जीवन के द्वंद्वों से ऊपर उठाकर परम आनंद की ओर ले जाता है। जिसे स्वयं का बोध हो जाता है, उसके लिए पूरा संसार ही ईश्वर का रूप बन जाता है और उसका जीवन दूसरों का मार्ग प्रशस्त करने लगता है।

लवली आनंद

एआइ में प्रशिक्षित मानव संसाधन बढ़ाने का समय

सुनीता मिश्रा

एआइ के कारण 40 लाख नई नौकरियां आ सकती हैं। ऐसे में आवश्यक है कि एआइ को स्कूलों, कालेजों के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाए

हाल में अमेरिका की प्रमुख टेक्नोलाजी कंपनी ओरेकल ने लगभग 30 हजार कर्मचारियों को नौकरी से निकालने का निर्णय लिया, जिसमें भारत के करीब 12 हजार कर्मचारी भी शामिल हैं। यह पहली बार नहीं है जब टेक कंपनियों ने लागत कम करने और तकनीकी कौशल बढ़ाने के नाम पर बड़े पैमाने पर कर्मचारियों की छंटनी की हो। इससे पहले गूगल, माइक्रोसाफ्ट, मेटा, वोडाफोन और अमेजन जैसी कंपनियों ने भी लाखों कर्मचारियों को नौकरी से निकाला है। छंटनी ट्रैकिंग साइट लेआफ डाट एफवाइआइ के आंकड़ों के अनुसार, वर्ष 2023 में 696 टेक कंपनियों ने लगभग 1.98 लाख कर्मचारियों को नौकरी से निकाला, जबकि 2022 में 1,056 कंपनियों ने 1.64 लाख से अधिक कर्मचारियों की छंटनी की थी। ये आंकड़े स्पष्ट संकेत देते हैं कि तकनीक के विस्तार और एआइ के बढ़ते उपयोग के कारण नौकरियों का स्वरूप बदल रहा है। नीति आयोग के अनुसार, वर्ष 2031 तक देश में लगभग 15 लाख नौकरियां खत्म होंगी, वहीं एआइ के कारण 40 लाख नई नौकरियां आ सकती हैं। ऐसे में आवश्यक है कि एआइ को स्कूलों, कालेजों और इंजीनियरिंग संस्थानों के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाए।

अब स्कूलों में बच्चों को गणित, भाषा के साथ-साथ प्रारंभिक स्तर पर एआइ और कंप्यूटेशनल थिंकिंग जैसे विषयों का ज्ञान दिया जाए। यह कदम छात्रों को भविष्य की जरूरतों के अनुरूप तैयार करने में सहायक होगा। यदि बच्चों को शुरुआती स्तर पर तकनीकी समझ दी जाए, तो वे बदलते जाब मार्केट में बेहतर तरीके से खुद को ढाल सकेंगे। हालांकि, इस पहल के सफल क्रियान्वयन के लिए डिजिटल असमानता को दूर करना आवश्यक है। देश के कई हिस्सों में अभी भी इंटरनेट और तकनीकी संसाधनों की कमी है। ऐसे में केवल नीति बनाना पर्याप्त नहीं, बल्कि उसे प्रभावी ढंग से लागू करना भी उतना ही जरूरी है। कंपनियां लगातार एआइ और आटोमेशन पर जोर दे रही हैं, जिससे मशीनें अधिकतर कार्य करने लगी हैं।

भविष्य की अर्थव्यवस्था स्किल-आधारित होगी, जहां केवल डिग्री नहीं, बल्कि आधुनिक तकनीकी कौशल ही रोजगार का आधार बनेगा। सरकार द्वारा शिक्षा प्रणाली में एआइ और कंप्यूटेशनल स्किल्स को शामिल करने की पहल एक सकारात्मक कदम है, परंतु इस परिप्रेक्ष्य में सबसे बड़ी चुनौती स्किल गैप की है। यदि कर्मचारी समय के साथ नई तकनीकों को नहीं अपनाते, तो उनके लिए रोजगार के अवसर सीमित होते जाएंगे। कंपनियों और शैक्षणिक संस्थानों को मिलकर री-स्किलिंग और अप-स्किलिंग पर विशेष ध्यान देना होगा, अन्यथा बड़ी संख्या में लोग रोजगार से वंचित हो सकते हैं।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

बंगाल में अराजकता का बोलबाला

'अराजकता से घिरा बंगाल' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय में यह टिप्पणी उचित ही है कि ममता शासन में कई पुलिस एवं प्रशासनिक अधिकारी तृणमूल कांग्रेस के एजेंट के तौर पर काम कर रहे हैं। मालदा जिले में जिस प्रकार न्यायिक अधिकारियों को रात तक बंधक बनाकर रखा गया, ऐसे में अगर सर्वोच्च न्यायालय इस घटना का संज्ञान न लेता तो अधिकारियों के साथ कोई अनहोनी भी हो सकती थी। यह भी देखना होगा कि मालदा में तैनात पुलिस और प्रशासनिक अधिकारी ममता सरकार द्वारा नियुक्त थे या चुनाव की घोषणा के बाद चुनाव आयोग द्वारा बदले गए थे? पिछले विधानसभा चुनाव परिणाम के बाद जिस प्रकार हिंसक घटनाओं को अंजाम दिया गया था और हजारों नागरिकों को अपनी जान बचाने के लिए दूसरे राज्यों में भागना पड़ा था, उससे भी केंद्रीय गृह मंत्रालय सरकार ने कोई सबक नहीं लिया। हाई कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट द्वारा हिंसक मामलों में कार्रवाई न करने को लेकर बार-बार ममता सरकार को फटकार लगाने से कुछ नहीं होने वाला। कार्रवाई उस जिले में तैनात पुलिस एवं प्रशासनिक अधिकारियों के विरुद्ध होनी चाहिए। जब न्यायिक अधिकारियों को इस प्रकार डराया जा सकता है तो आम जनता और मतदाता का क्या हाल होगा? इसे देखते हुए बंगाल को अराजकता से बचाना और भी आवश्यक हो गया है।

अतिवीर जैन 'पराग', मेरठ कैंट

पहचान तय करने का आधार

'जरूरी था ट्रांसजेंडर कानून में बदलाव' शीर्षक से

मेलबाक्स

प्रकाशित विकास सारस्वत के आलेख से मैं सहमत नहीं हूं। लेखक द्वारा प्रस्तुत किया यह तर्क संवैधानिक मूल्यों-विशेष रूप से व्यक्तिगत स्वायत्तता, गरिमा और स्वयं की पहचान के अधिकार को पर्याप्त गंभीरता से नहीं समझता। किसी भी व्यक्ति की पहचान उसके अपने अनुभव, आत्मबोध और जीवन के अधिकार से जुड़ी होती है, जिसे बाहरी संस्थाओं या प्रक्रियाओं के माध्यम से सीमित करना न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता। साथ ही यह स्पष्ट रूप से समझना आवश्यक है कि सेक्स (जैविक लिंग) और जेंडर (सामाजिक एवं व्यक्तिगत पहचान) दो अलग-अलग अवधारणाएं हैं। सेक्स मुख्यतः जैविक विशेषताओं से जुड़ा होता है, जबकि जेंडर व्यक्ति की आत्म-परिभाषा, सामाजिक भूमिका और पहचान से संबंधित है। इन दोनों को एक जैसा मान लेना न केवल वैज्ञानिक रूप से गलत है, बल्कि इससे व्यक्तियों के अधिकारों और अनुभवों की अनदेखी भी होती है। आलेख में जिस प्रकार से पहचान को नियंत्रित या प्रमाणित करने की बात कही गई है, वह व्यक्तियों की स्वतंत्रता और गरिमा को सीमित करने वाला दृष्टिकोण प्रतीत होता है। इस तरह के विचार अनजाने में भेदभाव और बहिष्करण को बढ़ावा दे सकते हैं, जबकि हमारा उद्देश्य एक समावेशी और न्यायपूर्ण समाज का निर्माण होना चाहिए। ऐसे महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा करते समय आवश्यक है कि हम संवेदनशीलता, तथ्यों, वैज्ञानिक समझ और संवैधानिक मूल्यों के आधार पर बात करें। एक अधिकार-आधारित और मानवीय दृष्टिकोण ही हमें अधिक न्यायपूर्ण और समावेशी दिशा में आगे ले जा सकता है।

यादवेंद्र, लखनऊ

परस्पर सहयोग आवश्यक

आज के वैश्विक दौर में कोई भी देश पूरी तरह आत्मनिर्भर नहीं रह सकता, इसलिए आपसी सहयोग अत्यंत आवश्यक है। भारत को खाड़ी देशों से ऊर्जा संसाधन जैसे तेल और गैस प्राप्त होते हैं, जो हमारे औद्योगिक विकास और दैनिक जीवन के लिए अनिवार्य हैं। वहीं खाड़ी देशों की अर्थव्यवस्था में भारतीय श्रमिकों और पेशेवरों का महत्वपूर्ण योगदान है। इसके अलावा भारत और खाड़ी देशों के बीच व्यापार, निवेश और सांस्कृतिक संबंध भी लगातार मजबूत हो रहे हैं। भारतीय समुदाय वहां न केवल आर्थिक गतिविधियों में योगदान देता है, बल्कि दोनों क्षेत्रों के बीच सांस्कृतिक सेतु का कार्य भी करता है। इस प्रकार यह संबंध केवल आर्थिक नहीं बल्कि सामाजिक और मानवीय स्तर पर भी महत्वपूर्ण है।

सुशील कुमार बत्तरा, मेरठ

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल:

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा-201309 से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: , R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

आजकल

'नाविक' संकट से मिला सबक

नेविगेशन सेटेलाइट प्रणाली के बिना आज कोई भी देश अपनी सामरिक और आर्थिक गतिविधियों की कल्पना नहीं कर सकता। आधुनिक इलेक्ट्रानिक उपकरणों, सड़क पर चलते वाहनों, आकाश में उड़ते विमानों और मिसाइलों के मार्ग निर्धारण में इसका उपयोग निर्णायक सिद्ध हो रहा है। रूस-यूक्रेन युद्ध और पश्चिम एशिया में जारी संघर्ष ने इस तथ्य को और स्पष्ट किया है। ऐसे में भारत की नाविक प्रणाली की कार्यक्षमता में कमी आने की खबर रणनीतिक दृष्टि से चिंता का विषय है

अभिषेक कुमार सिंह
संस्था टेली परफार्मेंसेज से संबद्ध

भारत के स्वदेशी नेविगेशन सेटेलाइट सिस्टम नाविक के एक महत्वपूर्ण उपग्रह आइआरएनएसएस-1एफ की परमाणु घड़ी में आई खराबी। प्रतीकात्मक

भारत की नाविक (नेविगेशन विद इंडियन कांस्टीलेशन) प्रणाली की कार्यक्षमता में कमी आने की खबर रणनीतिक दृष्टि से चिंता का विषय है। इसके अनुसार भारत के स्वदेशी नेविगेशन सेटेलाइट सिस्टम नाविक के एक महत्वपूर्ण उपग्रह आइआरएनएसएस-1एफ की परमाणु घड़ी (एटामिक क्लाक) में खराबी आ गई है। आइआरएनएसएस-1एफ उन प्रमुख नेविगेशन उपग्रहों में से एक है, जो मिलकर एक प्रभावी नेविगेशन प्रणाली का निर्माण करते हैं। परमाणु घड़ी में खराबी के कारण आइआरएनएसएस-1एफ की नेविगेशन संबंधी उपयोगिता लगभग समाप्त हो गई है। परिणामस्वरूप प्रभावी रूप से काम कर रहे उपग्रहों की संख्या घटकर तीन रह गई है। वर्तमान में जो उपग्रह सुचारु रूप से कार्य कर रहे हैं, उनमें आइआरएनएसएस-1बी शामिल है, जिसे लगभग 10 वर्षों के निर्धारित जीवनकाल के साथ प्रक्षेपित किया गया था और यह अवधि पूरी होने के बाद भी कार्यरत है। आइआरएनएसएस-1एल तथा अपेक्षाकृत नया एनवीएस-01 भी संचालन में हैं। सामान्यतः एक पूर्ण कार्यशील नेविगेशन प्रणाली के लिए न्यूनतम 7 से 9 सक्रिय उपग्रहों की आवश्यकता होती है। नाविक प्रणाली को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से 2025 में एनवीएस-02 का प्रक्षेपण किया गया था, किंतु इसमें तकनीकी खराबी आ जाने और उपग्रह के अपेक्षित कक्षा में स्थापित न हो पाने के कारण इसकी उपयोगिता सीमित हो गई। इससे जीपीएस के संभावित स्वदेशी विकल्प के रूप में नाविक की क्षमता को झटका लगा है।

मोबाइल से मिसाइल तकः एक सशक्त स्वदेशी नेविगेशन प्रणाली भारत जैसे देश के लिए कोई विलासिता नहीं, बल्कि आर्थिक मजबूती, सैन्य निरोधक क्षमता, आपदा प्रबंधन और तकनीकी आत्मनिर्भरता की आधारशिला है। समय और स्थान संबंधी सटीक जानकारी पर नियंत्रण अब राष्ट्रीय संप्रभुता से सीधे जुड़ा हुआ है। ऐसे में नाविक की कमियों को दूर करना और प्रणाली को शीघ्र सुदृढ़ करना आवश्यक है। महानगरों में एप-आधारित सेवाएं-जैसे टैक्सी या लाजिस्टिक्स इन प्रणालियों पर निर्भर हैं, बल्कि आधुनिक युद्धक क्षमताएं भी इन्हीं पर आधारित हैं। सटीक नेविगेशन के बिना आधुनिक हथियार प्रणालियां भी प्रभावी नहीं रह जातीं। मिसाइल प्रक्षेपण में नैनोसेकेंड, नैनोमीटर स्तर की सूक्ष्म त्रुटियां भी लक्ष्य से सैकड़ों मीटर की दूरी तक विचलन उत्पन्न कर सकती हैं।

वर्तमान में वैश्विक स्तर पर जिन नेविगेशन प्रणालियों का व्यापक उपयोग हो रहा है, उनमें जीपीएस (अमेरिका) का निर्विवाद प्रभुत्व है। इसके अतिरिक्त ग्लोनास (रूस), गैलिलियो (यूरोप) और बाइडू (चीन) भी प्रभावी वैश्विक नेविगेशन सेटेलाइट सिस्टम के रूप में कार्यरत हैं। इन प्रणालियों से जुड़े उपग्रह पृथ्वी की सतह से लगभग 19,000 से 23,000 किलोमीटर की ऊंचाई पर मध्यम कक्षा में स्थापित होते हैं और परमाणु घड़ियों के माध्यम से अत्यंत सटीक समय तथा स्थान संबंधी संकेत प्रसारित करते हैं। नेविगेशन सेटेलाइट प्रणालियों के सैन्य उपयोग अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। ड्रोन स्वार्म, क्रूज मिसाइलें और तोपखाने की फायर करेक्शन जैसी प्रणालियां ग्लोबल नेविगेशन सेटेलाइट सिस्टम पर निर्भर करती हैं। प्रेसिजन गाइडेड म्यूनिशन, जिन्हें 'स्मार्ट बम' भी कहा जाता है, जीपीएस, लेजर, इन्फ्रारेड या रडार सेंसर की सहायता से अपने मार्ग को संशोधित कर अत्यधिक सटीकता के साथ लक्ष्य को भेदते हैं। ये पारंपरिक 'डंब बम' की तुलना में आसपास के क्षेत्रों को कम क्षति (कोलेट्रल डैमेज) पहुंचाते हैं। यदि नेविगेशन संकेत उपलब्ध न हों, तो इन आधुनिक हथियार प्रणालियों की प्रभावशीलता गंभीर रूप से प्रभावित हो सकती है। अमेरिकी जीपीएस के विकल्प के रूप में स्वदेशी नेविगेशन प्रणाली की आवश्यकता को रूस और चीन ने दशकों पहले ही समझ लिया था। भारत का नाविक भी इसी रणनीतिक सोच और तकनीकी आत्मनिर्भरता की भावना से विकसित किया गया है।

विदेशी प्रणाली पर घातक निर्भरताः भारत की भौगोलिक स्थिति और भू-राजनीतिक परिस्थितियां नेविगेशन प्रणाली के संदर्भ में विदेशी निर्भरता को एक गंभीर चुनौती के रूप में प्रस्तुत करती हैं। चीन के साथ लगभग 3,488 किलोमीटर और पाकिस्तान के साथ लगभग 3,323 किलोमीटर लंबी सीमाएं संवेदनशील और विवादित क्षेत्रों से जुड़ी हैं। ये दोनों देश उन्नत नेविगेशन क्षमताओं-जैसे जीएनएसएस जैमिंग से लैस हैं। ऐसी परिस्थितियों में भारत की नाविक प्रणाली का क्षेत्रीय फोकस अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है। इसका उद्देश्य 7 से 9 सक्रिय उपग्रहों के नेटवर्क के माध्यम से भारत और उसके आसपास लगभग 1,500 किलोमीटर के दायरे में सटीक और विश्वसनीय कवरेज प्रदान करना है। यद्यपि वैश्विक नेविगेशन प्रणालियां जैसे जीपीएस भारत में उपयोगी हैं, किंतु वे भारतीय आवश्यकताओं और भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप पूरी तरह अनुकूलित नहीं हैं। इसके विपरीत नाविक प्रणाली को भारतीय मानसून तथा उष्णकटिबंधीय आयनोस्फीयर के प्रभावों को ध्यान में रखते हुए विशेष रूप से अनुकूलित किया जा सकता है, जिससे इसकी सटीकता और उपयोगिता बढ़ती है। यह भी उल्लेखनीय है कि नाविक का उपयोग केवल सैन्य क्षेत्र तक सीमित नहीं है। अपेक्षाकृत सीमित संसाधनों के बावजूद यह प्रणाली कई नागरिक क्षेत्रों में प्रभावी योगदान दे रही है। उदाहरण के लिए भारतीय रेल के 8,700 से अधिक इंजनों में नाविक के माध्यम से रीयल-टाइम ट्रैकिंग की जा रही है, जिसे बढ़ाकर लगभग 12,000 इंजनों तक ले जाने का लक्ष्य है। इससे सिग्नलिंग प्रणाली में सुधार, एंटी-कोलिजन तंत्र की मजबूती और आपदा प्रतिक्रिया क्षमता को बेहतर बनाने में सहायता मिल रही है। इसके अतिरिक्त गुजरात, केरल और तमिलनाडु के तटीय क्षेत्रों में मछुआरे नाविक-सक्षम अनुप्रयोगों के माध्यम से सुरक्षित समुद्री नेविगेशन तथा चक्रवात संबंधी चेतावनियां प्राप्त कर रहे हैं। कृषि क्षेत्र में भी इसका महत्व बढ़ रहा है। उर्वरक के सटीक उपयोग, मिट्टी के मानचित्रण और उपज अनुकूलन में स्वदेशी नेविगेशन प्रणाली अधिक प्रभावी सिद्ध हो सकती है, क्योंकि विदेशी प्रणालियां भारतीय परिस्थितियों में हमेशा सेंटीमीटर स्तर की सटीकता उपलब्ध नहीं करा पातीं। आपदा प्रबंधन, समुद्री सुरक्षा और वाहन ट्रैकिंग जैसे क्षेत्रों में भी स्वदेशी नेविगेशन प्रणालियां अधिक विश्वसनीय और उपयोगी साबित हो रही हैं।

स्वदेशी नेविगेशन प्रणाली का आर्थिक पक्ष भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। हर बार जब कोई भारतीय स्मार्टफोन, ट्रैक्टर या ड्रोन जीपीएस का उपयोग करता है, तो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विदेशी सेवा प्रदाताओं और चिप निर्माताओं पर निर्भरता बनी रहती है। इसके विपरीत नाविक के व्यापक उपयोग से इस निर्भरता को कम किया जा सकता है। कई आधुनिक स्मार्टफोन केवल साफ्टवेयर अपडेट के माध्यम से नाविक संकेतों को ग्रहण करने में सक्षम हो सकते हैं। हालांकि कुछ मामलों में उपयुक्त हार्डवेयर समर्थन भी आवश्यक होता है। इससे देश में नाविक-सक्षम उपकरणों का एक मजबूत घरेलू इकोसिस्टम विकसित हो सकता है, जो इलेक्ट्रानिक्स विनिर्माण, स्टार्टअप नवाचार और सेवा क्षेत्र को भी प्रोत्साहित करेगा। 'आत्मनिर्भर भारत' की परिकल्पना तभी साकार हो सकेगी, जब नाविक जैसी स्वदेशी डिजिटल अवसंरचनाएं हमारे दैनिक जीवन और औद्योगिक तंत्र के प्रत्येक स्तर पर अपनी भूमिका निभाएं। इससे विदेशी प्रणालियों पर हमारी अनिवार्य निर्भरता कम होगी और तकनीकी संप्रभुता को मजबूती मिलेगी।

'नाविक' के लिए तेज हो उपग्रह प्रक्षेपण की गति

नाविक को जीपीएस के समकक्ष क्षमता प्रदान करने हेतु संबंधित उपग्रहों के प्रक्षेपण की गति को तेज किया जाना चाहिए। इसी संदर्भ में नाविक नेटवर्क को पूर्ण करने के लिए एनवीएस-03 और एनवीएस-04 के प्रक्षेपण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। भारतीय महासागर क्षेत्र में चीन की बढ़ती नौसैनिक गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए अतिरिक्त उपग्रह तैनात करने की आवश्यकता है। साथ ही स्वदेशी एटामिक क्लाक और एंटी-जैमिंग तकनीकों में बड़े पैमाने पर निवेश अनिवार्य है। जमीनी स्तर पर सटीकता बढ़ाने के लिए डब्ल्यूएएएस और ईजीएनओएस जैसी ग्राउंड-बेस्ड आगमेंटेशन प्रणालियों के भारतीय संस्करण का विकास भी प्राथमिकता में होना चाहिए, जिससे विमानन और सर्वेक्षण में सेंटीमीटर स्तर की सटीकता प्राप्त की जा सके।

नाविक को राष्ट्रीय अवसंरचना के प्रत्येक महत्वपूर्ण क्षेत्र में एकीकृत करना चाहिए। उदाहरण के लिए, सरकार ने कुछ सार्वजनिक खरीद प्रक्रियाओं में नाविक को अनिवार्य किया है, किंतु इसे भारत में निर्मित स्मार्टफोन (पीएलआइ योजना), ड्रोन नियम 2021 तथा संपूर्ण लाजिस्टिक्स और परिवहन क्षेत्र तक विस्तारित करने की आवश्यकता है। संप्रभुता से समझौता किए बिना अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना भी आवश्यक है। नाविक पहले से ही भूटान, नेपाल और मालदीव जैसे पड़ोसी देशों को संकेत उपलब्ध करा रहा है। इसके अतिरिक्त क्वाड जैसे मंचों पर साझेदारी के माध्यम से भारतीय नियंत्रण को बनाए रखते हुए संकेतों के आदान-प्रदान की व्यवस्था विकसित की जा सकती है। इस संदर्भ में क्यूजेडएसएस (जापान) का उदाहरण उल्लेखनीय है, जो जीपीएस के साथ समन्वय स्थापित करता है।

अंततः सबसे महत्वपूर्ण पहलू जन-जागरूकता का है। अधिकांश भारतीय दैनिक जीवन में जीपीएस का उपयोग करते हैं, किंतु इसके रणनीतिक आयामों को समझ नहीं पाते। यदि भारत को वैश्विक कूटनीति और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में समानता के स्तर पर स्थापित होना है, तो स्वदेशी नाविक प्रणाली को सशक्त, विश्वसनीय और व्यापक बनाना अनिवार्य है।

-अभिषेक कुमार सिंह

खरी-खरी

कागज काले करने की लत

राजेंद्र बज

कभी जमाना था जब लोग कागज काले करने से डरते थे-कहीं मास्टरजी पकड़ न लें! और आज का दौर देखिए, लोग खुद ही कागज, मोबाइल स्क्रीन और टाइमलाइन-सब कुछ काला करने पर तुले हैं। एक बार यह कागज काले करने की लत लग जाए, तो फिर आदमी लेखक कम और पोस्टकार ज्यादा बन जाता है। हमारे पड़ोस के श्रीमान विचारानंद इसी लत के शिकार हैं। पहले वे डायरी में लिखा करते थे-चुपचाप, संकोच से। अब फेसबुक, वाट्सएप, इंस्टाग्राम-हर जगह उनकी विचारधारा ऐसे बहती है जैसे नल खुला छोड़ दिया हो। फर्क बस इतना है कि पानी की किल्लत है, पर विचारों की नहीं!

सुबह उठते ही लोग भगवान का नाम लेते हैं और ये महाशय लेते हैं-आज क्या पोस्ट करूं? विषय कुछ भी हो सकता है-देश की राजनीति से लेकर पड़ोसन के पराठों तक। इंटरनेट मीडिया ने इन्हें ऐसा भ्रम दे दिया है कि हर वाह में साहित्य अकादमी की खुशबू आती है। पांच लाइक आते ही आत्मा में कबीर उतर आते हैं और दस कमेंट मिलते ही खुद को प्रेमचंद का वंशज समझने लगते हैं। पहले लोग अखबार में छपने के लिए वर्षों मेहनत करते थे। अब तो हाल यह है कि इधर लिखा, उधर छापा और खुद ही पढ़कर वाह-वाह कर ली। कभी-कभी लगता है लेखक, पाठक, समीक्षक, तीनों एक ही व्यक्ति हैं!

सबसे मजेदार तो तब होता है जब कोई पुरानी पोस्ट मेमोरी बनकर लौटती है। महाशय उसे ऐसे साझा करते हैं जैसे कोई ऐतिहासिक दस्तावेज हो-आज से पांच साल पहले मैंने यह लिखा था। पढ़ने वाला सोचता है-तभी से क्यों नहीं रुके? कभी-कभी लाइक कम मिलें तो आत्मा में वैराग्य जाग जाता है-अब मैं इंटरनेट मीडिया छोड़ रहा हूं। और पांच मिनट बाद-दोस्तों, यह मेरी आखिरी पोस्ट है। फिर दस मिनट बाद-सच में आखिरी। असल में कागज काले करने की यह लत बड़ी लोकतांत्रिक है। हर किसी को लेखक बना देती है। फर्क बस इतना है कि पहले लिखने के बाद लोग सोचते थे, अब सोचने से पहले ही लिख देते हैं।

पोस्ट

क्षमा चाहूंगा, लेकिन यह कहना ही पड़ेगा कि अमेरिका का राष्ट्रपति बनना तो छोड़िए डोनाल्ड ट्रंप किसी हाउसिंग सोसायटी के मुखिया बनने के लायक भी नहीं हैं।
श्रीमय तालुकदार@sreemoytalukdar

अगर आप किसी युद्ध के बीच ही अपने सेनाप्रमुख हो हटाने की दिशा में तत्पर दिखें तो इससे एक बात यही सिद्ध होती है कि आप ये लड़ाई कभी नहीं जीतने वाले।
केजेएस ढिल्लों@TinyDhillon

निश्चित होकर कुछ कहा नहीं कहा जा सकता कि रिषभ पंत ओपनिंग में कितने कारगर होंगे। मेरे हिसाब से लखनऊ सुपर जायंट्स का सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाजी क्रम यही होगा कि मार्श-मार्करैम की ओपनिंग के बाद पूरन, पंत और बडोनी बल्लेबाजी के लिए उतरें। निखिल नाज@NikhilNaz

प्रशांत भूषण, आशुतोष, किरण बेदी, कुमार विश्वास, शाजिया इल्मी, योगेंद्र यादव, कैलाश गहलोत, अलका लांबा और स्वाति मालीवाल जैसे नेताओं-कार्यकर्ताओं वाली सूची में जल्द ही राघव चड्ढा का नाम भी शामिल होने वाला है।
तुषार गुप्ता@Tushar15

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या बंगाल सरकार को सुप्रीम कोर्ट की फटकार के बाद राज्य सरकार का रवैया कुछ सुधरेगा?

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या जन विश्वास विधेयक के कानून का रूप लेने से मुकदमों का बोझ घटाने में मदद मिलेगी?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

चड्ढा जी को जोर से लगा केजरी डंक,
काट दिये हैं 'बास' ने उनके बढ़ते पंख।
उनके बढ़ते पंख यहां जो भी है बढ़ता,
उसे 'आप' नेतृत्व देख करके है कुढ़ता।
होता है वह पास करे जो 'हां जी-हां जी',
इस गुण में ही चूक गए राघव चड्ढा जी!
- ओमप्रकाश तिवारी

बिहार डायरी

भाजपा की अगुआई वाली सरकार की प्रतीक्षा

अरुण अशेष
राज्य ब्यूरो प्रमुख, बिहार

इस संभावना के बाद भी कि मुख्यमंत्री नीतीश कुमार कुछ भी निर्णय ले सकते हैं, राज्य के लोगों ने मान लिया है कि जल्द ही नए मुख्यमंत्री का शपथ ग्रहण होगा। एक प्रश्न अगली सरकार के नेतृत्व को लेकर है। इसके बारे में भी बहुमत की राय यही है कि सरकार का नेतृत्व भाजपा ही करेगी। हां, इससे जुड़े अगले प्रश्न का उत्तर नहीं मिल रहा है कि मुख्यमंत्री की कुर्सी पर कौन आसीन होंगे? चेहरा कोई भी हो, विवाद की आशंका इसलिए नहीं है कि भाजपा का केंद्रीय नेतृत्व जिस किसी के सिर पर हाथ रख देता है, बाकी लोग उसे मान लेते हैं। सत्ता के शांतिपूर्ण हस्तांतरण में कुछ विभागों और पदों की अदला-बदली पर संदेह व्यक्त किया जा रहा है। पद विधानसभा अध्यक्ष का है। विभाग गृह है। इनके अलावा भी कुछ विभाग हैं, जिनके बारे में चर्चा है कि जदयू इन्हें अपने पास रखना चाहेगी। पृष्ठभूमि को देखें तो भाजपा विधानसभा अध्यक्ष का पद या गृह विभाग देने में आनाकानी नहीं करेगी। क्योंकि उसे पता है कि कुल मिलाकर असली शक्ति मुख्यमंत्री में निहित होती है। विभाग कोई भी हो, बड़े निर्णय से जुड़ी संचिकाएं अंतिम निर्णय के लिए मुख्यमंत्री के पास ही जाती हैं। मुख्यमंत्री चाहें तो उसे रोक दें। चाहें तो हस्ताक्षर कर दें।

सत्ता हस्तांतरण की समय सीमा भी लगभग तय हो गई है। सरकार के गृह विभाग ने एक आदेश जारी किया है। यह मुख्यमंत्री नीतीश कुमार को जेड श्रेणी की सुरक्षा देने से संबंधित है। इसमें कहा गया है कि नीतीश कुमार राज्यसभा के लिए निर्वाचित हुए हैं। उन्होंने विधान परिषद की सदस्यता से त्याग पत्र दे दिया है। निकट भविष्य में मुख्यमंत्री पद से त्याग पत्र देकर राज्यसभा की सदस्यता ग्रहण करेंगे। नीतीश कुमार का राज्यसभा का कार्यकाल 10 अप्रैल से शुरू होगा। इस हिसाब से 15-16 अप्रैल से पहले नई सरकार के गठन का अनुमान किया जा रहा है।

जल्द ही मुख्यमंत्री पद से त्यागपत्र देकर राज्यसभा की सदस्यता ग्रहण करेंगे नीतीश कुमार। फाइल

नीतीश ही मुख्यमंत्री पद पर बने रहें, जदयू में यह मांग कमजोर पड़ने लगी है। हां, उनके पुत्र निशांत कुमार के लिए मुख्यमंत्री पद की मांग हो रही है। इसकी आवाज भी बहुत धीमी है। मुश्किल से आठ-दस विधायक और कुछ सांसद-पूर्व सांसद ऐसी मांग कर रहे हैं। मगर, जदयू के अधिसंख्य लोग सहमत हैं कि एक महीना पहले दल के सदस्य बने निशांत के लिए मुख्यमंत्री का पद इस समय उचित नहीं है। यह उनके लिए पैर से बड़ा जूता साबित हो सकता है, जिसे पहन कर वे सहज ढंग से चल नहीं पाएंगे। उनके लिए अधिकतम उप मुख्यमंत्री पद की मांग हो सकती है, जिसे स्वीकार करने में भाजपा को कोई परेशानी नहीं होगी।

जहां तक आम लोगों का प्रश्न है, उनके मन में भी भाजपा के नेतृत्व वाली सरकार को लेकर जिज्ञासा है। विपक्षी राजद या महागठबंधन भी प्रतीक्षा कर रहा है कि एक बार भाजपा की सरकार को भी देख ही लिया जाए। हो सकता है कि अगली राजनीतिक गोलबंदी भाजपा के पक्ष और विपक्ष में हो। अगर इस आधार पर गोलबंदी होती है तो उसका लाभ विपक्ष को मिलेगा।

आम लोग, कारोबारी, उद्यमी और रोजगार के आकांक्षी भी भाजपा के नेतृत्व वाली सरकार को लेकर उत्सुक हैं। इसका कारण है। राज्य में उद्योगों की स्थापना और उसके तीव्र विकास के सभी जरूरी कारक उपलब्ध हैं। नीतीश कुमार को इसका श्रेय दिया जाएगा कि उन्होंने राज्य में औद्योगिक विकास के लिए मजबूत आर्थिक संरचना का निर्माण कर दिया। चौबीस घंटे बिजली उपलब्ध है। सड़कें बहुत व्यवस्थित हैं। कानून-व्यवस्था की स्थिति कारोबार के अनुकूल है। घरेलू बाजार है। कोरोना संकट के समय ही राज्य के व्यापक श्रम बल को यह अहसास हो गया कि कुछ कम भुगतान पर भी अपने राज्य में रोजगार मिल जाए तो बहुत अच्छा रहेगा। बस, पूंजी का प्रवाह होने लगे तो बिहार औद्योगिक राज्यों के मानचित्र पर अपनी जगह बना लेगा। बाहरी और स्थानीय निवेशक भी उत्साह दिखा रहे हैं। पिछले सप्ताह मधुबनी के पंडौल में एक गार्मेंट कारखाना खुला। उसमें स्थानीय कारोबारी विजय झा ने करीब चार सौ करोड़ रुपये का निवेश किया। वे दूसरे राज्यों में पहले से उद्यम चला रहे हैं। पहली बार उन्होंने अपने गृह जिले में बड़ा निवेश किया। इससे पहले एथेनाल कारखाना में राज्य के उद्यमियों ने बड़ा निवेश किया। कुल मिलाकर माहौल उद्योगों के पक्ष में है। भाजपा से अपेक्षा यह की जा रही है कि वह बड़े निवेशकों को बिहार में निवेश करने के लिए अनुशंसा करेगी। उसे केंद्र सरकार से जरूरी सुविधाएं उपलब्ध कराएगी। इसके अलावा भाजपा के नेतृत्व में सरकार बनने की हालत में केंद्र से अधिक मदद मिलने की भी उम्मीद है। अभी तक राज्य सरकार समाज कल्याण के क्षेत्र को ही अधिक महत्व देती रही है। नई सरकार समाज कल्याण के साथ-साथ कारोबार के लिए भी सुगम माहौल बनाएगी।

मंथन

विलय न हो पाने का दर्द

ओमप्रकाश तिवारी
ब्यूरो प्रमुख, मुंबई

महाराष्ट्र के पूर्व उपमुख्यमंत्री अजीत पवार का एक विमान दुर्घटना में निधन हो जाने के बाद उनकी पार्टी का उनके चाचा शरद पवार की पार्टी में विलय का खटाई में पड़ जाना सीनियर पवार खेमे को बहुत दर्द दे रहा है। ये दर्द इन दिनों शरद पवार खेमे के विधायक एवं रिश्ते में उनके पौत्र रोहित पवार के बयानों में खुलकर सामने आ रहा है। रोहित पवार शरद पवार के परिवार में तीसरी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं, और कर्जत-जामखेड़ सीट से विधायक हैं। पवार परिवार में रोहित की पीढ़ी में तीन-चार और नेता उभर रहे हैं। अजीत पवार के ज्येष्ठ पुत्र पार्थ पवार हाल में राज्यसभा के लिए चुन लिए गए। जबकि पार्थ के चचेरे भाई युगेंद्र पवार पिछले विधानसभा चुनाव में अजीत पवार के विरुद्ध ही शरद पवार की पार्टी से चुनाव लड़कर हार चुके हैं। अजीत पवार के छोटे पुत्र जय पवार को भी गुरुवार को राकांपा के शीर्ष पैनल का सदस्य बना दिया गया, लेकिन दूसरी बार विधायक बने रोहित पवार अपने इन सभी चचेरे भाइयों के बीच राजनीति में वरिष्ठ भी हैं, और ज्यादा सक्रिय भी।

अजीत पवार के निधन के बाद बढ़ी उनकी सक्रियता इस बात का आभास करा रही है कि वह शरद पवार के परिवार की तीसरी पीढ़ी में अजीत पवार की जगह लेने को आतुर हैं। अजीत पवार की विमान दुर्घटना को जिस प्रकार से रोहित पवार मुद्दा बनाकर कभी प्रेस कांफ्रेंस कर रहे हैं, तो कभी एफआइआर दर्ज कराने की कोशिश कर रहे हैं, मुंबई से लेकर बारामती तक बड़े-बड़े होर्डिंग्स लगाकर विमान दुर्घटना को साजिश सिद्ध करने की कोशिश कर रहे हैं, उससे खुद अजीत पवार का परिवार भी असहज महसूस करने लगा है। शायद यही कारण है कि हाल में जब रोहित पवार ने पार्टी के कार्यकारी अध्यक्ष प्रफुल पटेल एवं प्रदेश अध्यक्ष सुनील तटकरे पर पार्टी पर कब्जा करने की कोशिश का गंभीर आरोप लगाया, तो अजीत पवार के ज्येष्ठ पुत्र पार्थ को अपनी चुप्पी तोड़नी पड़ी।

पार्थ पवार को अपने एक्स एकाउंट पर लिखना पड़ा कि प्रफुल पटेल और सुनील तटकरे जैसे वरिष्ठ नेताओं ने दशकों तक पार्टी के प्रति अपनी अटूट प्रतिबद्धता दिखाई है। इन सम्मानित नेताओं को बेवजह विवादों में घसीटने की कोशिश की जा रही है, जो बेहद दुर्भाग्यपूर्ण है। वास्तव में रोहित पवार अजीत पवार के निधन के बाद से ही प्रफुल पटेल एवं सुनील तटकरे पर हमलावर हैं। दुर्घटना के कुछ दिनों बाद ही उन्होंने प्रफुल्ल पटेल का नाम लिए बगैर एक गंभीर आरोप लगाया था कि पूर्वी महाराष्ट्र के एक नेता अजीत पवार से मिलने आने वाले थे, जिसके कारण अजीत पवार को सड़क मार्ग से एक दिन पहले ही बारामती जाने का कार्यक्रम रद करना पड़ा। वह अगले दिन सुबह विमान से बारामती के लिए रवाना हुए और दुर्घटना का शिकार हो गए। ये आरोप नहीं चला, तो उन्होंने नया आरोप लगाया कि अजीत पवार की मृत्यु के मात्र 18 दिन बाद प्रफुल पटेल और सुनील तटकरे ने चुनाव आयोग को पत्र लिखकर पार्टी के संविधान में बदलाव का दावा किया, ताकि कार्यकारी अध्यक्ष प्रफुल पटेल को असीमित शक्तियां मिल सकें। रोहित का कहना था कि यह सब अजीत पवार की पत्नी और वर्तमान उपमुख्यमंत्री सुनेत्रा पवार को अंधेरे में रखकर किया गया। रोहित पवार खेमे की ओर से यह भी कहा जा रहा है कि दिवंगत अजीत पवार की पत्नी एवं राज्य की उपमुख्यमंत्री सुनेत्रा पवार प्रफुल पटेल और सुनील तटकरे की कार्यशैली से नाराज हैं।

हालांकि गुरुवार को एक्स एकाउंट पर की गई पार्थ की टिप्पणी ने साफ कर दिया है कि इन नेताओं का नेतृत्व आज भी उनके लिए मार्गदर्शक है और पार्टी पूरी तरह एकजुट है, लेकिन रोहित पवार के आरोपों से यह भी स्पष्ट हो गया है कि अजीत पवार के निधन के बाद इतनी आसानी से सुनेत्रा पवार का उपमुख्यमंत्री पद एवं पार्टी का अध्यक्ष पद संभाल लेना शरद पवार खेमे को रास नहीं आ रहा है। अजीत पवार की मृत्यु के अगले दिन से ही शरद पवार खेमे के नेता राकांपा एवं राकांपा (शरदचंद्र पवार) के विलय की बात जोर-शोर से उठाने लगे थे। जबकि अजीत पवार गुट के सुनील तटकरे एवं प्रफुल पटेल ने साफ कर दिया था कि उनसे अजीत पवार ने ऐसी कोई चर्चा नहीं की थी। संभव है, प्रदेश का नेतृत्व संभाल रहे तटकरे एवं पार्टी के कार्यकारी अध्यक्ष प्रफुल पटेल की पहली प्राथमिकता उस समय पार्टी को एकजुट रखना एवं सुनेत्रा पवार को अजीत पवार द्वारा संभाले जा रहे सभी पदों पर स्थापित करवाना रही हो। तटकरे ने उस समय बार-बार यह बात कही थी कि विलय का प्रस्ताव राकांपा (शरदचंद्र पवार) की ओर से आना चाहिए। तटकरे और प्रफुल पटेल की यही साफगोई पवार खेमे को पसंद नहीं आई। जिसके कारण खुद शरद पवार एवं उनकी सांसद पुत्री सुप्रिया सुले तो चुप हैं, लेकिन उन्हीं के परिवार और पार्टी के रोहित पवार पूरी मुखरता से पटेल और तटकरे के विरुद्ध मोर्चा खोले हुए हैं।

अजीत पवार के निधन के बाद उनकी पत्नी सुनेत्रा पवार के हाथों में आई राकांपा की कमान। फाइल

मतदान की चिंता

यह अपने आप में परीक्षण का विषय है कि मतदाता सूची संशोधन को लेकर पश्चिम बंगाल में इतने विवाद क्यों हुए? इतने विवाद तो बिहार में भी नहीं हुए थे।

पश्चिम एशिया में अमेरिका-इजरायल और ईरान के बीच चल रहे युद्ध से पूरी दुनिया चिंतित है। हर देश की अपनी चिंताएं हैं, लेकिन एक बड़ी चिंता तीसरे विश्व युद्ध को लेकर है। क्या महायुद्ध छिड़ने वाला है? इस पर दुनिया में अलग-अलग जवाब हैं। ऐसे विशेषज्ञ हैं, जो मानते हैं कि दुनिया की व्यवस्था बिगड़ चुकी है, लेकिन कई विशेषज्ञों का यह भी मानना है कि फिलहाल विश्व युद्ध जैसी परिस्थिति नहीं दिखती।

महायुद्ध की जमीन ऐसी ही जंग तैयार करती है

हर्ष वी पंत | प्रोफेसर, किंग्स कॉलेज लंदन

- संघर्ष का सिलसिला थम नहीं रहा है, दुनिया पूरी तरह सुरक्षित नहीं है।
- 20वीं सदी में जिस तरह के गठबंधन थे, देशों के वे रिश्ते आज नहीं दिखते।
- वित्तीय व्यवस्थाओं व आपूर्ति शृंखलाओं पर हमलों से तनाव बढ़ जाता है।

तीसरा विश्व युद्ध छिड़ने की कोई आशंका नहीं

अश्विनी महापात्रा | प्रोफेसर, जेएनयू

- दूसरे विश्व युद्ध में 77 देशों ने भाग लिया था, ईरान की जंग में तीन देश शामिल हैं।
- चीन और रूस अमेरिका से खूब आर्थिक लाभ बटोर रहे, वे भला क्यों युद्ध में कूदेंगे?
- दुनिया आर्थिक रूप से बहुध्रुवीय बनी है, सामरिक रूप से अमेरिका का दबदबा।

आमने-सामने

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले 04 अप्रैल, 1951

हैदराबाद का बजट

हैदराबाद का शासन प्रबन्ध भारत सरकार की देख-रेख में चलाया जा रहा है। यद्यपि हैदराबाद के शासन में जन प्रतिनिधियों को साझीदार बनाया गया है, किन्तु शासन की मुख्य जिम्मेवारी केन्द्र द्वारा प्रेषित अधिकारियों पर है।

हैदराबाद का शासन मौजूदा उत्तराधिकारियों को बड़ी अस्त-व्यस्त अवस्था में मिला था। पिछली हुकूमत ने राज्य के संचित कोष को फूंकने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। राज्य की आर्थिक स्थिति को उसने डांवाडोल बना दिया था। उस बिगड़ी हुई स्थिति को सुधारने का गुरुतर दायित्व नयी हुकूमत के कन्धों पर आया है और यह सन्तोष का विषय है कि वह उसे पूरा करने का प्रयत्न कर रही है। हैदराबाद राज्य का सन् 1951-52 का बजट इस बात का प्रमाण है कि उसे इस दिशा में सफलता भी मिल रही है।

राज्य के वित्त मंत्री श्री सी. वी. एस. राव ने बताया है कि सन् 1951-52 में राज्य की आमदनी पिछले वर्ष की अपेक्षा 1 करोड़ 59 लाख अधिक होने का अनुमान है। केन्द्रीय सरकार की नीति के अनुसार राज्य में करटम कर को धीरे-धीरे समाप्त किया जा रहा है, और कोई नये कर भी नहीं लगाये गये हैं, इसके बावजूद राज्य की आय में यह वृद्धि हुई है। इस आय वृद्धि का श्रेय इस बात को है कि कर उगाहने की व्यवस्था को चुस्त बना दिया गया है, जिससे लोग पहले की तरह सरकारी कर अदा करने से नहीं बच सकेंगे। राज्य में बिक्री कर पिछले ही वर्ष जारी किया गया था और उससे इस वर्ष 1 करोड़ 90 लाख रुपया मिलने की आशा की गयी है। निश्चय ही बिक्री कर राज्य के लिए आय का अच्छा जरिया सिद्ध हो रहा है।

बजट में राज्य की आय 32 करोड़ 17 लाख 58 हजार और व्यय 32 करोड़ 35 लाख 82 हजार अनुमान किया गया है। इस प्रकार 18 लाख 24 हजार रुपये का घाटा रहेगा। इस घाटे को पूरा करने की कोई व्यवस्था नहीं की गयी है। गोरावाला जांच कमेटी की सिफारिशों के अनुसार, हैदराबाद के शासन व्यय में 60 लाख रुपये की कमी कर दी गयी है और आगे भी यथा संभव खर्च में कमी करने का ध्यान रखा जायेगा। जहां तक लोक हितकारी कार्यों का संबंध है, राज्य के वित्त मंत्री ने दावा किया है कि हैदराबाद को बम्बई के बाद स्थान मिलेगा।

मनसा वाचा कर्मणा

वासनाओं से कैसे निपटें

जे पी नड्डा | केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री

'नारी शक्ति वंदन अधिनियम' को महिला सशक्तीकरण और विकसित भारत-निर्माण की दृष्टि से देखें। जब संसद पहुंचकर 33 प्रतिशत महिलाएं देश का प्रतिनिधित्व करेंगी, तब यह विकसित और सशक्त भारत की पहचान होगी।

प्रशासनिक लापरवाही भक्तों पर पड़ी भारी

आखिर एक बार फिर भगदड़ रूपी राक्षस कई इंसानों को निगल गया। बिहार के नालंदा में मघड़ा मेला के दौरान शीतला माता मंदिर में हुई भगदड़ में नौ श्रद्धालुओं की जान चली गई। घटना के बाद चुस्त हुए पुलिस-प्रशासन ने कई कदम उठाए। कुछ पुलिसकर्मियों को निलंबित करने की भी खबर है, पर इन सबसे होगा क्या? कुछ दिनों के बाद वे फिर सेवा में आ जाएंगे। इतना ही नहीं, उनके निलंबन से क्या स्थिति बदल जाएगी और पीड़ितों के साथ न्याय हो पाएगा? मघड़ा मेला का कार्यक्रम अचानक तो नहीं हुआ था। ग्रामीण क्षेत्रों में शीतला माता के प्रति गहरी आस्था है, तो स्वाभाविक है कि लोगों की भीड़ का अनुमान था। ऐसे में, पुलिस-प्रशासन ने पूर्व में ही व्यवस्था को चुस्त-दुरुस्त करने की बात क्यों नहीं सोची? किसी भी विशेष धार्मिक आयोजन में श्रद्धालुओं की भीड़ होना स्वाभाविक है, तो भगदड़ की स्थिति से बचने के लिए पुलिस-प्रशासन को पहले ही चाक-चौबंद व्यवस्था कर लेनी चाहिए थी। ऐसा नहीं हुआ, जिसका खामियाजा आम लोगों ने भुगता। भगदड़ में लोगों की जान चली जाती है, यह कहना, लिखना या पढ़ना आसान है, परंतु जिनकी जान जाती है, उनके परिजनों को बिना किसी गलती के गंभीर सजा मिलती है। पुलिस-प्रशासन को इस बाबत संवेदनशील होना चाहिए।

शैलबाला कुमारी, गृहिणी

बिहार के नालंदा में शीतला माता मंदिर में मची भगदड़ दुखद है। त्योहार हो या कोई उत्सव, आयोजकों और स्थानीय प्रशासन को पता होता है कि कब, कहां, कितनी और कैसी व्यवस्था करनी है? यदा-कदा भीड़ कम-ज्यादा हो सकती है, फिर भी प्रशासन को मुस्तैद रहना पड़ता है। मगर यह बार-बार होता है कि उसकी लापरवाही श्रद्धालुओं पर भारी पड़ती है। पहले भी देश के विभिन्न भागों में आयोजकों/प्रशासन की इंतजामी लापरवाही से हादसे हुए हैं और महिला/पुरुष/बच्चे अकाल मौत को प्राप्त हुए हैं। यह विडंबना है कि जब कोई वीआईपी मंदिर में आता है, तो पर्याप्त संख्या में सुरक्षाकर्मी मुस्तैद दिखते हैं, लेकिन जब आम लोगों की बारी आती है, तो यही सुरक्षाकर्मी गायब मिलते हैं। ठीक है, प्रोटोकॉल और आम व्यवस्था में अंतर होता है, किंतु आम लोगों की सुरक्षा के लिए भी प्रशासन को माकूल व्यवस्था करनी चाहिए। दिक्कत यह भी है कि घटना होने के बाद कुछ तो सक्रियता दिखती है, लेकिन फिर हालात वही ढाक के तीन पात जैसे हो जाते हैं। देर-सवेर सभी जिम्मेदार संस्थाएं सुस्त पड़ने लगती हैं। क्या इस बार भी यही होगा या फिर आयोजक व प्रशासन अपनी जिम्मेदारी समझेंगे?

शकुंतला महेश नेनावा, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

भगदड़

आम लोग भी अपनी जिम्मेदारी समझें

आस्था और श्रद्धा भारतीय समाज की गहरी जड़ें हैं, लेकिन जब यही आस्था बिना योजना और सुरक्षा के अंधी भीड़ में बदल जाती है, तब हादसे होते हैं। नालंदा के माघड़ा मेले की दर्दनाक घटना इसी की बानगी है। इस हादसे ने एक बार फिर यह सवाल खड़ा किया है कि आखिर कब तक भीड़ और अव्यवस्था, मिलकर लोगों की जान लेती रहेंगी? 25 हजार से अधिक श्रद्धालुओं की उपस्थिति के बावजूद सुरक्षा और भीड़ प्रबंधन का अभाव स्पष्ट रूप से प्रशासनिक लापरवाही को दर्शाता है, लेकिन ऐसी घटनाओं में केवल प्रशासन को दोष देना पर्याप्त नहीं है, बल्कि आमजन की जिम्मेदारी भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। बिना आवश्यकता के भीड़ का हिस्सा बनना, जल्दबाजी और धक्का-मुक्की की प्रवृत्ति हालात को भयावह बना देती है। लोगों को यह समझना होगा कि पूजा-अर्चना से अधिक मूल्यवान उनका जीवन है। प्रशासन को चाहिए कि ऐसे आयोजनों में भीड़ के अनुमान के आधार पर पर्याप्त पुलिस बल, बैरिकेडिंग, प्रवेश-निकास के स्पष्ट मार्ग और आपातकालीन चिकित्सा सुविधाओं की व्यवस्था सुनिश्चित करे। साथ ही, जहां भीड़-भाड़ वाले आयोजन हों, वहां स्थानीय स्तर पर जागरूकता अभियान चलाकर लोगों को अनुशासन और धैर्य का महत्व समझाया जाए। वास्तव में, आस्था तब तक सुरक्षित है, जब तक उसमें संयम व व्यवस्था का समावेश हो। अन्यथा, श्रद्धा का यह सैलाब हर बार किसी न किसी परिवार के लिए त्रासदी साबित होगा। खुद लोगों को समझदारी का परिचय देते हुए अनावश्यक भीड़ का हिस्सा बनने से बचना चाहिए।

अमृतलाल मारू, टिप्पणीकार

यह एक सामान्य परिपाटी बन गई है कि घटना कोई भी हो, दोष प्रशासन को दे दो। ठीक है, कई बार पुलिस-प्रशासन अपनी जिम्मेदारियों का उचित निर्वहन नहीं कर पाते, लेकिन हर बाद उन्हीं के सिर पर ठीकरा फोड़ना भी गलत है। नालंदा जैसी घटनाएं इसलिए भी घटती हैं, क्योंकि भीड़ अराजक व्यवहार करती है। जब किसी छोटे परिसर में भीड़ बढ़ जाए, तो बेहतर यही है कि वह खुद अनुशासन का परिचय दे, लेकिन भारत में होता यह है कि जल्द से जल्द पूजा करने की सोच में लोग उल्टे-सीधे तरीके अपनाने लगते हैं, जिस कारण भगदड़ जैसी स्थिति बन जाती है। अगर नालंद में ही भीड़ अनुशासित होती, तो चंद पुलिसकर्मी ही उसे संभाल लेते। मगर ऐसा नहीं हुआ। अनुशासन टूटते ही भगदड़ मच गई और नौ श्रद्धालुओं की जान चली गई। वास्तव में, ऐसी घटनाओं से हमें सबक लेना चाहिए कि प्रतिकूल हालात में भी अनुशासन का व्यवहार करना जरूरी है।

श्याम वत्स, टिप्पणीकार

संपादकीय

हमसे जुड़ने के लिए QR Code स्कैन करें

दैनिक नवज्योति
आपके लिए, आपके साथ
dainiknavajyoti.com
जोधपुर, शनिवार, 4 अप्रैल, 2026

90 विश्वसनीयता के dainiknavajyoti.com

न्यायपालिका की गरिमा और सुरक्षा

पश्चिम बंगाल के मालदा में न्यायिक अधिकारियों के बंधक बनाने का मामला कानून-व्यवस्था, न्यायपालिका की सुरक्षा और प्रषासनिक जवाबदेही से जुड़ा एक गंभीर विषय बनकर सामने आया है। इस घटना ने न केवल राज्य सरकार की सुरक्षा व्यवस्था पर बल्कि पूरे देश में न्यायिक तंत्र की स्वतंत्रता, उसकी गरिमा और सुरक्षा व्यवस्था को लेकर एक नई बहस छेड़ दी है। दरअसल पश्चिम बंगाल के मालदा जिले के ब्लॉक डेवलपमेंट अफसर के कार्यालय में एक अप्रैल को अपराह्न मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण कार्य में लगे 7 न्यायिक अधिकारियों को घंटों बंधक बनाए रखने की सूचना मिली। इनमें तीन महिला जज थीं। जिला प्रशासन बेखबर रहा। जब इस घटना की जानकारी उच्च न्यायालय की ओर से मुख्य सचिव और पुलिस महानिरीक्षक को दी गई, तब जाकर प्रशासन में हड़कंप मचा और वह हरकत में आया। देर रात न्यायिक अधिकारियों को मुक्त कराया जा सका। इस घटना ने यह साफ जाहिर हुआ कि यदि न्यायिक अधिकारी ही सुरक्षित नहीं हैं, तो आम नागरिकों की सुरक्षा तो रामभरोसे ही है। मालदा जिला सीमावर्ती और संवेदनशील क्षेत्रों में आता है। लंबे समय से तस्करी और अवैध गतिविधियों के लिए जाना जाता रहा है। ऐसे में इस तरह की घटना, अपराधी तत्वों के हौसले बुलंद होने का संकेत है। जो पुलिस की गश्त और खुफिया तंत्र की कमजोरी को भी उजागर करती है। यह घटना मात्र आपराधिक घटना भर नहीं है, बल्कि न्यायपालिका की सुरक्षा और उस पर दबाव बनाने या मनोबल गिराने का प्रयास भी माना जाएगा। जिससे कार्यक्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है। कुछ मामलों में न्यायिक फैसलों से असंतुष्ट तत्व प्रतिशोध की भावना से इस तरह के अपराध कर सकते हैं। न्यायिक अधिकारियों की यात्रा और सुरक्षा के लिए पर्याप्त व्यवस्था नहीं होती। कई बार उन्हें सामान्य नागरिकों की तरह बिना सुरक्षा के यात्रा करनी पड़ती है। घटना के बाद राज्य सरकार और पुलिस प्रशासन ने विशेष जांच दल का गठन किया है। इस कृत्य में लिप्त दोषियों की पकड़-धकड़ भी की जा रही है। उच्चतम न्यायालय ने भी इस मामले को गंभीरता से लेते हुए रिपोर्ट मांगी है। सुरक्षा व्यवस्था मजबूत करने के निर्देश दिए। गौर करने वाला बिंदु तो यह है कि ऐसी घटनाएं अक्सर राजनीतिक आरोप-प्रत्यारोप का कारण बनती हैं। विपक्ष, सरकार पर कानून व्यवस्था विफल होने का आरोप लगाता है। तो सरकार इसे आइसोलेटेड घटना बताकर नियंत्रण के प्रयासों को रेखांकित करती है। ऐसे मामलों पर राजनीति करने की बजाय, संवेदनशील क्षेत्रों में न्यायिक अधिकारियों को पुलिस सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए। उनकी यात्रा दौरान सुरक्षा प्रोटोकॉल अनिवार्य किया जाए। खुफिया तंत्र को मजबूत किया जाए। स्थानीय स्तर पर सूचना नेटवर्क को सक्रिय किया जाए। मामले की जल्द से जल्द सच्चाई सामने लाई जाए। दोषियों को सख्त सजा देकर उदाहरण पेश किया जाए। ताकि लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर हमला बोलने वालों को सबक सिखाया जा सके। यदि समय रहते ठोस कदम नहीं उठाए गए तो इससे न्यायिक स्वतंत्रता, प्रशासनिक क्षमता और जनता के विश्वास भाव पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। ऐसे में इस मामले को गंभीरता से लेकर दीर्घकालिक सुधारात्मक कदम उठाए जाने चाहिए।

इन्हें बचाना समय की सबसे बड़ी जरूरत

हिमालयी ग्लेशियरों के पिघलने के परिणाम घातक होंगे

चिंतन

दुनिया में ग्लेशियरों का पिघलना समूचे प्राणी जगत के लिए संकट का सबब बन गया है। संयुक्त राष्ट्र की एजेंसी यूनेस्को की रिपोर्ट में दुनिया में ग्लेशियरों के तेजी से पिघलने पर गहरी चिंता व्यक्त करते हुए कहा गया है कि यदि ग्लेशियरों के पिघलने की मौजूदा दर इसी तरह जारी रही तो इस संकट के परिणाम अभूतपूर्व और विनाशकारी होंगे।

दुनिया में ग्लेशियरों का पिघलना समूचे प्राणी जगत के लिए संकट का सबब बन गया है। संयुक्त राष्ट्र की एजेंसी यूनेस्को की रिपोर्ट में दुनिया में ग्लेशियरों के तेजी से पिघलने पर गहरी चिंता व्यक्त करते हुए कहा गया है कि यदि ग्लेशियरों के पिघलने की मौजूदा दर इसी तरह जारी रही तो इस संकट के परिणाम अभूतपूर्व और विनाशकारी होंगे। यदि समय रहते इस पर अंकुश नहीं लगा तो दुनिया की कुल 8.2 अरब आबादी में से दो अरब से भी ज्यादा लोग पानी और भोजन की गंभीर समस्या का सामना करने को विवश होंगे। यहां यह जान लेना जरूरी है कि ग्लेशियरों की धरती पर जल चक्र बरकरार रखने में महत्वपूर्ण भूमिका है। उनका पानी ही नदियों के जरिये हमारी जीवन धारा को आगे बढ़ाता है। लेकिन जलवायु परिवर्तन के कारण ग्लेशियरों के पिघलने से नदियों पर संकट दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। यूनेस्को के डायरेक्टर जनरल आंद्रे एंजुले का कहना है कि ग्लेशियर और पर्वतीय जलस्त्रोतों पर हम पूरी तरह निर्भर हैं।

ज्ञानेन्द्र रावत

स्त्रोतों के अस्तित्व पर संकट

जलवायु परिवर्तन के चलते इनके तेजी से पिघलने से पेयजल के इन सबसे बड़े स्त्रोतों के अस्तित्व पर संकट है। इसलिए इन्हें बचाना समय की सबसे बड़ी जरूरत है। क्योंकि ग्लेशियर हैं तो जल है, जल है तो जीवन है और जीवन है तो हम हैं। जहां तक हिमालयी ग्लेशियरों का सवाल है, सरकार की ओर से संसद में पेश रिपोर्ट में बताया गया कि हिमालय के ग्लेशियर अलग अलग दर से तेजी से पिघल रहे हैं। जलवायु परिवर्तन की वजह से हिमालय की नदियां किसी भी समय प्राकृतिक आपदाएं ला सकती हैं। रिपोर्ट में सरकार ने स्वीकार किया कि ग्लेशियर के पिघलने से नदियों के बहाव में अंतर आयेगा और जिसके परिणाम स्वरूप आबादी का एक बड़ा हिस्सा प्रभावित होगा। गौरतलब है कि लगभग 33,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले हिमालयी ग्लेशियर ध्रुवीय क्षेत्रों के अलावा दुनिया के सभी पर्वतीय क्षेत्रों में जमे ताजा पानी के सबसे बड़े भंडार हैं। इन्हीं विशेषताओं के चलते इसे एशिया की जल मीनार और दुनिया का तीसरा ध्रुव भी कहा जाता है।

जीवाश्म ईधन की हिस्सेदारी

दक्षिण एशिया के अफगानिस्तान, पाकिस्तान, भारत, नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, चीन और म्यांमार को मिलाकर कुल आठ देशों की लगभग 160 करोड़ की आबादी आज भी इन हिमालयी नदियों के पानी पर निर्भर है। यहां से एशिया की 10 सबसे बड़ी नदियों जैसे यांगतसी, मेनांग, गंगा और इरावदी नदियों को पानी मिलता है। इस हिमालयी पर्वत श्रृंखला में कुल लगभग 9,575 ग्लेशियर हैं। इनमें लगभग 267 का क्षेत्रफल 10 वर्ग किलोमीटर से भी ज्यादा है। एशिया की 10 प्रमुख नदियों की जलापूर्ति का आधार इन ग्लेशियरों में गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र जैसी तीन प्रमुख नदी घाटियां विभाजित हैं। बीते तीन दशकों के दौरान ये ग्लेशियर 20 से 30 फीसदी पिघले हैं। असलियत में हिमालय में वायु प्रदूषण पर जीवाश्म ईंधन के जलने का ज्यादा असर पड़ रहा है। हिमालयी अंचल में गाड़ियों की बेतहाशा कई गुणा बढ़ती तादाद हवा में जीवाश्म ईंधन की हिस्सेदारी का अहम कारण है। साथ ही हिमालय अब बस्तियों और शहरों के बढ़ते बोझ से हांफने लगा है। वहीं ग्लोबल वार्मिंग के चलते तेजी से ग्लेशियर पिघलकर बनी झीलें जल प्रलय को आमंत्रण दे रही हैं। इस मामले में इसरो की मानें तो हिमालयी क्षेत्र की 2432 ग्लेशियर झीलों में से 672 झीलों का आकार तेजी से बढ़ रहा है। इनमें से भारत में मौजूद 130 झीलों के टूटने का खतरा बना हुआ है।

जलवायु परिवर्तन का परिणाम

जलवायु परिवर्तन का परिणाम है कि बीते 40 सालों में हिमालय से 440 अरब टन बर्फ पिघल चुकी है। जी बी पंत राष्ट्रीय हिमालय पर्यावरण संस्थान के निदेशक प्रो सुनील नौटियाल की मानें तो अकेले 2010 में ही 20 अरब टन हिमालय के ग्लेशियरों से पिघली है। अगर ऐसा ही रहा तो इसके गंभीर दुष्परिणाम सामने आएंगे। वैज्ञानिक शोध और अध्ययन प्रमाण हैं कि वैश्विक तापमान में 1.5 डिग्री सेल्सियस की बढ़ोतरी से इस सदी के आखिर तक यहां के एक तिहाई ग्लेशियर गायब हो जाएंगे और तापमान में यदि 2.0 डिग्री सेल्सियस की बढ़ोतरी हुयी तो दो तिहाई ग्लेशियरों के गायब होने का खतरा बना रहेगा। संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटारेस की चिंता का सबब भी यही है। वे वैज्ञानिकों की इस चेतावनी से भी बेहद चिंतित हैं कि इस सदी के अंत तक हिंदूकुश हिमालयी क्षेत्र के 75 फीसदी ग्लेशियर नष्ट हो जाएंगे। इसीलिये उन्होंने जीवाश्म ईंधन के युग को समाप्त करनेपर बल दियाहै।

यह लेखक के अपने विचार हैं।

जल तरंग

महिमा मंडित होना

हर व्यक्ति की यह अभिलाष बनी रहती है कि उसे उसकी उपलब्धि पूर्ण कार्यों पर लोगों की प्रशंसा मिले। समाज में महिमा मंडित होने का अवसर मिले और वह अपने कार्यों पर गौरवान्वित हो सके । आज अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप भी अपने धमाकेदार निर्णयों व कार्यों से दुनिया भर में महिमा मंडित होने की आशा लिए हुए थे, पर अभी उनकी किस्मत उनका साथ नहीं दे रही । वह अपने कार्यों व क्षमताओं से सारी दुनिया में अपना बर्चस्व कायम कर लोकप्रिय होने की चाहना पाले हुए थे । लेकिन उनकी कल्पना की उड़ान धरी की धरी रह गई। अपने ही साथी नाटो देशों से ईरान के विरुद्ध युद्ध में अमेरिका के साथ सहयोग न करने के निर्णय पर वह गुस्से में भरे हुए हैं। ट्रंप की चाहना बनी हुई थी कि वह इजरायल के साथ मिलकर ईरान के कुछ ही दिनों में घुटने टिका अपनी मनचाही व्यवस्था कायम कर लेंगे। पर उनके भाग्य से सफलता नहीं मिल पा रही। ईरान को घुटने टिकवा देना तो दूर, वह तो उल्टे बराबर की टक्कर दे रहा है । अमेरिका और इजराइल को अपने निर्णय पर सोचना पड़ रहा है । ईरान की टक्कर लेने की छुपी हुई क्षमता से तो ऐसा लग रहा जैसे उन्होंने शहद के लालच में किसी मधुमक्खी के छत्ते को छेड़ दिया हो। नाटो के अपने साथी देशों ने भी ईरान से खिलाफ युद्ध में सहयोगी बनने से साफ मना करने को लेकर ट्रंप नाराज होकर उन्हें कागजी शेर समझने लगे । नाटों देशों को इस युद्ध में शामिल होना आ बैल मुझे मार, सा लगा। उन्होंने सारा आगा पीछा सोच ट्रंप से युद्ध में शामिल होने के लिए मना कर दिया। अमेरिका जो उनका अब तक संरक्षक बना हुआ था उसे उनसे इस तरह की उम्मीद नहीं थी। इधर ट्रंप अपने ही घर अमेरिका में जन विरोध से नो किंग के प्रदर्शन से घिरते जा रहे हैं। वहीं दुनिया के देश भी उन्हें युद्ध में बने रहने पर उचित नहीं समझ रहे। अब वह अपनी सत्ता बचाने के लिए कभी कहते हैं कि युद्ध जल्दी थम जाएगा। हमने उनकी सुरक्षा प्रणाली को काफी कुछ नष्ट कर बहुत कुछ हासिल कर लिया । अब इधर इजराइल जो अमेरिका के सहयोग से अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए लड़ रहा है उसने तो साफ तौर पर कह दिया कि वह अपना लक्ष्य पूरा होने पर ही पीछे हटेगा। ऐसे में अमेरिका ने भी अपनी प्रतिष्ठा बचाते हुए युद्ध बंद करने की सोचने लगा है ताकि साख बनी रहे। ट्रंप जिन्हें घड़ी घड़ी में अपने विचार बदलने में कोई परहेज नहींहै।

दिनेश विजयवर्गीय
यह लेखक के अपने विचार हैं।

आज का विचार

आदत तो सुधारिए । कितनी ही बार फेल क्यों न हो जाएं, उम्मीद का दामन कभी मत छोड़िए । एक दफा असफल हो जाएं, तब भी 10वीं बार सफल होने की उम्मीद जिंदा रखिए।

श्री चंद्रप्रभ जी।

जीवन बोध

शशि के दर्शन

चैत्र माह के व्यतीत होने का रात्रि संकेत था चंद्रमा। ऋतु की अस्थिरता से सुरक्षित चैत्र पूर्णिमा की निशा सौंदर्यभुत थी। सुकोमल स्वर्णरंगी घनदलों को अपनी रजत दीप्ति से अनस्तित्व करते इंदु को देख अनुभूतियां हुईं, जिन्होंने मुझे संवेदना प्रदान की। सहसा प्रतीत हुआ कि प्रकृति के रात्रि समय के बिना जीवन शून्य है। निशा को सुशोभित करते शशि के दर्शन के बिना जीवन अशांत है। मध्य नभ पर दैदीप्यमान रजनीश को ध्यानयोग के साथ देखने व अनुभव करने पर दिन दोपहर की भौतिकीय आधुनिक जीवन गतिविधियां निकृष्ट लगने लगीं। प्रकृति में रात्रि तथा रात्रि में चंद्रमा की उपस्थिति से गहन लगाव हो गया। इस स्थिति में अकस्मात ही स्वयं के मानव होने की नवीन अनुभूति हुई। मानवीयता के गुण एक एक कर याद आने लगे। मन के कलुष मिटने लगे। असंतोषी भावना मिट गई। मानव में जो सहजता, सरलता एवं निश्छलता होनी चाहिये, वही मुझ में भी प्रकट हो गई। चंद्रमा ही नहीं, तारकों की सुशोभना ने भी हृदय स्पंदित कर दिया। प्रकृति के इन दो रात्रि रत्नों ने आत्मा में ध्यानयोग की ज्योति प्रज्ज्वलित कर दी। चैत्र पूर्णिमा की समुज्ज्वला में दिखाई देती भूमि तथा व्योम के प्रत्येक प्राकृतिक तत्त्व ने आकर्षण के अनोखे आभूषण धारण किये हुये थे।

विकेश कुमार बडोला

अपनों से अपनी सी बात

दया जगाएं

अगर किसी के अन्दर प्राणिमात्र के प्रति दया भाव जाग जाएं तो समझो कि उसको एक दिव्य दौलत मिल गयीं, एक सम्पदा उसके हाथ लग गयी। दिव्यता की ओर बढ़ना है तो सबके प्रति दया की भावना रखिये। हमारे समाज की एक सनातन परम्परा है, जिसमें पांच प्रकार के यज्ञ करने का विधान है। उसमें एक भूत यज्ञ है। भूत का मतलब है जीवों के प्रति दया भाव रखकर उनके लिए कुछ आहुति देना। चीटियों को आटा डालना, गौ के लिए ग्रास निकालना, कुत्ते को रोटी डालना, पक्षीयों को दाना डालना, यह सब कार्य जीवों के प्रति दया भाव के परिचयक है। प्रायश्चित के रूप में भूत यज्ञ करने और जीवों को अन्न दान देने का हमारे शास्त्रों व ग्रंथो में विधान है। हमारे मन में जीवों के प्रति दया भाव हो, उनके प्रति हिंसा का भाव न हो। यह सन्देश हमारे ग्रंथो में बार बार मिलता है कि जीव जंतुओ से लेकर पेड़ पौधों तक सबके प्रति मंगलकामना रखों, सबके सुखी जीवन की कामना करो। वह व्यक्ति सच में ही दिव्य है, जिसके हृदय में दूसरों को तड़पता देखकर दया की भावना उमड़े। सबके प्रति करुणा और मित्रता रखिये, हर जीवन को मान दीजिये, आदर कीजिये। किसी भी जीवन को नष्ट नहीं करिए न होने दीजिये। सबको जीवन जीने का अधिकार है। दूसरे के जीवन के अधिकार को नहीं छीनिए। मै भी जिऊं और तू भी जिए, यह दिव्यत है। आप बैठे हैं और आपके पांव के नीचे चींटी दब गयी है। भगवान ने चींटी को छोटी सी चिमटी दी है, वह उस चिमटी से आपके पांव की चमड़ी को काटती है। आप तिलमिलाकर देखते है कि कौन है। इतनी देर में चींटी वहां से भाग जाती है। वह यह कहकर जाती है है कि वह तो बहुत कमजोर है और अपनी ज़िन्दगी बचाती फिरती है पर आप ज़रा संभालकर रखा करें, क्योंकि आपके कदमों में उनकी ज़िन्दगी है। जब आपका मन चींटी का यह सन्देश सुनने लग जाए और मन में ऐसे भाव आ जाएं तब समझना वह दया है।

ललित अकिंचन

विधानसभा चुनाव : 2026

“ कांग्रेस ने अपने करीब 30 दिग्गज नेताओं को बंगाल चुनाव में उतारा है ताकि पार्टी अपनी खोई हुई साख को बचाने, जमीनी संगठन को मजबूत रखने और ममता बनर्जी व बीजेपी के बीच चल रही सीधी लड़ाई में अपनी प्रासंगिकता बनाए रखे। ”

चुनावी रैलियों में भोजन की पसंद को बनाया जा रहा है मुद्दा

प. बंगाल में इस बार दिलचस्प मुद्दा आया सामने

इस बार भोजन की पसंद भी एक बड़ा राजनीतिक हथियार बन गई है। मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने जिस तरह से नॉन-वेज पॉलिटिक्स को चुनावी मुद्दा बनाया, उसने भारतीय जनता पार्टी (बीजेपी) को असहज स्थिति में ला खड़ा किया है।

पश्चिम बंगाल की राजनीति में इस बार एक दिलचस्प और असामान्य मुद्दा उभरकर सामने आया है, मांस-मछली यानी खान-पान की आदतें। आमतौर पर चुनावी बहसें विकास, रोजगार, कानून-व्यवस्था या पहचान की राजनीति के इर्द-गिर्द घूमती हैं, लेकिन इस बार भोजन की पसंद भी एक बड़ा राजनीतिक हथियार बन गई है। इस पूरे घटनाक्रम में मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने जिस तरह से नॉन-वेज पॉलिटिक्स को चुनावी मुद्दा बनाया, उसने भारतीय जनता पार्टी (बीजेपी) को असहज स्थिति में ला खड़ा किया है। दरअसल, विवाद की शुरुआत बिहार सरकार के उस आदेश से हुई, जिसमें सार्वजनिक स्थानों, धार्मिक स्थलों और शिक्षण संस्थानों के आसपास मांस और मछली की खुले में बिक्री पर रोक लगाने की बात कही गई थी।

सरकार का तर्क था कि इससे साफ-सफाई और सामाजिक सौहार्द बनाए रखने में मदद मिलेगी। हालांकि, पश्चिम बंगाल में इस फैसले को अलग नजरिए से देखा गया। तृणमूल कांग्रेस (टीएमसी) और ममता बनर्जी ने इसे बीजेपी की खान-पान पर नियंत्रण की नीति के रूप में पेश किया। ममता बनर्जी ने चुनावी रैलियों में इस मुद्दे को जोर-शोर से उठाया। उन्होंने लोगों को चेतावनी दी कि अगर बीजेपी सत्ता में आती है, तो बंगाल में मछली, मांस और अंडे खाने पर रोक लग सकती है। उन्होंने यह भी कहा कि बीजेपी न केवल खान-पान बल्कि भाषा और सांस्कृतिक पहचान पर भी हमला कर सकती है। उनके इस बयान ने बंगाल की जनता, खासकर मछली-प्रेमी बंगालियों के बीच एक भावनात्मक प्रतिक्रिया पैदा की।

पहचान का हिस्सा है

बंगाल की संस्कृति में मछली और मांस सिर्फ भोजन नहीं, बल्कि पहचान का हिस्सा हैं। ऐसे में ममता बनर्जी का यह नैरेटिव कि बीजेपी बंगाली जीवनशैली पर हमला कर सकती है, काफी असरदार साबित हुआ। यही वजह है कि बीजेपी को लगातार सफाई देनी पड़ी कि वह किसी के खान-पान में दखल नहीं देगी। स्थिति यहां तक पहुंच गई कि बीजेपी के कुछ नेताओं को अपनी छवि बदलने के लिए सार्वजनिक रूप से मछली खाते या उसके साथ प्रचार करते देखा गया। एक उम्मीदवार तो हाथ में मछली लेकर घर-घर वोट मांगने निकल पड़ा। यह दृश्य अपने आप में बताता है कि पार्टी किस हद तक डिफेंसिव हो चुकी थी।

बीजेपी के लिए यह मुद्दा इसलिए भी चुनौतीपूर्ण है क्योंकि उसका पारंपरिक समर्थन आधार उत्तर भारत में है, जहां शाकाहार को सांस्कृतिक रूप से ज्यादा महत्व दिया जाता है। कई लोग सप्ताह के कुछ दिनों या धार्मिक अवसरों पर मांसाहार से परहेज करते हैं। वहीं, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की विचारधारा में भी शाकाहार को एक आदर्श जीवनशैली के रूप में देखा जाता है। लेकिन भारत एक विविधता वाला देश है, जहां खान-पान की आदतें क्षेत्र के अनुसार बदलती हैं। गोवा, पूर्वोत्तर और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में मांसाहार सामान्य और सांस्कृतिक रूप से स्वीकृत है। ऐसे में बीजेपी को अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग रुख अपनाना पड़ता है। यही कारण है कि बिहार में जहां मांस बिक्री पर प्रतिबंध की बात होती है, वहीं बंगाल में पार्टी यह संदेश देने की कोशिश करती है कि वह मांसाहार के खिलाफ नहींहै।

टीएमसी का डर और निराशा

बीजेपी नेताओं ने ममता बनर्जी के आरोपों को खारिज करने की कोशिश की। उनका कहना है कि टीएमसी डर और निराशा के कारण ऐसे मुद्दे उठा रही है। कुछ नेताओं ने तो यहां तक कहा कि अगर बीजेपी सत्ता में आती है, तो मुख्यमंत्री भी मांसाहारी हो सकता है। यह बयान इस बात का संकेत है कि पार्टी बंगाल की सामाजिक वास्तविकताओं के अनुसार खुद को ढालने की कोशिश कर रही है। हालांकि, विपक्ष ने बीजेपी पर दोहरे मानदंड अपनाने का आरोप लगाया है। उदाहरण के तौर पर, जब बिहार में विपक्षी नेताओं ने सार्वजनिक रूप से मछली खाने का वीडियो साझा किया था, तब बीजेपी नेताओं ने इसे धार्मिक भावनाओं के खिलाफ बताया था। लेकिन बंगाल में वही पार्टी मछली खाने को सामान्य और स्वीकार्य बता रही है। इस विरोधाभास ने बीजेपी की स्थिति को और कमजोर किया। ममता बनर्जी और टीएमसी ने इस पूरे मुद्दे को सांस्कृतिक पहचान बनाम बाहरी हस्तक्षेप के रूप में पेश किया। उन्होंने यह संदेश देने की कोशिश की कि बीजेपी बंगाल की परंपराओं और जीवनशैली को नहीं समझती। इसके जवाब में बीजेपी ने भी यह स्पष्ट करने की कोशिश की कि वह बंगाली संस्कृति के खिलाफ नहीं है और लोगों की व्यक्तिगत पसंद का सम्मान करती है।

संतुलन बनाने की कोशिश

इस बहस में एक और पहलू भी जुड़ा—गोमांस का। बीजेपी नेताओं ने यह स्पष्ट किया कि मछली, मांस और अंडे पर कोई रोक नहीं होगी, लेकिन गोहत्या पर प्रतिबंध जारी रहेगा। यह रुख पार्टी की पारंपरिक विचारधारा और क्षेत्रीय राजनीति के बीच संतुलन बनाने की कोशिश को दर्शाता है। पूरे घटनाक्रम से यह साफ है कि ममता बनर्जी ने एक साधारण से दिखने वाले मुद्दे को प्रभावी राजनीतिक हथियार में बदल दिया। उन्होंने बीजेपी को ऐसे मुद्दे पर घेर लिया, जहां पार्टी को अपनी विचारधारा और स्थानीय वास्तविकताओं के बीच संतुलन बनाना मुश्किल हो रहा है। अंततः, यह मामला सिर्फ मांस-मछली का नहीं है, बल्कि यह पहचान, संस्कृति और राजनीतिक रणनीति का मिश्रण है। पश्चिम बंगाल की राजनीति में यह दिखाता है कि कैसे स्थानीय मुद्दे और भावनाएं राष्ट्रीय पार्टियों के लिए चुनौती बन सकती हैं। बीजेपी के लिए यह एक सबक भी है कि क्षेत्रीय संवेदनशीलताओं को नजरअंदाज करना चुनावी राजनीति में भारी पड़ सकता है, जबकि ममता बनर्जी ने इसे अपने पक्ष में भुनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

पुडुचेरी विधानसभा चुनाव के लिए मतदान 9 अप्रैल को

23 फीसदी उम्मीदवारों का क्रिमिनल बैकग्राउंड

डीएमके विधायक सेंथिल कुमार का कहना है कि, आज के युवा 50 हजार से 1 लाख रुपये तक की सैलरी वाली नौकरियां चाहते हैं, लेकिन यहां सीमित और छोटे स्तर के रोजगार ही उपलब्ध हैं।

पुडुचेरी की 30 विधानसभा सीटों के लिए हो रहे चुनाव में भिड़ रहे 294 उम्मीदवारों में 23 फीसदी उम्मीदवार आपराधिक पृष्ठभूमि वाले हैं। एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स और पुडुचेरी इलेक्शन वॉच ने उम्मीदवारों के नामांकन के साथ दाखिल हलफनामों का अध्ययन कर कई चौंकाने वाली और रोचक जानकारी शेयर की है। नामांकन भरने वाले 294 में से 291 प्रत्याशियों के हलफनामे की जांच के दौरान पाया गया कि राष्ट्रीय पार्टियों के 34, राज्य स्तरीय क्षेत्रीय पार्टियों के 63, रजिस्टर्ड लेकिन गैर मान्यता प्राप्त पार्टियों के 80 और सबसे ज्यादा 117 इंडिपेंडेंट उम्मीदवार हैं, आपराधिक पृष्ठभूमि वाले 66 उम्मीदवारों में से 38 यानी 13 फीसदी गंभीर श्रेणी के अपराधों के आरोपी हैं।

बेरोजगारी अहम मुद्दा

जबकि 2021 में हुए पिछले चुनाव में 323 में से 54 यानी 17 फीसदी उम्मीदवार आपराधिक पृष्ठभूमि के थे, कांग्रेस के 21 में से तीन, ऑल इंडिया एनआर कांग्रेस के 16 में से चार, डीएमके के 12 में से 6 और बीजेपी के 10 में से पांच उम्मीदवार आपराधिक पृष्ठभूमि वाले हैं, इन्होंने अपने हलफनामे में खुद सारा ब्यौरा दिया है, कांग्रेस के दो, आईएनआर कांग्रेस के तीन और डीएमके के पांच प्रत्याशी गंभीर अपराधों के आरोपी हैं। पुडुचेरी विधानसभा चुनाव में इस बार पूर्ण राज्य और बेरोजगारी सबसे अहम मुद्दों के रूप में उभरकर सामने आए हैं।

विधायक सेंथिल कुमार

बताया जा रहा है कि राज्य में शिक्षा के पर्याप्त संस्थान होने के बावजूद, डिग्री हासिल करने के बाद भी युवाओं को अपेक्षित रोजगार नहीं मिल पा रहा है, जिससे निराशा बढ़ रही है, डीएमके विधायक सेंथिल कुमार का कहना है कि, आज के युवा 50 हजार से 1 लाख रुपये तक की सैलरी वाली नौकरियां चाहते हैं, लेकिन यहां सीमित और छोटे स्तर के रोजगार ही उपलब्ध हैं। कांग्रेस ने भी अपने मेनिफेस्टो में नौकरी का पूरा रोडमैप देने का दावा किया है, बता दें कि पुडुचेरी की सभी विधानसभा सीटों पर एक ही चरण में मतदान 9 अप्रैल 2026 को किया जाएगा, जबकि चुनाव के नतीजे 4 मई 2026 को घोषित किए जाएंगे।

अध्यापक मार्गदर्शक का काम करते हैं। चलना आपको स्वयं पड़ता है। -चीनी कहावत

संवाद

संपादकीय

राघव चड्ढा पर बयानबाजी

आम आदमी पार्टी जब से दिल्ली में चुनाव हारी है, तब से आप में सब कुछ सही नहीं लग रहा है। राज्यसभा में आप के उपनेता राघव चड्ढा को लेकर आप में बयानबाजी का दौर शुरू हो चुका है। राघव चड्ढा तब ही शक के घेरे में आ गए थे, जब आप के कई बड़े नेता जेल जा रहे थे और राघव चड्ढा विदेश चले गए थे। जब पूरा शीर्ष नेतृत्व सरकारी एजेंसियों के शिकंजे में था, तब राघव चड्ढा को भारत में ही रहना था, लेकिन वे विदेश चले गए थे। कयास यही लगाए जा रहे थे कि राघव चड्ढा अपनी गिरफ्तारी के डर से पलायन कर गए थे। जाहिर है, जब भी किसी विपक्ष के नेता पर सवाल उठते हैं तो एक सवाल यह भी होता है कि वह भाजपा के नजदीक जा रहा है या भाजपा में जाने वाला है। राघव चड्ढा भी अपवाद नहीं रहे। पंजाब के मुख्यमंत्री भगवंत मान ने राघव चड्ढा को डिप्टी लीडर के पद से हटाए जाने के फैसले पर प्रतिक्रिया देते हुए कहा है कि चड्ढा, बीजेपी के साथ कंप्रोमाइज्ड हैं। दरअसल, राघव चड्ढा कई दिन से ऐसे मुद्दों पर तो बोल रहे थे, जो जनता से जुड़े हैं, लेकिन इतने महत्वपूर्ण नहीं हैं, जिन्हें संसद में उठाया जाता। कैटीन में समोसों के दाम पर बोलना क्या कहता है? राघव चड्ढा उन मुद्दों से पलायन कर गए, जो राष्ट्रीय स्तर के हैं। आप के दिल्ली इकाई के मुखिया सौरभ भारद्वाज ने कहा कि गुजरात में हमारे सैंकड़ों कार्यकर्ता भाजपा की पुलिस ने गिरफ्तार कर लिए, क्या सांसद साहब सदन में कुछ बोले? उन्होंने लिखा, पश्चिम बंगाल में वोट का अधिकार छीना जा रहा है। सदन में सीईसी के खिलाफ प्रस्ताव आया तो चड्ढा ने साइन करने से मना कर दिया। पार्टी ने सदन से वॉकआउट किया तो सरकार की हाजिरी लगाने के लिए बैठे रहते हैं। सौरभ भारद्वाज ने तो यहां तक कह दिया कि पिछले कुछ सालों से तुम डर गए हो राघव। सरकार के खिलाफ बोलने से घबराते हो। देश के असली मुद्दों पर बोलने से घबराते हो। उन पर यही आरोप लग रहा है कि जिस तरह से संजय सिंह सरकार के खिलाफ मुखर होते हैं, राघव चड्ढा नहीं हो पा रहे हैं। शायद वह होना भी नहीं चाहते। राघव चड्ढा एक समय में आप संयोजक अरविंद केजरीवाल के करीबी विश्वासपात्र माने जाते थे। इससे पहले, राघव चड्ढा ने आरोप लगाए थे कि उनकी आवाज को दबाने की कोशिश की जा रही है। देखते हैं राघव चड्ढा और आप नेताओं की बयानबाजी की परिणीति क्या होती है?

राघव चड्ढा कई दिन से ऐसे मुद्दों पर तो बोल रहे थे, जो जनता से जुड़े हैं, लेकिन इतने महत्वपूर्ण नहीं हैं, जिन्हें संसद में उठाया जाता। राष्ट्रीय मुद्दों से पलायन कर गए।

पाठकवाणी

भीड़ प्रबंधन में असफलता

हमारे देश की जनता को, अति उत्साही हो कर किसी भी आयोजन में अ-नियंत्रित रूप से इकट्ठे होने में मजा आता है, भले ही वहां जुटने पर कोई अनहोनी ही होने की आशंकाएं नजर क्यों नहीं आती हों। किसी भी स्थल पर भीड़ जुट रही है तो स्थानीय प्रशासन को भीड़-प्रबंधन के तहत पर्याप्त व्यवस्थाएं करनी चाहिए, जिनमें वे हमेशा नाकाम दिखाई देते हैं। बिहार के नालंदा जिले के दीपनगर थाना क्षेत्र के शीतला माता मन्दिर में हुआ भगदड़ का हादसा भी भीड़-प्रबंधन के उचित उपाय नहीं किए जाने की ही परिणीति है। भीड़ को नियंत्रित करने के समुचित प्रयास वहां किए जाते, पर्याप्त संख्या में सुरक्षाकर्मियों की ड्यूटी लगाई होती तो वहां हुआ हादसा टाला जा सकता था। पिछले दो सालों में धार्मिक स्थलों पर, खेल के मैदानों में, राजनीतिक रैलियों में भगदड़ के जितने भी हादसे हुए हैं वे भीड़-प्रबंधन मे नाकामयाबियों की वजह से ही हुए हैं जिन्हें चुस्त-दुरुस्त करने के बारे मे अभी भी गंभीरता से नही सोचा जा रहा है, जो बेहद ही अफसोसजनक है। यह सच है कि बढ़ी हुई आबादी भीड़ जुटाने का बड़ा कारक बन रही है तो ऐसे में आम लोगों मे संयम और अनुशासन बनाए रखने, अपनी बारी आने पर आगे बढ़ने के प्रयास होने चाहिए। आयोजकों के साथ, स्थानीय प्रशासन अपनी जिम्मेदारियां सही तरीकों से निभाएं तो भगदड़ और हादसों को टाला जा सकता है यह बात सभी को समझनी होगी। सरकार को भी समझनी होगी।

-नरेश कानूनगो 'शोभना', राजाराम नगर, देवास

सोशल मीडिया

राघव चड्ढा से डर गए केजरीवाल

आप पार्टी राज्यसभा सांसद और उपनेता पद से हटाए जाने की खबरें जिस तरह दिल्ली वासियों को अखर रहीं हैं वह आगे चलकर राघव चड्ढा के लिए वरदान बन सकती हैं। राघव चड्ढा के राजनीतिक ग्राफ को बढ़ाने में उनके आक्रामक भाषण, जमीनी काम और जन-केंद्रित मुद्दों को उठाने की अहम भूमिका रही है। राघव चड्ढा ने राज्यसभा में गिग वर्कर्स (डिलीवरी बॉयज), डेटा गोपनीयता, मिडिल क्लास टैक्स और टेलीकॉम कंपनियों के रिचार्ज घोटाले जैसे मुद्दों को प्रमुखता से उठाया। उनके भाषण अक्सर सोशल मीडिया पर वायरल होते रहे हैं, जिससे उनकी 'जनता के नेता' की छवि बनी। उन्होंने ब्लिंकिट के डिलीवरी एजेंट बनकर, हेलमेट पहनकर डिलीवरी करने का अनुभव लिया ताकि गिग वर्कर्स की समस्याओं (10 मिनट डिलीवरी का दबाव) को उजागर किया जा सके। संसद में उन्होंने टेलीकॉम कंपनियों द्वारा 'डेटा रोलओवर' न देने और बैंकों द्वारा ग्राहकों से मनमाने शुल्क वसूलने के खिलाफ आवाज उठाई एक चार्टर्ड अकाउंटेंट के रूप में, वे संसद में वित्तीय और तकनीकी मुद्दों (जैसे क्रिप्टो और लैंड रिकॉर्ड) पर समझदारी से बात रखते हैं, जिससे युवा पीढ़ी के बीच उनका ग्राफ बढ़ा है। एक महीने के रिचार्ज में 28 दिन को पूरे माह करवाने वाले कार्य में उनको सब मोबाइल धारियों ने धन्यवाद दिया। इससे उनका रुतबा बढ़ा उससे ना केवल पढ़े-लिखे लोग बल्कि गरीब तबके के लोगों के दिलों में उनकी जगह मजबूत हुई है। ताज्जुब की बात ये है कि भारतीय जनता पार्टी की सरकार ने उनकी उठाई बातों पर ऐक्शन लिया बल्कि लागू करने में तत्परता दिखाई। उससे केजरीवाल ही नहीं बल्कि राजनीति से जुड़े तमाम लोगों के सिर घूम गए। उन्हें लगा दाल में जरुर कुछ काला है। अब आम आदमी पार्टी की बात करें तो तो वह भी इस राघव और मोदीजी के बीच बढ़ती दोस्ती को संदेह से देख रहे हैं इसलिए उन्होंने सदन में उपनेता चड्ढा को हटाकर दूसरे नेता की नियुक्ति कर सचिवालय को सूचना दे दी है। अरे भाई जरा समझदारी दिखाते वे जो काम करा रहे थे उसका श्रेय आम आदमी पार्टी को जोर-शोर से दिला सकते थे बाद में जो होता देखा जाता। यकीनन केजरीवाल भी राघव की लोकप्रियता से डर गए।

-सुसंस्कृति परिहार की फेसबुक वॉल स

अपनी राय भेजें

फीचर डेस्क, **दैनिक जनवाणी**, गॉडविन मीडिया हाउस, बागपत रोड क्रॉसिंग, बाइपास, मेरठ (उप्र)
ईमेल:-

संपादकीय पेज पर प्रकाशित किसी भी लेख से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। ये लेखक के अपने विचार हैं।

सुरेश भाई

गंगा की कब ली जाएगी सुध?

देश में गंगा की निर्मलता और अविरलता के विषय पर एक जोरदार बहस तो हुई है, लेकिन 2014 में प्रारंभिक लागत 20 हजार करोड़ से 22 हजार 5 सौ करोड़ तक ले जाने के बाद भी गंगा जल की गुणवत्ता में सुधार की आवश्यकता है। 'कैग' ने गंगा की स्वच्छता के लिए कुछ सुझाव दिए हैं जिसमें 'सीवेज शोधन संयंत्रों' का सुरक्षा ऑडिट, विभागीय हस्तांतरण से पहले संयंत्रों की कमियां दूर करने, पर्याप्त घरेलू सीवर नेटवर्क बनाने, तटवर्ती नगरों में पर्याप्त संशोधन सुविधाओं की योजना बनाने, अशोधित सीवर के नदी में गिरने पर जिम्मेदारी तय करना शामिल हैं।

हमें अपनी सरकारों, सेठों और समाज में बहुतायत से व्याप्त पाखंड को देखना हो तो पतित पावनी मानी गई गंगा के प्रति पिछले कुछ दशकों से किए जा रहे अपने व्यवहार को देखा जा सकता है। स्वर्ग-नसेनी के दर्जे की मानी जाने वाली उत्तर भारत की यह जीवनदायिनी हम इंसानों के बर्ताव के चलते लगातार बदहाल होती जा रही हैं। अब 2027 में हरिद्वार में भरने वाला महाकुंभ भी शायद हमें अपने पाखंड को समाप्त करने की कोई शक्ति दे पाए?

उत्तराखंड की ग्रीष्मकालीन राजधानी गैरसैंण में 10 मार्च को विधानसभा में 'नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक' (कैग) की रिपोर्ट पटल पर रखी गई जिसमें गंगा-सफाई के विषय पर कहा गया कि देवप्रयाग के बाद गंगाजल आचमन योग्य नहीं है और इससे आगे ऋषिकेश और हरिद्वार तक लगभग 93 किलोमीटर में गंगा का पानी नहाने लायक भी नहीं है। शहरों से सीवेज का गंदा पानी सीधे गंगा में गिर रहा है। 'कॉलीफॉर्म बैक्टीरिया' की मात्रा तय सीमा से 32 गुना अधिक बढ़ गयी है। 'उत्तराखंड प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड' और 'राज्य गंगा मिशन' की कार्यशैली को लेकर भी चिंता जाहिर की गयी है।

राज्य ने गंगा तट पर स्थित नगरों में पूरक सीवेज सुविधाओं को बढ़ाने के लिए धन उपलब्ध नहीं कराया, जबकि इस पर राज्य की योजना के अंतर्गत 55.08 करोड़ खर्च हुये हैं। इसके बावजूद 16 नगरों में 'नमामि गंगे' की निधि से बने 'सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट' (एसटीपी) से घरों को जोड़ने के लिए राज्य निधि भी उपलब्ध नहीं कराई गई। 'कैग' की रिपोर्ट कहती है कि राज्य ने अपने संसाधनों से गंगा के तटवर्ती नगरों में सीवरेज सुविधाओं में सुधार करने में जो योगदान देना चाहिए था, वह नहीं दिया है।

विधानसभा में रखी गई 'कैग' की यह रिपोर्ट वर्ष 2018-23 की अवधि के दौरान की है जिसमें गौमुख से लेकर हरिद्वार तक 16 शहरों को शामिल किया गया है। 'एसटीपी' निर्माण व गंदे नालों की टैपिंग और इससे जुड़ी 42 परियोजनाओं में से 23 की जांच का खुलासा किया गया है जिसमें सीवेज ट्रीटमेंट, रिवर फ्रंट डेवलपमेंट, घाटों की सफाई, वृक्षारोपण आदि की जांच की गई है। 'उत्तराखंड प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड' की देहरादून, रुड़की, काशीपुर में संचालित प्रयोगशालाओं के लिए 'राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन' से 2018 में 16.21 करोड़ रुपयों की परियोजनाओं को मंजूरी दी गई थी जिसके लिए 'एनएबीएल' से मान्यता लेनी थी, ताकि प्रशिक्षण और मापांकन रिपोर्ट में सटीकता व विश्वसनीयता की परख हो सके, लेकिन 6 वर्ष बीत जाने के बाद भी मान्यता नहीं ली गई।

इससे राज्य और केंद्र के 'प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों' की प्रयोगशालाओं के परिणामों के बीच अंतर देखा गया है। यह अंतर हरिद्वार के जगजीतपुर 'एसटीपी' के परीक्षण परिणाम से सामने आया है। इसे अन्य 'एसटीपी' में भी देखा गया है। ऐसी स्थिति में 'उत्तराखंड जल संस्थान' ने भी 18 'एसटीपी' के निर्माण और प्रचालन में कमियों के कारण उन्हें नियंत्रण में नहीं लिया है। निर्धारित समय पर इनका सुरक्षा आडिट करवाने में भी लापरवाही बरती गई है। जिसके बारे में बताया गया कि 'मानव जीवन' और 'नमामि गंगे' की परिसंपत्तियों को नुकसान झेलना पड़ा है।

'चारधाम यात्रा' के मुख्य पड़ाव जोशीमठ, नंदप्रयाग, कर्णप्रयाग, रुद्रप्रयाग, कीर्तिनगर, चमोली, श्रीनगर में सीवर ट्रीटमेंट के कार्य में बहुत लापरवाही सामने आई है। जोशीमठ में हुए ऐतिहासिक भू-धंसाव का कारण भी सीवर प्रणाली में की गई लापरवाही को माना गया है। मौजूदा 'एसटीपी' के सीवेज ट्रीटमेंट की गुणवत्ता भी बेहद खराब पाई गई। 'नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल' (एनजीटी) ने गंगा सफाई पर जो आदेश दिए थे उसका पालन नहीं किया गया। जो 'एसटीपी' बने भी है उनमें पर्याप्त ट्रीटमेंट की क्षमता ही नहीं है। 'राज्य स्वच्छ गंगा मिशन' द्वारा निर्मित श्मशान घाट ज्यादातर अनुपयोगी हैं। नदी के किनारों पर फेंका गया अथवा जलाया गया अपशिष्ट नदी में जाकर बह रहा है।

गंगा के उद्गम की हालत भी बहुत चिंताजनक है जहां पर ग्लेशियर पहले से अधिक प्रतिवर्ष 38 मीटर पीछे हट रहे हैं। स्पष्ट है कि भविष्य में पानी की बहुत कमी होगी और नदियों में जमा हो रहे कूड़े - कचरे और अनियंत्रित सीवर से प्रदूषण की समस्या कम होने का नाम नहीं ले रही है। चिंताजनक है कि इस अवधि में 985.17 करोड़ रुपयों की धनराशि में से 873.17 करोड़ रुपए खर्च होने के बाद भी गंगा में गंदे नालों का पानी जाने से नहीं रोका जा सका है। गंगोत्री से उत्तरकाशी के बीच दर्जन भर से अधिक स्थानों पर गंदा पानी गंगा में जा रहा है। जिस पर विधानसभा सत्र के दौरान गंगोत्री के विधायक सुरेश चौहान ने भी चिंता जाहिर की है। यहां बहुत लंबे समय से भागीरथी में कूड़ा डालने का विरोध चल रहा है। इसके बाद यहां के जिलाधिकारी प्रशांत आर्य की कोशिशों के बाद शहर में एकत्रित कूड़े को दूसरे स्थान पर पहुंचाया गया है।

हर वर्ष उत्तराखंड से पश्चिम बंगाल तक गंगा जल की गुणवत्ता को लेकर हो रहे सर्वेक्षणों से यही संकेत मिल रहे हैं कि दिनों-दिन गंगा की सेहत में जो सुधार दिखाई देना था, उसमें निर्माण कार्यों में की जा रही लापरवाही और निरंतर फेंका जा रहा कूड़ा-कचरा गंगा की निर्मलता को आघात पहुंचा रहा है। वर्ष 2027 में हरिद्वार में होने वाले महाकुंभ से पहले गंगा की स्वच्छता सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती होगी।

प्रधानमंत्री के इस ड्रीम प्रोजेक्ट को संबंधित राज्य सरकारें और विभाग पटरी पर लाने के लिए जितनी भी कोशिशें कर रहे हैं, वह पर्याप्त नहीं है। काबिले-गौर है कि देश में गंगा की निर्मलता और अविरलता के विषय पर एक जोरदार बहस तो हुई है, लेकिन 2014 में प्रारंभिक लागत 20 हजार करोड़ से 22 हजार 5 सौ करोड़ तक ले जाने के बाद भी गंगा जल की गुणवत्ता में सुधार की आवश्यकता है। 'कैग' ने गंगा की स्वच्छता के लिए कुछ सुझाव दिए हैं जिसमें 'सीवेज शोधन संयंत्रों' का सुरक्षा ऑडिट, विभागीय हस्तांतरण से पहले संयंत्रों की कमियां दूर करने, पर्याप्त घरेलू सीवर नेटवर्क बनाने, तटवर्ती नगरों में पर्याप्त संशोधन सुविधाओं की योजना बनाने, अशोधित सीवर के नदी में गिरने पर जिम्मेदारी तय करना शामिल हैं। कूड़े-कचरे का प्रबंधन और प्रदूषण नियंत्रण की प्रयोगशालाएं मान्यता प्राप्त हों। ऑनलाइन जनसुनवाई हो, ताकि लोग गंगा की निर्मलता से जुड़ सकें।

योगेश सोनी

क्या ऊर्जा संकट से होगा तख्ता पलट?

केंद्र सरकार ने अभी तक तो ऊर्जा संकट को नियंत्रित किया हुआ है। इस मामले को लेकर जनता को यह समझना होगा कि यह कोई स्थायी समस्या नही है और यह आज नहीं तो कल खत्म हो जाएगी, लेकिन वोट अपने ही मुद्दों पर वोट करें।

आगामी कुछ दिनों में पांच राज्यों में विधानसभा होने जा रहे हैं जिसको लेकर पक्ष-विपक्ष पूरी ताकत लगाकर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। लेकिन इन चुनावों में सत्ता पक्ष के लिए चुनौती थोड़ी ज्यादा इसलिए बढ़ी हुई है, क्योंकि इस समय ऊर्जा संकट को लेकर माहौल बना हुआ है। अब सवाल यही है कि क्या विपक्ष धरातल व तथ्यात्मक मुद्दों के साथ ऊर्जा संकट का तड़का लगाकर सत्ता पक्ष को घेरता है और वहीं इसके विपरीत सत्ता पक्ष यह बताने में सार्थक हो पाती है कि सब ठीक है। जैसा कि मिडिल ईस्ट तनाव की वजह से देश में ऊर्जा संकट के दौरान बिजली, कोयला, पेट्रोल, या गैस जैसे ऊर्जा संसाधनों की मांग उनकी कुल आपूर्ति से थोड़ी अधिक हो गई, जिसकी वजह से ईंधन की कमी के कारण उद्योग, परिवहन और घरेलू उपयोग की चीजों पर थोड़ा प्रभाव गया और यदि यह प्रकरण लंबा चला तो स्थिति थोड़ी चिंताजनक हो सकती है।

इन मुद्दों को चुनावी रंग देकर लेकर विपक्ष लगातार मौजूदा सरकार को घेरने में लगा हुआ है लेकिन फिलहाल केंद्र सरकार ने अभी तक तो स्थिति को नियंत्रित किया हुआ है। इस मामले को लेकर जनता को यह समझना होगा कि यह कोई स्थायी समस्या नही है और यह आज नही तो कल खत्म हो जाएगी, लेकिन वोट देने वाले लोगों को यह समझना होगा कि वह अपने उन मुद्दों पर वोट करें, जिससे वे पांच सालों से संतुष्ट या असंतुष्ट रहे हैं। जनता को यह भी समझना होगा कि यह एक वैश्विक स्तर की आपदा है, जिसके निवारण के लिए विश्व पटल पर प्रयास भी किया जा रहा है और यदि इस वजह से कुछ समय की लिए देश गति धीमी अर्थात महंगाई बढ़ना या संसाधनों में कमी भी आ जाती है तो इस मुद्दे को लेकर वोट करने पर अपनी विचारधारा न बांधे क्योंकि आप जिन मुद्दों को बीते पांच वर्षों से गहनता के साथ समझ रहे हैं,चाहे हो सकारात्मक हो या नकारात्मक उस पर अपनी विचारधारा के साथ अपने मत का प्रयोग करना चाहिए। जनता को वोट डालते समय अपनी तरक्की, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं, और स्थानीय विकास जैसे सड़क, बिजली, पानी जैसे मुख्य मुद्दों को मध्यनजर रखते हुए अपने मत का प्रयोग करना चाहिए।

उम्मीदवार की ईमानदारी, उसकी विचारधारा और उसके द्वारा किए गए वादों की व्यावहारिकता पर बहुत कुछ निर्भर करता है क्योंकि कई ऐसे नेता भी होते हैं जो पार्टी में रहते हुए उस विचारधारा के विपरीत होते हैं, लेकिन अपनी क्षेत्रीय जनता के लिए काम बहुत बेहतर करते हैं। इन चुनावों में कई मौजूदा मुख्यमंत्रियों के लिए भी यह मुकाबला ऐतिहासिक साबित हो सकता है। ममता बनर्जी चौथी बार लगातार सत्ता में लौटने का लक्ष्य लेकर मैदान में हैं। वहीं एमके स्टेलिन दूसरी बार लगातार जनादेश पाने की कोशिश कर रहे हैं। हेमंत बिसवा भी असम में दूसरी बार सरकार बनाने की उम्मीद कर रहे हैं, जबकि पिनाराई विजयन केरल में लगातार तीसरी बार सत्ता में लौटने का रिकॉर्ड बनाने की कोशिश कर रहे हैं। वैसे तो हर राज्य का चुनाव महत्वपूर्ण माना जाता है लेकिन उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल का चुनाव पक्ष-विपक्ष के लिए वर्चस्व की लडाई मानी जाती है और जैसा कि पश्चिम बंगाल का चुनाव फिर से हर बार की तरह मुद्दों से कहीं परे होगा।

भारत युवाओं का देश है और सबसे ज्यादा युवा भी हमारे यहां ही हैं। पूरा जिंदगी पड़ी होती है मौज-मस्ती के लिए लिए मात्र एक घंटा निकाल कर वोट डालना उनको बहुत भारी लगता है। युवा चर्चा तो ऐसे करते हैं मानो वह अपनी पूर्ण रूप से स्थिति दर्ज कराएंगे लेकिन चुनाव वाले दिन बिल्कुल गायब हो जाते हैं। दरअसल अब दौर बिना किसी की गुणवत्ता की जांच के आधार पर चल पड़ा और भेड़चाल का ट्रेंड ज्यादा है। यदि किसी ने कॉलिज या ऑफिस में कह दिया वह तो चुनाव वाले दिन बाहर जा रहा है तो अधिकतर लोग उसको ही फॉलो करने लगते हैं और अपने वोट को व्यर्थ करने में बिल्कुल भी नही हिचकिचाते। जितनी देखा जा रहा है कि चुनाव पहले से ज्यादा रोमांचक होते जा रहे हैं जिसका सबसे बड़ा कारण सोशल मीडिया माना जाता है चूंकि हर छोटी व बड़ी घटना तुरंत आपके मोबाइल पर आ जाती है कि जिससे किसी भी पार्टी व नेता का घटना अनुसार सकारात्मक व नकारात्मक तस्वीर बन जाती है। इसके अलावा इतिहास व वर्तमान को समझने के लिए तुरंत गूगल भी किया जा सकता है लेकिन इस बातों के लिए राजनीति में रुचि लेना बहुत जरुरी है। आप देश के भविष्य के लिए जागरुक हैं तभी आप समझ पाएंगे अन्यथा सब व्यर्थ है। देश की तस्वीर बदलने के लिए उपस्थिति दर्ज कराना उतना ही अनिवार्य है जितना सब्जी में नमक डालना। इसके अलावा घर के बड़े-बुजुर्ग भी युवाओं व बाकी सदस्यों को वोट डालने के लिए प्रेरित करें जिससे उनकी वोट के प्रति रुचि बनी रहे। कुछ लोग कहते हैं कि उनकी राजनीति में कोई रुचि नही तो वह इसलिए वोट नही डालते लेकिन उनको समझना होगा कि वोट डालने से वह राजनीतिज्ञ नही बन जाते।

दुनियादारी की कहानी का आर्थिक पक्ष

सर्जेंद्र वज

चतुर सुजान कहते हैं कि दुनिया की कहानी, कहानी के तत्वों की भांति प्रारंभ, विकास, चरमोत्कर्ष और अंत के रूप में अनेक बार दोहराई गई है। कहा तो यहां तक जाता है कि जो कुछ आज हो रहा है और आगे जाकर होगा, ऐसा अनेक बार हो चुका होता है और आगे भी होता रहेगा। इसमें किसी का कोई दखल कोई भी मायने नहीं रखता। जहां तक कुछ होने या नहीं होने में आदमी की भूमिका का सवाल है, तो वह कर्ता नहीं अपितु निमित्त ही है। इस दृष्टि से आदमी में इस बनती बिगड़ती दुनिया में बात-बात का श्रेय लेने की होड़ नागवार गुजरती है। लेकिन आम आदमी आध्यात्मिक दृष्टि से इतनी गहराई में नहीं उतरता और कठपुतली को नायक समझने की गंभीर भूल कर बैठता है। खैर।

तीखी नजर

लेकिन अधिकांश मामलों में देखा गया है कि 'मैं' का भाव आदमी के आत्मविश्वास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। इसके चलते आदमी के अंतर्मन की ऊर्जा और चेतना में इस कदर तीव्र संचार होता है कि कभी-कभी तो आदमी अपने बूते से बाहर की बात कर जाता है या कह जाता है। जिसका जनमानस पर कुछ ऐसा रुआब पड़ता है कि संबंधित शख्सियत को पालनहार और तारणहार तक मान लिया जाता है। वैसे जिनका मनोबल कमजोर होता है, वह दूसरों की दया पर ही निर्भर रहा करते हैं। इसके विपरीत आत्मविश्वास की प्रबलता कभी-कभी तो नियति तक को चुनौती दे बैठती है। अनाधिकार चेष्टा इनकी रग-रग में समाहित हुआ करती है

आजकल तो विशेष रूप से राजनीति में उलजुलूल विचार और व्यवहार का अनुसरण करने की मनोवृत्ति भी दिखाई देती है। जिसे आमतौर पर अंधभक्त और अंध समर्थक की परिभाषा के तहत चिन्हित किया जा सकता है। ठीक इसी तरह राजनीति के साथ-साथ सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक जगत में भी एक प्रकार से कठपुतली के खेल का दृश्य दिखाई देता है। जिसके चलते जो प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, वह वास्तविक नहीं होता। और जो वास्तविक होता है वह प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर नहीं होता। लेकिन आम आदमी अपनी निजी समस्याओं में ही इस कदर उलझा हुआ रहता है कि कब, कहां और कैसा क्या हो रहा है ? इस विषय पर अधिक माथापच्ची नहीं करता।

यही कारण है कि हमारे यहां हर किसी की दुकानदारी धड़ल्ले से चल रही है। अगर आदमी में सेल्समैनशिप के गुण हैं, तो वह किसी भी क्षेत्र में अपना परचम लहरा सकता है। आजकल हर तरह की क्रिया में आर्थिक क्रिया का अंश दिखाई देता है। इस अर्थ में अब अर्थशास्त्र के दायरे में राजनीति ही नहीं अपितु सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियां का भी समावेश कर लिया जाना चाहिए। दरअसल आजकल के दौर में आदमी का दृष्टिकोण ही आर्थिक हो गया है। व्यवहार में तो नजदीकी रिश्तों की भी आर्थिक परिभाषा की जाने लगी है। जिस दिन राजनीति, समाज, धर्म और संस्कृति से अर्थ निकल जाएगा तब इसका असल 'अर्थ' आम आदमी के अंतर्मन में दिव्य आनंद की असीम ऊर्जा का संचार कर सकेगा।

अमृतवाणी

राजा की तस्वीर

एक राजा था, जिसकी केवल एक टांग और एक आंख थी। उस राज्य में सभी लोग खुशहाल थे क्योंकि राजा बहुत बुद्धिमान और प्रतापी था। एक बार राजा के विचार आया कि क्यों खुद की एक तस्वीर बनवायी जाए। फिर क्या था, देश विदेशों से चित्रकारों को बुलवाया गया और एक से एक बड़े चित्रकार राजा के दरबार में आए। राजा ने उन सभी से हाथ जोड़ कर आग्रह किया कि वो उसकी एक बहुत सुंदर तस्वीर बनाएं जो राजमहल में लगायी जाएगी। सारे चित्रकार सोचने लगे कि राजा तो पहले से ही विकलांग है, फिर उसकी तस्वीर को बहुत सुंदर कैसे बनाया जा सकता है, ये तो संभव ही नहीं है और अगर तस्वीर सुंदर नहीं बनी तो राजा गुस्सा होकर दंड देगा। यही सोचकर सारे चित्रकारों ने राजा की तस्वीर बनाने से मना कर दिया। तभी पीछे से एक चित्रकार ने अपना हाथ खड़ा किया और बोला कि मैं आपकी बहुत सुन्दर तस्वीर बनाऊंगा जो आपको जरूर पसंद आएगी। चित्रकार राजा की आज्ञा लेकर तस्वीर बनाने में जुट गया। काफी देर बाद उसने एक तस्वीर तैयार की जिसे देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और सारे चित्रकारों ने अपने दांतों तले उंगली दबा ली। उस चित्रकार ने एक ऐसी तस्वीर बनायीं जिसमें राजा एक टांग को मोड़कर जमीन पे बैठा है और एक आंख बंद करके अपने शिकार पे निशाना लगा रहा है। राजा ये देखकर बहुत प्रसन्न हुआ कि उस चित्रकार ने राजा की कमजोरियों को छिपाकर कितनी चतुराई से एक सुंदर तस्वीर बनाई है। राजा ने उसे खूब इनाम एवं धन दौलत दी। क्यों ना हम भी दूसरों की कमियों को छुपाएं, अच्छाइयों पर ध्यान दें।

सम्पादकीय

'पाषाण युग' की धमकी के बीच जलता विश्व, जंग से ज्यादा खतरनाक होती बयानबाजी

ईरान के खिलाफ इजराइल और अमेरिका के साझा हमले के बाद दुनिया भर में इस बात को लेकर चिंता जताई जा रही है कि अगर युद्ध और लंबा खिंचा तो इसके असर से बहुत सारे देशों में बहुस्तरीय संकट पैदा होंगे। युद्ध शुरू होने के करीब एक महीने के बाद यह साफ देखा जा सकता है कि कई देशों में तेल और गैस का व्यापक संकट खड़ा हो गया है और आम जनजीवन बुरी तरह प्रभावित हो रहा है। युद्ध में शामिल देशों के शीर्ष नेतृत्व से यह उम्मीद की जाती है कि वे संयम और धीरज के साथ घटनाओं और परिस्थितियों पर परिपक्व टिप्पणी करें, ताकि तनाव को कम करने में मदद मिले और युद्ध को खत्म करने का कोई रास्ता निकले। मगर अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप को शायद इन बातों को गंभीरता से लेने की जरूरत महसूस नहीं होती। यह बेवजह नहीं है कि आए दिन वे कोई न कोई ऐसी टिप्पणी कर देते हैं, जिससे स्थितियां ज्यादा जटिल हो जाती हैं। गौरतलब है कि गुरुवार को राष्ट्र के नाम संबोधन में ट्रंप ने कहा कि अमेरिका आने वाले दो-तीन हफ्तों में ईरान पर बड़ा हमला करने जा रहा है और हम उन्हें पाषाण युग में पहुंचा देंगे। यह कोई पहला मौका नहीं है, जब ट्रंप ने कोई ऐसा बयान दिया है, जिससे युद्ध खत्म होने की कोई राह निकलने के बजाय स्थिति और बिगड़ने की ही भूमिका बनी। इससे पहले भी वे अपने गैरजरूरी बयानों के जरिए तनाव और टकराव को ज्यादा तीखा बनाने की कोशिश कर चुके हैं। सवाल है कि उन्हें ऐसा क्यों लगता है कि अमेरिका के राष्ट्रपति होने के नाते कही गई उनकी बातों से केवल डर और समर्पण ही पैदा होगा। ऐसे बयानों का हासिल आखिर क्या होता है, सिवाय इसके कि तनाव में और ज्यादा बढ़ोतरी हो जाती है, दोतरफा हमले और तेज हो जाते हैं। अपने ऊपर हमले के बाद ईरान ने जिस तरह लगातार कड़ी प्रतिक्रिया दी है, मिसाइलों के जरिए अमेरिकी और इजराइली ठिकानों पर सटीक हमले किए हैं, उससे साफ है कि वह फिलहाल सामना करने के रुख पर कायम है। मगर इस सबका नतीजा यह सामने आ रहा है कि दुनिया के बहुत सारे देश अब धीरे-धीरे कई तरह की संकटों से घिर रहे हैं। ईरान ने जब से होर्मुज जलमार्ग को बाधित किया है, उसके बाद भारत सहित कई देशों में तेल और गैस की आपूर्ति व्यापक पैमाने पर बाधित हुई है। ऊर्जा की कमी से उपजी मुश्किल अब जिस स्तर पर गहराती जा रही है, उससे समूची दुनिया किसी न किसी रूप से प्रभावित होने वाली है। अभी से दबे स्वर में ऊर्जा संकट की वजह से सब ठप पड़ने की आशंका जताई जाने लगी है। जिन देशों के पास अपने संसाधन हैं, वे शायद संकट का सामना कुछ समय तक कर लेंगे, लेकिन जहां कच्चे तेल और गैस की आपूर्ति के लिए अन्य देशों पर निर्भरता है, वहां आने वाले दिनों में कैसी परिस्थिति पैदा हो सकती है, इसका अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं है। इस संकट की व्यापकता की अनदेखी करते हुए ट्रंप जिस तरह जंग की आग को और भड़काने वाले बयान देते हैं, उससे यही लगता है कि शायद समस्या का हल निकालने और शांति कायम करने में उनकी कोई रुचि नहीं है। यह ध्यान रखने की जरूरत है कि युद्ध भले ही अमेरिका-इजराइल और ईरान के बीच हो रहा हो, लेकिन उसकी मार कई देशों को झेलनी पड़ रही है। जबकि यह भी तय है कि समस्या का हल आखिर संवाद के जरिए ही निकलना है। अमेरिका के रक्षा मंत्री पीट हेगसेथ ने जनरल रैंडी जॉर्ज को अपना पद छोड़ने के लिए कह दिया है। मीडिया रिपोर्ट्स के मुताबिक, ईरान के साथ चल रहे युद्ध के बीच यह बड़ा फैसला लिया गया है।

कहानी

भक्त शिरोमणी

भगवान का नाम होश खोकर सुंदरता से आलापना ही उनकी चाह, ब्रह्मानंद था । भजन गाते केदार राग में वे रंग जाते । इस राग की रसमोहिनी से प्रत्यक्ष श्रीकृष्ण उन्हें अंकित हुए थे । इस राग से उन्होंने अनेकों के दुख दूर किए तथा कितने ही लोगों का सुख बढाया था । राग के स्वरों से सर्पदंश हुए एक हरिजन बालक के प्राण वापस आए थे । एक बार एक भला गृहस्थ ब्राह्मण नरसी के पास आया । बेटी की शादी हेतु धन कहां से लाया जाए यह चिंता उसे सता रही थी । नरसी की महती उसने सुनी थी । वह इस भक्तश्रेष्ठ की शरण में आया । नरसी ने उससे पूछा, "कितना धन चाहिए ?" ब्राह्मण ने डरते डरते उत्तर दिया, "500 रुपये." वे साहूकार के घर गए । लोभी तथा चाणाक्ष साहूकार को नरसी का भक्ति वैभव उसे मालूम था । उनके केदार राग की कीर्ती उसने सुनी थी । उसने कहा, "पैसे देता हूं; किंतु धरोहर क्या रखोगे ?" साहूकार ने एक मार्ग सुझाया, "तुम्हारा केदार राग धरोहर रखो । पैसा देता हूं । " संत नरसी मेहता के पास वह ही एक मूल्यवान चीज थी । फिर भी 'अब श्रीकृष्ण के प्रत्यक्ष दर्शन से वंचित रहुंगा । जीवन का सर्वश्रेष्ठ आनंद खो बैठुंगा ', यह विचार उनके मन में नहीं था । उन्होंने कहा, "केदार राग धरोहर के रूप में रखो; किंतु ब्राह्मण को धन दो । " ' ब्याजसमेत पैसा वापस होने तक नरसी केदार राग भूले से भी गाएगा नहीं, ', यह प्रमुख शर्त थी । मंगल कार्य संपन्न हुआ । उस आनंद के सामने अपने नुकसान की खंत संत नरसी को नहीं लगी । केदार राग के बिना भजन, कीर्तन शुरू था; किंतु मजा नहीं था, मन लग नहीं रहा था । भगवान के प्रत्यक्ष दर्शन बिना हृदय की प्यास बुझ नहीं रही थी । दिन-पर-दिन निकल गए; किंतु धन नहीं मिल रहा था । साहूकार का कर्जा नहीं उतर रहा था तथा केदार राग बंधमुक्त हुए बिना नरसींको शांति नहीं मिल रही थी । उसी समय निंदकों ने भी उनकी भक्ति झूठी होने के आरोप किए । राजा द्वारा नरसीं को बुलाया गया । उनकी भक्ति की परिक्षा लेना तय हुआ - 'राजमहल के एक कक्ष में श्रीकृष्ण की एक मूर्तिरखी गई । मूर्ति के हाथ में एक पुष्पहार दिया गया । उस मूर्ति के आगे नरसीं अपना भजन, कीर्तन करें । श्रीकृष्ण सजीव होकर नरसीं के गले में पुष्पहार पहनाए । यदि यह बात विशिष्ट कालावधि में घटित नहीं हुई, तो नरसी के उपर लगाए आरोप सही मानकर शासन किया जाएगा । ' यह राजाज्ञा नरसीं को सुनाई गई । नरसी अविचल थे ! उन्होंने कहा, "प्रभू की इच्छा होगी वैसा ही होगा । " नरसीं ने श्रीकृष्ण के सामने आसन जमाया, टाळवीणा ली । 'नरसीं की भक्ति सच्ची अथवा निंदकों की आसुरी शक्ति सच्ची ', यह निर्णय लगना था । नटनागर को भक्तों की परिक्षा लेने का शौक ! नरसीं हेतु प्रकट होना, श्रीकृष्ण के लिए असंभव थोडे ही था ! केदार राग आलापे बिना श्रीहरी अपनी जग हसे न हिले, क्या संत नरसी मेहता की साधना, भक्ति इतनी लूली-लंगडी, दुबली थी ? समय आगे-आगे जा रहा था । बीच रात का समय आया । नरसीं की कसौटी का क्षण दूर नहीं था । विरोधकों की आशाएं जागृत हुई । उसी समय नगरी में चमत्कार हुआ । साहूकार के दरवाजेपर हलकी सी थपकी हुई । नरसी मेहता की आवाज उसे सुनाई दी, "कृपा कर के दरवाजा खोलिए ।" साहूकार ने स्वागत किया । नरसीं ने ब्याज एवं मूल रखा तथा कहा, "पैसे वापस करने में देर हुई । क्षमा करना । 'केदार' राग मुक्त हुआ ऐसी रसीद दो । " साहूकार ने पैसे लिए तथा करारपत्र निकाला । पैसा पहुंचने के हस्ताक्षर कर कागज संत नरसी मेहता को दे दिया । इधर भजन करते संत नरसी मेहता ने ऐसे ही आंख खोलकर कृष्णमूर्तिकी तरफ देखा । उतने में एक कागज हलके से उनके सामने आया । ब्याज-मूल पहुंचने का साहूकार का हस्ताक्षर किया करार पत्र देंखकर नरसी अचंभित हुए ! उनके आनंद की सीमा नहीं रही । श्रीकृष्ण की लीला अगाध थी । उनका केदार मुक्त हुआ था ! नरसीं ने केदार राग में भजन आलापना आरंभ किया ।

जरूरी था ट्रांसजेंडर कानून में बदलाव

नेशनल लीगल सर्विसेज अथारिटी, नालसा और द कर्नाटक स्टेट जेंडर एंड सेक्सुअलिटी माइनारिटीज फार कन्वर्जेंस जैसी संस्थाएं यह कह कर विरोध कर रही हैं कि किसी भी व्यक्ति को उसकी आनुवांशिक संरचना से इतर इच्छानुसार अपना लिंग घोषित करने का अधिकार होना चाहिए। नालसा बनाम केंद्र सरकार वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने नालसा का यह तर्क माना था और 2019 का ट्रांसजेंडर अधिनियम उसी आधार पर बना था। अब संशोधन विधेयक ने पुनः ट्रांसजेंडर एक्टिविज्म और लिंग पहचान राजनीति को विमर्श का बिंदु बना दिया है। सामान्यजन को भले ही आश्चर्य हो कि किसी व्यक्ति का लिंग निर्धारण क्रोमोसोम जैविकी की अपेक्षा उसकी भावनाओं पर कैसे आधारित हो सकता है, परंतु ऐसा मत पश्चिम के अकादमिक जगत और राजनीति में प्रबल रूप ले चुका है। लिंग पहचान की स्वघोषणा से ऐसी विचित्र स्थिति बन गई है कि पुरुष महिला प्रसाधन कक्ष और महिला जेलों में प्रवेश पा रहे हैं एवं महिला खेल एवं प्रतिस्पर्धाओं में भाग ले रहे हैं। इसी तरह पश्चिम में 'शी' या 'ही' की बजाय 'जी' और 'हिम' या 'हर' के स्थान पर 'हिअर' जैसे लिंग निरपेक्ष सर्वनामों के उपयोग की हठ है। यह दुष्चेष्टा माता-पिता की सहमति के बिना बच्चों को स्कूल में अपना नाम और सर्वनाम बदलने की अनुमति देती है और चिकित्सकों द्वारा अवयस्कों के लिंग परिवर्तन की पैरवी भी करती है। भारत में

गत दिनों ट्रांसजेंडर के अधिकारों से जुड़े संशोधन विधेयक को राष्ट्रपति की मंजूरी मिल गई। 2019 के अधिनियम में सुधार की दृष्टि से लाए गए ट्रांसजेंडर (अधिकारों का संरक्षण) संशोधन विधेयक में किसी को जबरन ट्रांसजेंडर दर्शाने या उससे भीख मंगवाने पर 10 वर्ष की सजा का प्रविधान है। बच्चों की ऐसी प्रस्तुति-शोषण पर यह सजा आजीवन कारावास तक हो सकती है।

अगवा कर ट्रांसजेंडर बनाने के उद्देश्य से अंग-भंग पर भी कड़ी सजा का प्रविधान है। मौजूदा कानून में ट्रांसजेंडरों के प्रति भेदभाव-दुर्व्यवहार पर दो साल तक की सजा थी। पहले से व्यापक और कड़े प्रविधानों के बावजूद इस बिल का विरोध हो रहा है। विरोध का मूल कारण वह प्रस्ताव है, जो ट्रांसजेंडर पहचान को स्व-अनुभूत लिंग पहचान की अपेक्षा मेडिकल सत्यापन से तय करता है। नए विधेयक के बाद ट्रांसजेंडर को उचित अधिकारी से मेडिकल प्रमाणपत्र लेना होगा।

नेशनल लीगल सर्विसेज अथारिटी, नालसा और द कर्नाटक स्टेट जेंडर एंड सेक्सुअलिटी माइनारिटीज फार कन्वर्जेंस जैसी संस्थाएं यह कह कर विरोध कर रही हैं कि किसी भी व्यक्ति को उसकी आनुवांशिक संरचना से इतर इच्छानुसार अपना लिंग घोषित करने का अधिकार होना चाहिए। नालसा बनाम केंद्र सरकार वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने नालसा का यह तर्क माना था और 2019 का ट्रांसजेंडर अधिनियम उसी आधार पर बना था। अब संशोधन विधेयक ने पुनः ट्रांसजेंडर एक्टिविज्म और लिंग पहचान राजनीति को विमर्श का बिंदु बना दिया है। सामान्यजन को भले ही आश्चर्य हो कि किसी व्यक्ति का लिंग निर्धारण क्रोमोसोम जैविकी की अपेक्षा उसकी भावनाओं पर कैसे आधारित हो सकता है, परंतु ऐसा मत पश्चिम के अकादमिक जगत और राजनीति में प्रबल रूप ले चुका है।

लिंग पहचान की स्वघोषणा से ऐसी विचित्र स्थिति बन गई है कि पुरुष महिला प्रसाधन कक्ष और महिला जेलों में प्रवेश पा रहे हैं एवं महिला खेल एवं प्रतिस्पर्धाओं में भाग ले रहे हैं। इसी तरह पश्चिम में 'शी' या 'ही' की बजाय 'जी' और 'हिम' या 'हर' के स्थान पर 'हिअर' जैसे लिंग निरपेक्ष सर्वनामों के उपयोग की हठ है। यह दुष्चेष्टा माता-पिता की सहमति के बिना बच्चों को स्कूल में अपना नाम और सर्वनाम बदलने की अनुमति देती है और चिकित्सकों द्वारा अवयस्कों के लिंग परिवर्तन की पैरवी भी करती है। भारत में अभी तक अवयस्कों को ऐसे अधिकार नहीं हैं, परंतु यदि पश्चिम प्रेरित पैरवी रोकी नहीं गई तो इस सक्रियता की दिशा वही होगी। इस पूरे विमर्श में बड़ा प्रश्न यह है कि ऐसी विकृति को बढ़ावा देने का उद्देश्य आखिर क्या है?

ट्रांसजेंडर सक्रियता, यौन स्वच्छंदता को बढ़ावा नए वाम की उस रणनीति का हिस्सा है, जो श्रमिक केंद्रित पुराने मार्क्सवाद से आगे बढ़ कर ऐसे राजनीतिक गठबंधन का निर्माण करना चाहती है, जिसमें श्रमिकों के साथ-साथ मजहबी, भाषाई, नस्लीय एवं लैंगिक अल्पसंख्यकों का समूह बने। नव वाम का मक्का माने जाने वाले फ्रैंकफर्ट स्कूल के विचारकों का मानना है कि सत्ता केवल पूंजीपति और राज्यों के पास नहीं बल्कि पंथ, राष्ट्र, परिवार जैसे सामाजिक संस्थान, भाषाई एवं सांस्कृतिक प्रभुत्व, सामाजिक और नैतिक मान्यताओं में निहित है।

इसी विचार से संबद्ध जूडिथ बटलर की नजर में जैविक लिंग को महिला या पुरुष जैसी पहचान में बांधना उसी वर्चस्व का प्रतीक है। यौन क्रांति के जनक विल्हेम राईख के अनुसार पितृसत्तात्मक परिवार विनम्र, फासीवादी बनाने का कारखाना है। राईख के अनुसार बचपन से यौन मुक्ति को प्रोत्साहित कर व्यक्ति का चारित्रिक कवच तोड़ा जा सकता है और फिर वह सभी प्राधिकारों के खिलाफ विद्रोही बन जाएगा। 'नव वामपंथ के पिता' हर्बर्ट मार्क्यूस ने परिवार व्यवस्था को तोड़ने और पूंजीवादी पश्चिमी समाज की उत्पादकता को पंगु बनाने के लिए यौन स्वच्छंदता और बहुगामी व्यभिचार को बढ़ावा देने की बात कही। कट्टरपंथी नारीवादी शुलामिथ फायरस्टोन ने कहा कि लिंगों के बीच जैविक अंतर सभी उत्पीड़न की जड़ है और द्विआधारी लिंग वर्ग का उन्मूलन होना चाहिए। उनके अनुसार जब तक महिलाएं 'प्रजनन के अत्याचार' और बच्चे अपने माता-पिता से 'मुक्त' नहीं हो जाते, तब तक सच्ची क्रांति असंभव है।

नव वामपंथ जेंडर फ्लुइडिटि यानी लिंग 'तरलता' की बात करता है। महिला और पुरुष रूपी पारंपरिक लिंग द्वैत को चुनौती देने और ट्रांसजेंडर अस्पष्टता को बढ़ावा देने में सबसे बड़ा योगदान जान मनी और अल्फ्रेड किंसे का है। मनोविज्ञानी जान मनी के मुताबिक लिंग पहचान जैविक संरचना की अपेक्षा काफी हद तक पालन-पोषण का परिणाम है। मनी ने शिशुओं की लिंग परिवर्तन सर्जरी एवं हार्मोनल थेरेपी की वकालत की और बच्चों को उनके विपरीत लिंग वाले परिवेश में पालने पर जोर दिया। तमाम सर्वेक्षण इसकी पुष्टि करते हैं कि बालपन में ऐसे विचित्र प्रयोग भोगने वालों में आत्महत्या की प्रवृत्ति बढ़ जाती है। ऐसे प्रकरण पश्चिम ही नहीं, बल्कि भारत में भी होते रहे हैं। 2021 में प्रमुख ट्रांसजेंडर एक्टिविस्ट और केरल की पहली ट्रांसजेंडर रेडियो जाकी अनन्या कुमारी ऐलेक्स ने गलत सेक्स रीअसाइनमेंट सर्जरी को अपनी आत्महत्या का कारण बताया था। यह दुखद है कि सामाजिक व्यवस्था को गहरी क्षति पहुंचाने के बावजूद ऐसे मनोविज्ञानी, समाजशास्त्री और अकादमिकों की विश्व पटल पर तूती बोल रही है।

बंगाल में मुस्लिम मतों का रुझान

प्रश्न है कि इस बार मुस्लिम मतों की प्रवृत्ति किस ओर रहेगी? अगर पिछले विधानसभा चुनाव को आधार बनाएं तो मुर्शिदाबाद, मालदा, उत्तर दिनाजपुर, बीरभूम और साउथ 24 परगना जैसे जिलों में 85 ऐसी सीटें हैं, जिन पर मुस्लिम जनसंख्या 35 प्रतिशत से ज्यादा है। इनमें से 75 सीटें तृणमूल के पास हैं। जितनी आक्रामक होकर तृणमूल मुसलमानों के साथ खड़ी होती है, उससे उनका ध्रुवीकरण उसके पक्ष में बनता है। मुर्शिदाबाद में पिछले वर्ष हिंदू विरोधी भयानक दंगे में जब लोग पलायन करने को मजबूर थे, तब ममता कोलकाता में इमामों और मौलवियों की सभा में दंगों के लिए भाजपा और आरएसएस को दोषी ठहरा रही थीं। बंगाल में सीएए विरोधी आंदोलन के समय भी भारी हिंसा हुई थी, पर ममता सरकार ने उपद्रवियों के विरुद्ध कड़ी कार्रवाई नहीं की। एनआरसी और सीएए का भय दिखाकर ममता मुसलमानों को

पश्चिम बंगाल चुनाव का एक प्रमुख विश्लेषण हमेशा मुस्लिम मतों पर केंद्रित रहता है। कई वर्षों से राज्य की सत्ता पर काबिज मुख्यमंत्री ममता बनर्जी की निरंतर विजय में मुस्लिम मतों की प्रमुख भूमिका मानी जाती रही है। 2011 की जनगणना के अनुसार बंगाल की आबादी करीब 9.13 करोड़ थी, जिसमें मुस्लिम लगभग 2.5 करोड़ थे। इस समय बंगाल की कुल जनसंख्या 10.5 करोड़ से ऊपर होगी, जिसमें मुस्लिम तीन करोड़ से अधिक हो सकते हैं। बंगाल में मुस्लिम बहुल जिले हैं मुर्शिदाबाद-66.3 प्रतिशत, मालदा-51.3, उत्तर दिनाजपुर-50, बीरभूम-37, दक्षिण 24 परगना-35.5 और नादिया-26.7 प्रतिशत।

यदि भाजपा जबरदस्त टक्कर देने के बावजूद पिछले विधानसभा चुनाव में तृणमूल कांग्रेस की सत्ता को नहीं हिला पाई तो उसका एक कारण मुस्लिम वोट भी थे। मुर्शिदाबाद के बेलडांगा में बाबरी मस्जिद की नींव रखने वाले पूर्व तृणमूल नेता हुमायूं कबीर ने असदुद्दीन ओवैसी की एआइएमआइएम से गठबंधन कर उसे आठ सीटें दी हैं। हुमायूं कबीर ने 182 सीटों पर चुनाव लड़ने की तैयारी के साथ सौ से ज्यादा सीटों पर मुस्लिम उम्मीदवार उतारने की घोषणा की है। पिछली बार फुरफुरा शरीफ के इमाम ने भी अपनी पार्टी बनाकर कांग्रेस और वाम मोर्चा के साथ गठबंधन किया था, पर उनका भी प्रभाव नहीं पड़ा और मुसलमान कुल मिलाकर तृणमूल के साथ ही गए। मुसलमान भाजपा को हराने के लिए मतदान करते हैं।

प्रश्न है कि इस बार मुस्लिम मतों की प्रवृत्ति किस ओर रहेगी? अगर पिछले विधानसभा चुनाव को आधार बनाएं तो मुर्शिदाबाद, मालदा, उत्तर दिनाजपुर, बीरभूम और साउथ 24 परगना जैसे जिलों में 85 ऐसी सीटें हैं, जिन पर मुस्लिम जनसंख्या 35 प्रतिशत से ज्यादा है। इनमें से 75 सीटें तृणमूल के पास हैं। जितनी आक्रामक होकर तृणमूल मुसलमानों के साथ खड़ी होती है, उससे उनका ध्रुवीकरण उसके पक्ष में बनता है। मुर्शिदाबाद में पिछले वर्ष हिंदू विरोधी भयानक दंगे में जब लोग पलायन करने को मजबूर थे, तब ममता कोलकाता में इमामों और मौलवियों की सभा में दंगों के लिए भाजपा और आरएसएस

को दोषी ठहरा रही थीं। बंगाल में सीएए विरोधी आंदोलन के समय भी भारी हिंसा हुई थी, पर ममता सरकार ने उपद्रवियों के विरुद्ध कड़ी कार्रवाई नहीं की। एनआरसी और सीएए का भय दिखाकर ममता मुसलमानों को आभास दिलाती रहती हैं कि उनके सत्ता में रहने से ही वे सुरक्षित हैं। मुसलमानों को साथ रखने के लिए भाजपा का भय उनका बहुत बड़ा अस्त्र है। 2011 के चुनाव में ममता ने सच्चर कमेटी की रिपोर्ट लागू करने का वादा किया था। दो साल बाद उन्होंने घोषणा की कि रिपोर्ट का 90 प्रतिशत हिस्सा लागू किया जा चुका है। शायद ही किसी राज्य सरकार ने इतनी त्वरित गति से ऐसा किया हो। हर चुनाव में ममता मुसलमानों के लिए कुछ नई घोषणाएं करती हैं। आचार संहिता लागू होने से दो दिन पहले ही उन्होंने इमामों का भत्ता बढ़ाने की घोषणा की। मुस्लिम छात्र-छात्राओं की स्कालरशिप के लिए वे विशेष योजना चलाती हैं। चुनाव से पहले अंतरिम बजट में भी उनकी सरकार ने अल्पसंख्यक मामलों के लिए 5,700 करोड़ रुपये जारी किए। मुसलमानों के सामने यह साफ है कि अगर तृणमूल हारती है तो सत्ता में भाजपा आएगी। इससे मुस्लिम मतों के तृणमूल के साथ जाने के ही संकेत मिलते हैं, किंतु हुमायूं कबीर की आम जनता उन्नयन पार्टी बंगाल में एक नया प्रयोग है। बाबरी मस्जिद की नींव रखते समय एकत्रित भारी भीड़ से माहौल भी बनता दिखा था। कबीर मुसलमानों के बीच अपने चेहरे के रूप में उभर रहे हैं। तृणमूल कांग्रेस ने अपने कुल 291 उम्मीदवारों में 47 मुस्लिम उतारे हैं। यानी करीब 18 प्रतिशत। पिछली बार की तरह ममता ने मुस्लिम प्रभाव वाले क्षेत्रों से भी हिंदू प्रत्याशी उतारे हैं। वस्तुतः ममता ने मुसलमानों को बहुत ज्यादा टिकट कभी नहीं दिए। इसे हुमायूं कबीर, ओवैसी और अन्य मुस्लिम नेता मुद्दा बना रहे हैं। कहना कठिन है कि यदि हुमायूं कबीर का गठबंधन सौ से ऊपर सीटों पर मुस्लिम प्रत्याशी खड़ा करता है तो उसका कुछ तो असर होगा ही। हुमायूं कबीर और ओवैसी वक्फ संशोधन कानून को मुद्दा बना रहे हैं, जिसे कभी लागू न करने की घोषणा करने वाली ममता ने अंततः उसे चुपचाप लागू कर दिया।

अराजकता से घिरा बंगाल

पश्चिम बंगाल के मालदा जिले में मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण यानी एसआइआर के काम में सुप्रीम कोर्ट के आदेश से तैनात न्यायिक अधिकारियों को जिस तरह घंटों बंधक बनाए रखा गया, वह इस राज्य में अराजकता हावी हो जाने का एक और प्रमाण ही है। इसी कारण इस घटना पर सुप्रीम कोर्ट ने बंगाल सरकार को कड़ी फटकार लगाते हुए कहा कि मालदा जिले में कानून व्यवस्था पूरी तरह चरमरा गई है। इस घटना की गंभीरता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि जिन अधिकारियों को बंधक बनाया गया, उनमें महिलाएं भी थीं और उन्हें तब मुक्ति मिल सकी, जब खुद सुप्रीम कोर्ट के प्रधान न्यायाधीश ने सख्त आदेश दिए। चूंकि राज्य के शीर्ष अफसर बंधक बनाए गए न्यायिक अधिकारियों को

छुड़ाने में दिलचस्पी नहीं दिखा रहे थे, इसलिए सुप्रीम कोर्ट ने चुनाव आयोग को इस घटना की जांच सीबीआइ या एनआइए से कराने के निर्देश दिए। इसका अर्थ है कि उसे राज्य के शासन-प्रशासन पर तनिक भी भरोसा नहीं। यह बंगाल सरकार के लिए शर्मिंदगी का विषय होना चाहिए, लेकिन यह तय है कि उसकी सेहत पर कोई असर नहीं पड़ने वाला। यदि ममता सत्ता में लौटीं तो बंगाल में कानून व्यवस्था को चुनौती देने वाली ऐसी अराजक घटनाएं फिर से आम हो सकती हैं। हिंसक घटनाओं के सामने पुलिस प्रशासन के मूकदर्शक बने रहने के मामलों में बंगाल सरकार को हाई कोर्ट एवं सुप्रीम कोर्ट से न जाने कितनी बार फटकार लग चुकी है, पर नतीजा ढाक के तीन पात वाला है। मालदा की शर्मनाक घटना पर मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने कहा कि उनकी सारी शक्तियां छीन ली गई हैं। यदि सच में ऐसा है तो फिर उनकी सरकार के वकील ने सुप्रीम कोर्ट से यह आग्रह क्यों किया कि वह अपनी इस टिप्पणी को हटा ले कि कानून व्यवस्था ध्वस्त हो गई है? वास्तव में ऐसा कोई निष्कर्ष निकालना निरा झूठ है कि चुनाव वाले राज्य में सरकार शक्तिहीन हो जाती है। सच यह है कि ममता शासन में बंगाल प्रशासन का बुरी तरह राजनीतिकरण हो चुका है और कई पुलिस एवं प्रशासनिक अधिकारी तृणमूल कांग्रेस के एजेंट के तौर पर काम करते हैं। जिन अराजक तत्वों ने मालदा में न्यायिक अधिकारियों को बंधक बनाया, उन्हें वोटर लिस्ट से नाम कट जाने वाले क्षुब्ध वोटरों की संज्ञा देना सुप्रीम कोर्ट को धोखा देना ही है। मालदा में मनमानी करने वाले अराजक तत्व ही थे, इसका पता इससे चलता है कि गत दिवस उन्होंने फिर से उत्पात मचाया और पुलिस पर हमला किया। अच्छा हो कि सुप्रीम कोर्ट इस पर ध्यान दे कि बंगाल प्रशासन अराजकता से दृढ़ता से निपटना सीखे-केवल चुनाव के वक्त ही नहीं, बल्कि सामान्य दिनों में भी।

जागरूक संपादकीय

जागरूक टाइम्स। मुंबई। शनिवार, 4 अप्रैल 2026

श्रीरामचरितमानस

तेहि कारन आवत हियं हारे।
कामी काक बलाक बिचारे॥
आवत ऐहिं सर अति कठिनाई।
राम कृपा बिनु आइ न जाई॥

भावार्थ : इसी कारण बेचारे कौवे और बगुले रूपी विषयी लोग यहां आते हुए हृदय में हार मान जाते हैं, क्योंकि इस सरोवर तक आने में कठिनाइयां बहुत हैं। श्री रामजी की कृपा बिना यहां नहीं आया जाता॥

केरलम का गणित

केरलम विधानसभा चुनाव अपने अंतिम दौर में है और वोटिंग में चंद दिन ही बचे हैं। सियासी दलों ने अपनी-अपनी जीत के लिए पूरी ताकत झोंक रखी है, लेकिन ईरान के साथ अमेरिका और इजरायल की चल रही जंग का सियासी असर केरलम चुनाव वोटिंग पर पड़ता साफ दिख रहा है। इसके चलते कई सीटों पर सियासी उलटफेर हो सकता है, क्योंकि मलयाली लोग बड़ी संख्या में गल्फ में रहते हैं और जंग के चलते इस बार मतदान करने नहीं आ पा रहे हैं। केरल के 2.42 लाख पंजीकृत एनआरआई मतदाताओं का बड़ा हिस्सा इस बार मतदान केंद्रों से नदारद रहेगा। पश्चिम एशिया में जारी तनाव और हवाई टिकटों के दामों में लगी आग ने प्रवासियों की वतन वापसी कठिन कर दी है। कई एयरस्पेस बंद होने से यात्रा मार्ग

लंबा हुआ है और सामान्य दिनों में 24 हजार रुपए वाले टिकट की कीमत लगभग एक लाख रुपए तक पहुंच रही है। मध्य और निम्न-आय वर्ग के श्रमिकों के लिए यह पहुंच से बाहर है। केरल में चुनाव के दौरान हजारों प्रवासी वोटिंग के लिए विशेष चार्टर्ड विमानों से आते थे। लेकिन इस बार हवाई क्षेत्र बंद होने से वे भी नहीं आ पाए हैं। प्रवासी मतदाता उत्तर मालाबार और मध्य केरल के मुस्लिम-बहुल निर्वाचन क्षेत्रों से ज्यादा हैं। यह यूएई, सऊदी अरब, कुवैत, कतर, बहरीन और ओमान जैसे देशों में काम करते हैं। ऐतिहासिक रूप से ये मतदाता कांग्रेस के नेतृत्व वाले यूडीएफ व आईयूएमएल के प्रति वफादार रहे हैं। इनकी अनुपस्थिति का सीधा अर्थ यूडीएफ के वोट बैंक में कटौती होना है। यह नतीजे में फर्क डाल सकता है। सबसे ज्यादा एनआरआई मतदाता केरल के कोझिकोड, मल्लपुरम और कन्नूर जैसे जिलों से हैं। कोझिकोड में लगभग 60 हजार, मल्लपुरम में 40 हजार और कन्नूर में ऐसे मतदाताओं की संख्या करीब 52 हजार हैं। इन मतदाताओं की गैर-मौजूदगी असर डाल सकती है। प्रवासियों का वोट न डाल पाना, परिवारों में बढ़ती आर्थिक चिंता और भविष्य का डर, यह सभी नतीजे पर असर डालने वाले हैं। पश्चिम एशिया के संघर्ष के कारण केरल में वाणिज्यिक गैस की भी बढ़ती किल्लत व बढ़ती कीमतों ने छोटे दुकानदारों, रेस्तरां और पर्यटन उद्योग को संकट में डाल दिया है। दिहाड़ी मजदूर सीधे तौर पर प्रभावित हैं। खाड़ी संकट के कारण रसोईघर का बिगड़ता अर्थशास्त्र भी चुनाव में भूमिका निभाएगा। मतदाता भावनात्मक मुद्दों की बजाय मंहगाई और आजीविका जैसे मुद्दों पर वोट डाल सकते हैं। यह स्थिति राज्य में राजनीतिक दलों की चुनावी रणनीतियों को भी आकार दे रही है।

पश्चिम बंगाल : न्यायिक अधिकारियों का मामला

बंधक बनाने पर सुप्रीम कोर्ट सख्त

नौशाबा परवीन

"यह घटना दुस्साहसिक प्रयास है न सिर्फ न्यायिक अधिकारियों पर दबाव बनाने का बल्कि यह इस अदालत के प्राधिकरण को भी चुनौती है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह सोची-समझी, सुनियोजित और जानबूझकर की गई हरकत है न्यायिक अधिकारियों को हतोत्साहित करने के उद्देश्य से और आपत्तियों के निवारण की जो प्रक्रिया चल रही है, उसे बाधित करने की... यह नागरिक व पुलिस प्रशासन की पूर्ण नाकामी को प्रतिविंबित करती है, जहां तक मालदा में कानून व्यवस्था की स्थिति का संबंध है।" यह सुप्रीम कोर्ट की सख्त टिप्पणी का एक प्रासंगिक अंश है, जिससे मालदा, पश्चिम बंगाल में 1 अप्रैल 2026 को हुई निंदनीय घटना की गंभीरता का स्वतः ही अंदाजा लगाया जा सकता है। इस संदर्भ में क्या एक्शन लिया गया है और राजनीतिक पार्टियां इसे किस दृष्टि से देख रही हैं, की समीक्षा करने से पहले आवश्यक है कि संबंधित घटनाक्रम को संक्षेप में समझ लिया जाए।

हंगामा उस समय आरंभ हुआ जब 1 अप्रैल 2026 की शाम को लगभग 4 बजे प्रदर्शनकारी पश्चिम बंगाल के मालदा जिले में कालियाचक 2 ब्लॉक डेवलपमेंट ऑफिस के बाहर एकत्र होने लगे। वे गुस्से में थे; क्योंकि एसआईआर प्रक्रिया के दौरान उनके नाम मतदाता सूची से हटा दिए गए थे। प्रदर्शनकारियों ने पहले यह मांग की कि दफ्तर के अंदर जो न्यायिक अधिकारी मौजूद हैं, उनसे उनकी मुलाकात कराई जाए। जब उन्हें इसकी अनुमति नहीं दी गई तो स्थिति तनावपूर्ण हो गई। भीड़ ने बिल्डिंग का घेराव कर लिया और सात न्यायिक अधिकारी उसके अंदर ट्रैप हो गए, जिनमें तीन महिलाएं भी थीं। समय गुजरने के साथ प्रदर्शन तीव्र होता गया। प्रदर्शनकारियों ने नेशनल हाईवे 12 (कोलकाता-सिलीगुड़ी मार्ग) को भी ब्लॉक कर दिया, जिससे ट्रैफिक बाधित हुआ और प्रशासनिक अधिकारियों पर दबाव बढ़ता गया। देर रात में बड़ी संख्या में सुरक्षाकर्मी मौके पर पहुंचे, राहत कार्य को अंजाम देने के लिए। जब आधी रात के बाद न्यायिक अधिकारियों को बिल्डिंग से बाहर निकाला गया तो प्रदर्शनकारियों ने सड़क पर बांस की बल्लियां रखकर उनके वाहनों को रोकने की कोशिश की। वाहनों को नुकसान पहुंचाने का प्रयास भी किया गया। पुलिस ने भीड़ को तितर-बितर करने के लिए लाठी चार्ज किया और न्यायिक अधिकारियों को सुरक्षित बाहर निकाला। इस हंगामे के दौरान अनेक प्रदर्शनकारी चोटिल भी हुए, लेकिन आधिकारिक तौरपर इसकी पुष्टि नहीं की गई। बहरहाल, स्थिति उस समय शांत हुई जब अतिरिक्त जिलाधिकारी (एडीएम) ने मौके पर पहुंचकर प्रदर्शनकारियों को आश्वस्त किया कि जो वैध मतदाता हैं, उनके नामों को चार दिन के भीतर मतदाता सूची में शामिल करा दिया जाएगा। इस आश्वासन के बाद सड़क पर जो जाम लगाया गया था, उसे भी हटा लिया गया। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि चुनाव आयोग ने बहुत ही लचर व ग़ैर-जिम्मेदार तरीके से एसआईआर प्रक्रिया को अंजाम दिया है और मनमर्जी करते हुए बहुत से वैध मतदाताओं के नाम भी सूची से हटा दिए हैं। इसलिए

इमेज

पीड़ितों का अपने हक के लिए विरोध प्रदर्शन करना जायज था, लेकिन न्यायिक अधिकारियों को बंधक बनाना व कानून को अपने हाथ में लेने को किसी भी सूरत में उचित नहीं ठहराया जा सकता। उक्त घटना पर सुप्रीम कोर्ट का सख्त रुख अपनाना एकदम दुरुस्त है। अदालत को लगता है कि प्रशासन ने अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह नहीं किया और समय पर उचित कदम नहीं उठाए, नतीजतन राज्य के मुख्य सचिव व डीजीपी को कारण बताओ नोटिस जारी किये गए हैं कि उनके खिलाफ एक्शन क्यों न लिया जाए? इस घटना को 'निंदनीय' कहते हुए अदालत ने कहा है कि यह 'सुनियोजित व प्रेरित' प्रतीत होती है ताकि न्यायिक अधिकारियों को हतोत्साहित किया जाए और जो चुनावी प्रक्रिया चल रही है उसे बाधित किया जाए। सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि वह किसी को भी प्रक्रिया में हस्तक्षेप नहीं करने देगा और न ही किसी को कानून अपने हाथ में लेने देगा कि न्यायिक अधिकारियों पर मनोवैज्ञानिक हमले किये जाएं। अदालत ने कहा कि ममता बनर्जी की सरकार को चाहिए कि वह चुनाव आयोग को सूचित करके न्यायिक अधिकारियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु केंद्रीय बलों की तैनाती करे। इस बीच चुनाव आयोग ने घटना की जांच एनआईए से कराने के आदेश दिए हैं। घटना के संदर्भ में 18 व्यक्तियों को हिरासत में भी लिया गया है, जिनमें आल इंडिया सेक्युलर फ्रंट के मोथाबारी प्रत्याशी भी शामिल है। दूसरी ओर पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने प्रदर्शनकारियों की निंदा करते हुए कहा कि वह मतदाता सूची से बड़े पैमाने पर नाम हटाए जाने के मामले में वही कर बैठे जो बीजेपी उनसे चाहती है कि न्यायिक अधिकारियों का घेराव किया जाए ताकि केंद्र सरकार को राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने का मौका मिल जाए और चुनाव स्थगित कर दिए जाएं। ममता बनर्जी ने सुप्रीम कोर्ट की बात को एकदम सही ठहराते हुए प्रदर्शनकारियों से कहा, "क्या तुम्हें मालूम नहीं कि सीबीआई व एनआईए को जांच के आदेश दे दिए गए हैं? यह बीजेपी का गेम प्लान है। वह चुनाव नहीं चाहती, वह राष्ट्रपति शासन चाहती है। क्या तुम्हें वह चाहिए या तुम्हें शांतिपूर्ण चुनाव चाहिए, जिनके माध्यम से तृणमूल कांग्रेस वापस सत्ता में आ जाए?" मुर्शिदाबाद के सागरदीघी में एक चुनावी सभा को संबोधित करते हुए ममता ने कहा, "बीजेपी की साजिश को नाकाम करने का एकमात्र तरीका यह है कि अपने हाथ में कानून मत लो। अगर तुम्हें मुझ पर विश्वास है, तो बीजेपी के उकसावे में मत आओ।" ममता ने वायदा किया कि जिन वैध मतदाताओं के नाम मतदाता सूची से काट दिए गए हैं, उनके नाम जल्द जोड़ दिए जाएंगे; क्योंकि इस मुद्दे को हल करने के लिए वह कानूनी मदद ले रही हैं। सुप्रीम कोर्ट ने भी कहा है कि जिनके नाम गलत तरीके से मतदाता सूची से हटा दिए गए हैं, वे पुनः अप्लाई करें, जिसके लिए ट्रिब्यूनल स्थापित किये गए हैं। अगर तब भी न्याय न मिले तो सुप्रीम कोर्ट हस्तक्षेप करेगा। ममता बनर्जी का आरोप है कि पश्चिम बंगाल की कानून व्यवस्था चुनाव आयोग के हाथ में नहीं है बल्कि उसे केंद्रीय गृह मंत्रालय व राज भवन चला रहा है, इसलिए मुख्य सचिव ने न तो स्थिति को नियंत्रित किया और न ही मालदा की घटना के बारे में उन्होंने व गृह सचिव ने उन्हें सूचित किया।

गीता सार

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः॥ (८)

भावार्थ : हे अर्जुन! तू अपना नियत कर्तव्य-कर्म कर क्योंकि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है, कर्म न करने से तो तेरी यह जीवन-यात्रा भी सफल नही हो सकती है। (8)

साहित्य

'जीते जी इलाहाबाद' : मुख्यधारा में लौटेगी संस्मरण विधा

लोकमित्र गौतम

साल 2025 के लिए साहित्य अकादमी में जिन 24 भारतीय भाषाओं में पुरस्कार की घोषणा की है, उसमें हिंदी के खाते में यह पुरस्कार वयोवृद्ध हिंदी साहित्यकार ममता कालिया की संस्मरणात्मक कृति 'जीते जी इलाहाबाद' को गया है। 31 मार्च 2026 को नई दिल्ली में आयोजित होने वाले पुरस्कार वितरण समारोह में इस बार जिन कृतियों को साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है, उनमें से- 8 कविता संग्रह, 4 उपन्यास, 6 कहानी संग्रह, 2 निबंध, 1 साहित्यिक आलोचना तथा 1 आत्मकथा और 2 संस्मरणों पर आधारित कृतियां हैं। इनमें से हर कृति के लेखक को साहित्य अकादमी के भव्य समारोह में उत्कीर्ण तांबे की पट्टिका, शाल और एक लाख रुपये की सम्मान राशि दी जाएगी। 'जीते जी इलाहाबाद' जैसी संस्मरणात्मक कृति से एक बार फिर हिंदी साहित्य में संस्मरण विधा केंद्र में लौट आयी है। जबकि लंबे समय से साहित्य अकादमी के पुरस्कार मूलतः कथा, उपन्यास और आत्मकथात्मक कृतियों को मिल रहे थे। लेकिन जिस तरह से ममता कालिया की महज तीन साल पहले प्रकाशित इस कृति को सम्मान मिला है, उससे यह उम्मीद बंधी है कि एक बार फिर से हिंदी साहित्य के केंद्र में संस्मरण विधा लौटेगी। ममता

कालिया ने जिस तरह से 'जीते जी इलाहाबाद' में संस्मरण विधा को सिर्फ अपनी निजी स्मृतियों तक सीमित न रखकर उसे एक शहर, एक समय और एक साहित्यिक संस्कृति के जीवंत दस्तावेज में बदल दिया है, उससे इलाहाबाद का बौद्धिक परिवेश लेखक जगत की अंदरुनी हलचलें और एक महिला लेखक की अंतर्दृष्टि सबने मिलकर इस विधा को बहुत गहरे तक समृद्ध किया है। खास बात ये है कि ममता कालिया ने अपनी इस कृति को सहज बोलचाल की भाषा और बिना लाग लपेट की ईमानदारी से जिस तरह बांधा है, वो पाठकों को अपनी तरफ चुबंक सरीखे आकर्षित करती है। शायद यही कारण है कि राजकमल से प्रकाशन से प्रकाशित इस कृति का पहला संस्करण महज कुछ महीनों में ही सारा बिक गया था। इस आकर्षण से जीते जी इलाहाबाद ने यह सिद्ध किया है कि संस्मरण केवल अतीत का भावुक पुनरावलोकन भर नहीं है बल्कि वर्तमान को समझने का यह सबसे सहज माध्यम भी हो सकता है।

तिथि विशेष

अंतरराष्ट्रीय खदान जागरुकता दिवस

अंतरराष्ट्रीय खदान जागरुकता दिवस हर वर्ष 4 अप्रैल को मनाया जाता है। इस दिवस का उद्देश्य दुनिया भर में बारूदी सुरंगों और युद्ध के बाद बची विस्फोटक सामग्री के

खतरों के प्रति लोगों को जागरूक करना है। यह दिन उन लाखों लोगों की सुरक्षा और सहायता के लिए समर्पित है, जो इन खतरनाक विस्फोटकों के कारण प्रभावित होते हैं। बारूदी सुरंगें मुख्यतः युद्ध के दौरान दुश्मन को रोकने के लिए जमीन में छिपाई जाती हैं, लेकिन युद्ध समाप्त होने के बाद भी ये लंबे समय तक सक्रिय रहती हैं। इनके कारण निर्दोष नागरिक, विशेष रूप से बच्चे और ग्रामीण क्षेत्र के लोग, दुर्घटनाओं का शिकार हो जाते हैं। खेतों, सड़कों और घरों के आसपास छिपी ये सुरंगें विकास और सामान्य जीवन में बड़ी बाधा बनती हैं। इस दिवस की शुरुआत संयुक्त राष्ट्र द्वारा की गई थी, ताकि वैश्विक स्तर पर इस समस्या पर ध्यान केंद्रित किया जा सके। संयुक्त राष्ट्र विभिन्न देशों के साथ मिलकर खदानों को हटाने, प्रभावित लोगों की सहायता करने और सुरक्षित वातावरण बनाने के लिए प्रयास करता है। इसके तहत जागरुकता अभियान, प्रशिक्षण कार्यक्रम और तकनीकी सहायता प्रदान की जाती है। इस दिन का मुख्य उद्देश्य केवल खदानों को हटाना ही नहीं, बल्कि पीड़ितों के पुनर्वास और उन्हें समाज में फिर से स्थापित करना भी है। कई संगठन कृत्रिम अंग, चिकित्सा सहायता और रोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हैं, जिससे प्रभावित लोग आत्मनिर्भर बन सकें। अंतरराष्ट्रीय खदान जागरुकता दिवस हमें यह संदेश देता है कि शांति और सुरक्षा के लिए मिलकर काम करना जरूरी है।

बड़ा पर्दा

द्विअर्थी गीतों में अश्लीलता का कारोबार

मनोज प्रकाश

दर्शकों की कमी से जूझ रहा बालीवुड अब फिर से दादा कोंडके की राह पर है। पहले उसने यूपी-बिहार को लुटवाया, फिर मौका मिला तो भरतपुर लुटवा दिया, मन नहीं भरा तो फोटो को सीने से चिपकवा दिया और बाद में मुन्नी को बदनाम कराकर उसने शीला की जवानी से दर्शकों को ललचाया। इस पर भी उसकी दर्शकों की भूख कम नहीं हुई, तो चुनरी के नीचे क्या है पूछने लगा। ..और अब इस सबसे इतर स्त्री सम्मान की प्रतीक चुनरी ही सरका दी। अश्लीलता, देह प्रदर्शन और द्विअर्थी संवाद के लिए पहचाना जाने वाला बॉलीवुड अब चुनरी को सरकाने के विवाद में फंस गया है। इसमें परफॉर्म करने वाली अभिनेत्री नोरा फतेही ने यह कहकर बचने की कोशिश की है कि उसे कन्नड़ नहीं आती तथा उसे पता नहीं था कि गीत क्या है, वह तो बस यह समझ रही थी कि यह गाना नायक नहीं खलनायक हूं का रिमेक था, जो तत्कालिक व्यवस्था है, उसमें कहा गया है कि इसके बोल बदले जाएंगे। ऐसा इसलिए क्योंकि इस गाने पर बैन लगा दिया गया है और यह सभी प्लेटफार्म पर से हटा दिया गया है। हालांकि यू-ट्यूब पर यह सुनने-देखने को मिल रहा है। अब भले ही सफाई पेश की जाए, फतवा जारी हो और महिला सम्मान के लिए खड़े होने वाले आगे आ रहे हों पर सरके चुनरी से जो अश्लीलता समाज में फैलनी थी, वह फैल चुकी है और अब इसे किसी भी प्रकार से समाज से रिमूव नहीं किया जा सकता।

बॉलीवुड में आजकल नोरा फतेही, संजय दत्त की फिल्म 'केडी द डेविल' के सनसनी मचाते गाने सरके चुनर तेरी पर विवाद मचा हुआ है। कहा जा रहा है कि इस गीत ने अश्लीलता में उन गीतों को पीछे छोड़ दिया है, जिन्होंने अब तक अश्लीलता से दर्शकों को ललचाया था। खासकर इसके वह बोल जिसमें गायक गाता है- 'पहले उठा ले, अंदर वो डाले, नीचे एक बूंद न गिराए, खाली करके निकाले, मुझ पे न गिराना,मुझे लगता है डर, भेद खुल जाए न, संभल के जाना घर, चूसेगा या चाटेगा, जो करना है कर, तेरी बोतल पर न पड़े किसी की भी नजर'। इन सभी अंतरों में बोतलवाला अंतरा साइलेंट स्टाइल में है। साहित्यकार मानते हैं कि यह रचना किसी भी संदर्भ में लिखी गई हो और किसी भी भाषा में, पर स्त्री सम्मान और परिवार के साथ सुनने वाली नहीं है। खासकर जब यह सदृश्य हो। इस पर फिल वक्त खूब विवाद हो रहा है, लेकिन इससे पहले जो गीत आए हैं, उन्होंने भी इसी तरह की लोकप्रियता पायी थी। अभिनेत्रियों पर अंग दर्शित वस्त्रों से अश्लीलता भरे गीत जितने 80-90 के दशक में सामने आए, उतने कभी नहीं। हां, समय-समय पर यह फिल्मों को हिट कराने के लिए परोसे जाते रहे हैं। जिन गीतों ने समाज को भ्रमित किया, उनमें सबसे पहले है खलनायक का गीत। नोरा फतेही ने खलनायक फिल्म का जिक्र किया है। यह फिल्म सन 1993 में आयी थी और इसके दो गीत सर्वाधिक चर्चित हुए थे।

इसमें से नायक नहीं खलनायक हूं मैं तो विशेष विवादास्पद नहीं हुआ पर माधुरी पर फिल्माया गीत चोली के पीछे क्या है, उस समय सुपरहिट हुआ था। चुनर सरके की तरह यह भी डबल मीनिंग वाला था। इस पर इतना बवाल हुआ था कि इसे हटाने की भी मांग की गई। यह बात अलग है कि अब यह गीत आम गीत की तरह इस्तेमाल हो रहा है। फिल्म खुद्दार का करिश्मा कपूर पर फिल्माया गया गीत-सेक्सी-सेक्सी मुझे लोग बोलें ने समाज में सेक्सी शब्द को इतना प्रचलित किया कि इस गीत को लेकर हंगामा ही कटने लगा। विरोध के कारण फिर इसे सेक्सी के स्थान पर बेबी-बेबी मुझे लोग बोलें करना पड़ा। यदि सरके चुनर को अगर बदला जाएगा तो क्या किया जाएगा? यह प्रश्न अब सामने है। यहां पर गानों के द्विअर्थी संवाद याद दिलाते हैं दादा कोंडके की, जिनकी फिल्मों के नाम तो ऐसे हैं जिन्हें आज भी लेते हुए होठ कांपते हैं। खासकर, 'अंधेरी रात में, दीया तेरे हाथ में', 'तेरे मेरे बीच में', 'खोल दे मेरी जुबान', 'आगे की सोच' आदि। खैर, अमिताभ बच्चन की मर्द का गीत 1985 में इसी श्रेणी में आता है, बोल थे- 'हम तो तंबू में बंबू लगाए बैठे'। सैफ अली खान ने तो एक साक्षात्कार में यह स्वीकार भी किया था कि उनकी फिल्म 'यार-गद्दार' का गाना- 'मैं लाया था चूहा अपना' डबल मीनिंग था तथा तीन दशक से वह उनकी नींद उड़ा रहा है। तेरे मेरे बीच में जो एक गीत था वह शर्मशार करता था, जरा बोल देखिए, 'तेरी ले लू बाहें बाह में, धीरे-धीरे डालू चाल में..'। इन द्विअर्थी गीतों में जहां अश्लीलता होती है वह मुखर और बाकी साइलेंट जोन में बोल रहते हैं। इस तरह के गाने समाज को किस तरह से भ्रष्ट करते हैं, यह समझने वाली बात है। दलाल फिल्म में मिथुन चक्रवर्ती थे और उसका गीत सड़क चलती लड़कियों को छेड़ने के लिए खूब चला, 'चढ़ गया ऊपर रे, अटरिया पे लोटन कबूतर रे..गुटर-गुटर, गुटर-गुटर'। अनिल कपूर और जूही चावला की फिल्म 'अंदाज' में धक्का लगाने का अंदाज ही ऐसा नजर आता है कि जैसे अश्लीलता का ठेका ले रखा है। 'ये मालगाड़ी तू धक्का लगा, धक्का लगा रे धक्का लगा'। फिल्म समीक्षक बताते हैं कि जब धक्का लगा उच्चारित होता था, तो हॉल सीटियों से गुंज जाता था। निदा फाजली तथा खय्याम द्वारा लिखित -संगीतबद्ध किया हुआ गीत फिल्म 'नाखुदा' में भी कम धूम नहीं मचा रहा था। सड़कों पर मनचले लड़कियों को देखकर गाते थे-'तुम्हारी पलकों की चिलमनों में ये क्या छुपा है सितारे जैसा, हसीन है ये हमारे जैसा, शरीर है ये तुम्हारे जैसा'।

वायरल

मृत महिला पहुंची 2030 में, होश आने पर बताई भविष्य की बात

मेक्सिको की मेडिकल स्टूडेंट रूबी रोल्गु का दावा है कि वह मेडिकल रूप से मृत घोषित होने के बाद साल 2030 में पहुंच गई थीं। रूबी का दावा है कि जब डॉक्टर उन्हें 'डेड डिक्लेयर' कर चुके थे, तब वह साल 2030 की सैर कर रही थीं। एक

रिपोर्ट के अनुसार, पिछले साल अप्रैल में 24 साल की शादीशुदा रूबी को फेफड़ों में खून के थक्के जमने के बाद अस्पताल ले जाया गया, जहां उनकी हालत इतनी बिगड़ी की दिल का दौरा पड़ा और वह 10 मिनट तक 'क्लीनिकली डेड' रहीं। डॉक्टरों ने घरवालों से साफ कह दिया कि उनका दिमाग मर चुका है, और वह अब कभी नहीं जागेंगी। जहां उनकी हालत इतनी बिगड़ी कि दिल का दौरा पड़ा और वह 10 मिनट तक 'क्लीनिकली डेड' रहीं। डॉक्टरों ने घरवालों से साफ कह दिया कि उनका दिमाग मर चुका है, और वह अब कभी नहीं जागेंगी। उनके मुताबिक, 2030 की दुनिया आज के मुकाबले कहीं ज्यादा शांत और उन्नत थी। लोग मोबाइल फोन के गुलाम नहीं थे और तकनीक ने रोजमर्रा के कामों को इतना आसान बना दिया था।

पंचांग

4 अप्रैल 2026

- विक्रम संवत् - 2083
- शक संवत् - 1948
- रवि - उत्तरायण
- ऋतु - वसंत
- मास - वैशाख
- पक्ष - कृष्ण
- तिथि - द्वितीया 10.10 तक
- वार - शनिवार
- नक्षत्र - स्वाति 21.36 तक
- योग - हर्षण 14.17 तक
- करण - वणिज 23.02 तक
- सूर्योदय - 06.32 प्रातः (मुंबई)
- सूर्यास्त - 06.51 शाम (मुंबई)
- सूर्योदय - 06.30 प्रातः (भीनमाल)
- सूर्यास्त - 06.58 शाम (भीनमाल)
- चंद्र - राशि तुला
- अभिजीत - 12.17 से 13.06
- राहु काल - 09.36 से 11.08
- दिशा शूल - पूर्व
- व्रत त्यौहार - सिद्धियोग 21.36 तक, भद्रा 23.02 प्रारंभ

• शास्त्री प्रवीण त्रिवेदी, भीनमाल

X का एक्सरे

मालदा में हुई घटना एक सुनियोजित साजिश थी, जिसका उद्देश्य राज्य में अशांति फैलाना था। इसके लिए बाहर से लोगों को बुलाया गया था। घटना की जांच सीआईडी कर रही है। लोगों को मुंबई से लाया गया था और पूरी योजना पहले से तैयार थी। बीजेपी इस मुद्दे का राजनीतिक लाभ उठाने की कोशिश कर रही है।

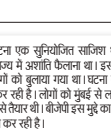

ममता बनर्जी

मैंने पहले कहा था कि लखनऊ सुपर जायंट्स के मालिक संजीव गोयनका आईपीएल में टीम के मालिक बनने लायक नहीं हैं। मैं उनके बर्ताव से शर्मिंदा हूं। मैंने आईपीएल को फैंस और खिलाड़ियों दोनों के लिए बनाया था। अगर मैं चेयरमैन और कमिश्नर होता तो मैं उसे तुरंत बैन कर देता और टीम का मालिकाना हक छीन लेता।

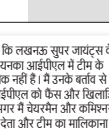

ललित मोदी

जब भी तनाव की स्थिति उत्पन्न हुई है, भारतीय नौसेना ने हमारे वाणिज्यिक जहाजों और तेल टैंकरों की सुरक्षा सुनिश्चित की है। हमारी नौसेना ने यह साबित किया है कि वह न केवल भारत के हितों की रक्षा करने में सक्षम है, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर अपने नागरिकों और व्यापार मार्गों को सुरक्षित रखने हर संभव कदम उठा सकती है।

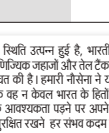

राजनाथ सिंह

मुझे जब भी राज्यसभा में बोलने का मौका मिलता, मैंने आम आदमी से जुड़े मुद्दों को ही उठाया है। क्या मैं गलत करता हूं। कोई मेरे बोलने पर रोक क्यों लगाना चाहता है। आखिर इन मुद्दों को उठाने से आम आदमी पार्टी का क्या नुकसान हुआ? आखिर क्यों कोई मुझे बोलने से रोकना चाहेगा। आम आदमी को मेरा साथ देने के लिए शुक्रिया।

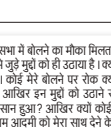

राघव चड्ढा

नारायण पब्लिकेशन प्रा. लि. के लिए मुद्रक-प्रकाशक-हेमल पुरोहित द्वारा एआईएस प्रिंटिंग सोल्यूशंस, प्लॉट नं. ए-544, टीटीसी इंडस्ट्रीयल एरिया, ठाणे-बेलापुर रोड, महापे, नवी मुंबई 400709 से मुद्रित एवं प्रिमाइसेस नं. 1303/चेंबर्स, 13वां माला, वेस्टर्न एक्सप्रेस हाईवे मेट्रो स्टेशन के पास, अंधेरी-कुर्ला रोड, अंधेरी (पूर्व), मुंबई 400 099 से प्रकाशित, पोस्टल रजि. MCN/325/2023-24, (चकाला MIDC पी.ओ.) रजि. नं. MAHHIN/2004/13755, संपादक-हेमल पुरोहित, स्थानीय संपादक-नीरज दवे, फोन : 022-46024646, ईमेल :

संपादकीय | तेल संकट : आम आदमी पर बढ़ता दबाव

पश्चिम एशिया में जारी युद्ध से उपजे संकट का असर अब भारत पर भी साफ दिखने लगा है। अभी तक सरकार यह दावा कर रही थी स्थिति नियंत्रण में है, मगर बुधवार को वाणिज्यिक एलपीजी और विमान ईंधन की कीमतों में बढ़ोतरी से स्पष्ट हो गया है कि समस्या अब गहराने लगी है और इसकी सबसे गंभीर मार आम लोगों पर पड़ने वाली है। अगर ईरान तथा अमेरिका-इजराइल का संघर्ष लंबा चला, तो यह तय है कि हालात और ज्यादा बिगड़ेंगे। वैश्विक स्तर पर तेल की कीमतों में आए उछाल के कारण घरेलू तेल कंपनियों ने उन्मीस किलोग्राम वाले वाणिज्यिक गैस सिलेंडर के दाम 195.50 रुपए बढ़ा दिए हैं।

इसका असर यह होगा कि होटल, रेस्तरां और ढाबों पर भोजन करना तथा डिब्बाबंद खाद्य सामग्री अब महंगी हो जाएगी। इसके अलावा विमान ईंधन के दाम बढ़ाकर 2.07 लाख रुपए प्रति किलोलीटर से अधिक कर दिए गए हैं। हालांकि, राहत की बात यह है कि सार्वजनिक क्षेत्र की पेट्रोलियम कंपनियों ने इस बढ़ोतरी को घरेलू विमानन कंपनियों के लिए 8.5 फीसद तक ही सीमित रखा है। फिर भी आने वाले दिनों में हवाई यात्रा पहले के मुकाबले महंगी हो सकती है।

हाल ही में ऐसी खबरें आई थी कि ईरान ने भारत समेत पांच देशों के तेल जहाजों को होर्मुज जलमार्ग से गुजरने की अनुमति दे दी है, लेकिन बीते सोमवार को कहा गया कि भारत आ रहे तेल और गैस के उन्नीस जहाज अभी भी इस जलमार्ग में फंसे हुए हैं। यानी युद्ध की वजह से खाड़ी क्षेत्र में स्थितियां इतनी जटिल हो गई हैं कि औपचारिक राहत के बावजूद भारत के लिए तेल जहाजों को इस क्षेत्र से बाहर निकालना आसान नहीं है। जाहिर

है, ऐसी स्थिति में ईंधन के वैश्विक संकट के असर से भारत भी अछूता नहीं रहेगा।

घरेलू बाजार में जिस तेजी से वस्तुओं के दाम बढ़ने शुरू हुए हैं, उससे रोजमर्रा की चीजों की खरीदारी में आम लोगों को यह सोचने पर विवश होना पड़ रहा है कि क्या ज्यादा जरूरी है और क्या नहीं। खासतौर पर रसोई गैस और पेट्रोल-डीजल की उपलब्धता को लेकर जिस तरह की स्थिति पैदा हुई है, उसे नियंत्रित करने के लिए सरकार के समक्ष भी बड़ी चुनौती है।

अभी तो वाणिज्यिक गैस सिलेंडर के दाम में वृद्धि की गई है, लेकिन गैस आपूर्ति जल्द सामान्य नहीं हुई, तो आने वाले समय में घरेलू रसोई गैस के दाम बढ़ाए जाने से भी इनकार नहीं किया जा सकता।

वैश्विक स्तर पर तेल कीमतों में आए उछाल के कारण देश में चुनिंदा प्रीमियम या ब्रांडेड पेट्रोल और डीजल के दाम में भी 1.50 रुपए से लेकर 11 रुपए प्रति लीटर की बढ़ोतरी की गई है। यानी घरेलू रसोई गैस और सामान्य पेट्रोल-डीजल के दामों में ही बढ़ोतरी नहीं हुई है, क्योंकि सरकार इसकी कीमतें स्थिर रखने की कोशिश कर रही है, लेकिन देखना होगा कि यह स्थिरता कब तक रहती है। सरकार के समक्ष भी यह चुनौती है कि इस समस्या के बीच आम लोगों को राहत बरकरार कैसे रखी जाए।

उत्पाद शुल्क में कटौती से खुले बाजार में पेट्रोल और डीजल के दाम को स्थिर रखने में मदद मिल सकती है, लेकिन अभी असली समस्या उपलब्धता की है। ऐसे में जरूरी है कि सरकार कच्चे तेल की खरीद के लिए अन्य विकल्पों पर भी गंभीरता से विचार करे। यह इसलिए जरूरी है, क्योंकि मध्यपूर्व में अगर हालात सामान्य नहीं हुए, तो ईंधन की आपूर्ति और ज्यादा प्रभावित होगी तथा घरेलू स्तर पर इस समस्या से निपटना आसान नहीं होगा।

देश के छोटे शहरों में वायु प्रदूषण का बढ़ता खतरा

वायु प्रदूषण केवल महानगरों और बड़े शहरों की समस्या नहीं है, छोटे शहर भी इससे प्रभावित हैं। केंद्र और राज्य सरकारों की ओर से यह दावा किया जाता है कि प्रदूषण को कम करने के लिए हरसंभव कदम उठाए जा रहे हैं। देश भर में वायु गुणवत्ता का पता लगाने के लिए निगरानी केंद्र बनाए जाने की बात कही जाती है, मगर हकीकत यह है कि देश के करीब चालीस फीसद जिलों में अब तक निगरानी केंद्र स्थापित नहीं हो पाए हैं। ऐसे में जब यह पता ही नहीं चल पाएगा कि हवा में प्रदूषण का स्तर कितना है, तो उसे कम करने के प्रयास भी सिर्फ कागजों तक ही सीमित रहेंगे। वैश्विक कंपनी 'एअरवाइस' की ओर से बीते मंगलवार को जारी एक अध्ययन रपट में बताया गया है कि कई शहरों और कस्बों में लोगों को अपने आसपास फैल रहे प्रदूषण के बारे में वास्तविक जानकारी ही नहीं मिल पाती है, जिस कारण उनके स्वास्थ्य के लिए जोखिम बढ़ रहा है। गौरतलब है कि मुंबई, दिल्ली और बंगलुरु जैसे बड़े शहरों में तो वायु प्रदूषण पर कड़ी निगरानी रखी जाती है, लेकिन इस मामले में छोटे शहरों और कस्बों की आज भी अनदेखी की जा रही है। निगरानी केंद्र होने का एक फायदा यह है कि इससे आम लोगों को हवा में प्रदूषक तत्वों के स्तर की स्टीक जानकारी नियमित रूप से मिलती रहती है। ऐसे में सरकार और स्थानीय प्रशासन की ओर से उठाए जाने वाले कदमों के साथ-साथ लोग खुद भी सतर्क रहते हैं और मास्क लगाने तथा जरूरत पड़ने पर ही घरों से बाहर निकलने जैसे उपायों को प्राथमिकता देते हैं। गंभर जब लोगों को इसकी सही जानकारी ही नहीं मिलेगी, तो वे इस तरह की सावधानी कैसे बरतेंगे। यह बात भी सामने आई है कि कुछ जिलों में निगरानी केंद्र तो हैं, लेकिन वे सही तरीके से काम नहीं कर रहे हैं। सरकार को चाहिए कि देश के तमाम शहरों में वायु गुणवत्ता को मापने के लिए माकूल तकनीकी व्यवस्था की जाए और निगरानी केंद्रों के उचित रख-रखाव के लिए संबंधित अधिकारियों की जवाबदेही तय की जाए।

आज का कार्टून

नेपाल में सत्ता बदली और जांच के घेरे में आए दिग्गज

पुष्परंजन

> नेपाल में युवाओं के उग्र विरोध प्रदर्शन के दौरान वहां की सेना की भूमिका पर भी सवाल है। कार्की कमीशन की रिपोर्ट में स्पष्ट कहा गया कि सेना ने भीड़ को मुख्य रूप से गृह मंत्रालय की ओर बढ़ने से रोकने की बहुत कम कोशिश की। जबकि मंत्रालय का रास्ता उस इलाके से होकर गुजरता है, जहां सेना की बटालियन है। सत्ता में आ जाने के बाद भी बड़ी चुनौती नेपाल की घरेलू समस्याओं को निपटाना है। राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी ने चुनावों से पहले सौ वादों की एक सूची जारी की थी और संकल्प किया था कि सत्ता में आने पर वह इन्हें लागू करेगी, लेकिन ऐसे आरोप लग रहे हैं कि शपथ के बाद ही बालेंद्र सरकार बदले की राजनीति पर उतर आई है। नेपाल में नई सरकार के समक्ष दूसरा मोर्चा है विदेश नीति का। नेपाल को चीन और भारत के साथ अमेरिका से कैसे संतुलन साध कर चलना है, यह एक विकट सवाल है।

नेपाल में नई सत्ता के आते ही ऐसा लग रहा है मानो भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने की कवायद शुरू हो गई है। इसके तहत तीन पूर्व प्रधानमंत्रियों और दो पूर्व मंत्रियों के खिलाफ कथित धनशोधन मामले को लेकर एक विस्तृत जांच शुरू की गई है। नई सरकार के निर्देश पर जांच में जुटे अधिकारियों को वित्तीय गड़बड़ियां मिली हैं। उन्हें इन नेताओं की संपत्तियों के दस्तावेज में विसंगतियां दिखी हैं।

काठमांडो में पुल्चोक स्थित संपत्ति शुद्धिकरण अनुसंधान विभाग (डीएमएलआइए) की ओर से नेपाल पुलिस के केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीआइबी) की मदद से पूर्व प्रधानमंत्रियों शेर बहादुर देउबा, केपी शर्मा ओली और पुष्पकमल दहाल के साथ ही पूर्व मंत्रियों आरजू राणा देउबा और दीपक खड्का के खिलाफ गहन जांच की जा रही है। मामला अब अदालत में है, सरकार की तरफ से जवाब आने पर सुनवाई शुरू होगी। यह नेपाल में नया राजनीतिक परिदृश्य है।

पिछले हफ्ते डीएमएलआइए ने पुलिस मुख्यालय को एक पत्र भेज कर जांच में सहयोग मांगा था। इस अनुरोध पर कार्रवाई करते हुए नेपाली कांग्रेस के नेता और पूर्व मंत्री दीपक खड्का और नेकपा-एमाले अध्यक्ष व पूर्व प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली को पिछले दिनों उनके निवास से गिरफ्तार कर लिया गया। मामले को विस्तृत जांच के स्तर तक ले जाने से पहले संपत्ति शुद्धिकरण अनुसंधान विभाग ने लगभग छह महीनों तक शुरुआती पुछताछ की थी।

दरअसल, यह चर्चा आम थी कि अब सरकार उस पार्टी की है, जिसके मुखिया रबी लामिछाने करोड़ों रुपए के गबन और धनशोधन जैसे गंभीर मामले में जेल में थे। इस तरह की चर्चा किसी भी सरकार को स्वतः कठघरे में खड़ा कर देती है। यह कार्रवाई भी इसकी कवायद लगती है कि देश के उन दिग्गज चेहरों का मुखौटा उतारो, जो बरसों से सत्ता में थे। माना जा रहा है कि नेपाल में नया निजाम अब यह चाह रहा है कि धनशोधन और दूसरे गैरकानूनी कार्यों में कथित रूप से संलिप्त पूर्व मंत्रियों और प्रधानमंत्रियों के कृत्यों का भी पर्दाफाश हो, ताकि कोई यह न कह सके कि सत्ताधारी पक्ष के सर्वोच्च नेता लामिछाने का अतीत दागदार रहा है। नेपाल के पूर्व उपप्रधानमंत्री एवं राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी के अध्यक्ष लामिछाने पर मुख्य रूप से सहकारी संस्थाओं से करोड़ों रुपए के गबन, संगठित अपराध और धनशोधन के गंभीर मामले चल रहे हैं। पूर्व पत्रकार रहे लामिछाने पर आरोप है कि उन्होंने अवैध रूप से सहकारी समितियों का पैसा अपने निजी खाते और गोरखा मीडिया नेटवर्क के खातों में डलवाए थे। पुलिस जांच में पाया गया था कि 16 अरब रुपए लेकर नेपाल से फरार जीबी रई के साथ मिल कर सहकारी घोटालों के पीछे मुख्य साजिशकर्ताओं में से एक रबी लामिछाने थे। अक्टूबर 2024 में गिरफ्तार होने के बाद से उन पर जिला अदालतों में मामले चल रहे हैं।

राजनीतिक जानकारों के मुताबिक, नेकपा-एमाले अध्यक्ष केपी शर्मा ओली और कांग्रेस नेताओं की गिरफ्तारियों से यह संदेश देने की कोशिश की जा रही है कि नेपाल की जनता देखे कि इन सभी की कमीज, रबी लामिछाने की कमीज से भी गंदी है। इस जांच की शुरुआत विरोध प्रदर्शनों के ठीक अगले दिन नौ सितंबर 2025 को हुई थी। उस दिन हुई तोड़फोड़ और आगजनी की घटनाओं के बाद सामने आई तस्वीरों में देउबा, खड्का और प्रचंड के घरों में जले हुए कई नोट दिखाई दिए थे।

पूर्व ऊर्जा मंत्री खड्का को नौ सितंबर की घटनाओं के दौरान उनके घर से बरामद पैसों की जांच के सिलसिले में हिरासत में लिया गया। हालांकि, अधिकारियों ने अन्य आरोपियों के खिलाफ चल रही जांच के बारे में और जानकारी का खुलासा नहीं किया है। पूर्व प्रधानमंत्री शेर बहादुर देउबा की पत्नी आरजू राणा देउबा सितंबर में हुए विरोध प्रदर्शनों तक विदेश मंत्री के पद पर थीं। मगर इस समय वह स्वास्थ्य संबंधी दिक्कतों के उपचार के लिए हांगकांग में हैं। देउबा के बेटे जयवीर सिंह देउबा और उनके रिश्तेदार भूषण राणा देश से बाहर हैं।

28 सितंबर, 2025 को विभाग ने ज्वालाखेल स्थित राणा के घर पर छापा मारा और वहां से कई इलेक्ट्रॉनिक उपकरण तथा दस्तावेज जब्त किए। कुछ दिनों बाद उनके रिश्तेदारों के यहां भी छापे मारे गए। नई सरकार की कार्रवाई से लगता है कि देउबा परिवार की मुश्किलें अभी कम नहीं होने वाली हैं।

आठ से 13 सितंबर, 2025 को आंदोलन के समय हुए उग्र प्रदर्शन में देशभर में 76 लोगों की जान चली गई थी। जबकि दो हजार से ज्यादा लोग घायल हुए थे। इस तोड़फोड़ और आगजनी में करीब 85 अरब रुपए की सरकारी संपत्ति का नुकसान हुआ था। संसद तक को लाक्षागृह बना दिया गया। अंततः पिछले साल नौ सितंबर को तत्कालीन प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली और उनके सभी मंत्रियों को इस्तीफा देना पड़ा था।

इस पूरे मामले की जांच पर बने कार्की कमीशन की जो रिपोर्ट आई, उसमें लामिछाने को बचाने की कोशिश साफ-साफ दिखती है। नेपाल पुलिस के अधिकारी भी कार्की कमीशन की रिपोर्ट को पूरी तरह से एकतरफा मानते हैं। सबसे गंभीर आरोप यह कि नक्खु जेल में भगदड़ और कैदियों के भागने की वजह लामिछाने थे,

जो सहकारी ठगी, संगठित अपराध और धनशोधन के मामले में बंद थे। उस शख्स को जबरदस्ती छुड़ा ले जाने के क्रम में गोलीकांड हुआ, जिसमें दस कैदी मारे गए।

कार्की कमीशन कैसे लामिछाने को जिम्मेदारी से मुक्त कर सकता है? वैसे भी जिस पार्टी के खुते बालेंद्र शाह नेपाल के प्रधानमंत्री बने हैं, उसके मुखिया के खिलाफ कार्रवाई की हिमाकत वे कैसे कर सकते हैं? माना जा रहा है कि अभी लामिछाने पर जितने मामले चल रहे हैं, उनसे उन्हें बरी कराने की कोशिश बालेंद्र सरकार कर सकती है। दरअसल, लामिछाने पर आपराधिक मामले नहीं चल रहे होते, तो बालेंद्र शाह को काठमांडो के महापौर पद से सीधे प्रधानमंत्री की सर्वोच्च कुर्सी नसीब नहीं होती।

नेपाल में युवाओं के उग्र विरोध प्रदर्शन के दौरान वहां की सेना की भूमिका पर भी सवाल है। कार्की कमीशन की रिपोर्ट में स्पष्ट कहा गया कि सेना ने भीड़ को मुख्य रूप से गृह मंत्रालय की ओर बढ़ने से रोकने की बहुत कम कोशिश की। जबकि मंत्रालय का रास्ता उस इलाके से होकर गुजरता है, जहां सेना की बटालियन है।

सत्ता में आ जाने के बाद भी बड़ी चुनौती नेपाल की घरेलू समस्याओं को निपटाना है। राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी ने चुनावों से पहले सौ वादों की एक सूची जारी की थी और संकल्प किया था कि सत्ता में आने पर वह इन्हें लागू करेगी, लेकिन ऐसे आरोप लग रहे हैं कि शपथ के बाद ही बालेंद्र सरकार बदले की राजनीति पर उतर आई है।

नेपाल में नई सरकार के समक्ष दूसरा मोर्चा है विदेश नीति का। नेपाल को चीन और भारत के साथ अमेरिका से कैसे संतुलन साध कर चलना है, यह एक विकट सवाल है। पूर्व प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली जाते-जाते लिपुलेख-लिम्पियाधुरा का ऐसा विवाद छोड़ गए हैं कि इसे समेटना चंद दिनों पहले आई नई सरकार के लिए मुश्किल है। जबकि जून 2026 में लिपुलेख से व्यापार के लिए भारत-चीन पूरी तैयारी कर चुके हैं। अभी कई चुनौतियां सामने हैं और फिलहाल आगे की डगर कठिन नजर आती है।

दुनिया को चीन की ऊर्जा नीति से सीख लेनी चाहिए

> आज जब होर्मुज जलडमरूमध्य पर खतरा मंडरा रहा है, तब भारत, जापान और दक्षिण कोरिया जैसे देश चिंता में डूबे हुए हैं। लेकिन चीन इस संकट को अवसर में बदलने की स्थिति में है। सबसे बड़ी बात यह है कि चीन की तेल मांग अब चरम पर पहुंचकर घटने की ओर बढ़ रही है। इसका मतलब है कि आने वाले समय में उसकी आयात निर्भरता और कम होगी, जिससे वैश्विक बाजार में उसकी स्थिति और मजबूत होगी। बहरहाल, यह पूरा घटनाक्रम एक साफ संदेश देता है। जो देश समय रहते अपनी ऊर्जा रणनीति नहीं बदलेंगे, वे आने वाले संकटों में बुरी तरह फंस सकते हैं। चीन ने यह साबित कर दिया है कि दीर्घकालिक योजना, आक्रामक निवेश और रणनीतिक विविधीकरण के दम पर किसी भी वैश्विक संकट को मात दी जा सकती है।

नीरज कुमार दुबे

वैश्विक ऊर्जा संकट के बीच एक सख्त सच्चाई उभर कर सामने आ रही है। होर्मुज जलडमरूमध्य पर मंडराते खतरे ने पूरी दुनिया की सांसें रोक दी हैं, लेकिन इस उथल पुथल के बीच चीन एक अलग ही खेल खेलता नजर आ रहा है। जहां एशिया के कई देश ऊर्जा बचाने की अपील कर रहे हैं, वहीं चीन आत्मविश्वास से भरा हुआ है और दावा कर रहा है कि उसके पास ऊर्जा का पर्याप्त रणनीतिक भंडार है।

दरअसल, यह आत्मविश्वास यूं ही नहीं आया। चीन ने पिछले कई वर्षों में एक ऐसी रणनीति तैयार की है जिसने उसे वैश्विक तेल आपूर्ति के झटकों से काफी हद तक सुरक्षित बना दिया है। जब दुनिया तेल के लिए समुद्री मार्गों पर निर्भर है, चीन ने अपनी निर्भरता को योजनाबद्ध तरीके से कम किया है।

सबसे बड़ा बदलाव चीन के इलेक्ट्रिक वाहन अभियान में दिखता है। जहां 2020 में लक्ष्य रखा गया था कि 2025 तक नए वाहनों में 20 प्रतिशत हिस्सेदारी इलेक्ट्रिक वाहनों की होगी, वहीं यह आंकड़ा अपेक्षा से कहीं आगे निकल गया और आधे से ज्यादा नई गाड़ियां इलेक्ट्रिक हो गईं। इसका सीधा असर यह हुआ कि चीन की तेल खपत अब स्थिर होने लगी है।

आंकड़े बताते हैं कि केवल इलेक्ट्रिक वाहनों के कारण जितना तेल बचा है, वह लगभग उतना ही है जितना चीन सऊदी अरब से आयात करता था। यह बदलाव मामूली नहीं है, बल्कि यह ऊर्जा भू राजनीति की दिशा बदलने वाला संकेत है।

चीन की दूसरी सबसे बड़ी ताकत उसका विविधीकृत आयात तंत्र है। जहां जापान और दक्षिण कोरिया जैसे देश एक या दो आपूर्तिकर्ताओं पर निर्भर हैं, वहीं चीन ने अपने तेल स्रोतों को आठ से ज्यादा देशों में फैला रखा है। रूस, ईरान, वेनेजुएला जैसे देशों से सस्ता तेल लेकर उसने पश्चिमी प्रतिबंधों को भी अपने हित में बदल लिया है। रणनीतिक दृष्टि से यह कदम बेहद महत्वपूर्ण है। इसका मतलब है कि यदि किसी एक क्षेत्र में संकट आता है, तो चीन पूरी तरह ठप नहीं होगा।

तीसरा और सबसे खतरनाक दांव है चीन का विशाल तेल भंडार। अनुमान है कि उसके पास इतना तेल जमा है कि वह होर्मुज मार्ग बंद होने की स्थिति में करीब सात महीने तक अपनी जरूरतें पूरी कर सकता है। यह भंडारण केवल आर्थिक सुरक्षा नहीं बल्कि सामरिक हथियार भी है। देखा जाये तो ऊर्जा सुरक्षा के इस खेल में चीन ने केवल तेल पर ही भरोसा नहीं किया है। उसकी बिजली व्यवस्था लगभग आत्मनिर्भर हो चुकी है। कोयले और तेजी से बढ़ती नवीकरणीय ऊर्जा के दम पर चीन ने अपने ग्रिड को बाहरी निर्भरता से लगभग मुक्त कर लिया है।

इसके साथ ही सौर और पवन ऊर्जा का विस्फोटक विस्तार इस बात का संकेत है कि चीन भविष्य की ऊर्जा लड़ाई के लिए पहले ही तैयार है। इसका सीधा असर यह हुआ है कि उसे कम एलएनजी आयात करना पड़ रहा है और तटीय इलाकों की निर्भरता भी घट रही है। गैस के मामले में भी चीन ने चालाकी दिखाई है। पाइपलाइन नेटवर्क के जरिए उसने रूस, मध्य एशिया और म्यांमार से सीधी आपूर्ति सुनिश्चित कर ली है। इससे समुद्री मार्गों पर निर्भरता और कम हो गई है। सामरिक नजरिए से देखें तो यह पूरी रणनीति एक गहरी सोच का परिणाम है। चीन ने समझ लिया था कि भविष्य की जंग केवल हथियारों से नहीं बल्कि ऊर्जा पर नियंत्रण से जीती जाएगी।

आज जब होर्मुज जलडमरूमध्य पर खतरा मंडरा रहा है, तब भारत, जापान और दक्षिण कोरिया जैसे देश चिंता में डूबे हुए हैं। लेकिन चीन इस संकट को अवसर में बदलने की स्थिति में है। सबसे बड़ी बात यह है कि चीन की तेल मांग अब चरम पर पहुंचकर घटने की ओर बढ़ रही है। इसका मतलब है कि आने वाले समय में उसकी आयात निर्भरता और कम होगी, जिससे वैश्विक बाजार में उसकी स्थिति और मजबूत होगी।

बहरहाल, यह पूरा घटनाक्रम एक साफ संदेश देता है। जो देश समय रहते अपनी ऊर्जा रणनीति नहीं बदलेंगे, वे आने वाले संकटों में बुरी तरह फंस सकते हैं। चीन ने यह साबित कर दिया है कि दीर्घकालिक योजना, आक्रामक निवेश और रणनीतिक विविधीकरण के दम पर किसी भी वैश्विक संकट को मात दी जा सकती है। अब सवाल यह है कि क्या बाकी दुनिया इस सबक को समझेगी या फिर अगला संकट उन्हें पूरी तरह झकझोर देगा।

नक्सलवाद का अंत, रेडकॉरिडोर का सपना चकनाचूर

(लेखक--एडवोकेट किशन सनमुखदास भावनानी)

-क्या अब भ्रष्टाचार व नशा मुक्ति के अंत की अगली ऐतिहासिक डेडलाइन का समय आ गया है? -भारतीय जनता के हर वर्ग की अपेक्षा -समग्र विश्लेषण

जब तक समाज में जुगाड़ और काम निकालने की मानसिकता बनी रहेगी,तब तक भ्रष्टाचार पूरी तरह समाप्त नहीं हो सकता?

नक्सलवाद के खिलाफ जैसे जीरो टॉलरेंस नीति अपनाई गई, वैसे ही भ्रष्टाचार व नशाखोरी के खिलाफ भी एक सख्त और समयबद्ध रणनीति बनाई जाने की खास जरूरत है

वैश्विक स्तरपर भारत के समकालीन राजनीतिक और प्रशासनिक विमर्श में एक बड़ा बदलाव देखने को मिल रहा है। दशकों तक देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ी चुनौती रहे नक्सलवाद के लगभग अंत की घोषणा के साथ अब राष्ट्रीय एजेंडा एक नए लक्ष्य की ओर बढ़ता दिखाई दे रहा है,भ्रष्टाचार मुक्त भारत। यह केवल एक नारा या राजनीतिक संकल्प नहीं, बल्कि शासन- प्रणाली, विकास मॉडल और लोकतांत्रिक विश्वसनीयता की परीक्षा है। जिस प्रकार नक्सल मुक्त भारत के लिए एक निश्चित समय-सीमा निर्धारित कर व्यापक रणनीति के साथ कार्य किया गया,उसी प्रकार अब यह प्रश्न उठ रहा है कि क्या भ्रष्टाचार के खिलाफ भी एक ठोस डेडलाइन तय की जानी चाहिए?मैं एडवोकेट किशन सनमुखदास भावनानी गोंदिया महाराष्ट्र बताना चाहूंगा कि,अब भारतीय नक्सलवाद का अध्याय लगभग समाप्ति की ओर है,तो स्वाभाविक रूप से ध्यान देश की दूसरी बड़ी समस्या भ्रष्टाचार की ओर जा रहा है।भ्रष्टाचार जो न केवल आर्थिक संसाधनों की बर्बादी करता है,बल्कि लोकतांत्रिक संस्थाओं में जनता के विश्वास को भी कमजोर करता है.आज विकास की राह में सबसे बड़ा अवरोध बन चुका है। सरकारी योजनाओं का लाभ अक्सर अंतिम व्यक्ति तक नहीं पहुंच पाता, क्योंकि बीच में बिचौलियों और भ्रष्ट अधिकारियों का एक जाल सक्रिय रहता है। ऐसे में यह विचार तेजी से उभर रहा है कि जैसे नक्सलवाद के खिलाफ जीरो टॉलरेंस नीति अपनाई गई, वैसे ही भ्रष्टाचार के खिलाफ भी एक सख्त और समयबद्ध रणनीति बनाई जानी चाहिए।सरकारी पैसा सीधे जनता की जेब में यह विचार केवल एक नारा नहीं, बल्कि प्रशासनिक सुधार का एक महत्वपूर्णसिद्धांत है। प्रत्यक्ष लाभ अंतरण जैसी योजनाओं ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया है, जिससे लाखों लोगों को बिना किसी बिचौलिए के सीधे लाभ मिला है। लेकिन इसके बावजूद भ्रष्टाचार पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है।फाइलों को जानबूझकर अटकाना, रिश्वत की मांग करना और जांच प्रक्रियाओं को लंबित रखना सबसे बड़ी बात ऊपरी लेवल तक ठेको सहित अन्य करों में 40-50 परसेंट का लेनदेन आज भी आम समस्याएं हैं। इसलिए यह आवश्यक हो गया है कि भ्रष्टाचार के मामलों की जांच के लिए स्पष्ट समय- सीमा तय की जाए और उसमें देरी करने वाले अधिकारियों के खिलाफ सख्त कार्रवाई की जाए।

साथियों बात अगर हम भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई केवल कानून और दंड तक सीमित नहीं हो सकती इसको समझने की करें तो, इसके लिए एक व्यापक संस्थागत ढांचे की आवश्यकता है,जिसमें पारदर्शिता,जवाबदेही और नागरिक भागीदारी को प्राथमिकता दी जाए।

शिकायतकर्ताओं को सुरक्षा और त्वरित न्याय का भरोसा देना भी इस प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। अक्सर देखा गया है कि भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाने वाले लोगों को ही प्रताड़ना का सामना करना पड़ता है, जिससे अन्य लोग आगे आने से डरते हैं। यदि इस भय को समाप्त नहीं किया गया, तो भ्रष्टाचार के खिलाफ कोई भी अभियान अधूरा रहेगा।अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी देखा जाए तो जिन देशों ने भ्रष्टाचार पर प्रभावी नियंत्रण पाया है,उन्होंने सख्त कानूनों के साथ-साथ तकनीकी नवाचार और संस्थागत सुधारों को अपनाया है।सिंगापुर और स्कैंडिनेवियाई देशों के उदाहरण इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं, जहां पारदर्शिता और जवाबदेही को शासन की आधारशिला बनाया गया है। भारत में भी डिजिटल इंडिया, आधार और ई-गवर्नेंस जैसी पहलें इस दिशा में सकारात्मक कदम हैं, लेकिन इनका पूर्ण लाभ तभी मिलेगा जब इन्हें एक व्यापक रणनीति के तहत लागू किया जाए।यह भी महत्वपूर्ण है कि भ्रष्टाचार को केवल एक प्रशासनिक समस्या के रूप में न देखा जाए, बल्कि इसे एक सामाजिक और सांस्कृतिक चुनौती के रूप में भी समझा जाए। जब तक समाज में जुगाड़ और काम निकालने की मानसिकता बनी रहेगी, तब तक भ्रष्टाचार पूरी तरह समाप्त नहीं हो सकता। इसके लिए शिक्षा, जागरूकता और नैतिक मूल्यों को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।जनता की अपेक्षाएं भी अब बदल रही हैं। लोग केवल घोषणाओं से संतुष्ट नहीं हैं, बल्कि वे परिणाम देखना चाहते हैं। नक्सलवाद के खिलाफ सफलता ने यह विश्वास पैदा किया है कि यदि सरकार ठान ले, तो बड़ी से बड़ी चुनौती का समाधान संभव है।यही विश्वास अब भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई में भी दिखाई दे रहा है।

साथियों बात अगर हम नक्सलवाद समाप्ति टारगेट 31 मार्च 2026 की करें तो भारत में नक्सलवाद का इतिहास 1967 में पश्चिम बंगाल के नक्सलबाड़ी गांव से शुरू हुआ, जब एक छोटे किसान आंदोलन ने हिंसक विद्रोह का रूप ले लिया। प्रारंभ में यह आंदोलन सामाजिक और आर्थिक असमानताओं के खिलाफ आवाज उठाने का माध्यम था, लेकिन समय के साथ यह देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक गंभीर खतरा बन गया। करीब छह दशकों तक चले इस संघर्ष में हजारों लोगों की जान गई, जिनमें सुरक्षा बलों के जवान और आम नागरिक दोनों शामिल थे। लेकिन 2024 में एक निर्णायक मोड़ आया, जब देश के गृह मंत्री ने नक्सलवाद के अंत के लिए 31 मार्च 2026 की डेडलाइन तय की। इसके बाद सुरक्षा बलों, खुफिया एजेंसियों और राज्य सरकारों के समन्वित प्रयासों ने रेड कॉरिडोर के विस्तार को तेजी से सीमित कर दिया। छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में बड़े पैमाने पर ऑपरेशन चलाए गए, नक्सली नेतृत्व को कमजोर किया गया और हजारों कैडरों ने आत्मसमर्पण किया। बस्तर जैसे क्षेत्र, जो कभी नक्सल गतिविधियों के गढ़ माने जाते थे, वहां अब स्कूल, सड़कें और राशन की दुकानें खुलने लगी हैं। यह परिवर्तन केवल सुरक्षा की दृष्टि से नहीं, बल्किसामाजिक और आर्थिक विकास के संकेत के रूप में भी महत्वपूर्ण है।हालांकि, इस उपलब्धि पर राजनीतिक मतभेद भी सामने आए हैं। जहां एक ओर सरकार इसे ऐतिहासिक सफलता के रूप में प्रस्तुत कर रही है, वहीं विपक्ष ने इस दावे पर सवाल उठाए हैं। छत्तीसगढ़ के पूर्व मुख्यमंत्री द्वारा इस मुद्दे पर बहस की चुनौती यह दर्शाती है कि नक्सलवाद का पूर्ण अंत अभी भी एक बहस का विषय है। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि नक्सलवाद का प्रभाव पहले की तुलना में काफी कम हुआ है और देश ने इस दिशा में एक बड़ी उपलब्धि हासिल की है।

साथियों बात अगर हम नक्सलवाद और भ्रष्टाचार के बीच एक महत्वपूर्ण समानता को समझने की करें तो वह यह है कि दोनों ही विकास और सुशासन के लिए बाधक हैं। जहां नक्सलवाद ने देश के कुछ हिस्सों को विकास की मुख्यधारा से अलग कर दिया, वहीं भ्रष्टाचार ने पूरे देश में संसाधनों के न्यायसंगत वितरण को प्रभावित किया। इसलिए यदि नक्सलवाद के अंत को एक नई आजादी के रूप में देखा जा रहा है, तो भ्रष्टाचार से मुक्ति को वास्तविक आजादी की दिशा में अगला कदम माना जा सकता है।अब सवाल यह है कि क्या भ्रष्टाचार के खिलाफ भी एक निश्चित डेडलाइन तय की जा सकती है? यह एक जटिल प्रश्न है, क्योंकि नक्सलवाद की तरह यह एक स्पष्ट और सीमित क्षेत्र में फैली समस्या नहीं है। यह समाज और व्यवस्था के हर स्तर पर मौजूद है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि इसके खिलाफ ठोस और समयबद्ध कार्रवाई संभव नहीं है। यदि स्पष्ट लक्ष्यों, मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति और प्रभावी कार्यान्वयन के साथ एक रणनीति बनाई जाए, तो निश्चित रूप से इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति की जा सकती है।

अतः अगर हम उपरोक्त पूरे विवरण का अध्ययन कर इसका विश्लेषण करें तो हम पाएंगे कि नक्सल मुक्त भारत से भ्रष्टाचार मुक्त भारत की यात्रा केवल एक नीतिगत बदलाव नहीं, बल्कि एक व्यापक राष्ट्रीय परिवर्तन का संकेत है। यह यात्रा आसान नहीं होगी, लेकिन यदि इसे सही दिशा और दृढ़ संकल्प के साथ आगे बढ़ाया जाए, तो यह भारत को एक नए युग में प्रवेश कराने का माध्यम बन सकती है एक ऐसा युग जहां विकास समावेशी हो, शासन पारदर्शी हो और नागरिकों का विश्वास अटूट हो।

-संकलनकर्ता लेखक - कर विशेषज्ञ स्तंभकार साहित्यकार अंतरराष्ट्रीय लेखक चिंतक कवि संगीत माध्यम सीए (एटीसी)

शिकायतकर्ताओं को सुरक्षा और त्वरित न्याय का भरोसा देना भी इस प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। अक्सर देखा गया है कि भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाने वाले लोगों को ही प्रताड़ना का सामना करना पड़ता है, जिससे अन्य लोग आगे आने से डरते हैं। यदि इस भय को समाप्त नहीं किया गया, तो भ्रष्टाचार के खिलाफ कोई भी अभियान अधूरा रहेगा।अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी देखा जाए तो जिन देशों ने भ्रष्टाचार पर प्रभावी नियंत्रण पाया है,उन्होंने सख्त कानूनों के साथ-साथ तकनीकी नवाचार और संस्थागत सुधारों को अपनाया है।सिंगापुर और स्कैंडिनेवियाई देशों के उदाहरण इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं, जहां पारदर्शिता और जवाबदेही को शासन की आधारशिला बनाया गया है।

संपादकीय

जिंदगी निगलती भीड़

पिछले दिनों वाराणसी में मोबाइल चोरी के संदेह में एक किशोर की पीट-पीट कर हत्या करने की हृदयविदारक घटना सामने आई। घटना कानून व्यवस्था पर तो सवाल है ही, साथ ही भीड़ की बर्बरता की कहानी भी कहती है। क्या एक बच्चे की जिंदगी मोबाइल से सस्ती है? सवाल समाज की बढ़ती आक्रामकता पर भी है। एक ओर हम समाज में कानून का शासन चाहते हैं, वहीं दूसरी ओर कानून हाथ में लेकर किसी की भी जान लेने पर उतारू हो जाते हैं। निस्संदेह, यदि किसी व्यक्ति की अपराध में शामिल होने की आशंका भी है तो उसे पुलिस को सौंपा जाना चाहिए। उसके खिलाफ कानूनी कार्रवाई होनी चाहिए। अराजक तरीके से मार-पीटकर किसी की हत्या कर देने का अधिकार भीड़ को कैसे मिल सकता है? सवाल ऐसी घटनाओं पर शेष समाज की उदासीनता का भी है। जब उस किशोर को पीटा जा रहा था तो आसपास से गुजरने वाले लोग क्यों उसे बचाने नहीं आए? हाल के दिनों में महज शक के आधार पर लोगों को मौत के घाट उतारने व घायल करने की घटनाएं आम हो गई हैं। यह हमारे समाज के लिये भी चिंता का विषय है क्योंकि निहित स्वार्थी तत्व अकसर निर्दोष लोगों को जाति व संप्रदाय के नाम पर अपने बहुलता वाले इलाके में शिकार बना लेते हैं। प्रश्न यह भी है कि इस तरह की बढ़ती घटनाओं के बीच सरकारों की तरफ से जमीनी स्तर पर कारगर कदम उठाने की पहल क्यों नहीं होती? जाहिर बात है कि व्यक्ति विशेष को शक के आधार पर निशाना बनाने वाले लोगों में कानून का डर न के बराबर ही होता है। साथ ही आसपास के लोगों का महज तमाशबीन बना रहना भी भीड़ के अराजक व्यवहार को बढ़ावा देता है। वाराणसी की घटना में जिस तरह किशोर को घर से बुलाकर सड़क पर पीटा गया और लोग खामोश रहे, परेशान करने वाला घटनाक्रम ही है। निश्चित रूप से भीड़ द्वारा संदेह के आधार पर किसी की हत्या करना, किसी भी सभ्य समाज के माथे पर कलंक जैसा है। ऐसे मामलों में पुलिस को भी अपना सूचना तंत्र मजबूत करने और संवेदनशील ढंग से कार्रवाई करने की जरूरत है। खासकर उस क्षेत्र के थाने की पुलिस व अधिकारियों की जवाबदेही तय करने की आवश्यकता है। हमारे समाज में संदेह के आधार पर किसी की जान लेने की प्रवृत्ति जिस तेजी से बढ़ रही है, वह हमारी गंभीर चिंता का विषय होना चाहिए। आये दिन हम सड़कों पर रोड रेज की घटनाएं सुनते और देखते हैं। सड़क में आगे निकलने की होड़ में गोली चलाने और हिंसक प्रतिरोध की घटनाएं अकसर सामने आती हैं। पिछले दिनों देहरादून में आगे निकलने की होड में दो कारों में सवार लोगों की गोलीबारी में सड़क पर सैर कर रहे सेना के एक सेवानिवृत्त ब्रिगेडियर की हत्या की घटना उत्तराखंड में व्यापक जनाक्रोश का विषय बनी। ऐसी घटनाएं इस बात की ओर इशारा कर रही हैं कि नई पीढ़ी के लोग अपना धैर्य, विवेक तथा संवेदनशीलता खोते जा रहे हैं। ये हमारे मानवीय मूल्यों व संवेदना का भी क्षरण है। दरअसल, हमारे समाज में संयुक्त परिवारों का बिखराव होने से बच्चों की संवेदनशील ढंग से परवरिश का न हो पाना भी युवाओं में बढ़ती आक्रामकता की वजह बन रहा है। पहले स्कूलों में शिक्षकों का दबदबा होता था और छात्र जीवन में अनुशासन का पाठ सीखते थे। मां-बाप के लाड़-प्यार और बच्चों को स्वच्छंद व्यवहार की आजादी ने उन्हें उच्छृंखल बनाया है। एकल परिवारों में पलने वाले अकेले बच्चों में दूसरों को आसानी से सहन न करने की प्रवृत्ति भी तेजी से बढ़ी है। वहीं दूसरी ओर समाज में लगातार जटिल होता जीवन भी उग्रता को बढ़ावा दे रहा है।

रंगमंच- वह ऑफलाइन दुनिया, जहाँ इमोजी नहीं, असली आँसू बहते हैं

(लेखक- दिलीप कुमार पाठक)

(3 अप्रैल हिन्दी रंगमंच दिवस)

हिंदी रंगमंच को लेकर हमारे समाज में एक अजीब सी रूमानी किस्म की सहानुभूति है, जो अक्सर तालियों की गड़गड़ाहट के साथ ही खत्म हो जाती है। 3 अप्रैल का दिन हम हिंदी रंगमंच दिवस के नाम पर दर्ज तो कर लेते हैं, लेकिन क्या हम उस बेचैनी को समझ पा रहे हैं जो इस कला की जड़ों में है? 1868 में जब बनारस के मंच पर जानकी मंगल नाटक खड़ा हुआ था, तो वह कोई मनोरंजन का साधन भर नहीं था। वह एक भाषा का अपने वजूद के लिए किया गया ऐलान था। आज डेढ़ सौ साल बाद, हम उस ऐलान की गूँज को डिजिटल शोर के बीच खो चुके हैं। रंगमंच असल में मनुष्य के भीतर की उस आदिम भूख का नाम है, जो कैमरे की आंख से बचकर सीधे साक्षात इंसान से आंख मिलाना चाहती है। यह कला किसी रीटेक की मोहताज नहीं है और न ही यहाँ कोई एडिटिंग टेबल गलतियों को सुधारने के लिए बैठी है। सिनेमा हमें एक निर्मित सत्य दिखाता है, जहाँ निर्देशक तय करता है कि आपको क्या देखना है। इसके उलट रंगमंच एक लोकतांत्रिक अनुभव है। मंच पर खड़ा अभिनेता अपने पसीने, अपनी कांपती आवाज और अपनी आँखों की नमी के साथ दर्शक के सामने पूरी तरह निहत्था होता है। यही वह लाइव होने का जोखिम है, जो रंगमंच को दुनिया की सबसे जांबाज कला बनाता है। आज के दौर में जब हम पिक्सेल और स्क्रीन की परतों में इतने गहरे धंस चुके हैं कि हमें बगल में बैठे इंसान की सांसों की गर्माहट महसूस होना बंद हो गई है, तब रंगमंच हमें एक सामूहिक चेतना का हिस्सा बनाता है। यह हमें कंज्यूमर से वापस इंसान बनाने की प्रक्रिया है। जब हॉल की लाइटें बुझती हैं और मंच पर रोशनी का एक कतरा पड़ता है, तो वहां बैठा हर दर्शक उस किरदार के दर्द का साझीदार बन जाता है।हिंदी रंगमंच का इतिहास गवाह है कि इसने कभी महलों की चाटुकारिता नहीं की। भारतेंदु से लेकर हबीब तनवीर तक, नाटकों ने हमेशा सत्ता के गलियारों में चुभते हुए सवाल भेजे हैं। अंधेर नगरी का वह टके सेर वाला न्याय आज भी हमारे लोकतंत्र की सड़कों पर बदहवास घूम रहा है। आषाढ़ का एक दिन की मल्लिका का वह अंतहीन इंतजार आज भी हर उस व्यक्ति की कहानी है जो अपनी अस्मिता और प्रेम के बीच पिस रहा है। रंगमंच हमें आईना दिखाता है, और आईना कभी सुखद नहीं होता। यह हमें हमारी झुर्रियां दिखाता है, हमारे भीतर की कुंठाएं दिखाता है और हमें मजबूर करता है कि हम खुद से रूबरू हों। यही कारण है कि सत्ताएं हमेशा रंगमंच से डरती रही हैं, क्योंकि यहाँ संवाद केवल जुबानों से नहीं, रूहों से होता है। लेकिन आज एक बड़ा सवाल यह है कि क्या हम एक दर्शक के तौर पर अपनी जिम्मेदारी निभा रहे हैं? हिंदी रंगमंच आज भी उन चंद पागलों के भरोसे जिंदा है जो दिन भर की थकाऊ नौकरी के बाद शाम को रिहर्सल के लिए अंधेरे कमरों में जुटते हैं। उनके पास न तो कॉर्पोरेट की फंडिंग है और न ही चमक-धमक वाले विज्ञापनों का सहारा। उनके पास सिर्फ एक जुनून है जो उन्हें हर शाम फिर से मेकअप रूम में ले आता है। वे जानते हैं कि शो खत्म होने के बाद उन्हें उसी साधारण जिंदगी में लौटना है जहाँ बिल भरने की चिंता है। फिर भी, वे हर रात मंच की वेदी पर खुद को होम करते हैं ताकि संवाद की लौ बुझने न पाए। क्या हमने कभी सोचा है कि एक टिकट खरीदकर नाटक देखना किसी मंदिर में दान देने से कहीं बड़ी सांस्कृतिक सेवा है? रंगमंच हमें देखना नहीं, महसूस करना सिखाता है। डिजिटल दुनिया ने हमें जोड़ा तो बहुत है, लेकिन हमें अकेला कर दिया है। हम अपनी स्क्रीन पर दुनिया भर का दुख देखते हैं और एक इमोजी बनाकर आगे बढ़ जाते हैं। रंगमंच पर ऐसा नहीं होता। वहां अभिनेता के आंसू दर्शक के गालों पर महसूस किए जाते हैं। यह वह जगह है जहाँ मनुष्यता का आखिरी सिरा सुरक्षित है। अगर रंगमंच मर गया, तो समझ लीजिए कि हमारे समाज से सहानुभूति और प्रतिरोध की क्षमता हमेशा के लिए खत्म हो जाएगी। संवादहीनता के इस दौर में नाटक ही वह आखिरी खिड़की है जहाँ से ताजी हवा आ सकती है।

आज इस खास दिन पर हमें यह समझना होगा कि नाटक का पर्दा केवल लकड़ी के तख्तों पर नहीं गिरता, वह हमारे भीतर के अंधकार पर भी गिरना चाहिए। हिंदी रंगमंच की ताकत उसकी भव्यता में नहीं, बल्कि उसकी सादगी और सच्चाई में है। यह उत्सव केवल इतिहास की किसी तारीख को याद करने का नहीं है, बल्कि यह अपने भीतर के उस दर्शक को जगाने का है जो भीड़ में अपनी पहचान खो चुका है। आइए, इस 3 अप्रैल को किसी अंधेरे हॉल में बैठें और उस रोशनी का स्वागत करें जो सीधे मंच से हमारे दिलों की ओर आती है। क्योंकि जब तक दुनिया में अन्याय रहेगा और जब तक इंसान के भीतर प्रेम की आग बाकी रहेगी, तब तक रंगमंच की मशाल जलती रहेगी।

(लेखक पत्रकार हैं)

श्रद्धा के मुताबिक पूजा

हरेक व्यक्ति में चाहे वह जैसा भी हो, एक विशेष प्रकार की श्रद्धा पाई जाती है। लेकिन उसके द्वारा अर्जित स्वभाव के अनुसार उनकी श्रद्धा उत्तम (सतोगुणी), राजस (रजोगुणी) अथवा तामसी कहलाती है। अपनी श्रद्धा के अनुसार ही वह कतिपय लोगों से संगति करता है। अब वास्तविक तथ्य तो यह है कि जैसा कि गीता के 15 वें अध्याय में कहा गया है कि प्रत्येक जीव परमेर का अंश है। अतएव वह मूलतः इन समस्त गुणों से परे होता है।

लेकिन जब वह भगवान के साथ अपने सम्बन्ध को भूल जाता है और बद्ध जीवन में भौतिक प्रकृति के संसर्ग में आता है तो वह विभिन्न प्रकार की प्रकृति के साथ संगति करके अपना स्थान बनाता है। इस प्रकार से प्राप्त कृत्रिम श्रद्धा तथा अस्तित्व मात्र भौतिक होते हैं। भले ही कोई किसी धारणा या देहात्मबोध द्वारा प्रेरित हो लेकिन मूलतः वह निगरुण या दिव्य होता है। अतएव भगवान के साथ अपना सम्बन्ध फिर से प्राप्त करने के लिए उसे भौतिक कल्मष से शुद्ध होना पड़ता है। यही एकमात्र मार्ग है, निर्भय होकर कृष्णभावनामृत में लौटने का।

श्रद्धा मूलतः सतोगुण से उत्पन्न होती है। मनुष्य की श्रद्धा किसी देवता, किसी कृत्रिम ईश्वर या मनोधर्म में हो सकती है लेकिन प्रबल श्रद्धा सात्विक कार्यों से उत्पन्न होती है। किंतु भौतिक बद्धजीवन में कोई भी कार्य शुद्ध नहीं होता। वे मिश्रित होते हैं। वे शुद्ध सात्विक नहीं होते। शुद्ध सत्त्व दिव्य होता है। इसमें रहकर मनुष्य भगवान के स्वभाव को समझ सकता है। जब तक श्रद्धा पूर्णतया सात्विक नहीं होती, वह प्रकृति के किसी भी गुण से दूषित हो सकती है। ये दूषित गुण हृदय तक फैल जाते हैं। अतः किसी विशेष गुण के सम्पर्क में रहकर हृदय जिस स्थिति में होता है, उसी के अनुसार श्रद्धा होती है। यदि किसी का हृदय सतोगुण में स्थित है तो उसकी श्रद्धा भी सतोगुणी है। यदि हृदय रजोगुण में स्थित है तो उसकी श्रद्धा रजोगुणी और तमोगुण में स्थित है तो उसकी श्रद्धा तमोगुणी होती है। पूजा इसीके आधार पर होती है।

विचार मंथन

ट्रंप के संदेश से वैश्विक तनाव बढ़ा,दुनिया तीसरे विश्वयुद्ध के मुहाने पर?

(लेखक- सनत जैन)

डोनाल्ड ट्रंप ने जो ताजा संदेश दिया है। अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के इस संदेश ने अंतरराष्ट्रीय राजनीति में बड़ी हलचल तेज कर दी है। माना जा रहा था कि वह ईरान युद्ध को लेकर कोई स्पष्ट नीति की घोषणा करेंगे। लेकिन उन्होंने किस तरह का कोई बयान नहीं दिया। उनके बयान के बाद यह आशंका जताई जा रही है। जिस तरह से उन्होंने अपना पल्ला झाड़ है, उसके बाद दुनिया एक बड़े सैन्य टकराव की ओर बढ़ सकती है। खासकर ईरान के खिलाफ कई देशों को एकजुट करने की बात ने वैश्विक संतुलन पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए है।

मध्य-पूर्व पहले से ही युद्ध के कारण कई कारणों से अस्थिर है, जहां इसराइल ,इराक सऊदी अरब, कतर और यूएई जैसे देशों के बीच जटिल स्थिति देखने को मिल रही है। यदि इन देशों के बीच युद्ध इसी तरह चलता रहेगा,तो इसका सबसे बड़ा असर इन्हीं देशों पर पड़ेगा। विशेष रूप से इराक और इजराइल को भारी जनहानि और आर्थिक नुकसान होना तय है।

इतिहास गवाह है, जब भी बड़ी शक्तियां टकराती हैं। तो इसका परिणाम वैश्विक आर्थिक संकट के रूप में सामने आता है। आज की वैश्विक अर्थव्यवस्था पहले ही कई चुनौतियों से जूझ रही है। ऐसे में यदि युद्ध की स्थिति बनती है, तो दुनिया में एक नई महामंदी की ओर बढ़ती दिख रही है। ऊर्जा आपूर्ति बाधित होगी, व्यापार ठप पड़ेगा और महंगाई चरम पर पहुंच सकती है। विश्लेषकों का मानना है, यह स्थिति वैसी ही हो सकती है।

जैसी लगभग 36 साल पहले सोवियत यूनियन के विघटन के समय बनी थी। उसी की पुनरावृत्ति होती हुई दिख रही है। उस दौर में आर्थिक अस्थिरता और राजनीतिक दबाव ने सोवियत रूस का विघटन कर उस महाशक्ति को कमजोर कर दिया था। यदि अमेरिका लंबे समय तक किसी बड़े युद्ध में उलझता है।

तो उसके आर्थिक और सामाजिक ढांचे पर भी गंभीर असर पड़ सकता है। वर्तमान स्थिति को देखते हुए 'विश्व युद्ध' का संकेत मान लेना जल्दबाजी हो सकती है। लेकिन जिस तरह के हालात बन रहे हैं। उससे कभी भी विश्व युद्ध शुरू हो सकता है। अंतरराष्ट्रीय कूटनीति, संयुक्त राष्ट्र जैसे संस्थान और वैश्विक शक्तियां एक तरह से निष्क्रिय हैं। जो हालात को नियंत्रित करने में भूमिका निभा सकते हैं। ट्रंप के बयान ने निश्चित रूप से दुनिया के सभी देशों की चिंता बढ़ी हैं। वर्तमान में इजरायल अमेरिका और ईरान के बीच जो युद्ध चल रहा है उसको रोकने की दिशा में ना तो वैश्विक संस्थाएं आगे आ रही हैं ना ही कोई ऐसा नेता अब है जो सब लोगों से बात करके संयम और विवेक से स्थिति को संभाल सके।

इस समय आर्थिक मंदी के संकेत देखने को मिल रहे हैं। दुनिया को युद्ध नहीं, बल्कि संवाद और सहयोग की जरूरत है। अमेरिका इजरायल और ईरान के युद्ध का असर दुनिया के सभी देशों पर पड रहा है। अन्यथा सारी दुनिया विनाश के मुहाने पर खड़ी हुई दिख रही है। वैश्विक संघर्ष का खामियाजा करोड़ों लोगों की आबादी को भुगतना पडेगा।

मनुष्य ने ईश्वर को जो सबसे महान नाम दिया है, वह सत्य है।
–स्वामी विवेकानंद, दार्शनिक

जेल नहीं बस जुर्माना

जन विश्वास (उपबंधों का संशोधन) विधेयक 2026 राज्यसभा से पास होने के बाद कानून बनेगा। सरकार को यकीन है कि इस प्रस्तावित कानून के आने के बाद कारोबारी माहौल और सुगम, बेहतर तथा भयमुक्त होगा क्योंकि छोटे-मोटे अपराधों से जेल की सजा हटाकर उसे जुर्माने में बदला गया है और पहली बार कम गंभीर अपराध, छोटे मोटे अपराध, अपराध की श्रेणी से ही बाहर कर दिए गए हैं। इसे तर्क संगत तथा व्यावहारिक बनाने के लिए 79 केंद्रीय कानूनों के 784 संशोधनों किए गए, जिसे संसद की मंजूरी मिल गई है। यह ठीक है कि सामान्य अपराध में किसी व्यवसायी को जेल में डालकर अनुत्पादक भीड़ बढाने से बेहतर है जुर्माने के तौर पर उनसे कुछ धन हासिल किया जाए, जो ज्यादा सार्थक और उत्पादक कृत्य होगा। देश की अदालतों में जो तकरीबन पांच करोड़ मामले लंबित हैं, इसमें से साढ़े करोड़ से ज्यादा मामले आपराधिक हैं। इनमें से बहुतायत संख्या अत्यंत साधारण किस्म के आपराधिक आरोपों के हैं। ऐसे में यह कानून आया तो वह अदालतों से आपराधिक मामलों का और जेल प्रशासन से कैदियों के देखरेख का बोझ हटाने में सफल हो जाएगी।

साधारण या अनजाने में किए अपराधों से संबंधित अदालत में लंबित लाखों मुकदमों का निपटारा आसानी से और त्वरित तौर पर संभव होगा तथा धन, समय, ऊर्जा, संसाधन के अपव्यय का कारण बनने वाले इन लंबित मुकदमों की संख्या भी आगे नहीं बढेगी। साधारण मामलों वाले इन खिंचते मुकदमों के चलते जनता, अदालतें, सरकार और कारोबारी तथा दूसरे वर्ग परेशान होते थे। कानून के प्रभावी होने से अदालतें बेवजह के कागज पत्र, कार्रवाइयों के बोझ से कम दबेंगी कोर्ट के कामकाज में फुर्ती आएगी। साधारण अपराध में जेल जाने वाला व्यक्ति देश, समाज, परिवार के लिए बोझ बन जाता है और रिहा होने के बाद भी कलंक नहीं छूटता। सो बेहतर है कि जुर्माना भरकर अथवा अदालत से बाहर एक दंड राशि चुकाकर दोनों पक्ष समझौता कर अपराध और मुकादमा मुक्त हो लें। मोदी सरकार ने लोगों रहन-सहन एवं व्यापार करने में सुगमता, सुविधा लाने के लिए पिछले दशक भर से लगभग 40 हजार कानूनी प्रावधानों को सरल बना चुकी है। इस बार की कारगुजारी को जोड़ लें तो उसने 1562 कानूनी प्रावधानों को कानून की किताब से हटाया है।

यह सही है कि देश में प्रचलित 1536 कानूनों के 70 हजार प्रावधानों में से अधिकतर छोटे कारोबारियों के विकास में बाधा बनते हैं। ऐसे में सामान्य और कामकाज के दौरान असावधानी के चलते हो जाने वाले अपराधों के लिए जेल चले जाने का भय व्यापार के पारिस्थितिकी तंत्र और व्यापारी, निर्माता के व्यक्तिगत आत्मविश्वास के विकास में बाधा डालने वाला एक प्रमुख कारक है। सरकार का यह प्रयास उचित है कि वह व्यवस्था की अड़चनें कम करने के लिए वर्तमान की स्थिति के मद्देनजर पुराने नियमों में बदलाव करे और जो कारोबारी छोटे-छोटे अपराधों के कारण जेल की सजा और जुर्माने से डरते हैं। वे व्यवसायी और सरकारी एजेंसियां सामान्य या तकनीकी रूप से सामान्य उल्लंघनों के लिए जेल जाने की चिंता से निर्भय हो अपना काम करें।

प्रसंगवश

युद्ध और महिलाएं: पीड़िता से नेतृत्वकर्ता तक

युद्ध आज इतिहास का कोई दूरस्थ अध्याय नहीं है। यह एक जीवंत और पीड़ादायक वास्तविकता है। सूडान, गाजा और यूक्रेन जैसे क्षेत्रों में चल रहे संघर्ष हमें यह दिखा रहे हैं कि मानवता हर दिन परीक्षा से गुजर रही है। इस कठिन समय में एक सत्य अत्यंत स्पष्ट रूप से सामने आता है कि महिलाएं युद्ध में गहराई से पीड़ित होती हैं, फिर भी वे और अधिक सशक्त होकर उभरती हैं। सूडान में महिलाएं असहनीय हिंसा और असुरक्षा का सामना कर रही हैं, फिर भी वे अपने परिवारों की संरक्षक और सहारा बनकर आगे आ रही हैं। गाजा में महिलाएं विनाश के बीच जीवन को संजोए हुए हैं, जब सब कुछ टूट रहा है, तब भी वे परिवारों को एकजुट रख रही हैं। यूक्रेन में महिलाएं मानवीय सहायता का नेतृत्व कर रही हैं, समुदायों का पुनर्निर्माण कर रही हैं और आशा को जीवित रख रही हैं।

डॉ. तनु जैन
सीईओ, बरेली छावनी

यह पीड़ा और शक्ति का द्वंद्व हमें हमारे याद दिलाता है कि "यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवताः।" जहां महिलाओं का सम्मान होता है, वहां देवताओं का वास होता है, लेकिन आज हमें स्वयं से एक प्रश्न पूछना होगा कि यदि महिलाएं सहनशीलता और शक्ति की प्रतीक हैं, तो वे निर्णय लेने के उच्चतम मंचों पर अभी भी अनुपस्थित क्यों हैं? युद्ध केवल भूमि का विनाश नहीं है। यह विनाश है परिवारों का, मूल्यों का तथा समाज के ताने-बाने का और इस ताने-बाने को पुनः स्थापित करने के लिए केवल शक्ति नहीं, बल्कि संवेदनशीलता, धैर्य और दूरदर्शिता की आवश्यकता होती है। ये वे गुण हैं, जिन्हें महिलाओं ने बार-बार सिद्ध किया है। आज के युद्ध अधिक जटिल, हिंसक और लंबे हो गए हैं। ये केवल हथियारों से नहीं, बल्कि विस्थापन, भूख, भय और मानसिक आघात से लड़े जा रहे हैं। ऐसी परिस्थितियों में शांति केवल रणनीति से नहीं आ सकती। इसके लिए संवेदनशीलता और समावेशिता आवश्यक है और महिलाएं पहले से ही यह कार्य कर रही हैं। वे समुदायिक स्तर पर शांति स्थापित कर रही हैं, विश्वास को पुनः निर्मित कर रही हैं, बच्चों की शिक्षा को बनाए रख रही हैं और वहां सम्मान को पुनर्स्थापित कर रही हैं, जहां वह सबसे अधिक खो गया है। वे शांति का इंतजार नहीं कर रही हैं, वे शांति का निर्माण कर रही हैं। एक और प्राचीन विचार हमें मार्गदर्शन देता है कि "वसुधैव कुटुंबकम्" अर्थात यह संपूर्ण विश्व एक परिवार है। यदि यह विश्व वास्तव में एक परिवार है, तो महिला शक्ति के बिना शांति कैसे संभव है, जो परिवार को संजोकर रखती है?

आज हमारे सामने चुनौती केवल महिलाओं की पीड़ा को स्वीकार करने की नहीं है, बल्कि उनके नेतृत्व को पहचानने और उसे सशक्त करने की है। महिलाओं को आगे बढ़ना होगा। पीड़िता से शक्ति की ओर, मौन से नेतृत्व की ओर और बहिष्कार से सहभागिता की ओर, क्योंकि शांति केवल युद्ध की अनुपस्थिति नहीं है। शांति गरिमा, संतुलन और सामंजस्य का संगम है। यह भाव हमारे प्राचीन श्लोक में अत्यंत सुंदर रूप से व्यक्त होता है- "सर्वे भवंतु सुखिनः, सर्वे संतु निरामयाः सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।" अर्थात सभी सुखी हों, सभी निरोग हों, सभी शुभ देखें और कोई भी दुःख का भागी न बने। यदि यही हमारा लक्ष्य है, तो महिलाओं को केवल शांति प्रक्रिया में सहभागी नहीं बनाना होगा, बल्कि उन्हें उसका नेतृत्व सौंपना होगा। क्योंकि जब महिलाएं युद्ध के समय नेतृत्व करती हैं, तो शांति केवल अस्थायी नहीं रहती। वह स्थायी, सतत और मानवीय बन जाती है।

(ये लेखिका के निजी विचार हैं।)

सत्ता-व्यापार गठजोड़ पर बालेन सरकार का शिकंजा

यशोदा श्रीवास्तव
वरिष्ठ पत्रकार

नेपाल की बालेन सरकार एक साथ कई मोर्चों पर लड़ रही है। राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों से खुली जंग के साथ सफेदपोश अपराधियों के खिलाफ मोर्चा खोल दिया है। इस बीच बालेन सरकार के वित्त मंत्री स्वर्णिम बाग्ले की काठमांडू में भारतीय राजदूत नवीन श्रीवास्तव से मुलाकात भी चर्चा में है। इस मुलाकात की चर्चा इसलिए भी मायने रखती है, क्योंकि यह परंपरा से थोड़ा हटकर थी। परंपरा यह रही है कि जब भी नेपाल में सत्ता परिवर्तन होता है, तो सर्वप्रथम भारतीय राजदूत से पहली मुलाकात विदेश मंत्री अथवा प्रधानमंत्री की होती थी।

यद्यपि कि भारतीय राजदूत और नेपाल के वित्त मंत्री की यह मुलाकात बेहद गोपनीय रही फिर भी जब बालेन सरकार भ्रष्टाचार में लिप्त राजनेताओं और सफेदपोश अपराधियों पर लगाम कस रही है, तो इस मुलाकात के तरह-तरह के मायने निकाला जाना लाजिमी है। वह भी तब जब भ्रष्ट नेपाली नेताओं और भ्रष्ट अफसरों के तार भारत से जुड़े हुए हों। इस मुलाकात की एक बात यह भी हो सकती है कि चुनाव के बीच भारत ने नेपाल को भारतीय आठ सौ करोड़ की अनुदान राशि उपलब्ध कराई है, इस पर भी चर्चा संभव है। जहां तक बालेन सरकार के भ्रष्ट राजनेताओं पर शिकंजा कसने की बात है, तो वह केवल के पी शर्मा ओली और रमेश लेखक, महेश बस्नेत और पूर्व उर्जा मंत्री की गिरफ्तारी तक ही सीमित नहीं है। एमाले के अन्य नेता भी निशाने पर हैं।

नेपाली कांग्रेस नेता और पूर्व प्रधानमंत्री शेर बहादुर देउबा और उनकी पत्नी आरजू राणा सहित इस पार्टी के अन्य नेता भी भ्रष्टाचार के आरोप से घिरे हुए हैं। माओवादी केंद्र के अध्यक्ष पूर्व पीएम प्रचंड और पूर्व पीएम बाबू राम भट्टराई पर भी भ्रष्टाचार के आरोप है। पूर्व पीएम शेर बहादुर देउबा सपत्नीक अभी भारत में थे अब उनके थायलैंड में होने की चर्चा है शायद किसी बीमारी के इलाज के सिलसिले में। जाहिर भ्रष्टाचार में लिप्त नेपाली नेताओं का सुरक्षित ठिकाना भारत हो सकता है। भारतीय राजदूत और नेपाली वित्त मंत्री के मुलाकात में यह भी चर्चा का विषय हो सकता है।

बालेन सरकार के भ्रष्टाचार विरोधी मुहिम में जिलाधिकारी स्तर के एकाध नेपाली अफसर भी सलाखों के पीछे हुए हैं। इसके बाद अभी मनी लांड्रिंग मामले में जो एक बड़े व्यवसाई की गिरफ्तारी हुई है, उससे व्यवसाय की आड़ में अवैध तरीके से धन अर्जन का चौंकाने वाला खुलासा हुआ है। इससे काठमांडू अथवा नेपाल में कहीं भी व्यवसाय की आड़ में लूट खसोट करने वाले सफेदपोशों में दहशत फैल गई है। गिरफ्तार किए गए दीपक भट्ट नाम के व्यवसायी का जो बैकग्राउंड सामने आया है वह काफी चौंकाने वाला है और यह भी नेपाल जैसे छोटे देश में भी भ्रष्टाचार की जड़ें इतने गहरे तक है।

नेपाली कांग्रेस नेता शेर बहादुर देउबा के चुनाव क्षेत्र डोडुलधुरा का रहने वाले दीपक भट्ट का संबंध नेपाली कांग्रेस के नेताओं के अलावा हर पार्टी के पूर्व प्रधानमंत्रियों से काफी निकट के रहे हैं। एक से बढ़कर एक काले कारनामों से लैस इस व्यवसायी की जब कुंडली खंगाली कई तो प्याज के छिलके की तरह भ्रष्टाचार से जुड़े उसके ढेर सारे कारनामें सामने आने लगे। इसमें एक तो यह भी कि डॉ. बाबू राम भट्टराई से उसके तार बहुत मजबूती से जुड़े हुए थे, जब वे प्रधानमंत्री थे। बाबूराम भट्टराई से उसकी मुलाकात सत्ता रूढ़ दल के एक सांसद ने कराई थी, जब वे नेपाली कांग्रेस में थे। डॉ. बाबू राम भट्टराई बहुत ज्यादा समय तक प्रधानमंत्री नहीं रहे, लेकिन जितने दिन भी थे, सत्ता के गलियारे में दीपक भट्ट की तूती बोलती थी। दीपक भट्ट अपनी एक कंपनी के मार्फत बड़ा व्यावसायिक साम्राज्य खड़ा कर लिया था। इसी समय नेपाल पुलिस को हथियार सप्लाई की दलाली में भी इसके हाथ सने हुए पाए गए।

> एक से बढ़कर एक काले कारनामों से लैस इस व्यवसायी की जब कुंडली खंगाली कई तो प्याज के छिलके की तरह भ्रष्टाचार से जुड़े उसके ढेर सारे कारनामें सामने आने लगे। इसमें एक तो यह भी कि डॉ. बाबू राम भट्टराई से उसके तार बहुत मजबूती से जुड़े हुए थे, जब वे प्रधानमंत्री थे।

44 वर्षीय दीपक भट्ट काठमांडू के सानेपा क्षेत्र में रहता है। काठमांडू का यह क्षेत्र दिल्ली की लुटियंस जोन की तरह चर्चित राजनीतिक गलियारा है। यहां राजनीतिक दलों के कार्यालय और नेताओं के आवास हैं। पिछले दो दशक से इस शख्स की हैसियत इतनी थी कि यह न केवल गठबंधन दलों की सरकार बनाने बिगाड़ने की कुव्वत रखता था, संसद की राज्य व्यवस्था और सार्वजनिक लेखा समिति तक को प्रभावित करता था। दीपक भट्ट के खिलाफ वित्त मंत्रालय ने गोपनीय जांच के आदेश दिए थे और जब उसके खिलाफ पुख्ता सबूत जुटा लिए गए, तब दो अप्रैल को उसे काठमांडू के नक्सल क्षेत्र से गिरफ्तार किया गया।

सीबीआई के प्रवक्ता शिव कुमार श्रेष्ठ द्वारा उसकी गिरफ्तारी की पुष्टि करते ही नेपाल के सफेदपोश अपराधियों में खलबली मच गई। दीपक भट्ट इस समय 'इन्फिनिटी होल्डिंग्स नामक एक के प्रमुख डायरेक्टर है। आरोप है कि वह सत्ता की गठजोड़ से इसी कंपनी के माध्यम से उसने जलविद्युत, हथियार, हेलिकॉप्टर समेत विभिन्न विदेशी कंपनियों के एजेंट के रूप में काम करते हुए अवैध कारोबार का विशाल साम्राज्य खड़ा कर लिया। दीपक भट्ट का नेपाल के ट्रैवल एजेंसी, होटल, रियल एस्टेट, कंसल्टेंसी, बीमा और लघु वित्त जैसे क्षेत्रों में भी सीधी और परोक्ष संलिप्तता बताई जाती है। सरकार ने उसके खिलाफ संपत्ति शुद्धीकरण मामले में विस्तृत जांच शुरू की थी, जिसके तहत अध्यागमन विभाग ने उसे काली सूची में डालते हुए उसके विदेश यात्रा पर रोक लगा दी थी। फिलहाल, भट्ट, उनकी कंपनी और उससे जुड़े सभी संपत्तियों की गहन जांच जारी है।

(ये लेखक के निजी विचार हैं।)

आमने सामने

हमने खाड़ी में चल रहे संघर्ष के दौरान व्यक्तिगत रूप से फ्रांस से सैन्य सहायता का अनुरोध किया था, लेकिन पेरिस ने इसमें शामिल होने से इनकार कर दिया। हमें उनकी जरूरत नहीं थी, फिर भी मैंने उनसे पूछा। मैक्रों की पत्नी उनके साथ बेहद बुरा बर्ताव करती हैं। वह अभी भी अपने जबड़े पर लगे जोरदार वार से उबर रहे हैं।
–**डोनाल्ड ट्रंप**, राष्ट्रपति अमेरिका

यह टिप्पणी न तो शालीन है और न ही उस स्तर की है, जिसकी उम्मीद किसी राष्ट्राध्यक्ष से की जाती है। हमें गंभीर होना चाहिए। यह नहीं होना चाहिए कि हम आज कुछ कहें और अगले ही दिन उसके उलट बात करने लगें। दुनिया में जब इतने गंभीर संकट चल रहे हों, तब ऐसे बचकाने बयानों की कोई जगह नहीं होनी चाहिए।
–**इमैनुएल मैक्रों**, राष्ट्रपति, फ्रांस

पश्चिम बंगाल में उच्च शिक्षा का बदलता परिदृश्य

डॉ. इंद्रनील बोस
शिक्षाविद

भारत में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षों में एक बड़ा बदलाव देखने को मिला है। नई शिक्षा नीति और वैश्वीकरण की दिशा में बढ़ते कदमों के चलते देश ने विदेशी विश्वविद्यालयों के लिए अपने द्वार खोल दिए हैं। इस पहल का उद्देश्य भारतीय छात्रों को विश्वस्तरीय शिक्षा अपने ही देश में उपलब्ध कराना, प्रतिभा पलायन को कम करना और शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण तैयार करना है। इस संदर्भ में कई प्रतिष्ठित विदेशी विश्वविद्यालयों ने भारत के विभिन्न राज्यों में अपने परिसरों की स्थापना शुरू कर दी है, लेकिन इस बदलते परिदृश्य में कोलकाता और व्यापक रूप से पश्चिम बंगाल की स्थिति चिंताजनक दिखाई देती है।

भारत के कई राज्य इस अवसर को तेजी से भुनाने में सफल रहे हैं। गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, तेलंगाना, उत्तर प्रदेश और दिल्ली एनसीआर जैसे क्षेत्रों ने विदेशी विश्वविद्यालयों को आकर्षित करने के लिए नीतिगत सुधार, निवेश अनुकूल वातावरण और बुनियादी ढांचे का विकास किया है। इन राज्यों में पहले से ही उद्योग, तकनीक और नवाचार का मजबूत आधार मौजूद है, जिससे विदेशी संस्थानों के लिए यह क्षेत्र स्वाभाविक रूप से आकर्षक बन जाते हैं।

> इस संदर्भ में कई प्रतिष्ठित विदेशी विश्वविद्यालयों ने भारत के विभिन्न राज्यों में अपने परिसरों की स्थापना शुरू कर दी है, लेकिन इस बदलते परिदृश्य में कोलकाता और व्यापक रूप से पश्चिम बंगाल की स्थिति चिंताजनक दिखाई देती है।

इन राज्यों की सरकारों ने न केवल नीतिगत समर्थन दिया है, बल्कि भूमि उपलब्धता, प्रशासनिक प्रक्रियाओं में सरलता और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए स्पष्ट रोडमैप भी तैयार किया है। इसका परिणाम यह हुआ कि यूके, ऑस्ट्रेलिया और अन्य पश्चिमी देशों के विश्वविद्यालयों ने इन राज्यों में अपने परिसरों की स्थापना शुरू कर दी है। इससे स्थानीय छात्रों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर की शिक्षा सुलभ हो रही है और रोजगार के नए अवसर भी पैदा हो रहे हैं। इसके विपरीत, कोलकाता, जो कभी भारत का बौद्धिक और शैक्षणिक केंद्र माना जाता था, आज इस दौड़ में पीछे छूटता नजर आता है।

पश्चिम बंगाल में किसी भी विदेशी विश्वविद्यालय द्वारा परिसर स्थापित करने में रुचि न दिखाना कई गंभीर प्रश्न खड़े करता है। यह स्थिति केवल संयोग नहीं है, बल्कि इसके पीछे कई गहरे कारण हैं। पहला और सबसे महत्वपूर्ण कारण है राज्य सरकार की ओर से स्पष्ट और प्रभावी पहल का अभाव। जहां अन्य राज्य विदेशी निवेशकों और शैक्षणिक संस्थानों को आकर्षित करने के लिए सक्रिय हैं, वहीं पश्चिम बंगाल में ऐसी कोई ठोस रणनीति दिखाई नहीं देती। नीतिगत अस्पष्टता और धीमी प्रशासनिक प्रक्रियाएं संभावित निवेशकों के लिए बाधा बनती हैं।

दूसरा कारण सामाजिक मानसिकता से जुड़ा हुआ है। मध्यम वर्गीय बंगाली समाज, जो ऐतिहासिक रूप से शिक्षा और बौद्धिकता के लिए जाना जाता रहा है, आज भी कई मामलों में पारंपरिक और रूढ़िवादी सोच से प्रभावित है। परिवर्तन के प्रति झिझक और नई पहल के प्रति संदेह, आधुनिक शिक्षा मॉडल को अपनाने में बाधा उत्पन्न करते हैं। किसी भी क्षेत्र में उच्च शिक्षा का विकास उद्योग और आर्थिक गतिविधियों से गहराई से जुड़ा होता है। जिन राज्यों में उद्योग, आईटी सेक्टर और स्टार्टअप इकोसिस्टम मजबूत है, वहां शिक्षा संस्थानों के लिए अवसर अधिक होते हैं।

दुर्भाग्यवश, पश्चिम बंगाल इस मामले में पिछड़ गया है। राज्य में लंबे समय से उद्योगों का पलायन, निवेश की कमी और रोजगार के सीमित अवसरों ने एक नकारात्मक चक्र बना दिया है। जब उद्योग नहीं होंगे, तो छात्रों के लिए रोजगार के अवसर कम होंगे और जब अवसर कम होंगे, तो गुणवत्तापूर्ण शिक्षा संस्थान भी वहां आने में रुचि नहीं दिखाएंगे। यही कारण है कि विदेशी विश्वविद्यालय उन राज्यों को प्राथमिकता देते हैं, जहां उन्हें छात्रों के साथ-साथ उद्योगों से भी जुड़ने का अवसर मिलता है। कोलकाता कभी कलकत्ता विश्वविद्यालय और प्रेसीडेंसी कॉलेज जैसे प्रतिष्ठित संस्थानों के कारण शिक्षा का केंद्र था। यहां से कई महान विद्वान, वैज्ञानिक और विचारक निकले हैं, लेकिन वर्तमान में यह विरासत आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित नहीं हो पाई है।

आज की शिक्षा केवल सैद्धांतिक ज्ञान तक सीमित नहीं है, इसमें शोध, नवाचार, उद्योग सहयोग और वैश्विक एक्सपोजर की आवश्यकता होती है। यदि कोई क्षेत्र इन आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाता, तो वह धीरे-धीरे पीछे छूट जाता है। हालांकि स्थिति चुनौतीपूर्ण है, लेकिन असंभव नहीं। पश्चिम बंगाल यदि सही दिशा में कदम उठाए, तो वह फिर से अपनी शैक्षणिक पहचान को पुनर्स्थापित कर सकता है। इसके लिए कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाने होंगे। पहला यह कि विदेशी विश्वविद्यालयों के लिए स्पष्ट, पारदर्शी और आकर्षक नीतियां बनाई जाएं। दूसरा- आधुनिक कैंपस, रिसर्च सुविधाएं और टेक्नोलॉजी आधारित वातावरण तैयार किया जाए। तीसरा- निवेश को आकर्षित करने के लिए उद्योग अनुकूल नीतियां लागू की जाएं। चौथा- समाज में नवाचार और परिवर्तन को स्वीकार करने की प्रवृत्ति विकसित की जाए। पांचवां- वैश्विक संस्थानों के साथ साझेदारी को बढ़ावा दिया जाए। भारत के उच्च शिक्षा क्षेत्र में हो रहे बदलाव एक बड़ा अवसर प्रस्तुत करते हैं।

जहां कई राज्य इस अवसर का लाभ उठा रहे हैं, वहीं पश्चिम बंगाल को अपनी रणनीति पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। यदि सही कदम उठाए जाएं, तो पश्चिम बंगाल फिर से शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी बन सकता है।

(ये लेखक के निजी विचार हैं।)

सोशल फोरम

ईरान पर विपरीत रुख

अमेरिका और यूरोपीय देश दोनों ईरान के मुद्दे पर विपरीत रुख वाले दिख रहे हैं। नाटो पहली बार इस तरह विभाजित है। लग सकता है कि पश्चिम दोफाड़ है, पर यह भ्रम हो सकता है। पश्चिम की छवि उदारवाद के प्रवक्ता के रूप में बनाई गई है। एक हद तक यह सही है कि पश्चिम ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता, लोकतंत्र, बंधुत्व, समता, कानून के शासन आदि उच्च मूल्यों को प्रतिष्ठित किया, पर वह केवल अपने देशों के भीतर उदार था। सबको पता है कि उसी घड़ी वह उपनिवेशितों के प्रति अत्यंत कठोर, षड्यंत्री और नियंत्रणशील था। अमेरिका और यूरोपीय देश आज प्रति-ध्रुव की तरह दिखते हैं। नए दौर में सारे पश्चिमी देशों में ही 'अमेरिका फर्स्ट' की ही तरह 'नेशन फर्स्ट' ही मुख्य नारा बन रहा है।

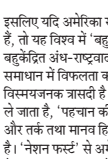

शंभुनाथ
सेवानिवृत्त प्रोफेसर, कोलकाता

अमेरिका सहित हर पश्चिमी देश में उदारवाद पर दक्षिणपंथ भारी हो चुका है। इसलिए यदि अमेरिका से यूरोपीय देश अपना स्वतंत्र रास्ता पकड़ रहे हैं, तो यह विश्व में 'बहुकेंद्रिक अंध-राष्ट्रवाद' से भिन्न कुछ नहीं है। बहुकेंद्रित अंध-राष्ट्रवाद वैश्विक स्तर पर समस्याओं के सामूहिक समाधान में विफलता का नतीजा है, जो सभ्यता के शिखर पर एक विस्मयजनक त्रासदी है। 'नेशन फर्स्ट' अंततः 'पॉपुलिज्म' की तरफ ले जाता है, 'पहचान की राजनीति' हर चीज पर भारी हो जाती है और तर्क तथा मानव हित आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था टूट जाती है। 'नेशन फर्स्ट' से अमेरिकी डॉलर मजबूत हुआ है, दादागिरी बढ़ी है। इन सबका नतीजा है विश्व में सहयोग के स्थान पर नकारात्मक प्रतिस्पर्धा का बढ़ना और नैतिकता के स्थान पर ताकत की प्रधानता।

इससे विश्व में अराजकता, आर्थिक अस्थिरता और सामाजिक विभाजन बढ़ेगा। महंगाई और बेरोजगारी बढ़ेगी। लोकतांत्रिक गिरावट पाताल छू लेगी। अतः मुझे लगता है कि अमेरिका और यूरोपीय देश की इस तात्कालिक प्रति-ध्रुवता पर ज्यादा प्रफुल्लित होने की जरूरत नहीं है। दरअसल यूरोपीय देश भी धीरे-धीरे अमेरिका की तरह होते जाएंगे। भारत में छोटे-छोटे अमेरिका बन ही चुके हैं, छोटे-छोटे ट्रंप पहले से हैं। क्या यह सब चिंताजनक नहीं है? वास्तविकता शायद इन दोनों के बीच है-संकट भी है और संभावनाएं भी। जहां तक भारत में "छोटे–छोटे ट्रंप" की बात है-यह एक तीखा रूपक है, लेकिन पूरी वास्तविकता नहीं हो सकती है। भारत जैसे समाज में विविधता इतनी गहरी है कि एकरूप राजनीतिक व्यवहार स्थायी नहीं हो सकता। यहां प्रतिरोध और वैकल्पिक विचारधाराएं भी साथ-साथ चलती हैं।

-फेसबुक वॉल से

सामयिकी

विकास और विश्वास की नई विजयगाथा

भारत ने लंबे समय तक जिस आंतरिक चुनौती का सामना किया, वह नक्सलवाद के रूप में देश के अनेक हिस्सों में फैली रही। यह समस्या केवल कानून-व्यवस्था तक सीमित नहीं थी, बल्कि इसने सामाजिक, आर्थिक और मानवीय जीवन को भी गहराई से प्रभावित किया। दशकों तक आदिवासी क्षेत्रों में भय, असुरक्षा और पिछड़ापन बना रहा। गांवों में विकास की रफ्तार थम गई और लोगों का भरोसा व्यवस्था से डगमगाने लगा। आज जब देश नक्सलवाद के अंत की दिशा में निर्णायक कदम बढ़ा चुका है, तब यह आवश्यक हो जाता है कि इस परिवर्तन के पीछे की नीति, संकल्प और प्रयासों को समझा जाए।

कांतिलाल मांडोत
लेखक

गृह मंत्रालय के नेतृत्व में बीते वर्षों में जो रणनीति अपनाई गई, वह बहुआयामी रही। केवल सुरक्षा बलों की तैनाती तक सीमित न रहकर सरकार ने विकास और विश्वास दोनों को साथ लेकर चलने का प्रयास किया। यही कारण है कि जिन क्षेत्रों में कभी बंदूक की आवाज गूंजती थी, वहां आज स्कूल खुल रहे हैं, सड़कें बन रही हैं और जीवन सामान्य हो रहा है। यह बदलाव अचानक नहीं आया, बल्कि इसके पीछे वर्षों की योजनाबद्ध मेहनत और स्पष्ट नीति रही है। कई ऐसे क्षेत्र भी रहे, जहां आर्थिक स्थिति कमजोर थी, फिर भी वहां नक्सलवाद नहीं पनपा। इससे स्पष्ट होता है कि यह केवल आर्थिक नहीं, बल्कि वैचारिक और रणनीतिक चुनौती भी थी। वामपंथी उग्रवाद ने आदिवासी समाज को प्रभावित कर उन्हें मुख्यधारा से दूर करने का प्रयास किया। स्कूलों को जलाना, विकास कार्यों में बाधा डालना और भय का वातावरण बनाना इसी रणनीति का हिस्सा रहा। इन परिस्थितियों को समझते हुए गृह मंत्रालय ने अपनी नीति को सुदृढ़ बनाया। सुरक्षा बलों को आधुनिक संसाधनों से लैस किया गया, खुफिया तंत्र को मजबूत किया गया और स्थानीय पुलिस को सशक्त किया गया। साथ ही आत्मसमर्पण नीति को प्रभावी रूप से लागू किया गया, जिससे बड़ी संख्या में नक्सली मुख्यधारा में लौटे। यह केवल सुरक्षा की सफलता नहीं, बल्कि सामाजिक पुनर्वास का भी उदाहरण है। बस्तर जैसे क्षेत्रों में आया परिवर्तन इस नीति की सफलता का प्रमाण है, जहां कभी प्रशासन की पहुंच सीमित थी, वहां आज सरकारी योजनाएं प्रभावी ढंग से लागू हो रही हैं। राशन, स्वास्थ्य और पहचान से जुड़ी सुविधाएं सीधे लोगों तक पहुंच रही हैं। इससे लोगों का विश्वास बढ़ा है और वे हिंसा से दूर होकर विकास की राह पर आगे बढ़ रहे हैं।

सरकार ने यह संदेश दिया है कि हिंसा का मार्ग स्वीकार्य नहीं है, साथ ही भटके हुए लोगों को मुख्यधारा में लौटने का अवसर भी प्रदान किया गया है। इस संतुलित दृष्टिकोण के सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। हिंसा की घटनाओं में कमी आई है और आत्मसमर्पण की संख्या में वृद्धि हुई है। सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह है कि अब आदिवासी समाज स्वयं इस बदलाव का सहभागी बन रहा है। शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार की बढ़ती उपलब्धता ने नई पीढ़ी को नई दिशा दी है। अब वे हथियार नहीं, बल्कि विकास और अवसरों को अपना लक्ष्य बना रहे हैं। नक्सलवाद के अंत की यह यात्रा केवल सरकार की उपलब्धि नहीं, बल्कि पूरे समाज की साझा सफलता है। सुरक्षा बलों का साहस, प्रशासन की प्रतिबद्धता और आम नागरिकों का सहयोग इन सभी ने मिलकर यह परिवर्तन संभव किया है। आज आवश्यकता इस बात की है कि इस उपलब्धि को स्थायी बनाया जाए। विकास की गति निरंतर बनी रहे और यह सुनिश्चित किया जाए कि कोई भी क्षेत्र पुनः पिछड़ेपन और असुरक्षा की ओर न लौटे। यही नक्सलवाद के स्थायी अंत की सच्ची गारंटी होगी।

(ये लेखक के निजी विचार हैं।)

डबल इंजन की सरकार असम की पहचान को संरक्षित करने के साथ ही यहां की संस्कृति से जुड़े हुए महापुरुषों को सम्मान भी प्रदान कर रही है।

– योगी आदित्यनाथ

दिल्ली के हर जिले में SPCA समितियों का गठन किया जाएगा, जो पशुओं पर होने वाले अत्याचारों पर त्वरित कार्रवाई, बेहतर समन्वय और प्रभावी निगरानी सुनिश्चित करेंगी। आइए, एक ऐसे समाज का निर्माण करें जहाँ हर जीव खुद को सुरक्षित और संरक्षित महसूस करे।

-रेखा गुप्ता

संपादकीय

मात खाती कांग्रेस

कांग्रेस इन दिनों अपने राजनीतिक शैली के चलते अपने ही सहयोगियों से अलग-थलग पड़ती और कमजोर होती नजर आ रही है। वह गठबंधन की राजनीति करने के लिए भले ही मजबूर है। लेकिन जिन राज्यों में उसका जनाधार अपेक्षाकृत बेहतर है,वहां वह अपने सहयोगियों को कोई तवज्जो नहीं देती है। नतीजतन सहयोगी दल नाराज हो जाते हैं और बदले की फिराक में रहते हैं। जिसके चलते पूरे देश में सहयोगी दल कांग्रेस से नाराज होते जा रहे हैं और उसका ग्राफ तेजी से गिरता जा रहा है। पंजाब और दिल्ली में उसकी विरासत पर आम आदमी पार्टी ने पहले ही कब्जा कर लिया है तो गोवा और गुजरात में भी वह अब तीसरे स्थान पर खिसकती नजर आ रही है। पांच राज्यों में हो रहे चुनावी राज्यों की बात करें तो इन दिनों उसे अपनी राजनैतिक शैली की गंभीर प्रतिक्रिया का सामना करना पड़ा है। तमिलनाडु और पुडुचेरी में घुटने टेक कर वह द्रमुक के साथ समझौता करने में कामयाब जरूर हो गई। लेकिन द्रमुक प्रमुख स्टालिन ने साफ कर दिया अगर उनकी पार्टी फिर से सरकार बनाने में कामयाब होती है तो किसी भी सहयोगी दलों को मंत्रिमंडल में शामिल नहीं किया जाएगा। असम में झारखंड मुक्ति मोर्चा(जेएमएम) बिहार का हिसाब-किताब कांग्रेस से चुकता कर रही है। जहां राष्ट्रीय जनता दल और कांग्रेस ने उसे एक भीसीट नहीं छोड़ी थी और जेएमएम को मजबूर होकर बिहार की चुनावी राजनीति से हटना पड़ गया था। यही कारण है कि जेएमएम सिर्फ और सिर्फ कांग्रेस को ही निशाना बना रही है। वह चाहती तो पश्चिम बंगाल के सीमावर्ती जिलों में अपने उम्मीदवार खड़े करके टीएमसी को नुकसान नहीं पहुंचा सकती थी,लेकिन उसने ममता को राहत देते हुए असम में कांग्रेस को घेर रही है,जहां उसका जनाधार मजबूत है और वह मुख्य विपक्षी पार्टी है। सूबे में 126 सदस्यीय विधानसभा के लिए जेएमएम ने गठबंधन के तहत कांग्रेस से 19 सीटें छोड़ने का आग्रह किया था। लेकिन कांग्रेस द्वारा उसे केवल पांच सीटों का प्रस्ताव दिया गया।जिसे उसने ठुकरा दिया और अब 21 आदिवासी बहुल सीटों पर अपने उम्मीदवार उतारकर कांग्रेस के लिए गंभीर संकट खड़ा कर दिया है। यद्यपि असम कांग्रेस अध्यक्ष गौरव गोगोई और प्रदेश प्रभारी जितेंद्र सिंह ने जेएमम मुखिया हेमंत सोरेन से मिलकर मतभेद को सुलाझाने की भरपूर कोशिश की। लेकिन हेमंत टस से मस नहीं हुए। हेमंत सोरेन और उनकी पत्नी कल्पना सोरेन ने विधिवत असम में चुनाव की कमान संभाल ली है और कांग्रेस की चुनावी संभावनाओं पर ग्रहण लगा दिया है। पश्चिम बंगाल में अधीर रंजन चौधरी को हटाकर पार्टी ने शुभंकर सरकार को प्रदेश अध्यक्ष बनाकर सोचा था कि वह इस बार ममता बनर्जी के साथ गठबंधन में चुनाव लड़ लेगी। लेकिन यहां भी इससे दोहरी मार झेलनी पड़ी। टीएमसी ने कांग्रेस के साथ गठबंधन की संभावना को पूरी तरह नकार दिया तो वामदलों ने भी अपनी अलग राह पकड़ ली। मजबूरन कांग्रेस को पश्चिम बंगाल में अकेले की चुनाव लड़ना पड़ रहा है। पार्टी ने अधीर रंजन चौधरी सहित अपने तमाम दिग्गज नेताओं को चुनावी मैदान में उतार दिया हैं। लेकिन यहां भी कांग्रेस के लिए कुछ बचा नहीं है। यहां तक कि उसे पूरे राज्य के सभी पोलिंग बूथों के लिए एजेंट तक मिलने में मुश्किल है। कुछ-कुछ यही हाल उसकी अगले साल उत्तरप्रदेश में भी हो सकती है। जहां समाजवादी पार्टी उससे खार खाई बैठी है। बीते मध्यप्रदेश और हरियाणा विधानसभा चुनाव में समाजवादी पार्टी की तमाम कोशिशों के बावजूद कांग्रेस ने उसे उसकी मनपसंद आधा दर्जन सीटों को भी गठबंधन के तहत सीटें नहीं दी। आखिरी समय में कांग्रेस झटका मिलने के चलते जिसके हरियाणा में तो समाजवादी पार्टी अपने एक भी उम्मीदवार नहीं उतार सकी। अगले साल उत्तरप्रदेश में विधानसभा चुनाव है। जहां अभी तक समाजवादी पार्टी और कांग्रेस का गठबंधन है। लेकिन इस बार समाजवादी पार्टी के मुखिया कांग्रेस से खार खाए बैठे हैं और हिसाब-किताब बराबर करने के लिए तैयारी में हैं। इसी बीच रामपुर के दिग्गज मुस्लिम नेता आजम खान की पत्नी फातिमा तंजीम से मुलाकार करके कांग्रेस के नेता प्रमोद तिवारी ने समाजवादी पार्टी का पारा और चढ़ा दिया है। इसे सपा प्रमुख अखिलेश यादव पार्टी के मुस्लिम जनाधार में सेंध लगाने की कांग्रेसी कोशिश मान रहे हैं। यानी कुल मिलाकर आने वाले दिनों में कांग्रेस को अपने सहयोगियों के प्रबल विरोध का सामना करना पड़ेगा। ऐसे में जब उसका जनाधार तेजी से सिकुड़ रहा है। उसके पास तमाम राज्यों में बूथ स्तर के कार्यकर्ता भी नहीं बचे हैं,उसे सहयोगियों की यह नाराजगी भारी पड़ सकती है।

जानलेवा बनते जा रहे हैं कीटनाशक

ज्ञानेन्द्र रावत

आजकल कीटनाशक गंभीर स्वास्थ्य जोखिम का कारण बनते जा रहे हैं। हालिया शोध और अध्ययनों से यह खुलासा हुआ है कि इनकी वजह से दिनोंदिन कैंसर, थायरॉइड, हार्मोन दबाव, उच्च रक्तचाप, उच्च स्तरीय कोलेस्ट्राल में बढ़ोतरी, लिवर और अल्सरेटिव कोलाइटिस का जोखिम गंभीर रूप से बढ़ता जा रहा है। इसकी अहम वजह विषाक्त पदार्थों का व्यापक संपर्क है जिसका खुलासा बेंगलूर स्थित आंतरिक स्वास्थ्य स्टार्टअप माइक्रोबायोटेक्स द्वारा किए गये नवीनतम अध्ययन में हुआ है। देखा गया है और शोध-अध्ययन इसके प्रमाण हैं कि कीटनाशकों के संपर्क में आने से वयस्कों की तुलना में अक्सर शिशु और बच्चे ज्यादा और जल्दी प्रभावित होते हैं क्योंकि एक तो वह अधिक संवेदनशील होते हैं और उनके अंग, तंत्रिका तंत्र और प्रतिरक्षा प्रणाली अभी विकसित हो रही होती है।

बच्चे कीटनाशकों को शरीर से बाहर निकालने और अवशोषित करने में भी कम सक्षम होते हैं। यहां इस सच्चाई से इंकार नहीं किया जा सकता कि कीटनाशक विषाक्तता के प्रति अधिक संवेदनशील होने के साथ-साथ, बच्चों का व्यवहार और उनकी शारीरिक संरचना उन्हें वयस्कों की तुलना में कीटनाशकों के अधिक संपर्क में आने का कारण बनती है। अधिकांश कीटनाशक त्वचा के माध्यम से शरीर में प्रवेश करते हैं और बच्चों की त्वचा का क्षेत्रफल उनके आकार के अनुपात में वयस्कों की तुलना में अधिक होता है। फिर बच्चों की श्वसन दर अधिक होती है, इसलिए वे हवा में मौजूद कीटनाशकों को वयस्कों की तुलना में जल्दी ग्रहण करते हैं। चूंकि बच्चे वयस्कों की तुलना में आनुपातिक रूप से अधिक भोजन और पानी का सेवन करते हैं और कीटनाशक अवशेषों को भी अधिक ग्रहण करते हैं। फर्श, लान, खेल के मैदान के साथ बच्चों का अधिक संपर्क होने के कारण, बच्चों का व्यवहार भी कीटनाशकों के संपर्क में आने की उनकी संभावनाओं को बढ़ाता है।

कीटनाशकों के संपर्क में आने से कैंसर, तंत्रिका सम्बंधी विकार जैसे पार्किंसंस, प्रजनन क्षमता में कमी, बच्चों में मानसिक व शारीरिक विकास में कमी जैसे स्वास्थ्य जोखिम अहम हैं। इसके अलावा तात्कालिक स्वास्थ्य प्रभावों में आंखों, नाक, गले व त्वचा में जलन, चुभन, खुजली, चकत्ते

आना, छाले, मतली व चक्कर आना, दस्त, सांस लेने में दिक्कत और विषाक्तता जैसी समस्यायें आमतौर पर पायी जाती हैं। अस्थमा से पीड़ित लोगों पर कुछ खास प्रतिक्रिया होती है जबकि मस्तिष्क, स्तन, प्रोस्टेट व कोलन कैंसर, अल्जाईमर, गर्भपात, बांझपन और पार्किंसंस आदि का खतरा गंभीर स्तर तक रहता है। हां पायरेथ्रिन, पाइरेथ्राइड, आर्गेमेंफास्फेट और कार्बोमाट आदि रसायनिक कीटनाशक मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र पर हानिकारक गैसों की तरह असर करते हैं। इससे तंत्रिका संकेतों का संचरण बाधित होता है। नतीजतन सीने व मांसपेशियों में दर्द, सांस लेने में ज्यादा परेशानी, अनैच्छिक पेशाब और कोमा की स्थिति आ सकती है और मृत्यु भी हो सकती है। तंत्रिका तंत्र में विषमता के चलते अक्सर समूची दुनिया में लाखों लोग प्रभावित होते हैं। कैंसर, ट्यूमर, मस्तिष्क व तंत्रिका तंत्र की क्षति ल्यूकेमिया, लिंफोमा, जन्मजात विकृतियां, बांझपन, प्रजनन संबंधी ,यकृत, गुर्दे और फेफड़े आदि से जुड़ी समस्याएं कीटनाशकों के संपर्क में आने पर महीनों-वर्षों बाद भी प्रकट नहीं होती हैं और जो बाद में जानलेवा बन जाती हैं।

अध्ययन के अनुसार विशेष रूप से 17 फीसदी नमूनों में तीन श्रेणियों में 10 या 10 से ज्यादा विषाक्त पदार्थों की मौजूदगी पायी गयी जो छिपे हुए दीर्घकालिक संपर्क का संकेत देते हैं। अध्ययन का निष्कर्ष है कि विषाक्त पदार्थों का व्यापक संपर्क दैनिक खाद्य उपभोग, प्लास्टिक के उपयोग, भूजल और पर्यावरणीय प्रदूषण के माध्यम से शरीर से हो रहा है।मायक्रोबायोटेक्स द्वारा नयी विषाक्तता पहचान क्षमता के तहत नौ भारतीय राज्यों और 14 शहरों में शहरी आबादी के नमूनों का विश्लेषण करने पर खुलासा हुआ है कि कीटनाशकों, कीटाणुनाशकों, एंटीबायोटिक्स, स्टेराइड ग्रोथ रेग्युलेटरी और फारएवर केमिकल्स के प्रति महत्वपूर्ण संपर्क है जो 200 से अधिक भारतीयों के रक्त के नमूनों पर आधारित है। यह अध्ययन इस बात का प्रमाण है कि प्राणी मात्र के शरीर में कीटनाशक किस तरह जहर घोल रहे हैं। इनके अवशेष मानव शरीर में फलों एवं सब्जियों के जरिये प्रवेश करते हैं और स्नायु तंत्र को प्रभावित करते हैं। यही नहीं कीटनाशकों का अत्याधिक प्रयोग पानी के स्रोत और मिट्टी के प्रदूषित होने में अहम भूमिका निबाहता है। नतीजतन पारिस्थितिक तंत्र को भारी नुकसान होता है। इसके चलते मित्र कीट, मधुमक्खियों और पक्षियों खासकर गौरय्या की तादाद में खासी कमी आ रही है। यह बेहद चिंतनीय और खतरनाक संकेत है।

गौरतलब है कि आर्गेनोफास्फेट्स और कार्बामेट्स नामक कीटनाशक आमतौर पर मिट्टी में डाले जाते हैं जिससे एक गैस बनती है जो मिट्टी में मौजूद नेमाटोड, कवक, जीवाणु, कीड़े और पौधों के लिए बेहद जहरीली होती है। गैस होने के कारण यह मिट्टी से हवा में फैल जाती है और आसपास रहने या काम करने वाले लोगों को प्रभावित करती है। इसका इस्तेमाल जिन जिलों में ज्यादा होता है, वहां समय से पहले बच्चों का जन्म उन जिलों की अपेक्षा ज्यादा आम होता है जहां इनका इस्तेमाल कम होता है। जहां तक पाइरेथ्रोइड्स नामक रसायन का सवाल है, यह संरचनात्मक रूप से वानस्पतिक यौगिकों के समान होता है। ये तंत्रिका तंत्र के लिए काफी विषैले होते हैं। सबसे अधिक चिंतनीय बात यह है कि यह गर्भावस्था के दौरान भ्रूण इन रसायनों को पचा नहीं पाता है। पाइरेथ्राइड विषाक्तता के लक्षणों में खासकर कंपकंपी, लार आना, सिरदर्द, थकान, उल्टी, त्वचा में जलन और खुजली और अनैच्छिक ऐंठन होने लगती है। कई पाइरेथ्रोइड्स रसायन दीर्घकालिक स्वास्थ्य समस्याओं जैसे रेस्मेथ्रिन कैंसर और प्रजनन संबंधी नुकसान का कारण होते हैं। इसके संपर्क में आने से हृदय रोग की आशंका अधिक रहती है। अक्सर पाया गया है कि कुछ लोग दूसरों की तुलना में अधिक संवेदनशील होते हैं । इनमें वयस्कों की तुलना में शिशु और छोटे बच्चों की तादाद ज्यादा होती है। ये कीटनाशकों के विषाक्त प्रभावों के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। इनमें खेत मजदूर और कीटनाशक छिड़काव करने वाले भी शामिल हैं क्योंकि ये लोग अधिक मात्रा में कीटनाशकों के संपर्क में आते हैं। ऐसे लोग उपरोक्त बीमारियों के अलावा अंतरस्रावी तंत्र में गडबड़ी के ज्यादा शिकार होते हैं। इसलिए जरूरी है कि कीटनाशकों का छिड़काव करते समय मास्क, दस्ताने और सुरक्षा की दृष्टि से आवश्यक कपड़े पहनें। फलों और सब्जियों का इस्तेमाल करने से पहले उनको अच्छी तरह धो लें। इसके अलावा जैविक खेती और प्राकृतिक कीट नियंत्रण के तरीकों का इस्तेमाल करना ही श्रेयस्कर है। इसके बाद भी यदि आपको ऐसा लगता है कि आप कीटनाशक विषाक्तता के शिकार हुये हैं तो ऐसी स्थिति में तुरंत चिकित्सा सहायता लें।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं पर्यावरणविद हैं।)

जनसंख्या परिवर्तन का टाइम बम

आजादी से अब तक का सच

संजय सक्सेना

देश के कुछ हिस्सों में जनसंख्या का जो बदलाव पिछले सात दशकों में हुआ है, वह महज आंकड़ों की हेरफेर नहीं है। यह एक सुनियोजित परिवर्तन की कहानी है, जिस पर देश के बुद्धिजीवी, सामाजिक संगठन और नीति-निर्माता चिंता जता रहे हैं। गत दिवस तमिलनाडु के राज्यपाल रहे आरएन रवि ने गांधीनगर स्थित राष्ट्रीय रक्षा विश्वविद्यालय में असम, पश्चिम बंगाल और पूर्वांचल के कुछ हिस्सों में हो रहे जनसंख्या परिवर्तन को एक टाइम बम की संज्ञा देते हुए चेतावनी दी कि यदि इन प्रवृत्तियों को नजरअंदाज किया गया, तो ये भविष्य में राष्ट्रीय एकता के लिए गंभीर खतरा बन सकती हैं। उनका सवाल था, क्या किसी ने बीते 30-40 वर्षों में इन इलाकों में हुई जनसंख्या की प्रवृत्तियों पर ध्यान दिया है और क्या आने वाले 50 वर्षों में यह परिवर्तन देश के लिए विभाजनकारी साबित नहीं होगा?

आजादी के समय असम एक ऐसा राज्य था, जहां अलग-अलग समुदाय और जनजातियाँ सदियों से साथ रहती थीं। लेकिन 1951 की पहली जनगणना में असम में मुस्लिम आबादी 22.6 प्रतिशत थी। 1971 में यह बढ़कर 24.6 प्रतिशत, 1991 में 28.4 प्रतिशत, 2001 में 31 प्रतिशत और 2011 की जनगणना में 34.2 प्रतिशत हो गई। यानी साठ वर्षों में असम में एक खास समुदाय की आबादी में लगभग 12 प्रतिशत की वृद्धि हुई। विशेषज्ञों का अनुमान है कि अगली जनगणना में यह आंकड़ा 40 प्रतिशत का आंकड़ा भी पार कर सकता है। इस वृद्धि की असली वजह केवल स्वाभाविक जन्मदर नहीं है। 1961 से 2011 के बीच, यानी पाँच दशकों में देश में मुस्लिम जनसंख्या की वृद्धि दर 194.38 प्रतिशत रही, जबकि असम में मुस्लिम जनसंख्या वृद्धि दर 286.16 प्रतिशत रही, जो राष्ट्रीय औसत से लगभग डेढ़ गुना अधिक है। इस अंतर की व्याख्या केवल प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि से नहीं की जा सकती।

असम के मुख्यमंत्री हिमंता विश्व शर्मा ने स्पष्ट रूप से कहा है कि असम की कुल मुस्लिम जनसंख्या में से मात्र 3 प्रतिशत ही मूल असमिया आबादी है, शेष बांग्लादेश से आए लोग हो सकते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि बांग्लादेश से लगी सीमा पर बसे जिलों में यह समस्या और भी गंभीर है। 2001 की जनगणना में असम में छह मुस्लिम बहुल जिले थे, जो 2011 तक बढ़कर 11 हो गए। उधर, पश्चिम बंगाल की स्थिति असम से कम चिंताजनक नहीं है। बांग्लादेश के साथ इस राज्य की लंबी सीमा है और 1971 से लगातार सीमावर्ती जिलों में बांग्लादेशी घुसपैठ होती रही है। 2011 की जनगणना के अनुसार पश्चिम बंगाल में मुसलमानों की हिस्सेदारी 2001 में 25.2 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 26.94 प्रतिशत हो गई और इस दौरान मुस्लिम आबादी की वृद्धि दर 21.81 प्रतिशत रही।

जिलेवार आंकड़े और भी चौंकाने वाले हैं। मुर्शिदाबाद में मुस्लिम आबादी 69.5 प्रतिशत, मालदा में 53.3 प्रतिशत, उत्तरी और दक्षिणी दिनाजपुर में 42.8 प्रतिशत, बीरभूम में 39.6 प्रतिशत और उत्तरी व दक्षिणी 24 परगना में 36.1 प्रतिशत हो चुकी है। इन सीमावर्ती आठ जिलों में हिन्दू जनसंख्या में प्रत्येक दशक में 3 प्रतिशत तक की कमी भी दर्ज की गई है। राजनीतिक आरोपों की बात करें तो 1977 से 2011 तक 34 साल सत्ता में रही वाममोर्चा सरकार पर आरोप है कि उसने घुसपैठियों को मतदाता पहचान पत्र, राशन कार्ड और आधार कार्ड उपलब्ध कराए। इसकी एवज में 2006 तक वाममोर्चे को एकमुश्त वोट मिलता रहा, लेकिन 2007 के नंदीग्राम हिंसा के बाद यह वोट तृणमूल कांग्रेस की ओर चला गया। यह आरोप लगाने वाले केवल विरोधी दल के लोग नहीं हैं। कोलकाता में रहने वाले पूर्व नौकरशाह और तृणमूल कांग्रेस के सह-संस्थापक सदस्य दीपक कुमार घोष का कहना है कि वाममोर्चा ने अपने वोट बैंक के लिए मुस्लिम शरणार्थियों को शरण दी, जबकि तृणमूल ने इन अवैध घुसपैठियों को सत्ता तक में स्थान दिया।

उत्तर प्रदेश और बिहार के पूर्वी हिस्से, यानी पूर्वांचल में जनसंख्या परिवर्तन की बात कुछ अलग किस्म की है। यहाँ प्रश्न केवल बाहर से आने वाली जनसंख्या का नहीं, बल्कि समुदाय-विशेष की प्रजनन दर का भी है। उत्तर भारत और पूर्वी भारत के राज्यों जैसे बिहार और उत्तर प्रदेश में कुल प्रजनन क्षमता दर चार से ज्यादा है, जबकि दक्षिण भारत में यह 2.1 के आसपास है, जो कि स्थिर स्तर माना जाता है। यह असंतुलन न केवल संसाधनों पर दबाव डालता है, बल्कि राजनीतिक और सांस्कृतिक समीकरण भी बदल रहा है।

कविता

माया

मतलब की हँसी,
मतलब की यारी,
अजीब हैं बेमतलब के
रिश्ते जग में।
अपने-अपने से लगते
सब जहाँ में,
फिर भी मुश्किल में
सब लापता यहाँ में।
बेशकीमती हर चीज़
मायावी जगत की,
सस्ती बिकती बस
साँसें इंसान की।
ये मेरा, वो भी हो मेरा
उलझे उलझे से लोग,
मायावी दुनिया के
सब शिकार यहाँ।
पानी होता खून, और
महँगा होता पानी,
नज़रें बचते-बचाते
अपने ही यहाँ।
सच बोलो तो
बनाओ दुश्मन यहाँ,
खामोशी ओढ़े बैठे
सब गुनहगार यहाँ।
भीड़ बहुत है
इंसानों की राहों में,
पर इंसानियत होती
लापता यहाँ ।

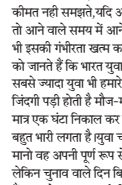

मुनीष भाटिया

आपका मत

बिहार में अनिश्चितता

नीतीश कुमार के राज्यसभा में जाने के बाद बिहार की राजनीति में एक नई अनिश्चितता और बहस को जन्म दे दिया है। उनके सक्रिय राजनीति से दूर जाने की स्थिति स्वाभाविक रूप से नेतृत्व के खालीपन की बहस को जन्म देती है। यही कारण है कि पिछले कुछ समय से यह मुद्दा लगातार चर्चा में बना हुआ है कि बिहार का अगला मुख्यमंत्री कौन होगा। राजनीतिक विश्लेषक मानते हैं कि नेतृत्व परिवर्तन जैसा संवेदनशील निर्णय दोनों दलों के बीच गहन विचार-विमर्श और रणनीतिक संतुलन की मांग करता है। दूसरी ओर भाजपा के लिए यह एक अवसर के रूप में देखा जा रहा है कि वह राज्य में अपनी भूमिका को और मजबूत करे। हालांकि गठबंधन की राजनीति में संतुलन बनाए रखना दोनों दलों के लिए आवश्यक है क्योंकि किसी भी प्रकार का खुला टकराव विपक्ष को मजबूत कर सकता है। ऐसी स्थिति में तेजस्वी यादव की भूमिका भी महत्वपूर्ण हो जाती ह। एक बात बिल्कुल स्पष्ट है यदि जनता दल यूनाइटेड किसी वजह से कमजोर होता है तो राष्ट्रीय जनता दल की स्थिति मजबूत होगी और बिहार में उसकी भूमिका बड़ी और महत्वपूर्ण होगी।

\- **वीरेंद्र कुमार जाटव**

लोकसत्य

आप अपना मत और लेख इस मेल पर भेज सकते हैं

Blogger

ऊर्जा संकट के बीच समझें वोट की ताकत

योगेश कुमार सोनी

आगामी कुछ दिनों में पांच राज्यों में विधानसभा होने जा रहे हैं जिसको लेकर पक्ष-विपक्ष पूरी ताकत लगाकर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। लेकिन इन चुनावों में सत्ता पक्ष के लिए चुनौती थोडी ज्यादा इसलिए बढ़ी हुई है क्योंकि इस समय ऊर्जा संकट को लेकर माहौल बना हुआ है।

अब सवाल यही है कि क्या विपक्ष धरातल व तथ्यात्मक मुद्दों के साथ ऊर्जा संकट का तडका लगाकर सत्ता पक्ष को घेरता है और वहीं इसके विपरीत सत्ता पक्ष यह बताने में सार्थक हो पाती है कि सब ठीक है। जैसा कि मिडिल ईस्ट तनाव की वजह से देश में ऊर्जा संकट के दौरान बिजली, कोयला, पेट्रोल, या गैस जैसे ऊर्जा संसाधनों की मांग उनकी कुल आपूर्ति से थोडी अधिक हो गई जिसकी वजह से ईंधन की कमी के कारण उद्योग, परिवहन, और घरेलू उपयोग की चीजों पर थोड़ा प्रभाव गया और यदि यह प्रकरण लंबा चला तो स्थिति थोडी चिंताजनक हो सकती है। इन मुद्दों को चुनावी रंग देकर लेकर विपक्ष लगातार मौजूदा सरकार को घेरने में लगा हुआ है लेकिन फिलहाल केन्द्र सरकार ने अभी तक तो स्थिति को नियंत्रित किया हुआ है। इस मामले को लेकर जनता को यह समझना होगा कि यह कोई स्थायी समस्या नही है और यह आज नही तो कल खत्म हो जाएगी लेकिन वोट देने वाले लोगों को यह समझना होगा कि वह अपने उन मुद्दों पर वोट करें जिससे वह पांच सालों से संतुष्ट या असुंष्ट रहे हैं। जनता को यह भी समझना होगा कि यह एक वैश्विक स्तर की आपदा है जिसके निवारण के लिए विश्व पटल पर प्रयास भी किया जा रहा है और यदि इस वजह से कुछ समय की लिए देश गति धीमी अर्थात महंगाई बढ़ना या संसाधनों में कमी भी आ जाती है तो इस मुद्दे को लेकर वोट करने पर अपनी विचारधारा न बांधे चूंकि आप जिन मुद्दों को बीते पांच वर्षों से गहनता के साथ समझ रहे हैं,चाहे हो सकारात्मक हो या नकारात्मक उस पर अपनी विचारधारा के साथ अपने मत का प्रयोग करना चाहिए। जनता को वोट डालते समय अपनी तरक्की, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं, और स्थानीय विकास जैसे सड़क, बिजली, पानी जैसे मुख्य मुद्दों को मध्यनजर रखते हुए अपने मत का प्रयोग करना चाहिए। उम्मीदवार की ईमानदारी, उसकी विचारधारा, और उसके द्वारा किए गए वादों की व्यावहारिकता पर बहुत कुछ निर्भर करता है चूंकि कहीं ऐसे नेता भी होते हैं जो पार्टी में रहते हुए उस विचारधारा के विपरित होते हैं लेकिन अपनी क्षेत्रीय जनता के लिए काम बहुत बेहतर करते हैं। इन चुनावों में कई मौजूदा मुख्यमंत्रियों के लिए भी यह मुकाबला ऐतिहासिक साबित हो सकता है। ममता बनर्जी चौथी बार लगातार सत्ता में लौटने का लक्ष्य लेकर मैदान में हैं। वहीं एम के स्टेलिन दूसरी बार लगातार जनादेश पाने की कोशिश कर रहे हैं। हेमंत बिसवा भी असम में दूसरी बार सरकार बनाने की उम्मीद कर रहे हैं, जबकि पिनाराई विजयन केरल में लगातार तीसरी बार सत्ता में लौटने का रिकॉर्ड बनाने की कोशिश कर रहे हैं। वैसे तो हर राज्य का चुनाव महत्वपूर्ण माना जाता है लेकिन उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल का चुनाव पक्ष-विपक्ष के लिए वर्चस्व की लडाई मानी जाती है और जैसा कि पश्चिम बंगाल का चुनाव फिर से हर बार की तरह मुद्दों से कहीं परे होगा। यहां का चुनाव तो भारत-पाकिस्तान के मैच की तरह रोमांच बनाता है चूंकि यहां की जनता की मस्तिष्क में पार्टियों ने मुद्दों के अलावा केवल वजूद की लड़ाई को भर रखा है। बहरहाल, हर मतदाता को अपनी सूझबूझता के साथ गुणवत्ता पर के आधार पर अपने मत का प्रयोग करना चाहिए और यह समझना चाहिए कि केंद्र में बैठी सरकार को अपने देश की चिंता होती है और वह हर स्थिति में संतुलन बनाए रखने का प्रयास करती है वही जनता को भी समझना होगा विषम परिस्थितियों में धैर्य और विश्वास ही काम आता है। वहीं उन लोगों को यह समझना होगा जो अपने वोट की कीमत नही समझते,यदि आज हम नही समझेंगे तो आने वाले समय में आने वाली पीढ़ी के लिए भी इसकी गंभीरता खत्म कर देंगे। हम इस बात को जानते हैं कि भारत युवाओं का देश हैं और सबसे ज्यादा युवा भी हमारे यहां ही हैं। पूरा जिंदगी पड़ी होती है मौज-मस्ती के लिए लिए मात्र एक घंटा निकाल कर वोट डालना उनको बहुत भारी लगता है।युवा चर्चा तो ऐसे करते हैं मानो वह अपनी पूर्ण रूप से स्थिति दर्ज कराएंगे लेकिन चुनाव वाले दिन बिल्कुल गायब हो जाते हैं। अब से दशकभर पूर्व भी जो युवा पहली बार वोट डालते थे वह वोटिंग वाले दिन को बहुत उत्साहित तरीके से जीते थे और उनको लगता था यह दिन उनके लिए बेहद विशेष हैं। लेकिन अब धीरे-धीरे रफ्तार कम होने लगी जो लोकतंत्र के लिए घातक है। दरअसल अब दौर बिना किसी की गुणवत्ता की जांच के आधार पर चल पड़ा और भेड़चाल का ट्रेंड ज्यादा है। यदि किसी ने कॉलेज या ऑफिस में कह दिया वह तो चुनाव वाले दिन बाहर जा रहा है तो अधिकतर लोग उसको ही फॉलो करने लगते हैं और अपने वोट को व्यर्थ करने में बिल्कुल भी नही हिचकिचाते।

दैनिक सवेरा टाइम्स
चंडीगढ़, शनिवार, 4 अप्रैल 2026

मानव की पहचान गुणों से होती है, ऊंचे सिंहासन पर बैठने से नहीं। महल के शिखर पर बैठने पर कौआ गरुड़ नहीं हो सकता। -चाणक्य

ट्रांसजैंडर व्यक्ति संशोधन विधेयक 2026 पर हंगामा है क्यों बरपा..

सरकार का दावा है कि संशोधन से ट्रांसजैंडर व्यक्तियों की सुरक्षा होगी लेकिन मूल परिवार की हिंसा के बारे में सरकार कुछ नहीं कहती

होर्मुस जलमार्ग बहाल करने के लिए ब्रिटेन के नेतृत्व में 60 देशों की बैठक

अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने जब वीरवार को यह बयान दिया कि जिन देशों को खाड़ी देशों से तेल और गैस खरीदना है, वे होर्मुस का रास्ता खुद खुलवा लें, इसके एकदम बाद ब्रिटेन ने होर्मुस के मुद्दे की कमान खुद संभाल ली। फ्रांस और चीन ने ब्रिटेन का समर्थन किया। शुक्रवार को इस मुद्दे पर बातचीत करने के लिए 60 देशों के प्रतिनिधि एकजुट हुए। ब्रिटेन के पीएम कीर स्टार्मर ने 35 देशों की संख्या बताई थी लेकिन मुद्दा क्योंकि व्यापक था इसलिए 60 देशों ने इसमें भाग लिया। भारत की ओर से विदेश सचिव विक्रम मिस्त्री इसमें शामिल हुए।

यह मीटिंग वीडियो कांफ्रेंसिंग के माध्यम से हुई। फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुअल मैक्रों ने कहा कि होर्मुस को सैन्य ताकत से नहीं खुलवाया जा सकता। चीन ने इस बात का समर्थन किया। ब्रिटेन ने साफ कह दिया है कि ईरान-अमेरिका का युद्ध हमारा नहीं है। दूसरी ओर ईरान की संसद ने होर्मुस टैक्स कानून को मंजूरी दे दी है। होर्मुस ईरानी भूमि से पांच किलोमीटर दूर है और अंतर्राष्ट्रीय समुद्री कानून के अनुसार जमीन से 22 किलोमीटर तक संबंधित देश की संप्रभुता होती है। लगाए जाने वाले टैक्स को अंतर्राष्ट्रीय मैरीटाइम कौंसिल, डब्ल्यूटीओ और आईएमएफ वैधानिक बनाएंगे। ईरान का तर्क है कि होर्मुस उसका प्राकृतिक मार्ग है। अब इस प्रकार होर्मुस से ईरान रोजाना टैक्स वसूल सकेगा। खाड़ी के देश यूईए, ओमान और बहरीन इस बातचीत का समर्थन कर रहे हैं। फिलहाल ईरान ने होर्मुस खोलने से इंकार कर दिया है। उसका कहना है कि पहले अमेरिका के होश ठिकाने लाएंगे, फिर होर्मुस खोलेंगे।

बता दिया जाए कि 28 फरवरी से अमेरिका, इसराइल और ईरान के बीच छिड़े भीषण युद्ध में भी ईरान ने भारत के गैस से भरे छह टैंकरों को सुरक्षित रास्ता दिया है। लेकिन इतने से बात नहीं बनती। होर्मुस पूरी तरह खुले तो बात बने। तभी भारत और दुनिया के अधिकतर देशों में गैस और तेल की कमी दूर होगी। सवाल यह है कि होर्मुस खुलेगा कैसे? इसराइल, अमेरिका और ईरान में भीषण लड़ाई हो रही है। लेबनान में इसराइल ने अपने पैरा-ट्रूपर उतार दिए हैं जो हिज्बुल्लाह विरोधियों का सफाया करने की कोशिश कर रहे हैं। उधर अमेरिका ने ईरान के सबसे बड़े कराज पुल को विस्फोटों से उड़ा दिया है। जवाब में ईरान ने भी मिडिल ईस्ट के 8 बड़े पुलों की लिस्ट जारी कर उन्हें तबाह करने की धमकी दी है।

ईरान को भली-भांति ज्ञात है कि ये पुल कई देशों की कनैक्टिविटी और ट्रांसपोर्ट के लिए बेहद जरूरी हैं। ईरान की लिस्ट में कुवैत, यूएई, सऊदी अरब और जॉर्डन के कई महत्वपूर्ण पुल शामिल हैं। क्षतिग्रस्त किया गया कराज पुल मध्य-पूर्व का सबसे ऊंचा पुल माना जाता था। करीब 1050 मीटर लंबे और 136 मीटर ऊंचे इस पुल को बनाने में लगभग 400 मिलियन डॉलर (करीब 3,800 करोड़ रुपये) खर्च हुए थे। इससे पहले इसराइल ने तेहरान में सुप्रीम लीजर मुजतबा खामेनेई के सलाहकार कमाल खराजी के घर पर हमला कर दिया है। खराजी गंभीर रूप से घायल हो गए हैं जबकि उनकी पत्नी की इस हमले में मौत हो गई। इस समय युद्ध की भीषणता अपने शीर्ष पर है। ट्रम्प ऐसे लड़ रहे हैं जैसे अमेरिका का नहीं, उनकी अपनी इज्जत दांव पर लगी है। ऐसा लगता है कि अब यह लड़ाई पुल तोड़ने की लड़ाई में तब्दील हो रही है। ईरान अब ड्रोन हमले अधिक कर रहा है। युद्ध का समाधान कैसे हो?

पाकिस्तान जो बड़ा वार्ताकार बन रहा था, फेल हो गया है। कहा जा रहा है कि अगर भारत, रूस और चीन मिलकर शांति वार्ता के लिए प्रयास करेंगे तो संभवतः युद्धविराम हो सकता है। भविष्य में क्या होगा इसका अंदाजा मौजूदा परिस्थितियों को देखते हुए लगाना मुश्किल है, फिलहाल तो युद्ध हर रोज मौत का तांडव खेल रहा है। युद्ध के चलते अधिकांश देश तेल और गैस की कमी से जूझ रहे हैं। भारत सहित दुनियाभर के शेयर बाजारों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ रहा है। मौजूदा संकट से दुनिया के अधिकांश देशों सहित भारत को बड़ा सबक यही लेना चाहिए कि तेल और गैस के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता जरूरी है। **-शीतल विज**

महिला आरक्षण पर संसद का विशेष सत्र 16 से

इस समय संसद का बजट सत्र संक्षिप्त अवकाश पर है। संक्षिप्त अवकाश इसलिए क्योंकि मौजूदा बजट सत्र के अंतिम दिन सरकार ने बजट सत्र को 16, 17 और 18 अप्रैल तीन दिनों के लिए पुनः बुला लिया है। नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023 में पास हो गया था लेकिन अब तक लागू नहीं हुआ है। अब सरकार इसे लागू करना चाहती है। 16 से 18 अप्रैल तक तीन दिनों में इस बिल पर चर्चा के बाद व्यावहारिक रूप से इस अधिनियम को लागू कर दिया जाएगा।

इसका अर्थ यह कि केवल पंचायत या निगमों में ही नहीं बल्कि हर राजनीतिक स्तर अर्थात विधानसभाओं और संसद में भी महिलाओं के लिए एक-तिहाई सीटें आरक्षित होंगी। सरकार अगले महाचुनाव एक-तिहाई महिला आरक्षण के आधार पर ही करवाने के पक्ष में है। इसीलिए संसद का विशेष सत्र 16 अप्रैल को बुलाया गया है। सरकार इस अधिनियम में कुछ मूल परिवर्तन भी करवाना चाहती है। इसके लिए जो फार्मूले विचाराधीन हैं उनमें पहला फार्मूला सीधा-सीधा यही है वर्तमान में लोकसभा की सीटें जितनी हैं अर्थात 543, ये इतनी ही रहें और एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए रोटेशन के आधार पर आरक्षित की जाएं लेकिन पुरुष सांसद इसे नहीं मानना चाहते क्योंकि रोटेशन में कभी उनकी संसदीय सीट भी आ सकती है जिस पर उन्होंने मजबूत पकड़ बनाई है।

दूसरा तरीका मौजूदा 543 सीटों के साथ-साथ अलग से एक-तिहाई सीटें महिलाओं के सृजित कर दी जाएं लेकिन जनगणना के बाद परिसीमन के बिना यह तरीका कठिन है। 2028 तक जो असल जनगणना होगी, उसके बाद सीटों की संख्या जनसंख्या के आधार पर बढ़ानी पड़ सकती हैं।

एक और रास्ता यह सुझाया गया है, वह है दोहरी सदस्यता अर्थात एक-तिहाई सीटों पर एक की जगह 2 सदस्य चुनाव लड़ें जिनमें एक सांसद पुरुष हो और दूसरी सांसद महिला। विशेष संसद सत्र में इन फार्मूलों पर भी विचार किया जाएगा। हमारा अनुमान है कि लोकसभा सीटों की संख्या ही बढ़ाई जाएगी ताकि राजनीतिक पितामहों के लिए उनकी सीटें बरकरार रखने का सुरक्षित रास्ता निकाल लिया जाएगा। खैर, अभी से क्या कहें, देखते हैं तीन दिन के विशेष संसद सत्र के दौरान संसद क्या निर्णय लेती है। **-शीतल विज**

Email:

विजय कपूर

लगभग चार साल पहले अहमदाबाद की क्षमा बिंदु राष्ट्रीय सुर्खियों में थीं। लाल लहंगे में वह एकदम परम्परागत भारतीय दुल्हन लग रही थीं। लेकिन इस कहानी में एक ट्विस्ट था। वह खुद से ही शादी कर रही थीं ताकि लैंगिक प्रथा व पितृसत्तात्मकता से मुक्ति पा सकें। भारत में सोलोगेमी का यह पहला केस था। तब से अब तक बिंदु के लिए बहुत कुछ बदल गया है। अब वह ट्रांस-पुल्लिंग व्यक्ति हैं और उनका नाम मुकुंद है।

वर्षों तक अपनी 'मर्दानगी' को दबाने के बाद, आखिरकार उन्होंने साहस किया हॉरमोन रिप्लेसमैंट थैरेपी कराने का और अपनी पहचान कागजात पर लिंग बदलने का-पुरुष। लेकिन इस सब पर अचानक भयावह विराम लग गया है, संसद में ट्रांसजैंडर व्यक्ति (अधिकारों की सुरक्षा) संशोधन विधेयक, 2026 के पारित होने की वजह से। 'मुझे कई दिन से नींद नहीं आई है। इतना अधिक डर है... अपने अस्तित्व को ही खतरा महसूस होने लगा है' ऐसा 28-वर्षीय मुकुंद का कहना है। इस विधेयक के पारित होने के कुछ मिनट बाद ही एक्स पर एक ट्वीट वायरल हुआ-'मैं हर समय हिम्मत प्रदर्शित नहीं कर सकता। आज मैं जो हूं, वह बनने में मुझे वर्षों लगे हैं ...और अब मुझे महसूस हो रहा है कि मुझसे सब कुछ छीना जा रहा है, मेरे अधिकार, मेरा सम्मान, मेरी निजता।' किस्मत से इस व्यक्ति को लॉकेट करके काउंसिल किया गया। संकट टल गया, फिलहाल के लिए। लेकिन यह एंग्जायटी व बेचैनी अकेले इस व्यक्ति की नहीं है। तीन सौ से अधिक मानसिक स्वास्थ्य प्रोफैशनल्स ने हस्ताक्षर किए हैं कि जो ट्रांसजैंडर तनाव, अकेलेपन व अवसाद में हैं, उन्हें रियायती दरों पर काउंसिलिंग सत्र उपलब्ध कराए जाएंगे। क्योंकि जी जा रही सच्चाइयों और आत्म-पहचान को अमान्य करके, यह विधेयक एंग्जायटी उत्पन्न कर रहा है और लोगों में आत्महत्या करने के विचार पनपने लगे हैं।

लोग इसके आकांक्षित कुप्रभावों को लेकर चिंतित हैं। क्या सड़क पर चलते हुए मैं सुरक्षित रहूंगा? यह अति वास्तविक प्रश्न हैं। दरअसल, यह विधेयक 2019 के कानून से सबसे महत्वपूर्ण पहलू को हटा देता है-आत्म-पहचान का अधिकार। ट्रांसजैंडरों को सामाजिक-सांस्कृतिक समूह-हिजड़ा, किन्नर, अरावानी व जोगता, तक सीमित करके यह अनेक सवाल खड़े कर देता है। उनका क्या जो इन समूह में नहीं आते? नॉन-बाइनरी व्यक्तियों का क्या? उनका क्या जो परिवर्तन में लगे हुए हैं, लेकिन प्रक्रिया अभी पूर्ण नहीं हुई है? उन 35,000 पहचान सर्टिफिकेट्स का क्या होगा, जो जारी हो चुके हैं? इन प्रश्नों का उत्तर कहीं से नहीं मिल रहा है। आगे बहस करने से पहले आवश्यक है कि इस विषय से संबंधित लैंगिक पहचान के कुछ शब्दों को संक्षेप में समझा दिया जाए। ट्रांसजैंडर शब्द हर उस व्यक्ति के लिए बोला जाता है, जिसकी लैंगिक पहचान उसके जन्म के लिंग से भिन्न हो। ट्रांस-सैक्सुअल वह व्यक्ति होते हैं, जो अपने शरीर को हॉरमोन

थैरेपी व अन्य मैडिकल हस्तक्षेपों के माध्यम से बदलते हैं। इंटरसैक्स वह व्यक्ति होते हैं, जो उन जैविक सैक्स गुणों के साथ जन्म लेते हैं, जो पुरुष या महिला की बाइनरी (द्विचर) परिभाषा में फिट नहीं बैठते। नॉन-बाइनरी एक ऐसी लैंगिक पहचान है, जो स्थिर नहीं है कि व्यक्ति खुद को पूरी तरह पुरुष या महिला के रूप में नहीं पहचानता है। इनमें से कुछ अपने आपको ट्रांसजैंडर समझते हैं, लेकिन सभी ऐसा नहीं सोचते हैं। यहां यह बताना भी जरूरी है कि पिछली जनगणना में 4,87,803 ट्रांसजैंडर व्यक्ति रिकॉर्ड किए गए थे, जिनमें से सिर्फ 32,500 के पास सरकारी पहचान पत्र हैं।

ट्रांसजैंडर व्यक्तियों के लिए प्रशासनिक सेवाओं में 1 प्रतिशत क्षितिज आरक्षण केवल कर्नाटक में लागू किया है। बहरहाल, यह विधेयक अचानक आया, न कोई पूर्व सूचना और न ही संबंधित समुदाय से कोई वार्ता। हद तो यह है कि नैशनल काउंसिल ऑफ ट्रांस पीपल से भी कोई मशविरा नहीं किया गया। रिटायर्ड न्यायाधीश आशा मेनन के नेतृत्व में ट्रांसजैंडर व्यक्तियों के अधिकारों पर जो सुप्रीम कोर्ट की कमेटी है, उसने सरकार से आग्रह किया है कि इस संशोधन को वापस ले लिया जाए; क्योंकि यह उन व्यक्तियों के अस्तित्व अधिकारों का इंकार है, जो जन्म के समय दी गई लिंग पहचान के अनुसार अपनी पहचान नहीं करते हैं। इस संशोधन में अन्य कमियां भी हैं। मैडिकल बोर्ड (यह तय करने के लिए कि कौन ट्रांसजैंडर है) को आवश्यक करने से सम्मान, गरिमा, स्वायत्तता व निजता के जो संवैधानिक सिद्धांत हैं, उनका कोई अर्थ नहीं रह जाता है। साथ ही इससे मेडिकल नौकरशाही की एक अतार्किक परत उत्पन्न होती है। डॉक्टर वास्तव में किस चीज की जांच करेगा, अगर लिंग का सवाल एनाटोमी की बजाय पहचान का है? कांग्रेस की सांसद रेणुका चौधरी ने एकदम सही कहा, 'अगर पुरुष व महिला को अपने लिंग के बारे में मैडिकल बोर्ड को संतुष्ट नहीं करना पड़ता है, तो अन्यों को ऐसा क्यों करना चाहिए?' सरकार का दावा है कि संशोधन से ट्रांसजैंडर व्यक्तियों की सुरक्षा होगी। इसके बावजूद वह मूल परिवार की हिंसा के बारे में कुछ नहीं कहती है, जोकि विशेषरूप से कुईर व ट्रांस व्यक्तियों के विरुद्ध हिंसक व व्याप्त है, जैसा कि अनेक रिपोर्ट्स से साबित है, जिनमें '2023 की अपनों का बहुत लगता है' भी शामिल है। मद्रास हाईकोर्ट ने 2015 में 'चुने गये परिवार' को मान्यता दी थी, उसका क्या हुआ? वैसे सबसे चिंताजनक है राज्य का रेंगता हुआ हस्तक्षेप, जो अक्सर पैरेंट्स व समाज के स्वयंभू ठेकेदारों से सांठगांठ कर लेता है और उन व्यक्तियों के निजी जीवन को बर्बाद करने पर तुल जाता है जो 'अच्छे नागरिक' की बहुसंख्यावादी परिभाषा पर खरे नहीं उतरते। भारत के 14 राज्य तो ऐसे हैं जिनमें व्यक्ति को सरकारी अधिकारी के समक्ष आस्था से संबंधित अपनी व्यक्तिगत पसंद को उचित ठहराना पड़ता है। इन राज्यों में गुजरात भी शामिल है, जिसकी विधानसभा ने आवश्यक कर दिया है कि आपस में सहमत वयस्कों को अपना विवाह पंजीकृत कराने के लिए अपने पैरेंट्स की मंजूरी लेना जरूरी होगा। उत्तराखंड में तो साथ रह रहे वयस्कों को भी सरकारी दफ्तर में पंजीकरण कराना आवश्यक है। 'सुरक्षा' के नाम पर राज्य सर्टिफिकेशन की जरूरतों में वृद्धि कर दी गई है और हमारी अति आत्मीय चिंताओं में सरकारी अधिकारियों की शक्तियों का विस्तार कर दिया गया है। यह एक-एक करके लिए गए निर्णय नहीं हैं बल्कि शासन का विस्तृत पैटर्न है।

सरकार का फैसला यह है कि हम तय नहीं करेंगे कि हम कौन हैं बल्कि सरकार बतायेगी कि हम कौन हैं। इससे जाहिर होता है कि सरकार नागरिकों को स्वायत्त प्राणियों के रूप में नहीं देखती है बल्कि उन्हें अपना ऐसा 'दास' समझती हैं, जिन्हें रेगुलेट व सर्टिफाई किया जाना चाहिए। यह संशोधन सिर्फ एक समुदाय (ट्रांसजैंडर) के विरुद्ध ही नहीं है बल्कि इसके भी खिलाफ है कि एक नागरिक के रूप में हम क्या हैं? इसे तो वापस लिया ही जाना चाहिए। हालांकि इस संशोधन को अदालत में चुनौती दी जा सकती है, लेकिन सरकारी 'यू-टर्न' से मालूम होता है कि जो अधिकार कड़े संघर्ष के बाद अर्जित किए जाते हैं, उन पर भी सरकार अपनी मर्जी से जब जी चाहे विराम लगा देती है।

जन विश्वास विधेयक: कारोबार को आसान बनाने की दिशा में एक कदम

कई वर्षों से भारत में कारोबार करना–खासकर एमएसएमई और स्टार्टअप्स के लिए–आसान नहीं रहा है। नियमों का उद्देश्य जवाबदेही सुनिश्चित करना था, लेकिन व्यवहार में वे अक्सर तनाव और अनिश्चितता पैदा करते थे। एक छोटी सी गलती, जैसे समय-सीमा चूक जाना या किसी फॉर्म को गलत तरीके से भर देना, भी आपराधिक कार्रवाई का कारण बन सकती थी। ऐसा इसलिए नहीं कि कोई गलत इरादा था, बल्कि इसलिए कि व्यवस्था छोटे प्रक्रियात्मक त्रुटियों को भी बहुत सख्ती से लेती थी। जन विश्वास (संशोधन प्रावधान) विधेयक, 2026 इस स्थिति को बदलने की कोशिश करता है।

और एमएसएमई व स्टार्टअप्स के लिए यह बदलाव रोजमर्रा के कारोबार में वास्तविक और स्पष्ट अंतर ला सकता है। इस विधेयक का मूल उद्देश्य एक महत्वपूर्ण सुधार पर केंद्रित है। यह कई केंद्रीय कानूनों

सोच में बदलाव

के तहत छोटे-छोटे अपराधों के लिए आपराधिक दंड को हटाकर उनकी जगह आर्थिक दंड लागू करता है। यह भले ही एक तकनीकी कानूनी बदलाव लगे, लेकिन उद्यमियों के लिए यह नियमों से निपटने के तरीके को बदल देता है। इससे डर कम होता है और वे कानूनी जोखिमों की चिंता करने के बजाय अपने व्यवसाय को चलाने और बढ़ाने पर अधिक ध्यान दे सकते हैं। यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है जब हम भारत के व्यवसायिक पारिस्थितिकी तंत्र के आकार को देखते हैं।

देश में 2.12 लाख से अधिक डीपीआईआईटी-मान्यता प्राप्त स्टार्टअप्स और लाखों एमएसएमई हैं, जो रोजगार और आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इन व्यवसायों को एक ऐसी व्यवस्था की जरूरत है जो सरल, पूवार्नुमेय और व्यावहारिक हो–न कि ऐसी जो छोटे अनुपालन मुद्दों पर लगातार दबाव बनाती रहे। लंबे समय तक उद्यमी अनिश्चितता के माहौल में काम करते रहे हैं। रिटर्न भरने में देरी, लेबलिंग में छोटी गलती, या अनुपालन में मामूली कमी भी आपराधिक जिम्मेदारी ला सकती थी। बड़ी कंपनियों के लिए ये चुनौतियां संभालने योग्य थीं, लेकिन सीमित कानूनी और वित्तीय संसाधनों वाले छोटे व्यवसायों के लिए ये गंभीर समस्याएं बन जाती थीं। कई मामलों में संस्थापकों को अपने व्यवसाय का विस्तार करने के बजाय अनुपालन संबंधी समस्याओं से निपटने में समय और पैसा खर्च करना पड़ता था। नया कानून इस असंतुलन को ठीक करने की कोशिश करता है, जिसमें गंभीर उल्लंघनों और छोटे तकनीकी त्रुटियों के बीच स्पष्ट अंतर किया गया है।

गंभीर अपराधों पर सख्त कार्रवाई जारी रहेगी। लेकिन ऐसी छोटी गलतियां जिनमें धोखाधड़ी या नुकसान पहुंचाने का इरादा नहीं है, अब आपराधिक मामलों या कारावास का कारण नहीं बनेंगी। यह सरकार के दृष्टिकोण में एक स्पष्ट बदलाव दर्शाता है–सजा-आधारित व्यवस्था से एक अधिक सहयोगी और व्यावहारिक प्रणाली की ओर। एमएसएमई और स्टार्टअप्स के लिए सबसे बड़ा लाभ अनुपालन बोझ में कमी के रूप में सामने आएगा। जटिल आपराधिक प्रावधानों से निपटने के बजाय, अब व्यवसायों को चरणबद्ध आर्थिक दंड और प्रशासनिक कार्रवाई का सामना करना होगा। इससे अनुपालन को समझना और उसका पालन करना आसान होगा। साथ ही, कानूनी मामलों में होने वाली लागत कम होगी और अनावश्यक परेशानियों या लंबे कानूनी विवादों की संभावना भी घटेगी। एक और महत्वपूर्ण बदलाव प्रशासनिक निर्णय प्रणाली (एडीएस) की शुरूआत है। इसके तहत कई छोटे मामलों का समाधान पारंपरिक अदालतों के बाहर ही किया जा सकेगा।

यह एक महत्वपूर्ण कदम है, खासकर तब जब भारत की न्यायिक प्रणाली में पहले से ही 4.8 करोड़ से अधिक मामले लंबित हैं। विवादों का तेज समाधान व्यवसायों को बिना लंबी रुकावट के अपनी गतिविधियां जारी रखने में मदद करेगा। यह विधेयक ड्रग्स और कॉस्मैटिक्स अधिनियम, लीगल मैट्रोलॉजी अधिनियम और मोटर वाहन अधिनियम जैसे विशेष कानूनों में भी बदलाव लाता है। इन परिवर्तनों से यह सुनिश्चित होता है कि प्रक्रियात्मक गलतियों को आपराधिक अपराध के बजाय छोटे मुद्दों के रूप में देखा जाए। हैल्थ-टेक, लॉजिस्टिक्स और उपभोक्ता वस्तुओं जैसे क्षेत्रों में काम करने वाले स्टार्टअप्स–जहां अनुपालन आवश्यकताएं जटिल हो सकती हैं–के लिए यह स्पष्टता और लचीलापन प्रदान करता है। वृहद स्तर पर यह विधेयक 'मेक इन इंडिया' और 'स्टार्टअप इंडिया' जैसी सरकारी पहलों को भी समर्थन देता है। यह डर के बजाय भरोसे पर आधारित व्यवस्था को बढ़ावा देता है। उद्यमियों को जोखिम लेने, नए विचारों पर काम करने और नए समाधान विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, बिना इस चिंता के कि छोटी गलतियां उन्हें आपराधिक कार्रवाई में फंसा देंगी। इस तरह का दृष्टिकोण निवेशकों के लिए भी सकारात्मक संकेत देता है–चाहे वे भारत के हों या वैश्विक स्तर के।

कारोबार की आसानी सिर्फ तेज मंजूरी या कम करों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह इस बात पर भी निर्भर करती है कि व्यवस्था कितनी निष्पक्ष, पारदर्शी और पूवार्नुमेय है। छोटे मुद्दों पर सख्त दंड कम करके और मनमाने निर्णयों की संभावना घटाकर, जन विश्वास ढांचा भारत को निवेश के लिए अधिक आकर्षक बनाता है। अतीत की तुलना में यह बदलाव स्पष्ट है। पहले भारत की नियामक प्रणाली को जटिल माना जाता था, जिसमें बहुत अधिक नियम और भारी दंड शामिल थे। इससे उद्यमियों और निवेशकों में झिझक पैदा होती थी। वर्तमान सुधार एक सरल और व्यवसाय-अनुकूल व्यवस्था की दिशा में स्पष्ट प्रयास को दर्शाता है, जो बाधाएं पैदा करने के बजाय विकास को समर्थन देती है।

अंत में, जन विश्वास (संशोधन प्रावधान) विधेयक, 2026 केवल एक कानूनी सुधार नहीं है, बल्कि सोच में बदलाव का प्रतीक है। यह मानता है कि एमएसएमई और स्टार्टअप्स केवल छोटे खिलाड़ी नहीं, बल्कि विकास, नवाचार और रोजगार के प्रमुख चालक हैं। यदि इसे सही तरीके से लागू किया जाता है, तो यह सुधार दीर्घकालिक प्रभाव डाल सकता है। लाखों छोटे व्यवसाय मालिकों और हजारों स्टार्टअप संस्थापकों के लिए यह राहत और विश्वास का संदेश लेकर आता है। संदेश स्पष्ट है: सरकार व्यवसायों का समर्थन करना चाहती है और उन्हें बढ़ने में मदद करना चाहती है, न कि छोटी और अनजाने में हुई गलतियों के लिए दंडित करना।

सशस्त्र बलों की वीरता, विकास की नीतियों से नक्सलवाद का खात्मा

भारत स्वतंत्रता के बाद विदेशी आक्रमणों का कई बार शिकार हुआ। हमारे जबांज सैनिकों ने उन्हें इन युद्धों में अपना शौर्य दिखाया और दुश्मनों के दांत खट्टे कर दिए। लेकिन साठ के दशक के उत्तरार्ध में भारत में आंतरिक सुरक्षा का एक बड़ा प्रश्न खड़ा हो गया जब बंगाल में नक्सलवाड़ी आंदोलन शुरू हुआ। वहां से शुरू होकर यह कैंसर की तरह देश के विभिन्न भागों में फैलता गया। इस रोकने के प्रयास निष्फल रहे और इसने धीरे-धीरे कई राज्यों में अपनी पकड़ जमा ली। स्थिति ऐसी हो गई कि इस सदी के आते-आते उनकी हिम्मत इतनी बढ़ गई कि वे देश के 126 जिलों में बेलगाम हिंसा, खूनखराबा, जबरन वसूली, अपहरण जैसी घटनाओं को हर रोज अंजाम देने लगे तथा हमारे सशस्त्र बलों के जवानों को शहीद करने लगे। 6 अप्रैल 2010 का दिन सीआरपीएफ के जवानों के लिए काला दिन था जब एक हजार सशस्त्र नक्सलवादियों ने रात में घात लगाकर 76 जवानों की नृशंसता से हत्या कर दी। उसके बाद भी कई बार हमारे वीर जवानों को घात लगाकर या धोखे से मारा गया। हिंसा का यह तांडव रुक नहीं रहा था।

हजारों करोड़ रुपये के आर्थिक संसाधनों पर इन लोगों ने एक तरह से कब्जा जमा लिया। इन राज्यों का एक बड़ा इलाके रेड कॉरिडोर के नाम से जाना जाने लगे। इन तत्वों ने स्थानीय प्रशासन को पंगु बना दिया और इनके खिलाफ कोई भी बड़ी कार्रवाई करने में राज्य सरकारें कतराती थीं। लेकिन 2014 के बाद से परिदृश्य में बदलाव आया। नरेन्द्र मोदी की सरकार ने आते ही इस दिशा में सख्ती बरतनी शुरू कर दी। जीरो टॉलरेंस की नीति अपनाई गई। अमित शाह के गृहमंत्री बनने के बाद तो इसमें काफी तेजी आई और कई सारी ठोस नीतियां बनाई गई और सरकार की समझ में आ गया कि सिर्फ बंदूक के बल पर इस समस्या को हल नहीं किया जा सकता है। इसके लिए जरूरी है कि विकास कार्यों में बढ़ौतरी की जाए और आदिवासी इलाकों में आय तथा रोजमर्रा की सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं। इन पर सरकार और गृह मंत्रालय ने सैकड़ों करोड़ रुपये खर्च किए। नक्सलवादी भी इस कदम को समझ रहे थे इसलिए उन्होंने सैकड़ों जगहों पर सड़कें बनाने के काम को रोकने के लिए अपार हिंसा की। उन्होंने सड़कों को बारुद से उड़ाया, धमाके किए, सैकड़ों वाहनों को आग लगाई, मजदूरों को मारा पीटा,

समूल नाश/ मधुरेन्द्र सिन्हा

सीआरपीएफ की टुकड़ियों पर घात लगाकर हमले किए। लेकिन केन्द्र सरकार के गृह मंत्रालय ने सख्ती करनी शुरू की। सीआरपीएफ के जवानों की तादाद बढ़ाई गई, उनके कई शिविर बनाए गए, हेलीपैडों की संख्या में भी भारी वृद्धि की, आधुनिक हथियार उपलब्ध कराए गए और ड्रोन जैसे आधुनिक संचार साधन भी मुहैया कराए गए। राज्यों की पुलिस से तालमेल बढ़ाया गया तथा उन्हें भी ऑपरेशनों में शामिल किया गया।

विकास कार्य बढ़ाने के इसी क्रम में 12,000 किलोमीटर पक्की सड़कें बनाई गईं, 650 मोबाइल टॉवर लगाए गए और ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग व्यवस्था को सुधारा गया। सशस्त्र बलों ने घने जंगलों में ऑक्टोपस, डबल बुल, चक्रबंध, ब्लैक फॉरेस्ट जैसे आक्रमक अभियान सफलता से चलाए जिसमें सैकड़ों नक्सली मारे गए जिनमें 28 नेता थे। इनमें दुर्दांत नक्सली नेता वसवराजू, पाती राम मांझी, गणेश जैसे लीडर मारे गए और उनके ठिकाने ध्वस्त कर दिए गए। इसका असर साफ दिखने लगा और नक्सलवादी हिम्मत हारने लगे। सीआरपीएफ के जवानों ने स्थानीय पुलिस के साथ मिलकर कई जगहों पर ऐतिहासिक विजय पाई। बसवराजू का खात्मा करने के लिए सैकड़ों जवान 45 डिग्री के तापमान का मुकाबला करके छत्तीसगढ़-तेलंगाना सीमा पर घने जंगलों में उसके अड्डे पर जा पहुंचे जहां मुठभेड़ में उसे कई साथियों के साथ मार डाला गया।

उधर छत्तीसगढ़ के दुर्दांत नक्सली हिडिमा के एक एनकाउंटर में मारे जाते ही इस सशस्त्र आंदोलन की कमर टूट गई। यह वही नक्सली सरगना था जिसने दंतेवाड़ा में 76 जवानों की घात लगाकर हत्या करवाई थी। सशस्त्र बलों के दबाव से पिछले कुछ वर्षों में 2900 नक्सलियों ने सरेंडर कर दिया और 1900 मारे गए। 2024 से 30 मार्च 2026 तक के आंकड़ों के अनुसार, भारत में सुरक्षा बलों ने 706 से अधिक नक्सलियों को मुठभेड़ में मार गिराया है, जबकि 2,200 से ज्यादा नक्सली गिरफ्तार किए गए हैं और 4800 से अधिक नक्सलियों ने आत्मसमर्पण किया है। केवल 2025 में ही 317 से अधिक नक्सली मारे गए और 800 से ज्यादा गिरफ्तार हुए। यह कार्रवाई मुख्य रूप से छत्तीसगढ़ और तेलंगाना सीमा पर हुई है। अभी मार्च महीने में ही 50 लाख रुपये के इनामी पापा राव और एक अन्य बड़े नक्सली ने हथियार डाल दिए। उसके अलावा कोसा सोड़ी उर्फ सुकरू ने ओडिशा में सरेंडर कर दिया। अब ताजा हालत यह है कि छत्तीसगढ़ राज्य के सिर्फ तीन जिलों में यह आंदोलन सिमट कर रह गया है और यह दम तोड़ चुका है।

कार्टून कोना

विश्वा मित्र

इसराइल-ईरान: दो पक्के दोस्त कैसे बन गए कट्टर दुश्मन

आज ईरान और इसराइल सीधे हमले कर रहे हैं और खुले युद्ध के मुहाने पर दोनों देश खड़े हैं। दोनों देशों ने एक-दूसरे पर हजारों मिसाइलें दागी हैं जिससे मिडिल ईस्ट में तनाव चरम पर पहुंच गया है। 28 फरवरी से शुरू हुए अमेरिका-इसराइल के हमलों में ईरान के सुप्रीम लीडर अयातुल्ला अली खामेनेई सहित शीर्ष नेतृत्व का खात्मा हो चुका है। ऐसी खुली दुश्मनी के माहौल में यह बात अविश्वसनीय लग सकती है कि कभी इसराइल और ईरान गुप्त साझेदार हुआ करते थे। 1960-70 के दशक में जब ईरान इस्लामिक रिपब्लिक नहीं बना था तब वहां शाह मोहम्मद रजा पहलवी का शासन था।

उस समय ईरान के पश्चिमी देशों से दोस्ताना संबंध थे और इसराइल के साथ भी उसके करीबी रिश्ते थे। दोनों देशों के लिए इराक एक बड़ा खतरा था। इसराइल अपने चारों ओर दुश्मन अरब देशों से घिरा हुआ था। वहीं, शाह के शासन वाला ईरान, इराक के बढ़ते अरब राष्ट्रवादी नेतृत्व और उसके महत्वाकांक्षी रुख से चिंतित था। खासकर सद्दाम के दौर में इराक की क्षेत्रीय प्रभुत्व की कोशिशों ने ईरान और इसराइल दोनों को परेशान कर दिया था। बताया जाता है, इसी साझा चिंता ने गहरे सहयोग की नींव रखी। इसराइल की खुफिया एजेंसी मोसाद और ईरान की गुप्त पुलिस सवाक ने मिलकर इराक के भीतर कुर्द विद्रोहियों का समर्थन किया। रणनीति साफ थी कि बगदाद को अंदर से कमजोर करना है। 1958 तक इसराइल, ईरान और तुर्की ने मिलकर एक गुप्त खुफिया गठबंधन बना लिया था जिसे 'ट्राइडेंट' कहा जाता था।

1979 में रूहोल्लाह खुमैनी के नेतृत्व में हुई इस्लामिक क्रांति के साथ ही सब कुछ बदल गया। शाह देश छोड़कर भाग गए और ईरान एक पश्चिम समर्थक राजशाही से बदलकर शरिया कानून पर आधारित इस्लामिक गणराज्य बन गया। खामेनेई ने खुले तौर पर अमेरिका को 'ग्रेट सैटन' (बड़ा शैतान) और इसराइल को 'लिटिल सैटन' (छोटा शैतान) कहा था। ईरान सार्वजनिक रूप से इसराइल का कट्टर विरोधी बन गया लेकिन अंतर्राष्ट्रीय राजनीति अक्सर पर्दे के पीछे अलग तरह से काम करती है। क्रांति

वजह/ रामस्वरूप रावतसरे

के सिर्फ 18 महीने बाद सितंबर 1980 में इराक ने ईरान पर हमला कर दिया। ईरान-इराक युद्ध शुरू हो चुका था। सद्दाम ने सोचा कि वह ईरान की अंदरूनी अराजकता का फायदा उठाकर पुराने सीमा विवाद (खासकर शत्त-अल-अरब जलमार्ग से जुड़ा) निपटा सकता है। यह युद्ध 8 साल तक चला और इसमें लाखों लोगों की जान गई। वैचारिक दुश्मनी के बावजूद, ईरान और इसराइल ने एक बार फिर खुद को एक ही दुश्मन के सामने खड़ा पाया। ईरान की सेना बहुत हद तक शाह के दौर में खरीदे गए अमेरिकी हथियारों और उपकरणों पर निर्भर थी। 1979 में जब ईरानी छात्रों ने 50 से अधिक अमेरिकियों को 444 दिनों तक बंधक बनाकर रखा, तब अमेरिका ने कड़े प्रतिबंध लगा दिए। इससे ईरान के सामने हथियारों और कल-पुर्जों की भारी कमी हो गई। ऐसे समय में इसराइल ने हस्तक्षेप किया। 1980 के दशक के मध्य में 'ईरान-कॉन्ट्रा प्रकरण' के दौरान यह गुप्त रिश्ता दुनिया के सामने आया।

1988 में ईरान-इराक युद्ध खत्म होने के बाद इसराइल और ईरान की गुप्त नजदीकी कमजोर पड़ने लगी। 1989 में खुमैनी की मृत्यु के बाद खामेनेई ने सत्ता संभाली और इसराइल विरोधी कड़ा रुख जारी रखा। 1990 के दशक तक हालात बदल चुके थे। खाड़ी युद्ध के बाद इराक कमजोर हो गया और सोवियत संघ टूट गया। वे कारण खत्म हो गए जिन्होंने कभी इसराइल और ईरान को साथ लाया था। इसके बाद ईरान ने खुद को इसराइल का दुश्मन बना लिया। उसने लेबनान में हिज्बुल्लाह और गाजा में हमास का समर्थन किया जिन्होंने 2006 और 2008 में इसराइल से सीधे युद्ध लड़े। ईरानी नेता अक्सर इसराइल के विनाश की बात करते रहे। आज हालात सीधे टकराव तक पहुंच चुके हैं। घरेलू अशांति, परमाणु तनाव और क्षेत्रीय प्रॉक्सी संघर्षों के बीच हाल में अमेरिका-इसराइल के हमलों में खामेनेई की मौत हुई।

जवाब में ईरान ने इसराइल पर बड़े पैमाने पर मिसाइल हमले किए। इसराइल पहले से ही ईरान समर्थित गुटों गाजा में हमास, लेबनान में हिज्बुल्लाह और यमन में हूती से लड़ रहा है। दोनों देश अब पूर्ण युद्ध के सबसे करीब हैं। आज मिसाइलों और धमकियों के बीच वह दौर अकल्पनीय लगता है पर मध्य पूर्व में रिश्ते बदले और कल के गुप्त साझेदार आज कट्टर दुश्मन हैं।

दैनिक सवेरा टाइम्स
सम्पादक, मुद्रक, प्रकाशक शीतल कुमार विज के स्वामित्व में, दैनिक सवेरा न्यूज एंड मीडिया नेटवर्क, एस.-9, इंडस्ट्रियल एरिया जालंधर से मुद्रित एवं एस.सी.ओ. 173-174, पहली मंजिल, सैक्टर 17-सी, चंडीगढ़ से प्रकाशित किया।
CHAHIN/2013/52280
पोस्टल रजि. नं. PB-JL-058/25-27
फोन 0181-2370100, 4625005, 4626006, 4629009
0181-2224455
इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी तथा उनसे उत्पन्न समस्त विवाद जालंधर न्यायालय के अधीन होंगे।

उतना मोहक नहीं 'इस' रामायण का टीजर

मृत्युंजय दीक्षित

देश में लगभग 4000 करोड़ की लागत से बनाई जा रही फिल्म रामायण का प्रथम टीजर यू-टयूब पर हनुमान जयंती पर रिलीज किया गया । आरंभिक तौर पर व्यावसायिक प्रमोशन और तगड़े प्रचार ने फिल्म को लेकर एक उत्साह का वातावरण बनाया किन्तु यह जल्दी ही ठंडा पड़ गया। इसके निमार्ता नमित मल्होत्रा और निर्देशक नितेश तिवारी हैं। यह पहले छिछोरे और दंगल जैसी फिल्में बना चुके हैं। फिल्म में अभिनेता रणबीर कपूर राम और दक्षिण की अभिनेत्री साई पल्लवी माता सीता की भूमिका में हैं। सनी देओल हनुमान और यश रावण की भूमिका में हैं।

टीजर साथ कैप्शन लिखा गया ," राम सबसे महान इसलिए हैं क्योंकि उन्होंने हमेशा बड़े हित कर्तव्य को इच्छा से ऊपर और त्याग को स्वार्थ से ऊपर रखा। उनका जीवन मानवता को सशक्त बनाता है अच्छाई की आस्था जगाता है और दुनिया में शांति स्थापित करता है।" सनातनियों का मानना है कि यह परिचय (नरेशन) प्रभु राम की सनातन आस्था के प्राण तत्व से परे जाकर उनको एक साधारण तथाकथित धर्मनिरपेक्ष राजा के रूप में प्रस्तुत करता है । इस नरेशन से उनकी दिव्यता प्रकट नहीं होती।

दो मिनट 38 सेकंड का लंबा टीजर दर्शकों को फिल्म के एक्शन, एडवेंचर, किरदारों और युद्ध के दृश्यों की झलक दिखाता है। खूबसूरत विजुअल्स के बीच स्क्रीन पर एक संदेश भी दिखाया गया है जिसमें लिखा है, "जब भी दुनिया अराजकता में डूबने लगती है तब वह हमेशा जवाब होते हैं। 5000 वर्ष से हमारे दिल पर राज करने वाले हमारे रक्षक, हमारे हीरो, हमारे लीजेंड ।हम महान मयार्दा पुरुषोत्तम राम का जश्न मनाते हैं।" यह संदेश भी सनातनियों को भाव और भाषा की दृष्टि से नितांत सतही लगा और इसकी काफी आलोचना हो रही है।

सबसे बड़ी शिकायत फिल्म में कलाकारों के चयन को लेकर है। प्रभु राम बने रणबीर कपूर को लोग भगवान के रूप में स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। रणबीर कपूर का फिल्म की शूटिंग के दौरान शाकाहारी रहने का झूठ भी सामने आया। उसका वीडियो वायरल है। लोग कह रहे हैं इतने झूठे व्यक्ति को श्रीराम की भूमिका में कैसे स्वीकार कर लें ? भारी मेकअप और उम्र कम करने के सारे प्रयासों के बाद भी वो औरा में इंद्रदेव से अधिक नहीं लग पा रहे हैं। लोगों को उनमें सौम्यता व शांति का अभाव दिख रहा है।साई पल्लवी भारत विरोधी विचारों, पाकिस्तान के आतंकवादियों के प्रति अपने प्रेम को लेकर चर्चा में रही हैं। माता सीता के रूप में उनके चयन का विरोध पहले दिन से ही हो रहा है।

सबसे कमजोर पक्ष अल्ला रक्खा का संगीत है, जो भारत के दैवीय शास्त्रीय संगीत की जगह अरेबियन नाइट्स के संगीत की तरह है। कुल मिलाकर तमाम प्रचार के बावजूद फिलहाल टीजर रामभक्तों को रिझाने में विफल रहा है। इस फिल्म को दीपावली पर सिनेमाघरों में रिलीज करने की योजना है। दावा किया गया है कि इसमें राम के योद्धा रूप, वनवास के दृश्यों और यश के रावण रूप की एक झलक इसे भारत की सबसे महंगी फिल्म बनाता है। टीजर में हाई-एंड विजुअल इफेक्ट्स और 'लॉर्ड ऑफ द रिंग्स' जैसा भव्य स्केल है।

आज का राशिफल

ग्रहों की चाल को देखते हुए कुछ राशियों के जीवन में खुशियों का आगमन होगा

मेष : आज का दिन आपके लिए सामान्य रहेगा। कामकाज में थोड़ी व्यस्तता रह सकती है, लेकिन धीरे-धीरे सब संभल जाएगा। ऑफिस या काम की जगह पर किसी से बेवजह बहस करने से बचें। परिवार के लोगों के साथ समय बिताने से मन हल्का रहेगा।

वृषभ : आज कुछ नए मौके सामने आ सकते हैं। अगर आप किसी काम की योजना बना रहे थे, तो उस पर आगे बढ़ने का अच्छा समय है। नौकरी या बिजनेस में लोगों का सहयोग मिलेगा। घर का माहौल भी शांत रहेगा।

मिथुन : आज आपको थोड़ा संभलकर काम करने की जरूरत है। जल्दबाजी में कोई फैसला लेने से बचें। काम के मामले में जिम्मेदारियां बढ़ सकती हैं, लेकिन आप उन्हें अच्छे से निभा लेंगे। परिवार में किसी बात को लेकर चर्चा हो सकती है।

कर्क : आज का दिन आपके लिए अच्छा रह सकता है। जो काम काफी समय से अटके हुए थे, उनमें धीरे-धीरे प्रगति दिख सकती है। नौकरी में आपके काम की तारीफ हो सकती है। परिवार के लोगों का साथ मिलेगा।

सिंह: आज थोड़ा धैर्य रखने की जरूरत है। कामकाज में दबाव बढ़ सकता है, लेकिन घबराने की जरूरत नहीं है। धीरे-धीरे सब ठीक हो जाएगा। ऑफिस में किसी से विचारों का फर्क हो सकता है, इसलिए बात को शांत तरीके से समझाने की कोशिश करें। पैसों के मामले में सतर्क रहें।

तुला : आज आपको अपने काम पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है। किसी जरूरी काम में देरी हो सकती है, इसलिए समय का सही इस्तेमाल करें। परिवार में किसी सदस्य के साथ अच्छी बातचीत हो सकती है।

धनु : आज कुछ नए विचार आपके मन में आ सकते हैं। अगर आप किसी नए काम की शुरूआत करना चाहते हैं, तो योजना बनाने का अच्छा समय है। नौकरी या बिजनेस में लोगों का सहयोग मिल सकता है। परिवार का माहौल भी ठीक रहेगा।

मकर : आज का दिन थोड़ा संभलकर चलने का है। काम में जल्दबाजी करने से नुकसान हो सकता है। किसी जरूरी फैसले से पहले अच्छे से सोच लें। ऑफिस में जिम्मेदारियां बढ़ सकती हैं। परिवार का सहयोग आपको हिम्मत देगा। पैसों के मामले में खर्च बढ़ सकता है। सेहत को लेकर लापरवाही न करें।

कुम्भ : आज का दिन आपके लिए ठीक-ठाक रहेगा। कामकाज में धीरे-धीरे सुधार देखने को मिल सकता है। अगर आप किसी नई योजना पर काम कर रहे हैं तो उसमें आगे बढ़ने का मौका मिलेगा। परिवार के लोगों के साथ समय बिताने से मन खुश रहेगा।

कन्या : आज का दिन आपके लिए संतुलित रहेगा। काम और परिवार दोनों में तालमेल बनाकर चलना जरूरी होगा। किसी पुराने काम को पूरा करने का मौका मिल सकता है। दोस्तों या जान-पहचान के लोगों से मदद मिल सकती है। पैसों की स्थिति ठीक रहेगी। मन में नई योजनाओं को लेकर सोच-विचार हो सकता है।

वृश्चिक : आज का दिन थोड़ा व्यस्त रह सकता है। कामकाज में भागदौड़ रहेगी, लेकिन मेहनत का फायदा भी मिल सकता है। किसी पुराने दोस्त या जानने वाले से मुलाकात हो सकती है। परिवार के लोगों के साथ समय बिताने का मौका मिलेगा। पैसों की स्थिति सामान्य रहेगी।

मीन: आज आपको अपने मन की बात समझने की जरूरत है। कामकाज में थोड़ी उलझन महसूस हो सकती है, लेकिन घबराने की जरूरत नहीं है। धैर्य के साथ काम करेंगे तो रास्ता निकल आएगा।

शिक्षक, शोध और शिक्षा – सबका नया केंद्र बनेगी एनसीईआरटी

प्रो. आरके जैन

> "वर्ष 2023 में केंद्रीय शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान ने पहली बार सार्वजनिक रूप से संकेत दिया था कि एनसीईआरटी को शोध और शिक्षक शिक्षा का राष्ट्रीय केंद्र बनाया जाएगा। लगभग 3 वर्षों की तैयारी, विशेषज्ञों की सिफारिशों और प्रशासनिक प्रक्रियाओं के बाद अब यह निर्णय अंतिम रूप लेने जा रहा है। दिल्ली स्थित एनसीईआरटी मुख्यालय के साथ-साथ अजमेर, भोपाल, भुवनेश्वर, मैसूर और शिलांग के क्षेत्रीय संस्थान भी इस नए स्वरूप का हिस्सा बनेंगे। इसका अर्थ केवल इतना नहीं कि एनसीईआरटी का दायरा बढ़ेगा, बल्कि यह कि देश के अलग-अलग हिस्सों में शिक्षा और शोध के नए केंद्र उभरेंगे। पहली बार विद्यालयी शिक्षा और विश्वविद्यालयी शोध एक ही मंच पर साथ दिखाई देंगे।
>
> डीम्ड यूनिवर्सिटी का दर्जा मिलने के बाद एनसीईआरटी को व्यापक शैक्षणिक अधिकार प्राप्त हो जाएंगे। अब वह स्वतंत्र रूप से डिप्लोमा, स्नातक, स्नातकोत्तर और पीएचडी स्तर तक के पाठ्यक्रम संचालित कर सकेगा।"

जब किसी देश की शिक्षा व्यवस्था करवट लेती है, तो बदलाव केवल पाठ्यपुस्तकों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि आने वाली पीढ़ियों की दिशा और दशा दोनों बदल जाती हैं। भारत की शिक्षा यात्रा में 2026 का आरंभ ऐसा ही एक निर्णायक पड़ाव बन गया है। पिछले 6 दशकों से करोड़ों विद्यार्थियों को अपनी पुस्तकों के माध्यम से मार्ग दिखाने वाली एनसीईआरटी अब डीम्ड-टू-बी-यूनिवर्सिटी बनने जा रही है। अब वह केवल किताबें तैयार करने वाली संस्था नहीं रहेगी, बल्कि डिग्री प्रदान करेगी, शोध को बढ़ावा देगी, नए शिक्षकों का निर्माण करेगी और शिक्षा की नई नीतियों की आधारशिला रखेगी। यह बदलाव महज एक प्रशासनिक फैसला नहीं, बल्कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था को भीतर तक बदल देने वाली उस ऐतिहासिक क्रांति की शुरूआत है, जिसकी नींव राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने रखी थी। 1961 में स्थापित एनसीईआरटी ने दशकों तक भारतीय विद्यालयी शिक्षा की आधारशिला बनकर कार्य किया। देश के अधिकांश स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकें, पाठ्यक्रम और मूल्यांकन पद्धतियां इसी संस्था की दृष्टि से आकार लेती रहीं। इसकी किताबों ने गांव के छोटे विद्यालय से लेकर महानगरों के प्रतिष्ठित स्कूलों तक शिक्षा का एक समान आधार तैयार किया। लेकिन समय बदलने के साथ यह स्पष्ट हो गया कि केवल पाठ्यपुस्तकें तैयार कर देना पर्याप्त नहीं है। नई शिक्षा व्यवस्था को ऐसे विशेषज्ञों की जरूरत है, जो शिक्षा को गहराई से समझें, उस पर शोध करें और बदलते समय के अनुसार उसे नया स्वरूप दे सकें। यही सोच एनसीईआरटी को विद्यालयी शिक्षा की सीमाओं से आगे बढ़ाकर उच्च शिक्षा के केंद्र में ले आई।

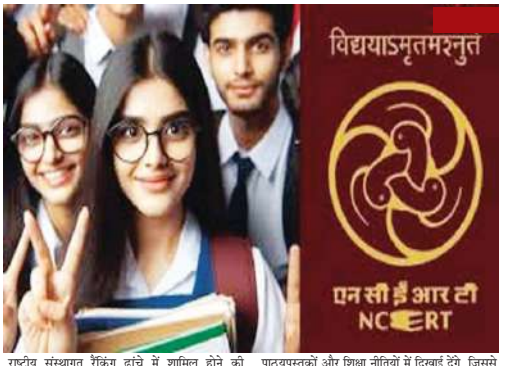

वर्ष 2023 में केंद्रीय शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान ने पहली बार सार्वजनिक रूप से संकेत दिया था कि एनसीईआरटी को शोध और शिक्षक शिक्षा का राष्ट्रीय केंद्र बनाया जाएगा। लगभग 3 वर्षों की तैयारी, विशेषज्ञों की सिफारिशों और प्रशासनिक प्रक्रियाओं के बाद अब यह निर्णय अंतिम रूप लेने जा रहा है। दिल्ली स्थित एनसीईआरटी मुख्यालय के साथ-साथ अजमेर, भोपाल, भुवनेश्वर, मैसूर और शिलांग के क्षेत्रीय संस्थान भी इस नए स्वरूप का हिस्सा बनेंगे। इसका अर्थ केवल इतना नहीं कि एनसीईआरटी का दायरा बढ़ेगा, बल्कि यह कि देश के अलग-अलग हिस्सों में शिक्षा और शोध के नए केंद्र उभरेंगे। पहली बार विद्यालयी शिक्षा और विश्वविद्यालयी शोध एक ही मंच पर साथ दिखाई देंगे।

डीम्ड यूनिवर्सिटी का दर्जा मिलने के बाद एनसीईआरटी को व्यापक शैक्षणिक अधिकार प्राप्त हो जाएंगे। अब वह स्वतंत्र रूप से डिप्लोमा, स्नातक, स्नातकोत्तर और पीएचडी स्तर तक के पाठ्यक्रम संचालित कर सकेगा। शिक्षा, मनोविज्ञान, बाल विकास, समावेशी शिक्षा, डिजिटल शिक्षण, बहुभाषी अध्ययन और शिक्षक-प्रशिक्षण जैसे विषयों में विशेष डिग्रियां दी जा सकेंगी। संस्था को अपने पाठ्यक्रम स्वयं बनाने, शैक्षणिक ऋण बैंक प्रणाली लागू करने और राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग ढांचे में शामिल होने की स्वतंत्रता मिलेगी। इसके साथ ही विदेशी विश्वविद्यालयों के साथ साझेदारी, छात्र-शिक्षक आदान-प्रदान तथा नए परिसर खोलने का मार्ग भी प्रशस्त होगा। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि एनसीईआरटी का उद्देश्य लाभ कमाना नहीं, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता को नई ऊंचाई तक पहुंचाना होगा। दशकों से भारतीय शिक्षा व्यवस्था दो हिस्सों में बंटी हुई दिखाई देती रही है–एक ओर स्कूल, दूसरी ओर विश्वविद्यालय। विद्यालयों में पढ़ाई जाने वाली सामग्री और विश्वविद्यालयों में होने वाला शोध शायद ही कभी एक-दूसरे से जुड़ पाए। परिणामस्वरूप शोध पुस्तकालयों और रिपोर्टों तक सीमित रह गया, जबकि स्कूल पुराने ढर्रे पर चलते रहे। एनसीईआरटी का यह नया रूप अब इस दूरी को समाप्त करने वाला सशक्त सेतु बनेगा। जो विशेषज्ञ पाठ्यक्रम तैयार करेंगे, वही शिक्षक गढ़ेंगे और वही शिक्षा पर शोध भी करेंगे। इससे नई खोजें और नए विचार सीधे कक्षा तक पहुंचेंगे। बच्चों की पढ़ाई अधिक व्यावहारिक, वैज्ञानिक और भविष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप बन सकेगी।

भारत की शिक्षा व्यवस्था में सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक हमेशा से प्रशिक्षित और सक्षम शिक्षकों की कमी रही है। अनेक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थान आज भी पुराने पाठ्यक्रमों और पारंपरिक तरीकों तक सीमित हैं। ऐसे समय में एनसीईआरटी का यह नया स्वरूप शिक्षक-शिक्षा के क्षेत्र में नई क्रांति ला सकता है। अब वह ऐसे पाठ्यक्रम प्रारंभ कर सकेगा, जिनमें डिजिटल शिक्षा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित शिक्षण, व्यावसायिक शिक्षा, समावेशी कक्षाएं और बहुभाषी अध्ययन जैसे आधुनिक विषय शामिल होंगे। क्षेत्रीय संस्थानों में पीजी और पीएचडी कार्यक्रम शुरू होने से युवा शोधकताओं को विद्यालयी शिक्षा की वास्तविक चुनौतियों पर काम करने का अवसर मिलेगा। उनके शोध के परिणाम सीधे पाठ्यपुस्तकों और शिक्षा नीतियों में दिखाई देंगे, जिससे शिक्षा अधिक जीवंत, प्रभावी और समयानुकूल बन सकेगी।

हर बड़ा परिवर्तन अपने साथ चुनौतियां भी लाता है। एनसीईआरटी के सामने भी कई गंभीर प्रश्न हैं। कुछ शिक्षाविदों का मानना है कि यूजीसी के नियमों के अधीन आने से उसकी स्वतंत्र कार्यशैली प्रभावित हो सकती है। जिस संस्था की पहचान अब तक विद्यालयी शिक्षा से रही है, उसके लिए विश्वविद्यालयी ढांचे में ढलना आसान नहीं होगा। नए विभाग, प्रशिक्षित संकाय, शोध सुविधाएं, पर्याप्त बजट और प्रशासनिक सुधारों की आवश्यकता पड़ेगी। साथ ही यह भी सुनिश्चित करना होगा कि उच्च शिक्षा की नई भूमिका निभाते हुए एनसीईआरटी अपनी मूल जिम्मेदारी, यानी स्कूल शिक्षा को मजबूत बनाने, से दूर न हो। यदि योजना, पारदर्शिता और गुणवत्ता पर बराबर ध्यान दिया गया, तो यही चुनौतियां उसकी सबसे बड़ी शक्ति बन सकती हैं।

यदि यह परिवर्तन सफल हुआ, तो आने वाले समय में एनसीईआरटी केवल एक संस्था नहीं, बल्कि भारतीय शिक्षा का सबसे बड़ा केंद्र बन जाएगी। एक ओर देश का विद्यार्थी उसकी किताबों से पढ़ेगा, दूसरी ओर उसी संस्था का शोधकर्ता नई शिक्षा नीति तैयार करेगा और वही शिक्षक गढ़े जाएंगे, जो आने वाली पीढ़ियों को दिशा देंगे। यह ऐसा मॉडल होगा, जहां शिक्षा, शोध और प्रशिक्षण एक-दूसरे से सीधे जुड़े होंगे। विकसित भारत का सपना केवल उद्योग, तकनीक और अर्थव्यवस्था से पूरा नहीं होगा; उसकी सबसे मजबूत आधारशिला शिक्षा ही बनेगी। एनसीईआरटी का यह नया स्वरूप उसी आधारशिला को अधिक मजबूत, व्यापक और विश्वस्तरीय बनाने की दिशा में उठाया गया एक ऐतिहासिक कदम है।

पचास फीसद सीट वृद्धि पर भ्रामक है कांग्रेस का विमर्श

डॉ. मयंक चतुर्वेदी

वर्तमान बजट सत्र के दौरान लोकसभा की सीटों में पचास प्रतिशत वृद्धि के संभावित प्रस्ताव को लेकर देश की राजनीति में एक नया विमर्श खड़ा किया जा रहा है। मुख्य विपक्षी दल कांग्रेस ने इसे दक्षिण और छोटे राज्यों के खिलाफ एक साजिश के रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश की है, परंतु इस पूरे मुद्दे का विश्लेषण यह संकेत देता है कि यह विमर्श तथ्यों से अधिक आशंकाओं और राजनीतिक पूर्वाग्रहों पर आधारित है। इसे कांग्रेस की नासमझी की पराकाष्ठा कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा!

सबसे पहले यह समझना आवश्यक है कि भारत की संसद और विशेष रूप से लोकसभा की संरचना समय के साथ स्थिर नहीं रही है, इसमें कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। 1952 में पहली लोकसभा के गठन के समय कुल सीटों की संख्या 489 थीं, 1957 में सीटों की संख्या बढ़कर 494 हो गई। 1967 के परिसीमन के बाद सीटों की संख्या बढ़कर 520 कर दी गई जोकि 1973 (31वां संविधान संशोधन) जब सीटों की संख्या में बड़ी वृद्धि की गई। 1971 की जनगणना के आधार पर 1977 तक सीटों को 525 से बढ़ाकर 545 (543 निर्वाचित + 2 मनोनीत) कर दिया गया। वस्तुतः कांग्रेस को यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि यह वृद्धि देश की बढ़ती जनसंख्या और प्रतिनिधित्व की आवश्यकता को ध्यान में रखकर की गई थी। इसके बाद 42वां संविधान संशोधन (1976) के तहत परिसीमन की प्रक्रिया को वर्ष 2001 तक स्थगित कर दिया गया। बाद में 84वां संविधान संशोधन के माध्यम से इस स्थगन को 2026 तक बढ़ा दिया गया। इसका उद्देश्य था कि जिन राज्यों ने जनसंख्या नियंत्रण के प्रयास किए हैं, उन्हें प्रतिनिधित्व में नुकसान न हो। यही संदर्भ बताता है कि संसद की सीटों का निर्धारण एक जटिल और संतुलित प्रक्रिया है, न कि किसी एक सरकार की मनमानी का परिणाम। ऐसे में कांग्रेस द्वारा यह आरोप लगाना कि नरेंद्र मोदी सरकार जबरन पचास फीसद सीट वृद्धि का बिल ला रही है, तथ्यों से परे प्रतीत होता है।

नए संसद भवन में लोकसभा के लिए 888 सदस्यों के बैठने की व्यवस्था की गई है, जो भविष्य में होने वाली संभावित वृद्धि की ओर संकेत करती है। अब वर्तमान में 2026 के बाद होने वाली पहली जनगणना के आधार पर सीटों की संख्या को 543 से बढ़ाकर 800+ करने के प्रस्तावों पर चर्चा चल रही है। जिसमें कि कांग्रेस नेता जयराम रमेश ने अपने बयान में दक्षिणी राज्यों को संभावित नुकसान की बात कही है। उन्होंने उदाहरण देते हुए उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु की सीटों का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया, परंतु उनका यह तर्क अधूरा है क्योंकि यह केवल संख्यात्मक वृद्धि को देखता है, प्रतिनिधित्व के व्यापक सिद्धांत को नहीं।

वस्तुतः वे कैसे भूल सकते हैं कि लोकतंत्र में प्रतिनिधित्व का मूल आधार जनसंख्या होती है। यदि किसी राज्य की जनसंख्या अधिक है तब स्वाभाविक रूप से उसके प्रतिनिधियों की संख्या भी अधिक होगी। यह सिद्धांत न सिर्फ भारत में बल्कि विश्व के अधिकांश लोकतंत्रों में लागू होता है। ऐसे में यदि उत्तर प्रदेश की सीटें 80 से बढ़कर 120 होती हैं और तमिलनाडु की 39 से 59 तो यह वृद्धि अनुपातिक ही मानी जाएगी। इसके अलावा, यह भी ध्यान देने योग्य है कि प्रस्तावित वृद्धि सभी राज्यों में समान प्रतिशत (50फीसद) के आधार पर की जा रही है। इससे किसी भी राज्य के वर्तमान अनुपात में तत्काल कोई बदलाव नहीं होगा। कांग्रेस का यह दावा कि इससे ह्लगहरे प्रभावह्व होंगे, अधिकतर काल्पनिक आशंकाओं पर आधारित है। मनीष तिवारी ने भी इस मुद्दे पर चिंता जताते हुए परिसीमन को फ्रीज करने या नया फामूर्ला खोजने की बात कही है, किंतु यह दृष्टिकोण भी व्यवहारिक नहीं लगता। यदि जनसंख्या बढ़ रही है और लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व को प्रभावी बनाना है, तब सीटों की संख्या बढ़ाना एक स्वाभाविक और आवश्यक कदम है। महिला आरक्षण के संदर्भ में भी इस प्रस्ताव को देखा जाना चाहिए। संसद और विधानसभाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण लागू करने के लिए सीटों की संख्या बढ़ाना एक व्यावहारिक समाधान हो सकता है। इससे वर्तमान प्रतिनिधियों की सीटें सुरक्षित रहने के साथ ही नए अवसर भी पैदा होंगे। वहीं कांग्रेस का यह तर्क देना कि इससे दक्षिण और पूर्वोत्तर राज्यों को नुकसान होगा, एक प्रकार से क्षेत्रीय असंतोष को बढ़ावा देने का प्रयास प्रतीत होता है। जबकि वास्तविकता यह है कि परिसीमन आयोग एक स्वतंत्र संवैधानिक संस्था है, जोकि सभी राज्यों के हितों को ध्यान में रखते हुए निर्णय लेता है। अरे, इसका तो गठन ही जनगणना के आधार पर लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के निर्वाचन क्षेत्रों की सीमाओं का निर्धारण करने के लिए होता है। जिसे स्वयं राष्ट्रपति अनुच्छेद 82 के अंतर्गत करते हैं।

इस संबंध में अब तक एतिहासिक संदर्भ यही बताते हैं कि संसद में परिवर्तन हमेशा व्यापक सहमति और संवैधानिक प्रक्रिया के तहत हुए हैं। चाहे वह 1976 का संशोधन हो या 2001 का, सभी निर्णयों का उद्देश्य देश की एकता और लोकतांत्रिक संतुलन को बनाए रखना रहा है। आज जब भारत विश्व की सबसे बड़ी लोकतांत्रिक शक्ति के रूप में उभर रहा है, तब संसद की संरचना को भी समय के अनुसार विकसित करना आवश्यक है। जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना वर्तमान भारतीय लोकतांत्रिक आवश्यकता है, निश्चित ही यह शासन की प्रभावशीलता को भी बढ़ाएगा।

कुल सार रूप में यहां कहना यही है कि आज कांग्रेस का इस मुद्दे पर खड़ा किया गया विमर्श तथ्यों की बजाय राजनीतिक आशंकाओं पर आधारित है। संसद की सीटों में वृद्धि एक दीर्घकालिक और आवश्यक सुधार है, जिसे क्षेत्रीय दृष्टिकोण से नहीं बल्कि राष्ट्रीय हित के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए, इसलिए जरूरी यह है कि इस विषय पर गंभीर और तथ्यात्मक चर्चा हो, न कि भ्रम और भय फैलाने वाली राजनीति। हम सतत एक मजबूत, संतुलित और समावेशी लोकतंत्र की दिशा में आगे बढ़ते रहें, इसके लिए यही आवश्यक है कि देश में राजनीतिक या सामाजिक स्तर पर कोई झूठा नैरेटिव न गढ़े, जोकि इस वक्त कांग्रेस गढ़ती हुई दिखाई दे रही है।

नौकरी से रिटायरमेंट अपने साथ अकेलापन लेकर आता है। कुछ लोग इसे स्वीकार कर लेते हैं और कुछ निकल पड़ते हैं खुशियां बिखेरने के लिए। बरेली के कुछ रिटायर 'नौजवानों' ने जिंदगी को जी भरकर जीने का फैसला किया। उन्होंने देशभर के ही नहीं, दुनिया के दूसरे देशों के लोगों को भी अपनी मंडली में शामिल किया और बनाया एक ऐसा अनूठा ग्रुप, जो हर संडे के तीसरे पहर सुरों की महफिल सजाते हैं। इंटरनेट के पंखों पर सवार यह 'सुरीले नौजवान' जूम के जरिए अपने-अपने घरों से जुड़ते हैं। मजेदार बात यह है कि हर प्रोग्राम की एक थीम होती है। कभी सिर्फ साहिर के लिखे गीत गाए जाते हैं, तो कभी सिर्फ मन्ना डे के गाए गीत। अहम यह भी है कि इस ग्रुप में आधी संख्या महिलाओं की है। ग्रुप में अमेरिका और आस्ट्रेलिया से भी मेंबर हैं। इस ग्रुप का नाम है गा लो-मुस्कुरा लो।

-कुमार रहमान, बरेली

हर बार नया बैकग्राउंड

हर प्रोग्राम का एक नया बैक ग्राउंड होता है। इसे अरुण शर्मा खुद डिजाइन करते हैं। इसमें थीम के हिसाब से बैकग्राउंड होता है। ऊपर की तरफ थीम का नाम और नीचे उस दिन की तिथि और सन। जैसे साहिर लुधियानवी के स्पेशल प्रोग्राम की डिजाइन में उनकी एक तस्वीर थी और कुछ म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंट। इसे रिकॉर्ड में भी रखा जाता है।

यूट्यूब चैनल भी

ग्रुप का अपना यूट्यूब चैनल भी है। हर संडे को होने वाले प्रोग्राम की बाकायादा रिकॉर्डिंग और एडिटिंग की जाती है। उस वीडियो को सभी मेंबरों को भेजने के साथ ही यूट्यूब पर भी अपलोड किया जाता है।

ऑफलाइन भी होता है प्रोग्राम

ग्रुप हर तीसरे महीने मंच पर भी प्रोग्राम का आयोजन करता है। इसमें ग्रुप से बाहर के लोग भी शिरकत करते हैं। यह काफी लोकप्रिय आयोजन है। इसे हर तीसरे महीने आयोजित किया जाता है। अब तक इसके 19 आयोजन हो चुके हैं।

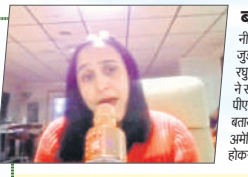

बरेली की नीरा जुड़ती हैं अमेरिका से

नीरा इस ग्रुप की एक्टिव मेंबर हैं। वह डेढ़ साल से इस ग्रुप से जुड़ी हैं। नीरा यहां बिहारीपुर में रहती थीं। उनके पिता दिवंगत रघुवीर नारायण मेहरोत्रा तिलक इंटर कॉलेज में टीचर थे। नीरा ने साहूराम स्वरूप महिला डिग्री कॉलेज से संगीत (गायन) में पीएचडी की है। शादी के बाद वह अमेरिका चली गईं। उन्होंने बताया कि उन्हें संडे का बेसब्री से इंतजार रहता है। उस वक्त अमेरिका में सुबह का वक्त रहता है। इस प्रोग्राम में शामिल होकर उनका पूरा दिन संगीतमय हो जाता है।

आस्ट्रेलिया से जुड़ते हैं अरविंद

अरविंद वर्मा पटना के हैं। बरेली उनकी ससुराल है। वह बरेली में स्टेट बैंक में मैनेजर थे। बरेली में सात साल रहे। बाद में आस्ट्रेलिया जा बसे। उन्हें भी इस प्रोग्राम की प्रतीक्षा रहती है। वह एक साल से इस ग्रुप से जुड़े हैं। वह आमतौर पर मन्ना डे, किशोर कुमार, तलत महमूद और हेमंत कुमार को गाना पसंद करते हैं।

जिंदगी को जी भरकर जीना है

कब बना ग्रुप

वह 21 अप्रैल 2021 का दिन था। कोविड के खौफ भरे दिन। जिंदगी बचाने की जद्दोजहद के बीच अकेले और खामोश दिन। सभी अपने-अपने घरों में कैद। तनाव भरे इन पलों में अरुण कुमार शर्मा के जेहन में ख्याल आया कि क्यों न एक ग्रुप बनाया जाए, जिसमें सभी लोग ऑनलाइन जुड़ें और गीत-संगीत की महफिल सजाई जाए। उन्होंने यह विचार पत्नी कंचन शर्मा को बताया। वह तैयार हो गईं। अरुण शर्मा बैंक ऑफ बड़ौदा में चीफ मैनेजर थे और अब रिटायर हो गए हैं। फोन पर यह बात उन्होंने अपने दोस्त अशोक कुमार सक्सेना को बताई। अशोक कुमार डाकघर में प्रवर अधीक्षक थे और वह भी रिटायर हो गए हैं। उन्हें भी ख्याल जंच गया। उसी दिन सभी जूम ऐप के जरिए ऑनलाइन जुड़े और सजा ली संगीत संध्या। पहले प्रोग्राम में सात लोग थे, लेकिन दूसरा आयोजन अपने साथ निराशा लाया। सदस्यों की संख्या बढ़ने के बजाए घटकर दो रह गई। आज ग्रुप में 150 सदस्य हैं, जिनमें एक्टिव मेंबर 70 के आसपास हैं। ज्यादातर रिटायर्ड लोग हैं। बरेली के अलावा लखनऊ, कानपुर, नोएडा, गाजियाबाद, मेरठ, आगरा, मुंबई, बीकानेर, इंदौर के साथ ही अमेरिका और आस्ट्रेलिया से लोग शामिल होते हैं। बरेली से तकरीबन 25 लोग इस ग्रुप में हैं। अब ग्रुप को रजिस्टर्ड भी करा लिया गया है और इसका नाम हो गया है 'गा लो-मुस्कुरा लो' वेल्फेयर सोसायटी। यह सोसायटी वेल्फेयर के काम भी करती है। इसके अध्यक्ष अशोक कुमार सक्सेना और सचिव अरुण कुमार शर्मा हैं। श्री शर्मा कहते हैं कि पत्नी कंचन शर्मा के बिना यह आयोजन हो पाना संभव नहीं है। उनका बराबर का सहयोग रहता है।

कैसे होता है आयोजन

इसका आयोजन हर संडे को शाम चार बजे होता है और रात आठ बजे तक चलता है। टीम ने वाट्सऐप पर एक ग्रुप बना रखा है। प्रोग्राम में शामिल होने वाले साथी रविवार को दोपहर दो बजे तक अपना नाम और गाना ग्रुप में भेज देते हैं। अरुण शर्मा इसे कोआर्डिनेट करते हैं और एक लिस्ट बनाते हैं। फिर पौने चार बजे तक सभी जूम ऐप पर ऑनलाइन जुड़ जाते हैं और अपने क्रम के हिसाब से गीत पेश करते हैं। खास बात यह है कि गीत के साथ संगीत भी होता है। इसके लिए एक ऐप का इस्तेमाल किया जाता है। इसमें ड्रमर भी गाते हैं। अब तक इसके 289 प्रोग्राम हो चुके हैं।

संगीत ने खालीपन किया दूर

ग्रुप के अध्यक्ष अशोक कुमार सक्सेना ने बताया कि अरुण शर्मा के प्रोत्साहन से अब उन्होंने भी गाना शुरू किया है। इससे पहले उन्होंने कभी सार्वजनिक तौर पर गाने के बारे में सोचा भी नहीं था। वह कहते हैं, "संगीत ने रिटायरमेंट के खालीपन को भर दिया।" वह बरेली में सुरेश शर्मा नगर में रहते हैं। उन्होंने बताया कि ग्रुप में बहुत सारी ऐसी महिलाएं हैं, जिन्होंने पतियों के प्रोत्साहन से अब गाना शुरू किया है।

फिजी रेडियो में गाते थे नीरज

नीरज टंडन बरेली के बैंक ऑफ बड़ौदा में एजीएम हैं। वह और उनकी पत्नी नीतू टंडन भी बराबर प्रोग्राम में शरीक होते हैं। नौकरी के सिलसिले में वह कई देशों में रहे हैं। वह बीओबी की फिजी ब्रांच में भी रहे। इस दौरान उन्होंने रेडियो फिजी में काफी प्रोग्राम किए। वह वहां गीत प्रस्तुत किया करते थे। इसे काफी पसंद किया जाता था। सिंगिंग उनका बचपन का पैशन है।

जॉब का पहला दिन

जब जिम्मेदारी ने गौरव का रूप लिया

मेरे जीवन की किताब में कुछ पन्ने ऐसे हैं, जिन्हें मैं जब भी पलटती हूं, तो उनकी चमक आज भी ताजा महसूस होती है। उन्हीं में से एक सबसे महत्वपूर्ण और यादगार पन्ना है। अगस्त 2011 का, जब पहली बार मैं बाराबंकी के मुंशी रघुनंदन प्रसाद सरदार पटेल महिला महाविद्यालय के प्राचार्या से मिली तो प्राचार्या ने कहा कि हमारे कॉलेज की बस प्रतिदिन लखनऊ से आती है, जिससे आपको यहां आने में कोई असुविधा नहीं होगी।

डॉ. रचना श्रीवास्तव
अवध विश्वविद्यालय अयोध्या

विश्वविद्यालय में मेरे बतौर प्रोफेसर चयन की कहानी बड़ी दिलचस्प है। मैं एक बार दूरदर्शन का एक प्रोग्राम कर रही थीं। उस प्रोग्राम को विश्वविद्यालय की प्राचार्या भी देखकर रहीं थीं। उनको मेरी गायकी बहुत पसंद आई और मेरी प्रतिभा से प्रभावित होकर मुझे मिलने के लिए बुलाया। प्राचार्य ने साक्षात्कार के बाद स्टाफ के सदस्य को बुलाकर उसे स्टॉफ रूम ले जाने को कहा। स्टॉफ रूम में सभी सदस्य साड़ी पहने थीं। क्योंकि इस कॉलेज में साड़ी कंपलसरी थी, मैं भी साड़ी में ही गई थी। जिसे देखकर मेरे मन में आत्मविश्वास बढ़ा। यह देखकर मुझे परिसर परिवार जैसा लगने लगा।

उस सुबह की हवा में एक हल्की सी ठंडक थी, जो मन में उमड़ते उत्साह और आशंकाओं के बीच एक सुकून दे रही थी। जब मैंने विश्वविद्यालय के विशाल और हरे-भरे परिसर में कदम रखा, तो एक अजीब सा गर्व महसूस हुआ। वह शैक्षणिक वातावरण, विभागों की पुरानी, लेकिन भव्य इमारतें और छात्रों की चहल-पहल सब कुछ जैसे मुझे पुकार रहा था। मुझे अहसास हुआ कि आज से मेरी पहचान केवल एक व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि राष्ट्र के निर्माता यानी एक 'शिक्षक' के रूप में होने वाली है।

विभाग पहुंचते ही विभागाध्यक्ष ने जिस गर्मजोशी से मेरा स्वागत किया, उसने मेरी सारी हिचकिचाहट को पल भर में दूर कर दिया। सहकर्मियों का वह सहज और सहयोगी व्यवहार

मेरे लिए किसी वरदान से कम नहीं था, लेकिन असली चुनौती अभी बाकी थी। औपचारिकताओं के बीच मुझे बताया गया कि आज ही मेरी पहली कक्षा है। यह सुनकर मन में उत्साह तो था, पर साथ ही एक अनजानी घबराहट ने भी दस्तक दी।

जब मैं कक्षा के द्वार पर पहुंची, तो दर्जनों उत्सुक निगाहें मेरी ओर मुड़ गईं। वह मेरा पहला व्याख्यान था। मैंने अपनी आवाज को संयत किया और सहजता से संवाद शुरू किया। शुरुआत में शब्दों में थोड़ी झिझक थी, लेकिन जैसे ही मैंने विषय की गहराई में उतरना शुरू किया, मेरा आत्मविश्वास लौट आया। मैंने कोशिश की कि मैं केवल 'पढ़ाऊं' नहीं, बल्कि 'जुड़ूं'। जब छात्रों ने सवाल पूछना शुरू किया और कक्षा एक जीवंत चर्चा में तब्दील हो गई, तब मुझे लगा कि मैं अपनी बात उन तक पहुंचाने में सफल रही हूं।

कक्षा के बाद जब कुछ छात्र अपनी जिज्ञासाएं लेकर मेरे पास आए, तो मुझे एक बड़ी सच्चाई का अनुभव हुआ। एक शिक्षक केवल सूचनाओं का स्रोत नहीं होता, बल्कि वह एक मार्गदर्शक और प्रेरक भी होता है। उनकी आंखों की वह उम्मीद ही मेरी सबसे बड़ी जिम्मेदारी थी।

दोपहर में स्टाफ रूम में वरिष्ठ सहयोगियों के साथ बिताया गया समय भी बहुत कीमती रहा। उनके अनुभवों से निकले सुझावों ने मुझे सिखाया कि अध्यापन केवल ब्लैकबोर्ड तक सीमित नहीं है, यह निरंतर सीखने की एक प्रक्रिया है। दिन ढलने पर जब मैं परिसर से बाहर निकली, तो शरीर में थकान तो थी, लेकिन मन आत्मसंतुष्टि और गहरी खुशी से भरा था। वह दिन मेरे लिए केवल एक करियर की शुरुआत नहीं, बल्कि एक ऐसे संकल्प का आगाज था, जिसमें ज्ञान बांटने और समाज को एक नई दिशा देने का अवसर छुपा था। आज भी जब मैं पीछे मुड़कर देखती हूं, तो वह दिन मुझे याद दिलाता है कि सपनों को जीने का साहस ही हमें जीवन के सबसे यादगार पल देता है।

नौकरी छोड़ गुलाबी फल से बदली अपनी किस्मत

कहते हैं कि अगर इरादे मजबूत हों और सोच वैज्ञानिक, तो मिट्टी भी सोना उगलने लगती है। बरेली के भोजीपुरा स्थित गांव महिमा पट्टी निवासी यशपाल (48) ने इसे सच कर दिखाया है। एमबीए की पढ़ाई के बाद एक निजी कंपनी में नौकरी करने वाले यशपाल ने कोरोना काल के संकट को अवसर में बदलते हुए खेती को अपना बिजनेस बनाया। आज वे गुलाबी फल, जिसे दुनिया "ड्रैगन फ्रूट" के नाम से जानती है, की खेती कर सालाना लाखों रुपये का मुनाफा कमा रहे हैं। यशपाल बताते हैं कि उनका लक्ष्य हमेशा से बिजनेस करना था, इसीलिए उन्होंने एमबीए किया। 2020 में जब कोरोना की लहर ने नौकरियों पर संकट खड़ा किया, तो उन्होंने निजी नौकरी छोड़ने का साहसिक फैसला लिया। हालात सामान्य होने पर उन्होंने ड्रैगन फ्रूट की खेती का मन बनाया और इसके गुर सीखने के लिए महाराष्ट्र और गुजरात के मॉडल फार्म्स का दौरा कर वहां से विधिवत प्रशिक्षण लिया।

– महिपाल गंगवार, बरेली

यशपाल ने 2023 में महज 48 पौधों के साथ ड्रैगन फ्रूट फैक्ट्री की शुरुआत की थी। आज वैज्ञानिक पद्धति और कड़ी मेहनत के दम पर उनके पास 25 हजार पौधे हैं। यशपाल के अनुसार, यह एक लॉन्ग टर्म बिजनेस है, जिसमें निवेश केवल एक बार करना होता है। तीन एकड़ में फैली इस खेती से वे सालाना 10 से 12 लाख रुपये कमा रहे हैं। एक बार बाग पूरी तरह तैयार होने पर सालाना मुनाफा 20 लाख रुपये तक पहुंच सकता है। इस सफलता में यशपाल के बड़े भाई और सेवानिवृत्त सैनिक सूरजपाल उनका पूरा साथ देते हैं। आज यशपाल न केवल खुद आत्मनिर्भर बने हैं, बल्कि उन्होंने 10 लोगों को रोजगार भी दिया है। वे अब तक चार नए फार्म खुलवा चुके हैं और अन्य किसानों को भी इस आधुनिक खेती का प्रशिक्षण दे रहे हैं। वह कहते हैं कि सबसे बड़ी राहत की बात यह है कि उन्हें मंडी के चक्कर नहीं काटने पड़ते, फल की गुणवत्ता ऐसी है कि व्यापारी खुद खेत पर आकर ड्रैगन फ्रूट ले जाते हैं, जिससे उन्हें मार्केटिंग की कोई चिंता नहीं रहती। उनका साफ कहना है कि अगर विजन वैज्ञानिक हो, तो खेती किसी भी कॉर्पोरेट नौकरी से बेहतर रिटर्न दे सकती है।

औषधीय गुणों से होता है भरपूर ड्रैगन फ्रूट

ड्रैगन फ्रूट की ऊपरी सतह पर गुलाबी और लाल रंग का होता है, जबकि अंदर का भाग पीले रंग का होता है। इसके सेवन से रक्तात्पता की समस्या दूर होती है। साथ ही फाइबर और विटामिन सी की अच्छी मात्रा होने के चलते इस फल के सेवन से कई और बीमारियों में काफी हद तक निजात मिलती है। ड्रैगन फ्रूट के पौधे को 36 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान और हल्के पानी की आवश्यकता होती है और इसकी खेती से बहुत सकारात्मक परिणाम मिलते हैं।

नई कहानी के प्रमुख स्तंभ शेखर जोशी

शेखर जोशी की गणना हिन्दी साहित्य के प्रमुख कहानीकारों में की जाती है। उन्होंने नई कहानी के विकास में प्रमुख भूमिका निभाई। वे मर्मस्पर्शी कहानियों के प्रमुख कथाशिल्पी थे। उनकी कहानियों में आम आदमी का प्रतिबिंब झलकता है।

शेखर जोशी का जन्म 10 सितंबर 1932 को अल्मोड़ा जिले के सोमेश्वर गांव में हुआ था। सोमेश्वर को पहाड़ी भाषा में ओलिया भी कहते थे। उनके पिता एक साधारण किसान थे। इसलिए उनका बचपन अभावों में बीता। शेखर जोशी की शिक्षा अजमेर और देहरादून में हुई थी। इंटरमीडिएट की पढ़ाई के दौरान ही उनका चयन सुरक्षा विभाग में ई.एम.ई. अप्रेन्टिसशिप के लिए हो गया। 1996 तक वे एक सैनिक औद्योगिक प्रतिष्ठान में सेवारत रहे। इसके बाद उन्होंने स्वैच्छिक रूप से त्यागपत्र दे दिया और स्वतंत्र रूप से लेखन कार्य में जुट गए।

सुरेश बाबू मिश्रा
लेखक

उनकी रुचि कहानी लेखन में थी इसलिए उन्होंने कहानियां लिखना प्रारंभ कीं। आम आदमी को केन्द्र मानकर पारिवारिक एवं सामाजिक ताने-बाने पर बुनी उनकी कहानियां बहुत लोकप्रिय हुईं। उनकी कहानियों की प्रसिद्धि देश की सीमाओं को पार कर विदेशों तक जा पहुंची और उनकी गणना हिन्दी के अग्रिम पंक्ति के कहानीकारों में होने लगी। अपनी साहित्य यात्रा के दौरान उन्होंने 'कोशी के घटवार', 'दाज्यू', 'बदबू', 'मेटल', 'पेड़ की याद', नौरंगी बीमार है' तथा प्रतिनिधि कहानियां जैसी अमर कृतियों की रचना की। उनको विशेष प्रसिद्धि 'कोशी के घटवार' से मिली। उनकी कुछ कहानियों का अनुवाद अंग्रेजी, चेक, पोलिश एवं रूसी भाषाओं में भी हुआ। उनकी एक कहानी "दाज्यू" पर बाल फिल्म भी बनी।

उन्होंने कई उपन्यास भी लिखे। 'अथ मूषक उवाच', 'हलवाला', 'साथ के लोग', 'मेरा पहाड़', 'चौंटी के पर' आदि शामिल हैं। मगर उन्हें विशेष प्रसिद्धि कहानीकार के रूप में मिली। शेखर की कहानियों में पहाड़ी जीवन, पहाड़ी संस्कृति एवं पहाड़ी परिवेश की झलक स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है। उनका जन्म एक साधारण कृषक परिवार में हुआ था इसलिए उनकी कहानियों में गरीबी, उत्पीड़न, नारी संघर्ष तथा पहाड़ी ग्रामीण समाज में फैली रुढ़ियों का सजीव चित्रण मिलता है। उन्होंने पहाड़ी जीवन के कठोर यथार्थ को अपनी कहानियों के माध्यम से समाज तक पहुंचाने का सफल प्रयास किया है। इसलिए उनकी कहानियां जीवंत प्रतीत होती हैं।

शेखर जोशी को उनकी कालजयी कहानियों के लिए कई प्रतिष्ठित सम्मानों से अलंकृत किया गया। सन् 1987 में उन्हें उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से महावीर प्रसाद द्विवेदी साहित्य सम्मान से समादृत किया गया। सन् 1995 में हिन्दी साहित्य का अति प्रतिष्ठित सम्मान साहित्य भूषण प्रदान किया गया। सन् 1997 में उन्हें 'पहल' सम्मान व 'मैथिलीशरण गुप्त' सम्मान से समादृत किया गया। अभी कुछ समय पूर्व उन्हें 'श्री लाल शुक्ल सम्मान' भी दिया गया। आज वे हमारे मध्य नहीं हैं, मगर अपनी कालजयी रचनाओं के रूप में वे सदैव अमर रहेंगे। उनकी कृतियां हिन्दी साहित्य की अनमोल धरोहर हैं।

संवाद
नवभारत टाइम्स
नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । शनिवार, 4 अप्रैल 2026

दुनिया का नुक़सान

एनर्जी इंफ्रा पर हमले सभी के लिए बुरी ख़बर

अमेरिका-इस्राइल और ईरान जंग सैन्य ठिकानों को निशाना बनाने से इतर अब पूरी तरह मूलभूत सुविधाओं को तबाह करने की तरफ मुड़ गई है। बीते 24 घंटे में दोनों पक्षों ने पुल, रिफाइनरी और एनर्जी इंफ्रास्ट्रक्चर पर हमले किए हैं। यह दुनिया के लिए बहुत बुरी ख़बर है।

तबाही की धमकी । अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने बीते दिनों दावा किया कि उनकी ईरान की नई रेजीम के साथ अच्छी बात चल रही है। फिर देश के नाम संबोधन में उन्होंने ईरान को पाषाण युग में भेजने की धमकी दी और अब शांति के प्रयासों से हटकर बात तबाही पर आ गई है। अमेरिका ने तेहरान के पास एक पुल पर बम गिराया, तो ईरान ने कुवैत और UAE में एनर्जी इंफ्रास्ट्रक्चर पर निशाना साधा। धमकी दी है कि वह पश्चिम एशिया में मौजूद अमेरिकी असेट्स को बर्बाद कर देगा।

फैल रही जंग

फिर कैसे उबरेंगे । लेकिन इसमें नुकसान पूरी दुनिया का है। होर्मुज स्ट्रेट पर ईरानी नाकाबंदी की वजह से पहले ही लगभग 20% ग्लोबल ऑयल सप्लाई कम हो गई है। माना जा रहा है कि अगर जंग रुकती है, तो सप्लाई को फिर से सामान्य करने में कुछ महीने लग सकते हैं। लेकिन, अगर एनर्जी इंफ्रास्ट्रक्चर पर हमले हुए, तो उससे उबरने में कई साल लग जाएंगे।

नाकाफी होंगे इंतजाम । कुवैत, कतर और सऊदी अरब की ऑयल-गैस फैसिलिटीज और ईरान की साउथ पार्स गैस फील्ड को पहले ही इस युद्ध में काफी नुकसान पहुंचा है। कतर के ऊर्जा मंत्री शेरिडा अल-काबी ने तो पिछले महीने कहा था कि उनके देश की निर्यात क्षमता 17% तक कम हो सकती है। अभी देशों के पास अपना स्ट्रैटिजिक रिजर्व है और इंटरनैशनल एनर्जी एजेंसी की अपील पर सदस्य देशों ने भी ऑयल रिजर्व रिलीज करने पर हामी भरी है। वहीं भारत ने तेल मार्केटिंग कंपनियों को क्रूड ऑयल के बढ़ते दाम के दबाव से बचाने के लिए बीते दिनों एक्साइज ड्यूटी में कटौती की है। लेकिन, अगर हमले जारी रहते हैं, तो सारे इमरजेंसी इंतजाम भी नाकाफी साबित होंगे। इस बीच, क्रूड ऑयल के 200 डॉलर प्रति बैरल तक जाने के अनुमान भी लगाए जा रहे हैं।

शांति का प्रयास । खाड़ी देशों की अर्थव्यवस्था तेल से जुड़ी है और उस तेल से कई देशों की अर्थव्यवस्था जुड़ती है। इसमें गड़बड़ी से मंदी और महंगाई की दोहरी मार पड़ेगी, जिसका असर भी दिखने लगा है। होर्मुज को खुलवाने के लिए कई देश मिलकर प्रयास कर रहे हैं। यह तो जरूरी है ही, जल्द ही यह युद्ध भी रुकना चाहिए।

और सुनाओ

खाता वही, बैंक नया

रमेश तिवारी

कई बार बैंक ग्राहकों के लिए सिरदर्द बन जाते हैं। कभी सर्विस की क्वॉलिटी खराब लगती है, किसी को छोटी-छोटी बात पर फीस वसूलना महंगा लगता है। अभी लोग खराब सर्विस या ज्यादा फीस के बावजूद बैंक नहीं बदलते। इसकी कई वजहें हैं। बैंक में बचत खाता सिर्फ पैसा जमा करने और निकालने के लिए नहीं है। लोग यूजर बिल, EMI और SIP का भुगतान सेविंग खाते से ही करते हैं। बचत खाता बदलने के बाद भुगतान में दिक्कत आ सकती है। इन सबमें कागजी कार्रवाई बहुत मुश्किल भरी होती है।

समझा जा रहा है कि आम ग्राहक भविष्य में अपना अकाउंट नंबर बदले बिना बैंक बदल सकेंगे। रिजर्व बैंक ठीक उसी तरह अकाउंट पोर्टेबिलिटी शुरू करने की तैयारी कर रहा है, जैसे आप मोबाइल फोन के सिम को पोर्ट करते हैं। अभी तक इसे शुरू करने की कोई समय-सीमा नहीं बताई गई है। लेकिन RBI के 'पेमेंट्स विजन 2028' डॉक्यूमेंट में इसका जिक्र है। इसमें प्रस्तावित ग्राहक अपने अकाउंट से जुड़े सभी आने वाले और जाने वाले पेमेंट की अनुमति को एक ही जगह देख सकेंगे। ग्राहक का खाता दूसरे बैंक में ट्रांसफर हो जाएगा, तब भी अनुमति बनी रहेगी। अगर ये फैसला लागू होता है तो बैंकों में मुकाबला बढ़ जाएगा। आपको रोकने के लिए उन्हें बेहतर ब्याज दर, कम चार्ज और अच्छी डिजिटल सर्विस देनी होगी। जब आप बैंक बदलेंगे, तो आपका पुराना लेनदेन का रेकॉर्ड भी साथ जाएगा। इससे नए बैंक को यह समझने में आसानी होगी कि आप कितने भरोसेमंद हैं, जिससे आपको बेहतर लोन ऑफर मिल सकते हैं। फिनटेक और छोटे बैंक इसे सपोर्ट कर रहे हैं, जबकि बड़े बैंक अभी चुप हैं। पब्लिक और प्राइवेट सेक्टर बैंकों के ग्राहक अक्सर अलग-अलग कारणों से दुखी होते हैं। पोर्टेबल अकाउंट होने पर इनकी सर्विस का ठीक आकलन किया जा सकेगा। इस पर अमल में भले ही 1-2 साल लग जाएं, लेकिन यह ग्राहक केंद्रित बड़ा सुधार होगा।

मुश्किल ये है कि हर बैंक का अपना अलग सॉफ्टवेयर होता है। सभी का अकाउंट नंबर का सिस्टम भी अलग है। इन सबको एक जैसा बनाना एक बड़ी तकनीकी चुनौती है। बैंक बदलने पर अकाउंट नंबर तो वही रखा जा सकता है, लेकिन बैंक बदलते ही IFSC कोड बदल जाएगा। इसे मैनेज करने के लिए सिस्टम में बड़े बदलाव करने होंगे। इस पूरे सिस्टम को लागू करना बैंकों के लिए बहुत महंगा सौदा है। बैंकों को डर भी है कि उनके पक्के ग्राहक आसानी से दूसरे बैंक चले जाएंगे। सबसे बड़ी चुनौती यह है कि नया बैंक, KYC पर पुराने बैंक के रिकॉर्ड पर कितना भरोसा कर सकता है।

ऑफ़ दि ट्रैक

कौन कहां, बताएगी फिजिक्स

दिलीप लाल

मान लीजिए किसी के पास एक बेहद जरूरी कॉल आती है। लेकिन, कॉल पाने वाले को शक है कि क्या फोन सचमुच वहीं से आया है, जहां के बारे में वह सोच रहा है? यह शक क्वांटम फिजिक्स से दूर हो सकता है। वैज्ञानिकों ने एक नई तकनीक विकसित की है, जो Quantum Entanglement पर आधारित है। इसमें दो या अधिक कण इस तरह जुड़े होते हैं कि एक कण पर होने वाला असर तुरंत दूसरे कण पर भी दिखता है, चाहे वे कितनी ही दूर क्यों न हों। इसे इस तरह समझते हैं - मान लीजिए एक ही तरह के दो सिक्के हैं, एक दिल्ली और दूसरा न्यूयॉर्क में। जैसे ही आप दिल्ली वाला सिक्का उछालते हैं और वह 'हेड' आता है, उसी समय न्यूयॉर्क वाला सिक्का 'टेल' हो जाता है। यही एंटैंगलमेंट का सिद्धांत है। अब इस सिद्धांत का उपयोग सुरक्षा के क्षेत्र में हो रहा है। क्वांटम पोजिशन वेरिफिकेशन में दो वेरिफाई करने वाले किसी तीसरे व्यक्ति यानी प्रूवर के स्थान की पुष्टि करते हैं। वे विशेष क्वांटम संकेत भेजते हैं और जवाब के समय व पैटर्न को जांचते हैं। अगर कोई बीच में हस्तक्षेप करता है, तो परिणाम तुरंत बदल जाते हैं और उसकी पहचान हो जाती है। भविष्य में यह तकनीक फिशिंग जैसे साइबर हमलों को रोकने, संवेदनशील संस्थानों की सुरक्षा बढ़ाने और 'क्वांटम इंटरनेट' के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

राज्य में अब जातिगत समीकरणों पर भारी पड़ रही धार्मिक पहचान

नीतीश को बिहार से जाना ही था

गंगेश मिश्र

नीतीश कुमार बिहार की सत्ता में आए थे संभावनाओं को लेकर। अब राज्य की राजनीति से विदा हो गए हैं, तो आशंकाओं को छोड़कर। चुनावी राजनीति के लिहाज से सबसे बड़ी आशंका उनके वोट बैंक के बचे रहने को लेकर है। राज्य के चुनावी अखाड़े में तीन ही खिलाड़ी हैं। पहला लालू-तेजस्वी का राष्ट्रीय जनता दल (RJD) और उसके नेतृत्व वाला I.N.D.I.A. ब्लॉक। फिर BJP और नीतीश कुमार का JDU।

पुराने खिलाड़ी । 2005 से JDU मुख्य खिलाड़ी है। उसने जिससे भी हाथ मिलाया, वह सत्ता में आया और दूसरा बाहर निकल गया। लेकिन कहते हैं कि सोहबत का असर पड़ता है। नीतीश का वोट बैंक भी अछूता नहीं रहा। बिहार से नीतीश की विदाई की मजबूरी के पीछे उनके वोट बैंक पर भगवा रंग चढ़ जाने को प्रमुख वजह माना जा रहा है।

बदलाव ले आए । नीतीश कुमार के सत्ता में आने से बिहार में कई तरह के परिवर्तन हुए। एक तो पिछड़ी, दलित जातियों में उपभेद करके RJD के जातिगत आधार को ठेस पहुंचाई। दूसरे, BJP से हाथ मिलाकर हर जाति-वर्ग के नेता के रूप में अपना कद बड़ा कर लिया। लोगों के जीवन स्तर में सुधार, गरीबी में कमी, खपत क्षमता में बढ़ोतरी के अलावा नशाबंदी, महिला आरक्षण, किसान और छात्र-छात्राओं के लिए लाभकारी योजनाओं के बूते सुशासन बाबू की छवि बना ली, सो अलग। जो बिहार दशक भर पहले आर्थिक पिछड़ेपन का उदाहरण माना जाता था, अब वहीं कई सामाजिक-आर्थिक संकेतकों पर तेज बढ़ोतरी दर्ज करा रहा है।

धारणा बदली । यकीनन, इससे बिहार के साथ-साथ नीतीश कुमार को लेकर भी धारणाएं बदलीं। इसमें प्रवासी बिहारियों की भूमिका को भी नजरअंदाज नहीं करना चाहिए। दिल्ली, मुंबई और बेंगलुरु जैसे शहरों में काम करने वाले प्रवासी बिहारियों ने जातियों में जकड़े रहने के बजाय विकास व समृद्धि को तरजीह देनी शुरू कर दी। दूसरे राज्यों में जाने के बाद बिहार के लोगों की पहचान जातिगत नहीं रह जाती, वे रह जाते हैं सिर्फ बिहारी। इस पहचान से मेट्रो शहरों में उन्हें कमाना-खाना आसान लगने लगता है। यही लोग पर्व-त्योहार पर जब घर लौटते हैं, तो अपने समाज में बदलाव का फॉर्मूला बन जाते हैं।

बदल रही राजनीति
- प्रवासी बिहारी विकास और समृद्धि को दे रहे हैं सबसे ज्यादा महत्व
- गैर-सवर्णों की धार्मिक सक्रियता पहले की तुलना में और ज्यादा बढ़ी
- नीतीश कुमार के वोट बैंक पर भी चढ़ रहा भगवा रंग

धर्म भारी । आर्थिक रूप से थोड़े-बहुत समृद्ध हुए ऐसे लोगों में जाति के बजाय धर्म को तवज्जो देने की भावना अधिक दिखने लगती है। चंदा देने से लेकर मंदिरों में धार्मिक आयोजनों तक में इनकी भागीदारी कई बार सवर्णों से अधिक दिख जाती है। वे जाति के बजाय अपने आप ही हिंदू समाज का अंग दिखने लगते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों तक में सवर्णों की तुलना में गैर-सवर्णों के अधिक सनातनी होते चले जाने को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए।

सामाजिक बदलाव । इन्हें नजरअंदाज करने वाले ही बिहार के चुनाव परिणामों को समझने में चूक जा रहे हैं। तो क्या बिहार में ऐतिहासिक रूप से जातिगत व्यवस्था टूट रही है? कहना ही होगा। आज बिहार का समाज धार्मिक आधार पर ऊपर से नीचे तक तेजी से बंट रहा है। आज की तारीख में गांवों में समृद्ध सवर्णों के परिवारों में अधिकतर रिटायर पिता-बाबा, बुजुर्ग विधवाएं या बेरोजगार रहते हैं। कमाऊ लोग नौकरी-पेशा में रमे हुए हैं। उनकी युवा पीढ़ी का गांवों से नाता लगभग टूटा हुआ है। ऐसे में सामाजिक कार्य अपने-आप गैर-सवर्ण युवाओं के कंधे पर होते हैं। वे ईमानदारी से इसे निभाते भी हैं।

चुनाव से संकेत । इसमें खाद-पानी देने का काम संघ और BJP ने बखूबी किया। यही कारण है कि नीतीश से लेकर तमाम दलों के जाति आधारित कथित वोट बैंक अब हिंदू व गैर-हिंदू में सीधे-सीधे बंटते दिख रहे हैं। नीतीश कुमार का अति पिछड़ा वोट बैंक भी इससे अछूता नहीं रहा। इसके कंधे पर BJP ने बहुत बारीकी से नीतीश के साथ-साथ हिंदुत्व को बचाने का जिम्मा भी डाल दिया है। इस बार के विधानसभा चुनाव के एकतरफा परिणामों ने इसे और मजबूती से स्थापित कर दिया है।

बढ़ेगी चुनौती । साल 2020 के विधानसभा चुनाव में नीतीश की सीटें यूं ही कम नहीं हुई थीं। चिराग पासवान के जरिये नीतीश और उनके वोट बैंक को यही समझाया गया था। अबकी बार अपने वोट बैंक के भगवा रंग में रंगने से सीटों में हुई बढ़ोतरी ने नीतीश को बैकफुट पर धकेल दिया। बिहार में कभी JDU को वोट नहीं मिला, यहां लोग नीतीश कुमार के नाम पर वोट करते थे। चूंकि वह अब दिल्ली कूच कर रहे हैं, इसलिए उनका वोट बैंक JDU के प्रति शायद ही ईमानदार रहे।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

AI Image

नेतन्याहू की परेशानी

इस्राइल की राजनीति इस समय युद्ध, चुनाव और नेतृत्व संकट के बीच उलझी है। बिन्यामिन नेतन्याहू दबाव में हैं, लेकिन विपक्ष की कमजोरी का उन्हें फायदा भी मिल रहा है। आने वाले चुनाव में युद्ध का परिणाम तय करेगा कि उनकी सत्ता बचेगी या खत्म हो जाएगी।

5 पॉइंट

1 युद्ध समर्थन आधार
इस्राइल में अधिकांश लोग अब भी युद्ध के पक्ष में हैं। लगभग 68% लोग इसे जारी रखने के पक्ष में हैं। यह समर्थन नेतन्याहू के राजनीतिक रूप से टिके रहने का महत्वपूर्ण आधार है।

2 चुनावी स्थिति कमजोर
लिकुड सबसे बड़ी पार्टी है, लेकिन सर्वे बताते हैं कि गठबंधन बहुमत से पीछे है। अक्टूबर चुनाव में दोबारा सरकार बनाना थोड़ा कठिन है। हालांकि, कनेसेट में बजट पास कराना नेतन्याहू की बड़ी उपलब्धि रही।

3 गठबंधन प्रबंधन मजबूत
नेतन्याहू की बड़ी ताकत उनका राजनीतिक कौशल है, जिससे वह अलग-अलग विचारधारा वाले सहयोगियों को साथ बनाए रखते हैं। चुनाव से पहले भी वह छोटे दलों को जोड़कर अपने पक्ष में संतुलन बना सकते हैं।

4 कमजोरी का फायदा
गठबंधन के सहयोगी अल्ट्रा-ऑर्थोडॉक्स दल की लोकप्रियता घटी है। बेजलेल स्मोट्रिच की पार्टी भी न्यूनतम वोट हासिल करने में संघर्षरत है। लेकिन, विपक्ष में एकजुटता न होना नेतन्याहू के लिए फायदेमंद हो सकता है।

5 युद्ध परिणाम निर्णायक
युद्ध लंबा खिंचता है और जीत नहीं मिलती, तो नेतन्याहू की छवि को नुकसान होगा। लंबे गतिरोध से जनता का भरोसा डगमगाएगा और विपक्ष भी सरकार के खिलाफ माहौल बना सकता है।

प्रस्तुतिः अभिषेक मिश्र

डीटीसी बस वाले वे दोनों लड़के

डीटीसी की नारंगी क्लस्टर बस में चढ़ा। टर्मिनल से भरी आ रही इस बस में सबसे पीछे की सीट मिल गई। तब ही दो लड़के पिछले दरवाजे की सीढ़ियों पर आकर बैठ गए। जसोला-अपोलो बस स्टॉप पर कुछ और सवारियां चढ़ीं, लेकिन वे लड़के ज्यों के त्यों बैठे रहे। जब एक आदमी बस से उतरने के लिए उनके पीछे खड़ा हुआ, तब उन लड़कों ने उसे हड़काते हुए कहा, 'अबे उतरेगा क्या?'

लेकिन, उस आदमी ने तनते हुए कहा, 'क्या कह रहा बे?' वे उसकी बात सुनकर चुप, लेकिन आंखें गड़ाकर देखने लगे। आदमी के चेहरे पर डर का भाव तो न था, लेकिन वह चुप रहा। बस आगे बढ़ती जा रही थी। 'हरकेश नगर ओखला' स्टॉप पर कुछ और सवारियां चढ़ीं और उतरीं। बस रुकते ही, एक सवारी दौड़ती हुई आई और उन लड़कों से पूछा कि मेडिकल जाएगी? एक लड़के ने कहा, 'अबे नहीं जाएगी!' जब वह पीछे हटने लगा, तभी कंडक्टर ने कहा, 'हां जाएगी!' तब वह यात्री अंदर आया और उन लड़कों को डांटते हुए कहा, 'तू कंडक्टर है, कह रहा है बस नहीं जाएगी।' उनमें एक लड़का कुछ धूसर रंग का था, उम्र 15-16 के बीच होगी। उसके दांत साफ थे, कान में हूप्स पहना हुआ था। दूसरे लड़के की उम्र 20-23 के बीच होगी। उसके बाएं बाजू में जगह-जगह गहरे कट के निशान थे। लड़के के दांत मटमैले थे और रंग बिलकुल साफ।

खुद अपनी आंख से
सैयद परवेज

लाजपत नगर बस स्टॉप पर कुछ और सवारियां उतर गईं, तब मेरी बाईं ओर एक सीट खाली हो गई। कंडक्टर ने उन लड़कों से सीट पर बैठने के लिए कहा। बड़ा लड़का मेरी बगल वाली सीट पर आकर बैठ गया। बड़े लड़के से मैं कुछ खीझकर पूछा, फिर भी उससे पूछा कि तुम बदरपुर रहते हो? तो उसने कहा दक्षिणपुरी में। फिर कहा, 'सरजी मैं आपको जानता हूं। आपको बदरपुर के एक स्कूल में देखा है।' यह सुनकर मुझे कुछ राहत मिली। मैंने पूछा, 'क्या तुम्हारे मम्मी-पापा हैं?' 'सरजी सब हैं, लेकिन दुनिया बड़ी जालिम है, जीने नहीं देती है।'

उसने अपना सिर दिखाकर कहा कि इसमें डॉक्टरों ने गलत ऑपरेशन कर दिया था। मैंने उस चोट को देखने की चेष्टा नहीं की। फिर उसने मुझसे 50 रुपये मांगे। मैं 20 रुपये देने लगा तो उसने कहा कि इतने कम पैसे नहीं लेता। लेकिन, मैंने उसके हाथ में जबरदस्ती रख दिए।

दोनों मेडिकल वाले बस स्टॉप पर उतर गए। उनके उतरते ही कंडक्टर ने कहा, 'ये दोनों जेबकतरे थे। इनसे कौन बहस करे।' मेरी बाईं तरफ एक सीट छोड़कर एक आदमी बैठा था। मैंने उससे कहा, 'ये लड़के पहले ऐसे नहीं होंगे, जैसा हमने इन्हें देखा। किसी की परिस्थितियां उसे क्या से क्या बना देती हैं। जन्म से कोई बुरा या अच्छा नहीं होता। अच्छा और बुरा बनने में समय लगता है।'

चलते-चलते...

कारोलिंस्का इंस्टीट्यूट के वैज्ञानिकों ने एक नई जीन थिरेपी विकसित की है, जिससे कुछ ही हफ्तों में जन्मजात बहरेपन में सुधार हो सकता है। टेस्ट के दौरान एक से 24 वर्ष के मरीजों को इंजेक्शन से OTOF जीन थिरेपी दी गई। यह जीन सुनने के लिए जरूरी प्रोटीन बनाता है। सभी मरीजों में सुनने की क्षमता में सुधार देखा गया। शोध 'नेचर मेडिसिन' में प्रकाशित हुआ है।

EU संसद से FTA पास होने की उम्मीद

ग्लोबल ऑर्डर फिलहाल अस्थिर है। पूरी दुनिया विविध और नई साझेदारियां तलाश रही है। भारत और यूरोपीय संघ (EU) भी ऐसे ही साझेदार हैं। ऐसे तमाम मुद्दों पर यूरोपीय सांसदों के प्रतिनिधिमंडल की अध्यक्ष एंजेलिका निबलर से अल्पयू सिंह ने बात की।

सप्ताह का इंटरव्यू
एंजेलिका निबलर

■ मौजूदा वक्त में ग्लोबल डायनामिक्स बदल रहे हैं। भारत के संदर्भ में EU की क्या रणनीतिक सोच है?

भारत आने वाले वक्त में बड़ी शक्ति बनने वाला है। उसके पास विस्तृत कूटनीति पहुंच और नेटवर्क है। पश्चिम एशिया के संकट की ही बात करें तो भारत के ईरान, इस्राइल और खाड़ी देश - सभी के साथ नजदीकी संबंध हैं। जिन देशों के व्यापक तौर पर साझेदार हों, उनसे इंगेज करना फायदे का ही सौदा है। पश्चिम एशिया के संकट को कम करने बड़े लक्ष्यों में से है। पूरी दुनिया इससे जूझ रही है। इसे लेकर एक ग्लोबल अप्रोच जरूरी है। भारत और EU डिफेंस व सिक्योरिटी, दोनों में आगे बढ़ रहे हैं। यह विश्वसनीय साझेदारी की शुरुआत है।

■ फ्री ट्रेड एग्रीमेंट (FTA) पर दोनों पक्षों में उत्साह है, लेकिन सुर्खियों के नीचे क्या है?

EU संसद को इस करार को अभी मंजूरी देनी है। हम इसकी डिटेल्स का सावधानी से अध्ययन कर रहे हैं, क्योंकि इन्हीं ब्योरों में अक्सर बड़ी दिक्कतें छुपी होती हैं। हालांकि भारत आकर मुझे एक सकारात्मक नजरिया मिला। हमने दूसरे देशों के साथ भी FTA किया है। संसद में उन्हें लेकर मुश्किल हुई है। ईयू-MERCOSUR FTA को अभी तक संसद की मंजूरी नहीं मिली है, क्योंकि पूरे यूरोप के किसानों ने इस मसले पर विरोध प्रदर्शन किया था। हालांकि हमें नहीं लगता कि भारत के साथ करार को लेकर ऐसा कुछ देखने को मिलेगा। कृषि को इस समझौते से काफी हद तक बाहर रखा गया है। दोनों पक्षों के वार्ताकारों ने अच्छा काम किया है। हमें उम्मीद है कि इस साल के आखिर तक संसद से भारत-EU FTA पास हो जाएगा।

■ अमेरिका ने हाल में व्यापार और विदेश नीति पर जिस तरह के फैसले लिए, क्या उससे भारत और EU को गहरी राजनीतिक साझेदारी करने का मौका मिला है?

जहां तक व्यापार की बात है तो हर क्षेत्र के अपने हित हैं, लेकिन यूरोप हमेशा खुले और उदारवादी बाजार का समर्थक रहा है। द्विपक्षीय FTA की ही बात करें, तो यह दोनों पक्षों के लिए लाभकारी है। यह समृद्धि लाएगा और अगर ऐसा नहीं होता है, तो यह काम ही नहीं कर पाएगा।

■ दोनों पक्षों के बीच रूस संवेदनशील मुद्दा रहा है। EU ऐसे में भारत के साथ अपने संबंधों को लेकर किस तरह आगे बढ़ रहा है?

यूरोपीय यूनियन के लिए रूस का मुद्दा अहम है। यूक्रेन के साथ संघर्ष के मद्देनजर हम इसे लेकर दृढ़ हैं। समर्थन चाहे जैसा हो, सैन्य या राजनीतिक। हमने अपने नजरिए को भारत सरकार में अपने समकक्षों के सामने रखा है। हम जानते हैं कि रूस को लेकर भारत का अलग नजरिया है। दोनों देशों के बीच दीर्घकालिक संबंध रहे हैं। इन्हें एकदम से बदला नहीं जा सकता। लेकिन, हमें उम्मीद है कि भारत में हमारे साझेदार हमारे नजरिए को समझने की कोशिश करेंगे। रूस हमारे लिए ऐसा मुद्दा नहीं हो सकता, जिसके कारण भारत के साथ साझेदारी आगे न बढ़ पाए।

■ फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों ने कहा कि हमें यूक्रेन को दिए जा रहे सपोर्ट से बचना नहीं चाहिए। क्या यूरोप को ऐसा लगता है कि

पश्चिम एशिया में ट्रंप की भूमिका उन्हें यूक्रेन को सपोर्ट करने से दूर कर सकती है?

मौजूदा वक्त में कुछ भी निश्चित नहीं है, सब कुछ बदल रहा है। ऐसे में किसी भी तरह का आकलन करना थोड़ा मुश्किल है। लेकिन, पश्चिम एशिया में अभी केवल तनाव कम करने की जरूरत है। हर कोई सीजफायर के लिए कोशिश कर रहा है। रूस को भी सीजफायर कर शांति वार्ता में दाखिल होना चाहिए।

> **हमें नहीं लगता कि भारत के साथ FTA को लेकर कोई दिक्कत होगी। कृषि को इस समझौते से काफी हद तक बाहर रखा गया है। दोनों पक्षों के वार्ताकारों ने अच्छा काम किया है। हमें लगता है कि यह एक अच्छा समझौता है।**

■ बहुपक्षीय संस्थाओं में बदलाव भारत जैसे ग्लोबल साउथ के देशों का एक समावेशी एजेंडा रहा है। आप इसे कैसे देखती हैं?

अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं में बहुपक्षवाद की बात हो रही है। हम रूल बेस्ड ऑर्डर में विश्वास करते हैं। जब तक हमारे पास कोई दूसरा रूल बेस्ड ऑर्डर नहीं है, तब तक इन संस्थाओं पर से विश्वास उठने का कोई कारण नहीं। WTO हो या UN, अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं को भी देखना होगा कि वे इन नए बदलावों को किस तरह खुद में समाहित करती हैं। उन्हें भी बदलाव करना होगा। अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं अच्छे मकसद के लिए आई थीं, लेकिन नई दुनिया में नए बदलावों को देखना होगा।

■ जियो-पॉलिटिक्स, तकनीकी या आर्थिक तौर पर EU-भारत संबंधों को आने वाले 10 बरसों में कहां देखती हैं?

EU और भारत एक-दूसरे को गहराई से समझ रहे हैं, साथ आ रहे हैं। महज FTA की बात नहीं, दोनों देशों की संसद भी इंगेज कर रही हैं। दोनों में कई समानताएं हैं। भारत की शक्ल में यूरोपीय यूनियन एक विश्वसनीय साझेदार तलाश रही है।

रीडर्स मेल

बंगाल में चुनौती
3 अप्रैल का संपादकीय 'लोकतंत्र के लिए चुनौती' पढ़ा। पश्चिमी बंगाल के मालदा में लॉ ऐंड ऑर्डर की धज्जियां उड़ाते हुए जिस तरह न्यायिक अधिकारियों को घंटों बंधक बनाकर रखा गया, वह चिंताजनक है। इससे भी ज्यादा निराशा इस बात से हुई कि पुलिस-प्रशासन ने ज्यादा सक्रियता नहीं दिखाई। एक राज्य के विधानसभा चुनाव के लिए सुप्रीम कोर्ट का इस तरह चिंतित होना सामान्य नहीं है। राज्य में कानून-व्यवस्था की स्थिति लंबे समय से खराब बताई जा रही है। पहले भी चुनाव ड्यूटी में लगे अफसरों-कर्मचारियों को असहज स्थिति का सामना करना पड़ा है। निष्पक्ष चुनाव तभी हो सकता है, जब अराजक तत्वों में कानून का खौफ हो। राजनीतिक दलों को सफल चुनाव के लिए सहयोग करना चाहिए। साथ ही, SIR से जुड़ी आमलोगों की चिंताओं का भी ख्याल रखना होगा और समाधान तलाशना चाहिए।
गैलेक्सी धिगान, ई मेल से

जिद छोड़ें ट्रंप
यह पत्र 3 अप्रैल के लेख 'मुंगेरीलाल जैसे हैं ट्रंप के सपने' से संबंधित है। डॉनल्ड ट्रंप ने ईरान को पाषाण युग में पहुंचाने की धमकी दी है। उनकी इस सोच से तो कभी शांति नहीं आएगी। अमेरिका के साथ-साथ ईरान को भी समझौते की मेज पर आना होगा। अगर दोनों पक्ष जल्द ही किसी समझौते पर नहीं पहुंचते हैं, तो उन्हें इसकी भारी कीमत चुकानी होगी। ट्रंप की जिद का अंजाम पूरी दुनिया को भुगतना पड़ रहा है। युद्ध कितना विनाशकारी हो सकता है, इतिहास इसके उदाहरणों से भरा पड़ा है। खुद अमेरिका कई बार जंग में फंसकर भारी नुकसान उठा चुका है। ट्रंप को कम से कम अपने देश के इतिहास से ही सबक लेना चाहिए था। वह जितनी जल्दी शांति की अहमियत समझते हैं, वही सबके लिए अच्छा होगा।
राजेश कुमार चौहान, ईमेल से

आर.एन.आई. नं. 510/57 बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के लिए ... द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित। संपादक ... (पीआरपी अधिनियम के तहत खबरों के चयन के लिए जिम्मेदार) ...

किसी भी चीज को कुरूप मत कहो, सिवा उस भय के, जिसकी मारी कोई आत्मा खुद अपनी स्मृति से डरने लगे।

– खलील जिब्रान

समाधान की राह

इससे बड़ी विडंबना और क्या होगी कि पश्चिम एशिया में युद्ध ईरान और इजराइल-अमेरिका के बीच हो रहा है, लेकिन उसकी मार वैसे देशों को भी झेलनी पड़ रही है, जो किसी भी रूप में जंग में शामिल नहीं हैं। कई देशों में अब हालत यह है कि वहां तेल और गैस की कमी की वजह से आम जनजीवन बुरी तरह प्रभावित होने लगा है। भारत भी उन देशों में से एक है, जहां कच्चे तेल और प्राकृतिक गैस की आपूर्ति बाधित होने के कारण आम लोगों को कई तरह की मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है। खासतौर पर जब से ईरान ने होर्मुज जलमार्ग को बाधित किया है, तब से कई देशों में कच्चे तेल और गैस की आपूर्ति पर व्यापक असर पड़ा है। भारत में रसोई गैस सिलेंडर की उपलब्धता भी काफी प्रभावित हुई है। यह स्थिति मुख्य रूप से होर्मुज जलमार्ग को रोके जाने के कारण सामने आई है और इसमें तभी राहत मिल सकती है, जब ईरान इस मार्ग को फिर से खोले। यों वैश्विक स्तर पर यह चिंता गहरा रही है कि अगर होर्मुज जलमार्ग को इसी तरह बाधित करके रखा गया, तो आने वाले दिनों में स्थितियां और बिगड़ सकती हैं।

शायद यही वजह है कि पश्चिम एशिया के इस संकट का हल निकालने की कोशिश के तहत ब्रिटेन की पहल पर साठ से ज्यादा देशों की बैठक हुई, जिसमें होर्मुज जलमार्ग को फिर से खोलने और फंसे हुए जहाजों तथा चालक दल की सुरक्षा सुनिश्चित करने की मांग की गई। इसके तहत अंतरराष्ट्रीय जलमार्गों में बिना बाधा के जहाजों की आवाजाही की अहमियत को रेखांकित किया गया, क्योंकि आज के दौर में समूची दुनिया में तेल और रसोई गैस लोगों के जीवन के सबसे अहम आधार बन चुके हैं। वहीं होर्मुज जलमार्ग के बाधित होने के बाद से ही जिस तरह का ऊर्जा संकट गहराता जा रहा है, उसका भारत पर भी सीधा असर पड़ा है। जाहिर है, अन्य कई देशों की तरह भारत भी इस प्रयास में है कि जितना जल्दी हो, इस संकट का हल निकले और होर्मुज जलमार्ग को खोला जाए। बैठक में भारत ने साफ शब्दों में कहा कि युद्ध खत्म करने के लिए तनाव कम करने और सभी पक्षों के बीच संवाद के रास्ते पर लौटने की जरूरत है।

यों भी, आज के दौर में कोई भी युद्ध सिर्फ उन देशों को प्रभावित नहीं करता, जिनके बीच वह लड़ा जा रहा होता है। अब यह वैश्विक चिंता का सवाल बन चुका है कि इजराइल और अमेरिका के साझा हमले के बाद ईरान ने रणनीतिक मोर्चे पर जो रुख अख्तियार किया है, उसका खमियाजा अब दुनिया के कई देशों को भुगतना पड़ रहा है। संभव है कि अमेरिका और इजराइल को जवाब देने के लिए ईरान ने हमलों के अन्य मोर्चों के साथ-साथ होर्मुज जलमार्ग को बाधित किया हो, लेकिन जो देश इस युद्ध में किसी भी पक्ष में नहीं हैं, अगर उन्हें इसकी मार झेलनी पड़ रही है, बड़े पैमाने पर आम लोगों की रोजमर्रा की जिंदगी पर विपरीत असर पड़ रहा है, तो इसे कैसे देखा जाएगा। विडंबना यह है कि ईरान और इजराइल-अमेरिका के बीच जारी युद्ध में संवाद को लेकर फिलहाल किसी भी पक्ष में कोई उत्साह नहीं दिख रहा है। मगर कूटनीतिक तकाजे के साथ-साथ मानवीय पहलू से भी देखें, तो होर्मुज जलमार्ग को तत्काल खोलने की जरूरत है, अन्यथा वैश्विक पैमाने पर जिस तरह का ऊर्जा संकट खड़ा होगा, उसकी भरपाई लंबे समय तक नहीं की जा सकेगी।

आपराधिक लापरवाही

उत्तर प्रदेश में अयोध्या जिले के फैजाबाद स्थित एक निजी अस्पताल में अप्रशिक्षित कर्मचारियों द्वारा प्रसव कराए जाने के बाद महिला और उसके नवजात शिशु की मौत की घटना ने स्वास्थ्य सेवाओं एवं सुरक्षा पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। खबरों के मुताबिक, घटना के वक्त संबंधित डाक्टर अस्पताल में मौजूद नहीं थीं और फोन पर ही कर्मचारियों को दिशा-निर्देश दे रही थीं। सवाल है कि कोई भी चिकित्सक किसी मरीज या गर्भवती महिला की जान के साथ ऐसा खिलवाड़ कैसे कर सकता है? क्या किसी चिकित्सक को प्रसव के दौरान होने वाली जटिलता और जोखिम का अंदाजा नहीं होता है? यह अत्यंत गंभीर लापरवाही है कि अस्पताल में विशेषज्ञ चिकित्सक की वैकल्पिक व्यवस्था के बिना ही फोन पर दिशा-निर्देश लेकर एक महिला का प्रसव कराया गया। विचित्र यह भी है कि जब संबंधित अस्पताल में कोई विशेषज्ञ डाक्टर मौजूद नहीं था, तो गर्भवती महिला को नियमानुसार किसी दूसरे अस्पताल में क्यों नहीं भेजा गया?

गौरतलब है कि अस्पतालों में इस तरह नियम-कायदों को ताक पर रखकर मरीजों की जान जोखिम में डालने के मामले अक्सर सामने आते रहते हैं। कई बार तो मरीज की जान तक चली जाती है, लेकिन कार्रवाई के नाम पर महज खानापूर्ति ही की जाती है। इस मामले में भी शिकायत के बाद स्वास्थ्य विभाग ने संबंधित निजी अस्पताल को सील कर दिया है और मृतका के परिजनों को जांच का आश्वासन दिया है। विभागीय अधिकारियों का कहना है कि जांच में लापरवाही साबित होने पर पुलिस प्राथमिकी दर्ज की जाएगी। सरकारी स्तर पर दावा किया जाता है कि देश में स्वास्थ्य के बुनियादी ढांचे और सुविधाओं में काफी प्रगति हुई है, लेकिन क्या फोन पर अप्रशिक्षित कर्मियों को दिशा-निर्देश देकर किसी महिला का प्रसव कराने के जोखिम को तरक्की कहा जा सकता है! असली प्रगति तो तभी होगी, जब आधुनिक सुविधाओं के साथ-साथ चिकित्सकों और उनके सहकर्मियों को अपने कर्तव्य के प्रति जिम्मेदार, संवेदनशील और जवाबदेह बनाया जाएगा। बहरहाल, उम्मीद की जानी चाहिए कि फैजाबाद के मामले में निष्पक्ष एवं गहन जांच की जाएगी और लापरवाही बरतने के दोषियों को कानून के कठघरे में लाया जाएगा।

गहराते जल संकट का फैलता दायरा

भारत में पानी का संकट अब भविष्य की चेतावनी नहीं, वर्तमान की कठोर सच्चाई है। देश के अनेक हिस्सों में भूजल स्तर नीचे जा चुका है। शहरों की जल आपूर्ति व्यवस्था दबाव में है। दूसरी ओर, प्रकृति की अपनी सीमाएं हैं।

अलका 'सोनी'

हम सभी यह सुनते और जानते हुए बड़े हुए हैं कि जल है तो जीवन है। इसके बावजूद जल का अपव्यय करते हैं। जिस गति से संचय करने की बात की जाती है, उससे कई गुना पानी की बर्बादी होती है। कहीं भी सड़कों पर पानी बहते हुए देखा जा सकता है। यही कारण है कि भारत में जल संकट अब भविष्य की चेतावनी नहीं, वर्तमान की कठोर सच्चाई है। देश के अनेक हिस्सों में भूजल स्तर नीचे जा चुका है, नदियां प्रदूषण से बेहाल हैं। शहरों की जल आपूर्ति व्यवस्था दबाव में है। लोग पानी के लिए घंटों इंतजार में खड़े रहते हैं। जलवायु परिवर्तन ने वर्षा को भी इतना अनिश्चित बना दिया है कि कहीं बाढ़ और कहीं सूखा एक साथ दिखाई देता है। समस्या केवल पानी की कमी की नहीं है, असली संकट यह है कि प्रकृति की अपनी सीमाएं हैं। जल संचय के लिए बनी नीतियों की धीमी गति और समाज के असंतुलित जल-व्यवहार के बीच आज भारत बुरी तरह उलझता जा रहा है।

भारत में जल संकट इसलिए भी जटिल है, क्योंकि यहां पानी का सवाल सिर्फ पर्यावरण का नहीं, बल्कि कृषि, स्वास्थ्य, शहरीकरण, सामाजिक न्याय और शासन-व्यवस्था सबसे जुड़ा है। भूजल पर भारत की निर्भरता बहुत गहरी है। केंद्रीय भूजल बोर्ड और सरकार द्वारा जारी नवीनतम आकलन के अनुसार, वर्ष 2025 में देश की कुल वार्षिक भूजल पुनर्भरण क्षमता 448.52 बिलियन क्यूबिक मीटर आंकी गई, जबकि वार्षिक निकासी 247.22 बिलियन क्यूबिक मीटर रही। पहली नजर में यह संतुलित लग सकता है, लेकिन सच यह है कि राष्ट्रीय औसत के भीतर क्षेत्रीय असंतुलन छिपा हुआ है। कई इलाके ऐसे हैं जहां निकासी सुरक्षित सीमा के आसपास या उससे ऊपर है, जबकि दूसरे क्षेत्रों में संसाधन अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति में हैं। यही वजह है कि जल संकट पूरे देश में एक समान नहीं, बल्कि कई रूप में सामने आता है।

इसमें दोराय नहीं कि बांध, नहर, पाइपलाइन और बोरवेल आवश्यक हैं, लेकिन वे अकेले समाधान नहीं हैं। अब जरूरत इस बात की है कि जल नीति आपूर्ति बढ़ाने से आगे बढ़ कर मांग-प्रबंधन, जल गुणवत्ता, पुनर्भरण, पुनर्चक्रण और स्थानीय जल शासन पर जोर दे। इसी संदर्भ में राष्ट्रीय जल नीति में संशोधन की चर्चा महत्त्वपूर्ण हो जाती है। लंबे समय से यह महसूस किया जा रहा है कि वर्ष 2012 में अद्यतन हुई नीति अब मौजूदा चुनौतियों के लिए पर्याप्त नहीं है। जल संसाधन मंत्रालय के दस्तावेजों में भी यह स्वीकार किया गया है कि कम जल-उपयोग दक्षता, भूजल पर बढ़ता दबाव, जलवायु परिवर्तन, अपशिष्ट जल के दोबारा उपयोग और फसल-पद्धति जैसे मुद्दों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय जल नीति के पुनरीक्षण की जरूरत पड़ी। मिहिर शाह समिति इसी उद्देश्य से गठित की गई थी।

बुनियादी सवाल यह है कि जब संकट इतना स्पष्ट है, तो सुधार की गति इतनी धीमी क्यों है! इसका उत्तर भारत की संघीय संरचना और जल शासन की जटिलता में छिपा है। जल राज्यों का विषय है। केंद्र दिशा दे सकता है, योजनाएं बना सकता है, वित्तीय सहायता दे सकता है, पर वास्तविक क्रियान्वयन राज्यों, स्थानीय निकायों और विभागीय तंत्र के माध्यम से ही होता है। यही कारण है कि राष्ट्रीय स्तर पर अच्छी नीयत से बनाई गई नीतियां भी जमीन तक पहुंचते-पहुंचते धीमी पड़ जाती हैं। ऊपर से पानी का प्रश्न राजनीतिक रूप से संवेदनशील भी है। मुफ्त या सस्ती बिजली, सिंचाई, शहरी जलापूर्ति, उद्योगों की जरूरतें और राज्यों के जल विवाद ये सब मिल कर निर्णय को कठिन बना देते हैं।

> **भारत में जल संकट इसलिए भी जटिल है, क्योंकि यहां पानी का सवाल सिर्फ पर्यावरण का नहीं, बल्कि कृषि, स्वास्थ्य, शहरीकरण, सामाजिक न्याय और शासन-व्यवस्था सबसे जुड़ा है। भूजल पर की निर्भरता बहुत गहरी है। केंद्रीय भूजल बोर्ड और सरकार द्वारा जारी नवीनतम आकलन के अनुसार, वर्ष 2025 में देश की कुल वार्षिक भू-जल पुनर्भरण क्षमता 448.52 बिलियन क्यूबिक मीटर आंकी गई, जबकि वार्षिक निकासी 247.22 बिलियन क्यूबिक मीटर रही। पहली नजर में यह संतुलित लग सकता है, लेकिन सच यह है कि राष्ट्रीय औसत के भीतर क्षेत्रीय असंतुलन छिपा हुआ है।**

कृषि इस बहस के केंद्र में है, क्योंकि भारत में जल उपयोग का सबसे बड़ा हिस्सा इसी क्षेत्र में होता है। मगर कृषि को दोष देकर समस्या हल नहीं होगी। असल बात यह है कि दशकों से नीतिगत ढांचा ही ऐसे फसल को बढ़ावा देता रहा है जो कई क्षेत्रों में जल-उपलब्धता के अनुकूल नहीं हैं। जहां पानी सीमित है, वहां भी धान या गन्ने जैसी फसलों की खेती जारी रहती है, जिसमें पानी की अधिक जरूरत होती है। इस परिस्थिति में यदि जल संरक्षण की बात की जाए, तो किसानों को विकल्प, तकनीक, सिंचाई, बाजार और मूल्य का आश्वासन भी देना होगा। समस्या का दूसरा बड़ा कारण जल गुणवत्ता है। कई बार पानी उपलब्ध होता है, पर सुरक्षित नहीं होता। केंद्रीय भूजल बोर्ड की 2025 की वार्षिक भू-जल गुणवत्ता रपट और संसद में सरकार द्वारा साझा जानकारी बताती है कि परीक्षण के लिए एकत्रित 28.3 फीसद नमूनों में नाइट्रेट, फ्लोराइड और आर्सेनिक जैसी समस्याएं अभी भी गंभीर हैं। दिसंबर 2025 में साझा आंकड़ों के अनुसार 2024 के नमूनों में 3,415 में से 123 नमूनों में आर्सेनिक और 2,537 में से 24 नमूनों में सीसा अनुमेय सीमा से अधिक पाया गया। इसका मतलब साफ है कि भारत की जल समस्या केवल 'कितना पानी है' का प्रश्न नहीं, बल्कि 'कैसा पानी है' का भी प्रश्न है।

शहरी भारत में भी स्थिति कम चिंताजनक नहीं है। तेजी से बढ़ते शहरों ने अपने स्थानीय जलस्रोतों जैसे तालाबों, झीलों, नालों और जलग्रहण क्षेत्रों को या तो पाट दिया है या उपेक्षित छोड़ दिया है। नतीजा यह हुआ कि शहर अब दूरदराज के स्रोतों, गहरे बोरवेल और टैंकरों पर निर्भर होते गए। यह व्यवस्था महंगी है और असमान भी। धनाढ्य इलाके में लोग पानी खरीद लेते हैं, लेकिन गरीब बस्तियां अनिश्चित आपूर्ति पर निर्भर रहती हैं। शहरों में सीवर और औद्योगिक अपशिष्ट का पर्याप्त शोधन न होने के कारण सतही जल स्रोत और भूजल दोनों प्रभावित होते हैं। यानी शहर अपने लिए पानी खींचते भी हैं और उसे प्रदूषित भी करते हैं। यह दोहरा दबाव भविष्य की शहरी जल सुरक्षा को और अधिक नाजुक बनाता है।

ग्रामीण भारत में तस्वीर अलग होते हुए भी उतनी ही गंभीर है। पिछले कुछ वर्षों में जल जीवन मिशन ने ग्रामीण पेयजल आपूर्ति के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। जनवरी 2026 के आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, मिशन के तहत 81.57 फीसद से अधिक ग्रामीण परिवारों को नल से जल दिया जा चुका है। यह उपलब्धि छोटी नहीं है। वर्ष 2019 में जहां केवल सीमित हिस्से तक नल-जल पहुंचा था, वहीं अब स्थिति काफी बदली है। मगर चुनौती यहीं समाप्त नहीं होती। पाइप के जरिए पानी देना एक बात है, नियमित, पर्याप्त और सुरक्षित जल आपूर्ति सुनिश्चित करना दूसरी बात है। कार्यक्षमता आकलन रपट भी इस बात की ओर संकेत करती है कि 'कनेक्शन' और 'भरोसेमंद सेवा' में फर्क है।

यही वह बिंदु है जहां समाज की भूमिका बहुत अहम हो जाती है। भारत में पानी को अब भी असीमित संसाधन की तरह बरतने की प्रवृत्ति व्यापक है। घरों में अपव्यय, कालोनियों में वर्षाजल संचयन की उपेक्षा, भूजल के अनियंत्रित दोहन और स्थानीय जलस्रोतों के प्रति उदासीनता ये सब मिल कर संकट को गहरा करते हैं। दूसरी ओर, यही समाज समाधान का आधार भी बन सकता है। जहां पंचायतें, मोहल्ले, किसान समूह, स्वयंसेवी संस्थाएं और स्थानीय प्रशासन मिल कर जलस्रोतों के पुनर्जीवन, तालाबों की मरम्मत और फसलों के विविधीकरण जैसे उपाय करते हैं, वहां परिणाम अधिक टिकाऊ दिखते हैं। नीतियां तभी सफल होती हैं, जब समाज उसे अपना कार्यक्रम समझे, केवल सरकारी योजना नहीं। हाल के वर्षों में जल बजट पर भी जोर बढ़ा है, जो इस दिशा में उपयोगी कदम हो सकते हैं।

असल बात यह है कि दशकों से नीतिगत ढांचा ही ऐसे फसल को बढ़ावा देता रहा है जो कई क्षेत्रों में जल-उपलब्धता के अनुकूल नहीं हैं। जहां पानी सीमित है, वहां भी धान या गन्ने जैसी फसलों की खेती जारी रहती है, जिसमें पानी की अधिक जरूरत होती है। इस परिस्थिति में यदि जल संरक्षण की बात की जाए, तो किसानों को विकल्प, तकनीक, सिंचाई, बाजार और मूल्य का आश्वासन भी देना होगा। समस्या का दूसरा बड़ा कारण जल गुणवत्ता है। कई बार पानी उपलब्ध होता है, पर सुरक्षित नहीं होता। केंद्रीय भूजल बोर्ड की 2025 की वार्षिक भू-जल गुणवत्ता रपट और संसद में सरकार द्वारा साझा जानकारी बताती है कि परीक्षण के लिए एकत्रित 28.3 फीसद नमूनों में नाइट्रेट, फ्लोराइड और आर्सेनिक जैसी समस्याएं अभी भी गंभीर हैं। दिसंबर 2025 में साझा आंकड़ों के अनुसार 2024 के नमूनों में 3,415 में से 123 नमूनों में आर्सेनिक और 2,537 में से 24 नमूनों में सीसा अनुमेय सीमा से अधिक पाया गया। इसका मतलब साफ है कि भारत की जल समस्या केवल 'कितना पानी है' का प्रश्न नहीं, बल्कि 'कैसा पानी है' का भी प्रश्न है।

शहरी भारत में भी स्थिति कम चिंताजनक नहीं है। तेजी से बढ़ते शहरों ने अपने स्थानीय जलस्रोतों जैसे तालाबों, झीलों, नालों और जलग्रहण क्षेत्रों को या तो पाट दिया है या उपेक्षित छोड़ दिया है। नतीजा यह हुआ कि शहर अब दूरदराज के स्रोतों, गहरे बोरवेल और टैंकरों पर निर्भर होते गए। यह व्यवस्था महंगी है और असमान भी। धनाढ्य इलाके में लोग पानी खरीद लेते हैं, लेकिन गरीब बस्तियां अनिश्चित आपूर्ति पर निर्भर रहती हैं। शहरों में सीवर और औद्योगिक अपशिष्ट का पर्याप्त शोधन न होने के कारण सतही जल स्रोत और भूजल दोनों प्रभावित होते हैं। यानी शहर अपने लिए पानी खींचते भी हैं और उसे प्रदूषित भी करते हैं। यह दोहरा दबाव भविष्य की शहरी जल सुरक्षा को और अधिक नाजुक बनाता है।

ग्रामीण भारत में तस्वीर अलग होते हुए भी उतनी ही गंभीर है। पिछले कुछ वर्षों में जल जीवन मिशन ने ग्रामीण पेयजल आपूर्ति के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। जनवरी 2026 के आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, मिशन के तहत 81.57 फीसद से अधिक ग्रामीण परिवारों को नल से जल दिया जा चुका है। यह उपलब्धि छोटी नहीं है। वर्ष 2019 में जहां केवल सीमित हिस्से तक नल-जल पहुंचा था, वहीं अब स्थिति काफी बदली है। मगर चुनौती यहीं समाप्त नहीं होती। पाइप के जरिए पानी देना एक बात है, नियमित, पर्याप्त और सुरक्षित जल आपूर्ति सुनिश्चित करना दूसरी बात है। कार्यक्षमता आकलन रपट भी इस बात की ओर संकेत करती है कि 'कनेक्शन' और 'भरोसेमंद सेवा' में फर्क है।

यही वह बिंदु है जहां समाज की भूमिका बहुत अहम हो जाती है। भारत में पानी को अब भी असीमित संसाधन की तरह बरतने की प्रवृत्ति व्यापक है। घरों में अपव्यय, कालोनियों में वर्षाजल संचयन की उपेक्षा, भूजल के अनियंत्रित दोहन और स्थानीय जलस्रोतों के प्रति उदासीनता ये सब मिल कर संकट को गहरा करते हैं। दूसरी ओर, यही समाज समाधान का आधार भी बन सकता है। जहां पंचायतें, मोहल्ले, किसान समूह, स्वयंसेवी संस्थाएं और स्थानीय प्रशासन मिल कर जलस्रोतों के पुनर्जीवन, तालाबों की मरम्मत और फसलों के विविधीकरण जैसे उपाय करते हैं, वहां परिणाम अधिक टिकाऊ दिखते हैं। नीतियां तभी सफल होती हैं, जब समाज उसे अपना कार्यक्रम समझे, केवल सरकारी योजना नहीं। हाल के वर्षों में जल बजट पर भी जोर बढ़ा है, जो इस दिशा में उपयोगी कदम हो सकते हैं।

शांति का पाठ

रितुप्रिया शर्मा

मानव जीवन संघर्ष, प्रेम, शांति, इच्छाशक्ति और दृढ़संकल्प का एक अनूठा उदाहरण है। मनुष्य की मनुष्यता इसी में है कि वह बिना किसी भय के, बिना किसी को नुकसान पहुंचाए अपना जीवन जी सके और दूसरे को भी जीने दे। मगर आज की संस्कृति में अशांति के तत्त्व की प्रधानता होती जा रही है। न तो मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन में कहीं शांति है, न ही राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कहीं शांति की किरण नजर आती है। हर तरफ संघर्ष का शोर सुनाई देता है। युद्ध और टकराव को ही सबसे आखिरी हल मान लिया गया है। जबकि वास्तविकता यह है कि किसी भी प्रश्न या समस्या का समाधान शांति ही है। शांति कोई असाधारण या अप्राप्य बात नहीं है। यह बहुत साधारण है, लेकिन इसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य को अपने आप में धीरज, प्रेम और भाईचारे के भाव को उत्पन्न करना होता है। मनुष्य की ईर्ष्या ही उसके इन भावों को बाहर आने से रोकती है और धीरे-धीरे न केवल वह खुद की शांति भंग करता है, बल्कि अपने आसपास की भी शांति को भंग करने लगता है। तात्कालिक तौर पर उसे जरूर लग सकता है कि अपनी मर्जी से वह जो कर रहा है, उससे उसे शांति मिल रही है, लेकिन वही वास्तव में उसके जीवन की अशांति का प्रबंध भी हो सकता है। यह ध्यान रखने की जरूरत होती है कि अगर किसी मोहल्ले में आग लगती है, तो उसकी आंच और आग हमारे दरवाजे तक कभी भी आ सकती है।

दुनिया में जितने भी धर्म हैं, उन सबने शांति का ही पाठ पढ़ाया है और यह एक ऐसा पाठ है, जो अहिंसा के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है। गांधी से लेकर नेल्सन मंडेला तक, गौतम बुद्ध से लेकर महावीर स्वामी तक, यहां तक कि कलिंग युद्ध के बाद महान सम्राट अशोक ने भी शांति के मार्ग को ही अपनाया। युद्ध, पीड़ा, लालसा, सब कुछ प्राप्त करने की होड़ मनुष्य को सही राह पर लेकर नहीं जाती, बल्कि इसके उलट उसे विनाश के कगार पर ले जाने में सक्षम है। सवाल है कि शांति की इस स्थापित अहमियत और बड़े-बड़े प्रतीक महापुरुषों की शांति के लिए वकालत के बावजूद आज मनुष्य शांति के बजाय युद्ध को लेकर इतना उतावला क्यों रहता है।

आज विश्व जिन आफतों से जूझ रहा है, ये सभी तकलीफें मनुष्य की ही निमंत्रित की हुई हैं। अपने आप को श्रेष्ठ कहलवाना, शक्ति को सर्वेसर्वा बना देना, मनुष्य को मनुष्य न समझकर उनकी जान की कोई कीमत नहीं आंकना, ये सभी बातें मनुष्यता के खिलाफ हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध से आज तक अनेक युद्ध लड़े गए, देशों ने हथियारों का विकास किया। इसमें आणविक हथियार भी शामिल थे, लेकिन डर अब इस बात का हो गया है कि कहीं कोई परमाणु शक्ति से संपन्न देश किसी अन्य देश के खिलाफ इनका इस्तेमाल न कर दे। बहुत सारे देशों ने परमाणु निरस्त्रीकरण के लिए समझौते पर हस्ताक्षर किया हुआ है। इसके बावजूद परमाणु हथियार बनाने की होड़ बदस्तूर जारी है।

बड़े राष्ट्रों के डर से छोटे राष्ट्र भी अपने आप को परमाणु शक्ति संपन्न बनाने में जुटे हुए हैं। बड़े राष्ट्रों का कहना है कि वे किसी अन्य राष्ट्र को परमाणु हथियार नहीं बनाने देंगे। वहीं छोटे राष्ट्र अपने बचाव के लिए अपने आपको परमाणु शक्ति संपन्न बनाना चाहते हैं और यहीं से शुरू होती है विश्व में हथियारों की होड़, अशांति का माहौल और आम जनता की पीड़ा। अमेरिका-इजराइल और ईरान के बीच युद्ध इसी बात को उजागर करता है कि कमजोर अपने आपको मजबूत बनाना चाहता है और मजबूत अपने से कमजोर लोगों को मजबूत बनते हुए नहीं देखना चाहता। यह बात सही है कि परमाणु ऊर्जा का सदुपयोग होना चाहिए, न कि हथियारों की होड़ में इसका उपयोग हो, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हम किसी संप्रभु राष्ट्र पर आक्रमण कर दें। ये मुद्दे शांति और भाईचारे से भी सुलझाए जा सकते हैं। बड़े राष्ट्रों को चाहिए कि वे छोटे देशों को आश्वस्त करें कि वे कभी भी उन पर आक्रमण नहीं करेंगे और उनको अपनी सुरक्षा के लिए आणविक हथियारों की ओर जाने की जरूरत नहीं पड़ेगी। जापान के हिरोशिमा-नागासाकी शहरों पर परमाणु बम गिराने से उपजी त्रासदी का उदाहरण हमारे सामने है, जिसका प्रभाव आज भी देखने को मिलता है। क्या हम यह चाहते हैं कि हमारे विश्व की वही स्थिति हो, जो उस वक्त हुई थी?

दुनिया मेरे आगे

> **आज विश्व जिन आफतों से जूझ रहा है, ये सभी तकलीफें मनुष्य की ही निमंत्रित की हुई हैं। अपने आप को श्रेष्ठ कहलवाना, शक्ति को सर्वेसर्वा बना देना, मनुष्य को मनुष्य न समझकर उनकी जान की कोई कीमत नहीं आंकना, ये सभी बातें मनुष्यता के खिलाफ हैं।**

हममें से कोई भी यह नहीं चाहता कि विश्व में अशांति और असुरक्षा का माहौल पनपे और लगातार युद्धों की राजनीति में राष्ट्र अपने आपको झोंक दें। इससे न केवल समय और धन नष्ट होता है, बल्कि लोगों की जिंदगी अस्त-व्यस्त हो जाती है। वर्षों से पाया हुआ राष्ट्रीय मुकाम धराशायी हो सकता है। हमें चाहिए कि हम अपनी लालसा को नियंत्रित करें, चाहे वह व्यक्तिगत रूप से हो या राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर। हमें अपने अंदर की इस कमी को दूर करना ही होगा। वरना भविष्य में मनुष्य जाति के सामने संकट और ज्यादा बड़ा हो सकता है। आने वाली पीढ़ियों को हम ऐसा जीवन देकर जाएंगे, जो संसाधनविहीन होगा और उनकी प्रगति के सारे रास्ते बंद हो जाएंगे। इसलिए हमें चाहिए कि हम व्यक्तिगत स्तर पर आपसी संघर्ष से और राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर गृहयुद्धों और महायुद्धों से दूर रहें, ताकि सभी लोग मिल-जुलकर तरक्की कर सकें और विश्व को शांति रूपी समाधान दे सकें।

गणना का आधार

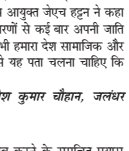

हमारे देश में राष्ट्रीय जनगणना होने जा रही है। इसके आंकड़े से सरकार को योजनाएं बनाने में आसानी रहती है। वैसे तो जनगणना लगभग हर दस वर्ष बाद होती है, लेकिन वैश्विक महामारी कोरोना के कारण यह कुछ समय के लिए टाल दी गई। अब जब यह गणना हो रही है, तो नागरिकों को अपनी सही जानकारी देनी चाहिए, क्योंकि गलत जानकारी देने से हम सरकार की उन योजनाओं से वंचित रह सकते हैं, जो हमारे लिए बनाई जाएंगी। इस बार केंद्र सरकार ने जातिगत जनगणना को भी हरी झंडी दी है। इस फैसले पर सभी के अपने अपने विचार हो सकते हैं, हो सकता है कि विपक्ष सरकार के इस फैसले पर अमल को लेकर सवाल करे। वैसे वर्ष 1931 की जनगणना के समय आयुक्त जेएच हटन ने कहा था कि सही-सही जातीय गणना मुश्किल है, क्योंकि लोग किन्हीं कारणों से कई बार अपनी जाति कुछ और लिखवा देते हैं। निराशाजनक ही है कि इक्कीसवीं सदी में भी हमारा देश सामाजिक और राजनीतिक दायरे के गैरजरूरी जाल में उलझा हुआ है। जनगणना से यह पता चलना चाहिए कि कितने लोग गरीबी की जिंदगी जीने को बेबस हैं।

– राजेश कुमार चौहान, जलंधर

सबक के बजाय

'भगदड़ का सबक' (संपादकीय, 1 अप्रैल) पढ़ा। हमारे देश में किसी भी आयोजन में लोग बड़ी संख्या में जुट जाते हैं। भले ही वहां कोई अनहोनी होने की संभावना हो। किसी स्थल पर भीड़ जुट रही है, तो स्थानीय प्रशासन को भीड़-प्रबंधन पहले से करना चाहिए। मगर हर बार लापरवाही नजर आती है। बिहार के नालंदा जिले के शीतला माता मंदिर में मची भगदड़ भीड़-प्रबंधन के उचित उपाय नहीं किए जाने का ही परिणाम है। भीड़ को काबू करने के समुचित प्रयास वहां किए जाते और पर्याप्त संख्या में सुरक्षाकर्मियों की ड्यूटी लगाई गई होती, तो हादसा टाला जा सकता था। पिछले दो वर्षों में भगदड़ मचने की घटनाएं भीड़-प्रबंधन में नाकामियों की वजह से ही हुई हैं। ऐसे में आम लोगों को संयम और अनुशासन बनाए रखना चाहिए। आयोजकों के साथ स्थानीय प्रशासन भी जिम्मेदारियां निभाएं, तो भी भगदड़ को टाला जा सकता है।

– नरेश कानूनगो 'शोभना', देवास

आत्मनिर्भरता का तकाजा

'ऊर्जा सुरक्षा नीति पर मंथन का समय' (लेख, 1 अप्रैल) पढ़ा। इस पर वैचारिक सहमति है। अमेरिका-इजराइल और ईरान के बीच चल रहे युद्ध ने वैश्विक अस्थिरता की गंभीर तस्वीर प्रस्तुत की है। इस युद्ध का दूरगामी असर कई देशों में दिखाई दे रहा है। लोग तेल और रसोई गैस की कमी से परेशान हैं। आपूर्ति शृंखला लड़खड़ाने से संकट गहराने का अंदेशा है। इससे स्पष्ट है कि बाहरी आपूर्ति पर अत्यधिक निर्भरता किसी भी देश के लिए जोखिमपूर्ण है। तेल-गैस आपूर्ति बाधित होने से भारत सहित कई देशों में ऊर्जा संकट गहराया है। चीन ने इसी चुनौती को अवसर बना कर वैकल्पिक ऊर्जा और मजबूत आपूर्ति तंत्र विकसित किया, जबकि भारत अभी भी कई क्षेत्रों में पीछे है। यह समय है जब भारत को अपनी ऊर्जा नीति में आत्मनिर्भरता, विविधीकरण और नवीकरणीय स्रोतों पर बल देना होगा, ताकि भविष्य में संकट से निपटा जा सके।

– अमृतलाल मारू 'रवि' इंदौर

युद्ध की मार

लगभग एक महीने से पश्चिम एशिया में युद्ध का माहौल है। अमेरिका, इजराइल और ईरान के बीच युद्ध को रोकने के लिए कई देशों ने अपने-अपने स्तर पर प्रयास किए, लेकिन ये अब तक सफल नहीं हो पाए हैं। युद्ध में सबसे अधिक नुकसान आम नागरिकों को झेलना पड़ रहा है। यह युद्ध किसी एक देश का नहीं, बल्कि राजनीति और सत्ता की लड़ाई बन कर रह गया है। हमारे देश के लोग भी विदेश में काम करते हैं। ऐसे में उनके परिवारों की चिंता बढ़ गई है। क्या वे सुरक्षित देश आ सकेंगे? इस युद्ध में सिर्फ ताकतवर देशों को ही फायदा हो रहा है। ईरान में हजारों लोग मारे गए हैं, जिनमें बड़ी संख्या में निर्दोष नागरिक शामिल हैं। यह स्थिति बेहद चिंताजनक है। इतिहास गवाह है कि युद्ध कभी किसी समस्या का समाधान नहीं होता, बल्कि यह केवल विनाश और पीड़ा लेकर ही आता है।

– प्रियंका साव, जम्मू

साहित्य अकादेमी के 2025 के अकादेमी पुरस्कारों को लेकर हुआ विवाद हाल के वर्षों में सबसे बड़े साहित्यिक विवादों में एक माना जा सकता है। अकादेमी द्वारा पुरस्कारों के एलान की घोषणा रोकने के बाद सरकारी हस्तक्षेप, संस्थागत स्वायत्तता और पुरस्कार प्रक्रिया पर तीखे सवाल उठे। घोषणा को रद्द करने की वजह संस्कृति मंत्रालय के एक परिपत्र को बताया गया। इस परिपत्र के तहत अकादमी और मंत्रालय के बीच हुए समझौते के पालन को जरूरी बताया गया था।

बेबाक बोल

मेरा पति सुंदर, मैं सुंदरी
बाकी दुनिया बंदर-बंदरी

साहित्यिक चेहरे जब साहित्य में अशोभनीय अध्याय लिख रहे हों, तो इसी तरह की मारक लोकोक्तियां याद आती हैं। साहित्य अकादेमी के अटके-लटके और भटके पुरस्कार की घोषणा पर सवाल हुए थे कि जब पुरानी किताब को ही पुरस्कार देना था तो 'चंद्रकांता संतति' ही क्या बुरी थी। वैसे पुरस्कार-परिधि में रचनाकारों से ज्यादा प्रकाशकों का गठजोड़ होता है। 'चंद्रकांता संतति' अगर उसी गठजोड़ वाले प्रकाशक की होती तो शायद उसे भी इक्कीसवीं सदी में साहित्य अकादेमी पुरस्कार दे देती। हिंदी भाषा का दुर्भाग्य है कि घनघोर सामंती बातें करने वाली साहित्यकार जिन्होंने अवसरवाद का रंग 'गुलाबी' घोषित किया है, वे साहित्य अकादेमी के पुरस्कृतों में शामिल हैं। जिस साहित्य को संघर्षों का दस्तावेज होना चाहिए, वहां कहा जा रहा, मेरा लिखा यथार्थ, और तुम्हारा लिखा 'शरारत'। साहित्य के इन शरारती तत्वों पर बेबाक बोल।

शरारती साहित्य (कार)

मुकेश भारद्वाज

'मुझे लगा कि पंद्रह-बीस साल पहले जो हो जाना चाहिए था, वह अब जाकर हुआ। न्याय मिलने में देर हुई, पर तसल्ली हुई कि अब साहित्य अकादेमी को अकल आ गई। उन्होंने मेरी किसी किताब के महत्त्व को पहचाना...मैं समझती हूं कि सरकार ने अब नाम घोषित कर-के प्रायश्चित कर लिया है।'

उद्धृत वाक्य प्रतीक है हिंदी साहित्य के सामंती अहंकार का। आम तौर पर पुरस्कार मिलने पर पुरस्कृत रचनाकार की तारीफ में ऐसी बातें उनके पाठक या समर्थक करते हैं, पर ये बातें साहित्य अकादेमी से पुरस्कृत साहित्यकार ममता कालिया अपने बारे में कह रही हैं। साहित्य अकादेमी लेखिका के इस अहंकार पर तवज्जो दे। उन्हें पुरस्कार देना साहित्य अकादेमी को अकल आने सरीखा था। यह साहित्य के पुरस्कृत संसार की अकादमिक भाषा है। पुरस्कृत लेखिका के एक छोटे से साक्षात्कार में सामंती अहंकार से लेकर पितृसत्ता कूट-कूट कर भरी दिख रही है। आधुनिकता को कोसती सामंती-स्त्री का प्रलाप दिख रहा है।

एक समय में दावा किया गया कि हिंदी साहित्य मतलब प्रगतिशीलता। अब अगर प्रगतिशीलता देखनी है तो ऐसी अकादमियों में देखने के बजाय देश की अदालतों पर नजर डालनी होगी। मामूली पढ़ी-लिखी से लेकर ऊंचा दर्जा प्राप्त महिलाएं पितृसत्ता के खिलाफ कैसी-कैसी लड़ाई लड़ रही हैं। इन अदालतों में अपने अधिकार और अस्तित्व के लिए लड़ती स्त्रियों को देख कर लगेगा कि असल में देश किनके संघर्षों से आगे जाने में सक्षम हो रहा है। आम स्त्रियों की दलीलें सुन कर अदालतें स्त्री-पुरुष संबंधों के संदर्भ में क्रांतिकारी फैसले दे रही हैं और हिंदी साहित्य में मरे की मिट्टी पलीद की जा रही है। ऐसे बहुत से जिंदा भी तो हैं, पर उनके मामले में लबों पर सील है, क्योंकि अभी उनके यहां छपना है।

साहित्य अकादेमी से पुरस्कृत लेखिका संस्मरण लिखने को बड़ी चुनौती मानती हैं। वे कहती हैं, 'इसमें एक सुरक्षित रास्ता यह निकलता है कि यह मेरे हिस्से का यथार्थ है। आपको क्या पता, मेरे साथ क्या घटित हुआ है।' यही लेखिका कुछ इस तरह का भाव प्रस्तुत करती हैं कि एक बस मैं महान और दूसरे मेरे पति महान। मुझे अपने पति से कोई शिकायत नहीं है। मेरे पति उस तरह के शराबी नहीं रहे...।

अपने पति को परमेश्वर सरीखा बता कर ममता कालिया हिंदी पट्टी में एक निर्भीक छवि रखने वाले, कई सामंती परंपराओं को ढहाने वाले संपादक के बारे में कहती हैं- 'राजेंद्र यादव बड़े शरारती थे...। उनके कहने पर मैत्रेयी पुष्पा ने देहवादी रचनाएं लिखीं।' लेखिका का भावार्थ है कि सिर्फ मेरे लिखे को ही यथार्थ माना जाए। मैत्रेयी पुष्पा के लिखे को पुरुष की शरारत मानो। सिर्फ मेरे पति ही अच्छे संपादक थे, जिनके संपादन में छपा था-लेखिकाओं में छि...बनने की होड़ लगी है। जहां ऐसी सोच वाले महान संपादक हो सकते हैं, सिर्फ वहीं साहित्य का 'ज्ञानपीठ' हो सकता है। वैसे, छि...वाली बात छापना शरारत भर थी या साहित्य में संपादक की 'मर्दाना ताकत' का प्रदर्शन?

साहित्य में स्त्री को आजाद आवाज देने वाले संपादक की मुहिम को 'शरारत' कह कर ममता कालिया का मकसद पूरी तरह से उस स्त्री रचनाकार को खारिज करना है, जिसने हिंदी साहित्य में कई तरह की वर्जनाओं को तोड़ा। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने भोगे-देखे यथार्थ को दर्ज करने में जो साहित्यिक श्रम किया, वह तो एक पुरुष संपादक की 'शरारत' भर थी। पुरुष की 'शरारत' भी इतनी रचनात्मक हो सकती है, यह 'न भूतो न भविष्यति' भी शायद सिर्फ हिंदी साहित्य के मनगढ़ंत इतिहास का हिस्सा होगा। मैत्रेयी पुष्पा ने जिस तरह का साहित्य लिखा, उसके लिए जिस तरह की योग्यता चाहिए थी, वह किसी भी तरह से पुरुष की 'शरारत' या 'कृपा' से हासिल नहीं हो सकती है।

पिछले दिनों से लंबी बहस चल रही है कि साहित्यकार के निज को देखें या उनके संपूर्ण कृतित्व को। लेकिन इतने बड़े सम्मान के बाद जब पुरस्कृत रचनाकार इतने तिरस्कार से अन्य स्त्री रचनाकार को खारिज करती है तो लगता है कि साहित्य अकादेमी में पुरस्कार वापसी के इतिहास को थोड़ा बदल कर पुरस्कार वापसी-2 करना चाहिए, यानी खुद ही वापस ले। इतने अप्रगतिशील विचारों का प्रदर्शन करने के बाद क्या साहित्यिक संस्था को अपनी अकादमिक साख बचाने की जरूरत महसूस होगी? वैसे, साहित्य को ही जब साख बोझिल लगने लगा है तो भला अकादमियां इसका बोझ क्यों ढोना चाहेंगी?

ममता कालिया सिर्फ मैत्रेयी पुष्पा नहीं, बल्कि सामंती दरवाजे तोड़ने की कोशिश करती हर स्त्री के खिलाफ खड़ी होती दिखती हैं। आप सार्वजनिक जगहों पर किसके साथ खड़े होते हैं, किसका नाम लेते हैं यह मायने रखता है। अपने साक्षात्कार में ममता कालिया कहती हैं, 'जब वहां श्रीनिवास राव थे, उनसे हेलो हाय हो जाती थी'। साहित्य अकादेमी में आपने अपना संपर्क भी दिखाया, तो उस आदमी से जिन्हें एक तरह से यौन उत्पीड़न का अपराधी करार दिया गया था।

साहित्य अकादेमी की उस महिला को पुरुषों पर साहित्यकारों की 'ममता' का अंदाजा था इसलिए वह अपना इंसाफ अदालत से लेकर आई थी। लेकिन साहित्य अकादेमी की उस बहादुर महिला में आपको शायद 'ब्लड रेड फेमिनिस्ट' दिखी होगी, इसलिए मर्दवाद पर अपनी 'गुलाबी ममता' को बचाए रखने के लिए आपने कभी साहित्य अकादेमी के अंदर स्त्री शोषण का यथार्थ देखने की कोशिश नहीं की। आप सब बोलेंगी, पर यौन उत्पीड़न करने वाले सचिव पर नहीं, जिसने अकादेमी की साख पर कभी न मिटने वाली कालिख पोत दी। शायद एक और पुरस्कार मिलने की आस...। वहीं, कोई साहित्य अकादेमी पर उपन्यास लिखने का एलान करने के बाद इस यथार्थवादी सोच के साथ 'डिलीट' कर रहा है कि उसमें अकादेमी से पुरस्कृत होने की आस जग गई होगी।

अकादेमी से पुरस्कृत गुलाबी नारीवादी साहित्यकार कहती हैं, 'आज के समय में लड़की दौड़ जाएगी करियर के लिए, वह पीछे मुड़कर नहीं देखेगी कि पति किस हाल में है'। लेखिका का भावार्थ यही है कि आज भी स्त्री को उतनी ही नौकरी करनी चाहिए, जिससे उसके पति की नौकरी पर कोई आंच नहीं आए।

रचनाकार के इस साक्षात-वैचारिक-आकार को देखने के बाद अहसास होता है कि साहित्य अकादेमी ने पुरस्कार को रोक क्यों रखा था। अभी साहित्य में लाल और भगवा की ही लड़ाई थी तो वे गुलाबी रंग ओढ़ कर बैठी थीं। तय करना मुश्किल हो रहा था कि 'गुलाबी' किस खेमे में जाएगा। गुलाबी को उसी खेमे में जाना था, जिस खेमे के खिलाफ नारीवादियों ने इस रंग को नारी पर चस्पा कर देने के खिलाफ आवाज बुलंद कर रखी थी। 'मेरा पति मेरा देवता है' जैसे सिनेमा व साहित्य के खिलाफ आवाज उठाने वाली महिलाओं को इन्होंने संदेश दिया है कि पति के चरणों में ही स्त्री की दुनिया 'गुलाबी' हो सकती है।

साहित्य अकादेमी पुरस्कार के बाद दिए साक्षात्कार में ममता कालिया ने मुखर स्त्रीवादियों के खिलाफ जो 'शरारतें' की हैं, अब उनके पूरे साहित्य को भी पितृसत्ता की 'शरारत' की नजर से ही देखा जाएगा।

राजपाट

निशांत का निशाना

नीतीश कुमार बिहार के मुख्यमंत्री पद से त्यागपत्र कब देंगे? यह सवाल सियासी हलकों में पहेली बना हुआ है। वे राज्यसभा के लिए निर्वाचित हो चुके हैं। लिहाजा बिहार विधान परिषद से उन्होंने त्यागपत्र दे दिया। हालांकि वे अपनी पार्टी जद (एकी) के फिर अध्यक्ष भी चुन लिए गए। नीतीश के मुख्यमंत्री पद ना छोड़ने के पीछे उनके बेटे निशांत की भूमिका बताई जा रही है।

जिन्हें पार्टी के लोग नीतीश की विरासत सौंपना चाहते हैं। यह बात अलग है कि राजनीति में उनकी दिलचस्पी कभी नहीं रही। वे 51 साल के हो चुके हैं। खुद नीतीश के उसूल भी निशांत के राजनीति में आने की राह में बाधा थे। पर पार्टी के नेताओं के दबाव में वे बमुश्किल माने। निशांत ने भी जद (एकी) की सदस्यता तो जरूर ले ली पर वे तत्काल उपमुख्यमंत्री जैसा पद नहीं लेना चाहते। उनकी आनाकानी के पीछे उनके कुछ करीबी दोस्तों और रिश्तेदारों का दिमाग माना जा रहा है, जो चाहते हैं कि नीतीश मुख्यमंत्री का पद अभी भाजपा को न दें। अगले छह महीने वे इस पद पर बने रह सकते हैं। कहा जा रहा है कि भाजपा अब ज्यादा इंतजार नहीं करेगी। उसकी पूरी कोशिश है कि 15 अप्रैल के आसपास नीतीश कुमार मुख्यमंत्री पद छोड़ दें। नहीं तो उनकी पार्टी का वजूद ही नहीं बचेगा। संकेत मिल रहे हैं कि नीतीश की खाली हुई विधान परिषद की सीट पर उपचुनाव होगा तो निशांत निर्विरोध चुन लिए जाएंगे।

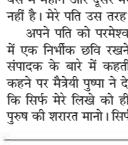

वक्त का फेर

अधीर रंजन चौधरी पश्चिम बंगाल में कांग्रेस के सबसे कद्दावर नेता माने जाते थे। मुर्शिदाबाद की बहरामपुर लोकसभा सीट 1999 से 2019 तक लगातार पांच बार जीतने वाले नेता को भला कौन कद्दावर नहीं मानेगा। लेकिन ममता बनर्जी का विरोध चौधरी को महंगा पड़ गया। पिछले लोकसभा चुनाव में दीदी ने गुजरात के क्रिकेट खिलाड़ी यूसुफ पठान को बहरामपुर में उनके खिलाफ उतारकर उन्हें हरवा दिया। अब विधानसभा चुनाव में किस्मत आजमा रहे हैं। कभी मुर्शिदाबाद जिले की तीनों लोकसभा सीटों बहरामपुर, जंगीपुर और मुर्शिदाबाद के नतीजे उनके हिसाब से तय होते थे, लेकिन अब अपनी विधानसभा सीट पर ही मुश्किल में फंस गए हैं। एक तरफ अपनों से मुकाबला है तो दूसरी तरफ मुसलिम नेता अलग घेर रहे हैं। ओवैसी ने हुमायूं कबीर के साथ पहली साझा रैली के लिए अधीर बाबू के बहरामपुर को ही चुना।

इस बार बदले दिखे अंदाज

संसद के बीते सत्र में लोकसभा अध्यक्ष ओम बिरला का अंदाज पूरी तरह से बदला हुआ था। सत्र में सत्तापक्ष से लेकर विपक्ष का कोई भी सांसद उनके अनुशासन के सख्त अंदाज और आदेश से बच नहीं पाया। उन्होंने सदन में वरिष्ठ नेताओं को उनकी वरिष्ठता याद दिलाई और मंत्रियों तक के कामकाज का सलीका बताया। लोकसभा अध्यक्ष का यह अंदाज इस बार सरकार के मंत्रियों व नेताओं के लिए नया था। सत्र के दौरान अपने चिरपरिचित अंदाज में लोकसभा अध्यक्ष ने सियासत से लेकर वरिष्ठता का पाठ पढ़ा दिया। खास कर बोलने के लिए उठे सांसदों को समय-सीमा के दायरे में सख्ती से रखा। सदन में सांसद व नेता भी उनकी अनुपस्थिति के दौरान ही राहत में नजर आए।

नायक दरकिनार

सुरेश गोपी ने 2024 में केरल की त्रिशूर लोकसभा सीट भाजपा के खाते में डालकर नया सियासी इतिहास रचा था। मलयाली फिल्म अभिनेता गोपी की इस कामयाबी को भाजपा ने दक्षिण के इस प्रदेश में अपने प्रवेश की शुरुआत के रूप में प्रचारित भी किया था। लोकसभा चुनाव जीतने के बाद गोपी को केंद्र सरकार के मंत्रिमंडल में शामिल भी किया गया था। लेकिन केरलम विधानसभा चुनाव से गोपी गायब हैं। यहां तक कि वे अपनी लोकसभा सीट में आने वाली सात विधानसभा सीटों के उम्मीदवारों के लिए भी वोट नहीं मांग रहे हैं। गोपी को भाजपा ने 2016 में राज्यसभा में मनोनीत सदस्य बनाया था। कुछ दिन बाद वे भाजपा में शामिल हो गए थे। फिर पार्टी ने उन्हें त्रिशूर में 2019 का लोकसभा चुनाव लड़वाया, पर वे हार गए। दो साल बाद 2021 के विधानसभा चुनाव में भी भाजपा ने उन्हें उतारा, पर कामयाबी नहीं मिली। किस्मत ने साथ दिया और वे 2024 का लोकसभा चुनाव जीतकर केंद्र में मंत्री बन गए। चर्चा है कि गोपी मंत्री होकर भी अपना फिल्मी करियर छोड़ने को तैयार नहीं। एक सांसद के रूप में वे लोगों को उपलब्ध नहीं। सो पार्टी ने उनकी जगह अब पूर्व मुख्यमंत्री के करुणाकरन की बेटी पद्मजा वेणुगोपाल को प्रचार में ज्यादा इस्तेमाल करने की रणनीति अपनाई है। 2024 के नायक 67 वर्षीय गोपी अब भाजपा को नफे से ज्यादा नुकसान करने वाला लग रहे हैं। यही है शायद उन्हें दरकिनार करने की वजह।

स्वाति की राह पर राघव

अरविंद केजरीवाल ने जिस राघव चड्ढा को अपनी आंखों का तारा बना रखा था, अचानक कांटा मान लिया। राघव ने 2023 में परिणीति चोपड़ा से शादी क्या की वे केजरीवाल की नजरों में खटकने लगे। 2024 में केजरीवाल की गिरफ्तारी के दौरान पार्टी के लिए संघर्ष करने की जगह राघव आंख के इलाज के लिए लंदन चले गए। शराब घोटाले में केजरीवाल के आरोप मुक्त होने पर जब पूरी आम आदमी पार्टी जश्न मना रही थी तब राघव नदारद थे। राज्यसभा में भी वे पार्टी लाइन के खिलाफ चलते रहे। सत्ता पक्ष की दरियादिली न होती तो राघव को राज्यसभा में बोलने के इतने अवसर भला कैसे मिलते? मुख्य चुनाव आयुक्त के खिलाफ विपक्ष के प्रस्ताव पर पार्टी के निर्देश के बाद भी हस्ताक्षर न करके राघव ने बगावत की राह अपना ली थी। तभी केजरीवाल ने मान लिया कि स्वाति मालीवाल जैसा ही उनका दूसरा चहेता राघव भी भाजपा के मोहपाश में फंस चुका है। राज्यसभा में पार्टी के उपनेता पद से हटाते ही राघव ने वीडियो जारी कर एक शेर में भविष्य के इरादे जताए कि मेरी खामोशी को मेरी हार न समझ लेना, मैं वो दरिया हूं जो वक्त आने पर सैलाब बनता है।

संकलन : मृणाल वल्लरी

आपके पत्र

बदलने के नाम पर

बदलने के नाम पर पहले का बना-बनाया बिखरने और उखड़ने लगे, तो उस बदलाव की यंत्रणा को झेलने वालों की मन:स्थिति कैसी रही होगी, इसे आसानी से समझा जा सकता है। यह सरकार की नई नीतियों और कार्य-प्रणाली की उसी शृंखला की कड़ी है, जिसके तहत राष्ट्रवाद की आड़ में स्वातंत्र्योत्तर इतिहास-वृक्ष को समूल उखाड़ फेंकने के प्रयास होते रहे हैं। तिनका-तिनका चुनकर नगरी एक बसाई, लेकिन उस नगरी को अहंकार के बुलडोजर से ध्वस्त करने के अपने अभियान को सुधार का जामा पहनाकर दशकों के श्रम का उपहास उड़ाते देखना दुखदाई स्थिति है। 'कौन है भारत माता' वाली जो जनता थी, सत्ता द्वारा गढ़े उसके 'भाग्य-विधाता' ने उस भारत मां स्वरूपा जनता की छवि का अंग-भंग करके एक नई सूची वाली जनता तैयार कर दिखाई है। अन्याय के खिलाफ मोर्चा खोलने वाले शूरवीर अपने मोर्चे को छोड़कर किन्हीं और मोर्चों पर चले गए। वक्त रहते ममता दीदी ने लपक न लिया होता तो सब धरा का धरा रह जाना था।

-शोभना विज, पटियाला, पंजाब।

जम्हूरियत का सफर

आम शहरी होने की सनद हाथों में लिए आंखों के सामने खड़ी होती दीवार से टकराती शान-ए-जम्हूरियत की कश्मकश है 'रीढ़ की हड्डी'। डेढ़ करोड़ जनता का भार उठाती जम्हूरियत के सफर को मुकाम देता महकमा आज सवालों के घेरे में है। वो नगाड़े बजते हमने सुना है जब लोगों के आईनी हक के इस्तेमाल की गुहार लगती थी। कौमी जिम्मेदारियों की याद दिलाते सरकारी हुक्मरानों की दस्तक कई बार सुनी है। हालिया मुल्क में चल रहे चुनावी दस्तावेजों से छंटनी की अजीब-ओ-गरीब मुहीम ने अवाम के अंदर एक बेचैनी और खौफ भर रखी है। जंग लगी संदूकों से हिंदुस्तानी होने के सबूत तलाशते हर शहरी के चेहरे पर बदहवासी की लकीरें उभर आई हैं। आईनी हक से महरूम हो जाने की तलवार हमारे सामने लटक रही हो तो आखिर हम क्यों ना बेचैन हो जाएं। सात से आठ फीसद हिंदुस्तानियों को हक-ए-रायशुमारी से बेदखल करती नई मिसाल के सामने 'एक भी शहरी छूट ना जाए' का नारा बौना खड़ा है। बहरहाल कानूनी और गैरकानूनी दांव-पेच में उलझी मुहीम जम्हूरियत की टीस से बेखबर बेरोक-टोक चली जा रही है। मीलों के लंबे और दमघोंटू सफर को धता बता कतारों में खड़े हर हिंदुस्तानी के जज्बातों को पसीना बन कर बहते देखा है। काश जम्हूरियत की दरकती बुनियाद से आती चीख तख्तपरस्त निजाम को झकझोर पाती। ध्यान रखना होगा कि बेलाग दिखने वाले महकमों की कलम की स्याही की कीमत चुकाने में 'रीढ़ की हड्डी' एक दिन दरक ना जाए।

-एमके मिश्रा, रांची, झारखंड।

उपेक्षित मतदाता

हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था की यही सबसे बड़ी खामी है कि जिसके केंद्र में मतदाता अर्थात नागरिक हैं, उसी की परवाह कम की जाती है। अन्यथा इतने वैध मतदाताओं के नाम विचाराधीन नहीं रखे जाते, जबकि चुनाव नजदीक हैं। दरअसल मतदाता सूची से अवैध मतदाताओं की निकासी स्वच्छ, पारदर्शी चुनाव के लिए जितनी जरूरी है उतना ही जरूरी है वैध मतदाताओं को मतदाता सूची में समय रहते शामिल करना। स्वच्छ और पारदर्शी चुनाव के लिए एक ऐसी मतदाता सूची की अनिवार्यता जरूरी है, जिस पर सभी राजनीतिक दल भरोसा कर सकें। अक्सर इस सूची पर विवाद खड़ा हो जाता है, जो लोकतंत्र की सेहत के लिए नुकसानदेह है।

-मुकेश कुमार मनन, पटना।

वोटों की चिंता

मतदाता सूची में गैर-भारतीयों के नाम न आएं, यह सुनिश्चित करना चुनाव आयोग की जिम्मेदारी है, मगर कौन भारतीय है और कौन नहीं, यह तय करने की जिम्मेदारी केंद्रीय गृह मंत्रालय की है। साथ ही, देश में घुसपैठ न हो और घुसपैठियों को निकालने का काम भी केंद्र सरकार का है। चलो, मान लेते हैं कि चुनाव आयोग ने मतदाता सूची से जिनके नाम काटे, वे सभी देश के नागरिक नहीं हैं, तो क्या अब केंद्र सरकार इनकी नागरिकता का सत्यापन करके इन्हें देश से निकालेगी? अगर हां, तो यह कार्रवाई वश्य होनी चाहिए। अगर नहीं, तो इसका मतलब है कि सरकार को सिर्फ वोटों की चिंता है और उसने घुसपैठियों से जुड़े अन्य खतरों से आंखें मूंद रखी है। बिहार में मतदाता सूचियों के विशेष पुनरीक्षण के द्वारा लगभग 65 लाख मतदाताओं के नाम काटे गए थे। अन्य राज्यों में मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने से पहले, सरकार को यह स्पष्ट करना चाहिए कि बिहार के इन 65 लाख मतदाताओं में से कितने घुसपैठिए थे और उन्हें वापस भेजने के लिए सरकार ने क्या कदम उठाए हैं। सरकार को अपनी जिम्मेदारियों पर पूरा ध्यान देना चाहिए। अभी सारा भार मतदाताओं पर है।

-बृजेश माथुर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश

गलतियों के गगन में

साधनविहीन नागरिकों ने लाख बाधाओं के बावजूद लोकतंत्र की रीढ़ की हड्डी को बचाने में अपनी विरासतीय भूमिका में सतत जागृति दिखाई है। दुर्भाग्य है कि लोकतंत्र के तीनों स्तंभों ने अपनी अजेय शक्ति के बल पर उक्त हड्डी के क्षरण यानी 'आस्टियोपोरोसिस' की दारुण दशा देख कर अपने को भाग्य विधाता मान लिया है। तीन दशक से अधिक अवधि तक प्रशासनिक सेवा में मतदाता सूची के पुनरीक्षण सहित अन्य प्रक्रियाओं में जुड़े रहने के आधार पर अनुभव सारांश है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही इस जटिल प्रक्रिया को पूरी तरह से दुरुस्त करने में आयोग ने सिर्फ खानापूर्ति की है जबकि प्रदेश सरकारों ने सिर्फ झुक-झुक सलाम पेश किया है। अफरातफरी में सूची को दुरुस्त करना असंभव है क्योंकि इस कार्य की पूर्णता में न्यूनतम चार माह की आवश्यकता है। गहन पुनरीक्षण कार्य में बीएलओ मतदाताओं के हर घर जा नहीं पाते, क्योंकि कम समय के चलते ऐसा व्यावहारिक तौर पर संभव नहीं है। आयोग अपनी दीवार इसलिए ऊंची कर रहा है ताकि जमीनी हालात के स्वर उससे टकराकर चकनाचूर हो जाएं और उसके दामन पाक साफ रहें। आशा की जानी चाहिए कि गलतियों के गगन में विचरण कर रहा आयोग अपने मूलभूत संवैधानिक कर्तव्यों की लक्ष्मण रेखा में लौट आने का साहस दिखा पाएगा।

-अशोक कुमार, पटना, बिहार।

विशेष पन्ना कैसा लगा

इस विशेष पन्ने पर आपके ढेरों पत्र हमें लगातार मिलते हैं। हर बार मुमकिन नहीं कि सारे पत्रों का हम इस्तेमाल कर पाएं। पर यह तो तय है कि आपके पत्रों से आपकी पसंद और विषयों के चुनाव में हमें मदद मिलती है। इस बार का यह विशेष पन्ना आपको कैसा लगा? आप अपनी राय भेज सकते हैं। हमारी ई-मेल आइडी है :
vishesh.jansatta@expressindia.com

प्रेरणा

मनुष्य जो है वही बना रहे, इसी में उसकी असली खुशी है। - **डेसिडेरियस इरैजमस**

संपादकीय

ईरान युद्ध के चलते सरकार सुपर-एक्टिव मोड में है

राष्ट्रीय सुरक्षा मुद्दों पर सबसे बड़ी नीति-निर्धारक इकाई प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाली कैबिनेट कमेटी ऑन सिक्योरिटी (सीसीएस) की विगत दस दिनों में दो बार बैठक देश में ईरान युद्ध से पैदा हुए बहुआयामी दुष्प्रभावों और आसन्न संकट की भयावहता बताती है। बैठकों में इस संकट से लड़ने के लिए की जा रही तैयारियों का जायजा यह भी इंगित करता है कि सरकार हाई एक्शन मोड में है। परिवहन संकट से लेकर रोजमर्रा की वस्तुओं खासकर- सब्जी और फल की महंगाई, उद्योगों पर ऊर्जा लागत बढ़ना, एलपीजी, सीएनजी, पीएनजी और पेट्रो-केमिकल्स की किल्लत, बेरोजगारी, निर्यात रोकने से उद्योगों पर असर, खाद की दिक्कत, हीलियम और सल्फर न मिलने से सेमीकंडक्टर और आईटी उद्योगों में छंटनी भारत जैसे एक विकासशील देश के लिए असाधारण स्थिति है। प्रधानमंत्री ने अधिकारियों की सात टीमें बना कर उनका फीडबैक और आगे की तैयारियों का जायजा लिया। ट्रम्प के सम्बोधन में दो-तीन हफ्ते में युद्ध के समापन की बात कही गई थी, लेकिन अभी तक हुई क्षति ने ही दुनिया को हिला दिया है। विश्लेषक मानते हैं कि युद्ध से पहले ही 600 अरब डॉलर का नुकसान हो चुका है, लेकिन अगर यह कुछ हफ्ते और चला तो यह आंकड़ा छह गुना बढ़ कर 3.5 ट्रिलियन तक पहुंचा जाएगा, यानी वैश्विक जीडीपी का 3.4 प्रतिशत।

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
humarehanuman@gmail.com

जीवन में खुशी आए तो कोशिश करें अकेलापन न बढ़ जाए

उत्साह और उदासी दोनों संक्रामक हैं। किसी प्रसन्नचित व्यक्ति के पास बैठें तो अपने आप अच्छा लगने लगता है। जिसका मूड खराब हो, उसकी संगत मिले तो परेशानी हो सकती है। ये सब मनोरोग हैं और अब मनोरोग कई रूप में सामने आ रहा है। मेरा तो हर विषय परिवार पर केंद्रित रहता है। पिछले दिनों विदेश यात्रा में फिनलैंड की राजधानी हेलसिंकी में टेक इंडस्ट्री में बड़े पद पर काम कर रहीं दो महिलाओं से मिलना हुआ। उनका कहना था हम भारतीय इस देश में खुश हैं, क्योंकि दुनिया में खुशहाल होने के मामले में फिनलैंड सबसे ऊपर है। लेकिन उन्होंने यह भी कहा कि अब यहां अकेलेपन की बीमारी बढ़ रही है। सोचने वाली बात है- खुशी अलग है, अकेलापन अलग है। चूंकि हमने अपनी खुशियों को सुविधाओं से, उपभोग से जोड़ लिया है तो उसकी तो कोई कमी है नहीं। लेकिन अकेलापन लंबे समय टिक जाए तो उदासी में बदलता है और उदासी बदल जाती है अवसाद में। तो जब खुशी आए तो कोशिश करें अकेलापन न उतर जाए।

• Facebook:Pt. Vijayshankar Mehta

नजरिया • इतिहास और स्मृति का यही रिश्ता है

अपने अनुभवों के लिए हमारे पास क्या हमेशा शब्द होते हैं?

भाषाएं

रीता कोठारी
अशोका यूनिवर्सिटी में अंग्रेजी की प्रोफेसर और भाषाविद्

कई साल पहले मैं अपनी चाची को एक प्रख्यात होम्योपैथ के पास ले गई थी। जैसा कि होम्योपैथी में अकसर होता है, मेरी चाची से कई सवाल पूछे गए- आप कहां रहती हो, घर में कौन-कौन है, आप को चिंता करने की आदत है, आप गुस्से में आ जाती हो या नहीं? मेरे परिवार के बड़े सदस्य पढ़े-लिखे लोगों में से नहीं हैं। मेरी चाची मुश्किल से अपना नाम लिख पाती हैं। 12 साल की उम्र में उनकी शादी हो चुकी थी और उनके 11 बच्चे हुए थे। उनसे डाक्टर ने पूछा, 'आप कहां बड़ी हुईं, आपकी पैदाइश कहां की है?' चाची ने कहा, 'सिंध में पैदा हुई और फिर हमारे परिवार वाले अजमेर चले गए। शादी के बाद से अहमदाबाद में हूं।' 'सिंध से अजमेर कैसे आना हुआ?' पूछे जाने पर चाची ने कहा- 'जब हिंदुस्तान-पाकिस्तान हुआ!' गुजरात में बसने वाले डाक्टर को समझ न आया। उसने कहा किस साल में? चाची ने कहा, 'वह तो मैं नहीं जानती!'

बंटवारा हमारे घर की वास्तविकता थी, किंतु यह शब्द हमारे लिए अनजाना था। 'जब हिंदुस्तान-पाकिस्तान हुआ'- इस वाक्य को कई तरह से समझा जा सकता है। जो हिंदुस्तान था वह पाकिस्तान बन गया या दोनों शब्दों के बीच लीक लगाकर कहो तो जब दो देश बने- हिंदुस्तान और पाकिस्तान। मैं इस बातचीत को नहीं भूल पाई। पहली बार मुझे एहसास हुआ, जो इतनी भयानक ऐतिहासिक घटना से गुजरते हैं, उनके लिए उनकी तारीख और नाम महत्वपूर्ण नहीं भी हो सकते हैं।

सिंधी समाज में 'विर्हांगो' शब्द का भी इस्तेमाल होता है, परंतु यह साहित्यकारों द्वारा प्रयोग किया जाता है। मेरी चाची जैसे लोगों को यह शब्द भी पता नहीं था, ना ही 1947 का साल। शायद इतिहास और स्मृति का यही रिश्ता है। एक घटनाओं को नाम देता है और दूसरी बेनाम घटनाओं का असर छोड़ जाती है।

अगले वर्षों में मैंने विभाजन के बाद सिंध से पलायन करने वाले लोगों का साक्षात्कार लेना शुरू किया। मैं अपनी चाची से भी उनके अनुभव के बारे में जानना चाहती थी। उन्होंने मुझे बताया कि वे अपने परिवार के साथ हैदराबाद (सिंध) गई थीं और वहां से उन्होंने ट्रेन से राजस्थान के पाली तक का सफर तय किया। जब भी कोई टिकट चेक करने आता, उन्हें कहीं छिपा दिया जाता क्योंकि उनके पास टिकट नहीं था। इससे पहले कि वे मुझे और कुछ बता पातीं, उनके पति यानी मेरे चाचा ने उन्हें बीच में ही रोक दिया और कहा, तुम्हें कुछ नहीं पता, मुझे बताने दो कि क्या हुआ था।

चाचा को घटनाओं के नाम, आरएसएस, मुस्लिम लीग और कांग्रेस जैसे संगठनों के नाम अच्छी तरह से पता थे। वे खुद को इतिहास का जानकार मानते थे। लोगों से भरे घर में चाची और मुझे कभी अकेले बात करने का समय नहीं मिला। उनकी कहानी दबी रह गई।

जिनके पास अनुभव हैं, उनके पास कई बार इतिहास में इस्तेमाल होने वाले शब्द नहीं होते। अपने अनुभवों को वे जिन शब्दों में या कई बार आधे-अधूरे वाक्यों में कहते हैं, उन्हें सुनने का वक्त और धीरज हम में नहीं होता। क्या ट्रॉमा या सदमे के अनुभवों के शब्द हमेशा होते हैं? और ऐसे कौन-से शब्द हैं, जो उस अनुभव से न्याय कर सकें? यह तो हुई इंसानों की बातें, जानवरों को क्या होता है? सिंधी में 'बैल' नाम की एक कहानी है, जिसका मैंने अनुवाद किया है। बंटवारे के बाद पंजाब से आए कुछ किसान सिंध के गांवों में पहुंचते हैं। उनमे से एक शम्सुद्दीन नाम का किसान अपने बैल वहां के एक सिंधी किसान को दे देता है और उससे दूसरे बैल और गधे ले लेता है। लेकिन दोनों किसान अपने बैलों को हुक्म देते हुए पाते हैं कि बैलों को उनकी भाषा ही समझ नहीं आती। आखिरकार, हारकर दोनों अपने-अपने जानवर लौटा देते हैं। कहानी के अंत में सिंध का किसान सोचता है कि अगर ये हालत बैलों की है तो यहां से गए सिंधी भाइयों की क्या हालत हुई होगी?

जिनके पास अनुभव होते हैं, उनके पास कई बार इतिहास में इस्तेमाल होने वाले शब्द नहीं होते। अपने अनुभवों को वे जिन शब्दों में या कई बार आधे-अधूरे वाक्यों में कहते हैं, उन्हें सुनने का वक्त और धीरज हम में नहीं होता।

शब्द और अनुभव एक-दूसरे के साथ तालमेल नहीं बिठा पाते। यह माना जाता है कि इतिहास सभी के बारे में होता है, लेकिन अकसर यह उन्हीं के बारे में होता है, जिनके पास उसे व्यक्त करने के लिए शब्द होते हैं। यह विडम्बना ही है कि विभाजन जैसी विनाशकारी घटना के लिए बंटवारा जैसा शब्द है, जिसका सीधा अर्थ है- बांटना या साझा करना। हम इस अनुभव के लिए तैयार नहीं थे, हमारी भाषा में इसके लिए कोई प्रावधान नहीं था।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)

इस लेख को मोबाइल पर सुनने के लिए QR कोड को स्कैन करें।

डिफ्रेंट एंगल • एआई की सूचनाएं कितनी प्रामाणिक?

आपके चैटबॉट के कानों में कौन कानाफूसी कर रहा है?

एआई

मार्क फडौल
एआई फोरेंसिक्स के डायरेक्टर और एल्गोरिद्म्स के एक्सपर्ट

एल्गोरिदम कभी तटस्थ नहीं होते। इसके बावजूद विगत एक दशक से अधिक समय से हमने बिग-टेक को इन्हें हमारे सूचना इको-सिस्टम के द्वारपाल के रूप में तैनात करने की अनुमति दे दी है और वह भी बिना पारदर्शिता या जवाबदेही की मांग किए। इसके परिणाम ध्रुवीकरण और सनसनीखेज कंटेंट के प्रसार से लेकर पर्सनलाइज्ड-विज्ञापनों, एकाधिकारवादी व्यवहार को बढ़ावा देने और सार्वजनिक विमर्श पर ऐसे प्रभावों तक रहे हैं, जो लोकतांत्रिक विचार-विमर्श के प्रतिकूल हैं।

अतीत में हम यह सबक सीख चुके हैं कि जब सूचना के महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचे को बिना किसी निगरानी के कॉर्पोरेट हितों के हवाले कर दिया जाता है तो क्या होता है। फिर भी हम एआई चैटबॉट्स के साथ वही गलती दोहरा रहे हैं। ये चैटबॉट्स केवल मौजूदा इंफॉर्मेशन का संकलन ही नहीं करते; वे उन्हें जनरेट भी करते हैं और उनका स्वरूप भी तय करते हैं। फेसबुक और गूगल यह निर्णय लेते थे कि आपको कौन-सी खबरें और कौन-से लेख दिखाए जाएं, जबकि चैटजीपीटी, क्लॉड और जेमिनाई जैसे एआई-टूल्स उसी इंफॉर्मेशन का सार आपके सामने इस तरह से प्रस्तुत करते हैं, मानो वह कोई अधिकृत-सूचना हो!

सूचनाएं जुटाने से लेकर उन्हें सम्पादित करने तक की यह यात्रा बहुत मायने रखती है। हम भविष्य की सूचनाओं के बुनियादी ढांचे को निजी कंपनियों के हवाले कर दे रहे हैं और वह भी स्वतंत्र निगरानी की मांग किए बिना। सबसे बड़ा खतरा यह है कि निजी स्वार्थों से संचालित होने वाले कुछ गिने-चुने पक्ष एक बड़ी आबादी के लिए सूचनाओं के गेटकीपर बन रहे हैं।

मौजूदा चैटबॉट्स केवल बड़े भाषा मॉडल (एलएलएम) ही नहीं हैं। वे कई अपारदर्शी एल्गोरिदमों पर भी आधारित होते हैं। इन एल्गोरिदमों की कम से कम पांच लेयर्स होती हैं। पहली है ट्रेनिंग-डेटा का संकलन। प्रशिक्षण के दौरान कौन-सा डेटा शामिल किया जाए या किसे बाहर रखा जाए, इन सब पर अपारदर्शी निर्णय लिए जाते हैं। लेकिन इन्हीं से मॉडल की सोच तय होती है। उदाहरण के लिए, अक्टूबर 2025 में इलॉन मस्क ने अपने ग्रोक चैटबॉट के लिए ट्रेनिंग-डेटा उपलब्ध कराने के लिए ग्रोकिपीडिया शुरू किया था। कॉर्पोरेट नियंत्रण वाला यह विश्वकोश विकीपीडिया के एंटी-वोक विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया गया था।

दूसरी लेयर रिइनफोर्समेंट लर्निंग है। मॉडल के विकास के इस पोस्ट-ट्रेनिंग चरण के दौरान, मानव समीक्षक आउटपुट का मूल्यांकन करते हैं। लेकिन इन्हें तेजी से विशेषीकृत एआई शिक्षकों से बदला किया जा रहा है, जिनका उद्देश्य पहले से तय सिद्धांतों के अनुरूप मूल मॉडल को तैयार करना है। तीसरी लेयर वेब-सर्च है। जब चैटबॉट्स ऑनलाइन खोज करते हैं या डिजिटल डेटाबेस तक पहुंचते हैं, तो रिट्रीवल-ऑगमेंटेड-जनरेशन प्रणालियां तय करती हैं कि मॉडल के उत्तर में कौन-सी जानकारी शामिल की जाए। लेकिन चैटबॉट के उत्तरों में विज्ञापनों के समावेश- जिसकी घोषणा चैटजीपीटी ने 2026 के लिए की है- से उनकी निष्पक्षता को लेकर अतिरिक्त चिंताएं पैदा होती हैं।

चौथी लेयर सिस्टम-प्रॉम्प्ट्स की है। चूंकि ये उस समय सक्रिय होते हैं जब कोई चैटबॉट उत्तर दे रहा होता है, इसलिए ये प्लेटफॉर्म्स को बिना पुनः-प्रशिक्षण के ही चैटबॉट के व्यवहार में बदलाव करने की अनुमति देते हैं। उदाहरण के लिए, चूंकि ग्रोक का सिस्टम प्रॉम्प्ट पिछले वर्ष सार्वजनिक कर दिया गया था, इसलिए हमें पता है कि इसमें 'राजनीतिक रूप से गलत दावे करने से न हिचकें' जैसे निर्देश शामिल हैं। आखिरी लेयर सेफ्टी-फिल्टरों की है। किसी चैटबॉट क्वेरी के मॉडल तक पहुंचने से पहले इनपुट फिल्टर यह तय करते हैं कि वह स्वीकार्य है या नहीं। इसी तरह, मॉडल द्वारा उत्तर तैयार करने के बाद भी आउटपुट फिल्टर आपके द्वारा देखने से पहले उसे संशोधित, सेंसर या परिष्कृत कर सकते हैं।

हम एआई चैटबॉट्स के साथ वही गलती दोहरा रहे हैं, जो सोशल मीडिया के साथ की थी। ये चैटबॉट्स अब केवल मौजूदा इंफॉर्मेशन का संकलन ही नहीं कर रहे; वे उन्हें जनरेट भी करते हैं और उनका स्वरूप भी तय करते हैं।

ट्रम्प के शपथ-ग्रहण के बाद एपल ने अपने एआई प्रशिक्षण निर्देशों को अपडेट कर दिया था, ताकि मागा-समर्थकों को कट्टरपंथी के रूप में चिह्नित करने से बचा जा सके। पिछली गर्मियों में, रॉयटर्स ने पाया कि मेटा ने उन सुरक्षा उपायों में ढील दे दी थी, जो उसके चैटबॉट्स को नस्लवादी वक्तव्य देने से रोकते थे। गत वर्ष, ग्रोक ने दक्षिण अफ्रीका में गोरों के नरसंहार के अप्रमाणित और संदर्भ-विहीन दावों को बढ़ावा देना शुरू कर दिया (मस्क स्वयं एक गोरे दक्षिण अफ्रीकी हैं)। चैटबॉट्स के माध्यम से राजनीतिक प्रभाव कायम करना पहले ही प्रभावी साबित हो चुका है। 2025 में नेचर में प्रकाशित एक अध्ययन ने दिखाया था कि किसी उम्मीदवार के पक्ष में दलीलें देने के लिए प्रशिक्षित चैटबॉट्स वोटरों को आसानी से प्रभावित कर सकते हैं।

(@प्रोजेक्ट सिंडिकेट)

4 अप्रैल के अंक से विशेष अनुबंध के तहत सिर्फ दैनिक भास्कर में
इकोनॉमिस्ट ने ईरान युद्ध पर चीन के नेताओं और विशेषज्ञों की सोच पर कवर स्टोरी की है। मैग्जीन ने रूस में भ्रष्टाचार के नए पहलू को स्पेशल स्टोरी में सामने रखा है।
The Economist
दैनिक भास्कर
अब आप इकोनॉमिस्ट के सभी आर्टिकल DB एप पर हर शनिवार पढ़ सकते हैं। डाउनलोड करें डीबी एप।

वर्ल्ड इन ब्रीफ

टैरिफ लगाने से अमेरिका को ज्यादा फायदा नहीं हुआ

पिछले साल अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रम्प ने 2 अप्रैल को अमेरिका में आने वाले माल पर भारी टैरिफ लगाते हुए कहा था कि इससे देश में जॉब्स और फैक्टरियां वापस आ जाएंगी। लेकिन नतीजे उनकी घोषणा के मुताबिक नहीं निकले हैं। मैन्युफैक्चरिंग सर्वे में बताया गया कि सेक्टर में पिछले साल मंदी रही। अधिकतर मैन्युफैक्चरर्स मानते हैं कि व्यापार युद्ध एक आघात की तरह है। टैरिफ में बदलाव ने पेपर वर्क बढ़ाया है। इस वजह से लोगों की भर्ती, खर्च या निवेश की योजना बनाना मुश्किल हो गया है।

टेस्ला ने उम्मीद से कम इलेक्ट्रिक वाहन बेचे

अमेरिकी कंपनी टेस्ला ने 2026 की पहली तिमाही में दुनियाभर में तीन लाख 58000 वाहनों की डिलीवरी की है। यह पिछले साल की इस अवधि से छह फीसदी अधिक है लेकिन विश्लेषकों की उम्मीद से कम है। इलेक्ट्रिक वाहन बनाने वाली कंपनी को कमजोर मांग और खासकर चीनी कंपनियों की प्रतिस्पर्धा से जूझना पड़ रहा है। कंपनी के बॉस इलॉन मस्क रोबोटैक्सी और रोबोटिक्स पर नए सिरे से फोकस करना चाहते हैं। डिलीवरी की खबर आने के बाद टेस्ला के शेयर चार प्रतिशत गिरे हैं।

ब्रिटेन में माइग्रेंट्स को बड़ी संख्या में निकालने की मांग

ब्रिटेन की दोनों दक्षिणपंथी पार्टियां बड़े पैमाने पर देश से अवैध माइग्रेंट्स को निकालने की मांग पर जोर दे रही हैं। वे चाहती हैं कि अमेरिका के इमीग्रेशन कस्टम्स एनफोर्समेंट की तरह डिपोर्टेशन के लिए नया विभाग बनाया जाए। रिफॉर्म ने पांच साल में छह लाख लोगों को निकालने के लिए ऑपरेशन रिस्टोरिंग जस्टिस शुरू करने की योजना पेश की है। माइग्रेंट्स की संख्या दस लाख हो सकती है। दोनों पार्टियां चाहती हैं कि संबंधित देशों से अवैध इमीग्रेंट्स की वापसी के लिए समझौते किए जाएं।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

ओपिनियन • ईरान युद्ध को अपनी नीतियों के पक्ष में देख रहा है चीन, ट्रम्प से वार्ता में पलड़ा रहेगा भारी

ईरान युद्ध से बड़ा फायदा मिलने की उम्मीद में है चीन

ईरान युद्ध को चीन केवल क्षेत्रीय संघर्ष नहीं, बल्कि वैश्विक शक्ति संतुलन में बदलाव के मौके के रूप में देख रहा है। बीजिंग के रणनीतिक हलकों में यह धारणा मजबूत है कि इस युद्ध से अमेरिका की स्थिति कमजोर होगी और चीन को अपने प्रभाव के विस्तार का अवसर मिलेगा। चीन के कई विश्लेषकों का मानना है कि उनके नेता नेपोलियन बोनापार्ट की उस सीख को समझते हैं कि जब दुश्मन गलती कर रहा हो, तब उसे रोकना नहीं चाहिए।

इकोनॉमिस्ट के अनुसार, चीन में कूटनीतिज्ञों, विशेषज्ञों और पूर्व अधिकारियों के बीच यह आम राय है कि ईरान पर अमेरिकी हमला एक बड़ी रणनीतिक भूल है। बीजिंग में यह भी माना जा रहा है कि अमेरिका की आक्रामकता उसकी ताकत नहीं, बल्कि उसकी कमजोरी और असुरक्षा का संकेत है। राष्ट्रपति ट्रम्प द्वारा विशेषज्ञों की सलाह को नजरअंदाज करना और स्पष्ट रणनीति का अभाव इस धारणा को और मजबूत करता है।

चीनी रणनीतिकारों के मुताबिक, यह युद्ध अमेरिका को लंबे समय तक मध्य पूर्व में उलझा सकता है। अगर ईरान में अराजकता फैलती है या मौजूदा शासन रहता है, दोनों ही स्थितियों में अमेरिका के लिए संकट बना रहेगा। वहीं, अगर ईरान परमाणु हथियार कार्यक्रम फिर शुरू करता बढ़ता है, तो अमेरिका को फिर से सैन्य हस्तक्षेप करना पड़ सकता है।

चीन इस पूरे घटनाक्रम को अपनी नीतियों के समर्थन के रूप में भी देख रहा है। चीन ने अपनी अर्थव्यवस्था के उन कमजोर बिंदुओं को कम करने की कोशिश की है, जहां से अमेरिका दबाव बना सकता है। इसके तहत दुर्लभ धातुओं, दवाइयों के कच्चे माल और उन्नत तकनीकी क्षेत्रों में नियंत्रण बनाए रखने की रणनीति पर काम हो रहा है। हालांकि अमेरिकी सेना द्वारा एआई के बढ़ते उपयोग ने चीनी विशेषज्ञों को चौंकाया है। यदि युद्ध लंबा खिंचता है, तो वैश्विक व्यापार और ऊर्जा आपूर्ति पर असर पड़ेगा, जिससे चीन की अर्थव्यवस्था और निर्यात भी प्रभावित हो सकते हैं।

अमेरिका पर निर्भर देशों की चिंता बढ़ रही है

ईरान युद्ध और उससे जुड़े नतीजों के कारण अमेरिका का ध्यान पूर्वी एशिया से हटेगा। अगर चीन की मर्जी चली तो 21वीं सदी इसी इलाके में आकार लेगी। इस युद्ध से अमेरिका पर निर्भर देश भी चिंतित होंगे। न सिर्फ उनका सहयोगी कम विश्वसनीय रह गया है बल्कि उसकी मनमानी का खमियाजा एनर्जी और कच्चे माल की अधिक कीमतों के रूप में भुगतना पड़ेगा। लिहाजा सवाल है, क्या एशियाई देश चीन को आहत करने में अधिक सावधानी बरतेंगे।

चीन को ये फायदे हो सकते हैं

- अमेरिका की स्थिति में गिरावट से दुनिया में चीन का प्रभाव बढ़ेगा।
- कमजोर पड़ चुके ट्रम्प से मई की वार्ता में चीन का पलड़ा भारी रहेगा।
- अमेरिका में चीनी निवेश बढ़ने की उम्मीद।
- कारोबार में और ज्यादा बढ़त मिलने के आसार।
- चीन की ग्रीन टेक्नोलॉजी की मांग बढ़ेगी।

ट्रम्प-शी जिन पिंग वार्ता में बेहतर नतीजों का अनुमान

मई में बीजिंग में शी जिन पिंग और ट्रम्प की वार्ता में चीन ऐसे करार की उम्मीद करेगा, जिससे अमेरिका के टैरिफ और निर्यात पर नियंत्रण का इस्तेमाल करने पर अंकुश लगेगा और संभवत: अमेरिका में चीनी निवेश का ढांचा तैयार होगा। चीन के लिए आदर्श स्थिति होगी कि ट्रम्प कहें कि वे ताईवान की आजादी के खिलाफ हैं। वे चीन में उसके शांतिपूर्ण एकीकरण का समर्थन करते हैं।

युद्ध से खाड़ी देशों में नए अवसर भी बनेंगे

खाड़ी देश और ईरान पुनर्निर्माण के लिए आकर्षक कॉन्ट्रेक्ट और टेंडर जारी करेंगे। होर्मुज की खाड़ी में संभावित रोक से चिंतित कुछ देश सौर ऊर्जा और बैटरी सहित चीन की ग्रीन टेक्नोलॉजी खरीदना चाहेंगे। एक अन्य तथ्य है, जहां अमेरिका का रुख बदलता रहता है वहीं चीन का घोर स्वार्थी रवैया कम से कम भरोसेमंद तो है।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

ट्रेंड

युवाओं के बीच आकर्षक दिखने की होड़ तेज हुई

सोशल मीडिया से चले ट्रेंड लुक्समैक्सिंग में युवा पुरुष अधिक आकर्षक दिखने के लिए बेतुके काम कर रहे हैं। 20 वर्षीय अमेरिकी इंफ्लुएंसर क्लैविकुलर (असली नाम ब्रैडेन पीटर्स) ने इसे आगे बढ़ाया है। क्लैव को बेहतर दिखने के प्रयासों के कारण ख्याति मिली है। अब वे अन्य युवाओं को ऐसा ही करना सिखाते हैं। उनके वीडियो को टिकटॉक पर तीन करोड़ लाइक्स मिल चुके हैं। क्लैव पॉपुलर लुक्समैक्सर्स की कतार में सबसे आगे हैं। वे अपने वीडियो में एसेंसन (शिखर पर जाने), मॉगिंग (रूप-रंग या दिखने में आगे) और चाड्स (हॉट दिखने वाले पुरुष) जैसे शब्द बोलते हैं। लाइवस्ट्रीमिंग से क्लैव की आय एक लाख डॉलर (92 लाख रुपए) महीना है। अन्य इंफ्लुएंसर लुकिंगमैक्सिंग एप्स का विज्ञापन करते हैं। इनमें यूजर्स के चेहरों का विश्लेषण कर सुधार के सुझाव दिए जाते हैं। एक दुर्लभ ट्रेंड भी सामने आया है। इसमें जबड़ों का आकार बदलने के लिए चेहरे पर बार-बार हथौड़ा मारते हैं। लुकमैक्सिंग के चक्कर में कुछ लोग ज्यादा एक्सरसाइज करने लगे हैं। बहरहाल लुक्समैक्सिंग केवल नुकसानदेह है और बेकार है। इकोनॉमिस्ट और यूगॉव के सर्वे में पाया गया कि दया, उदारता या हास्यबोध जैसे गुण ज्यादा महत्व रखते हैं।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

अर्थव्यवस्था • परिवारों पर आय का 250% कर्ज

नार्वे के लिए उसकी संपन्नता ही बनती जा रही है बड़ी चुनौती

नार्वे की अर्थव्यवस्था दुनिया की सबसे समृद्ध अर्थव्यवस्थाओं में गिनी जाती है। वहां प्रति व्यक्ति जीडीपी 83 लाख रुपए से अधिक है। 1991 के बाद से सरकार ने 203 लाख करोड़ रु. से अधिक का सोवरेन वेल्थ फंड बना रखा है। नार्वे की 56 लाख की आबादी के हिसाब से यह प्रति व्यक्ति 370 करोड़ रुपए है। इसके बावजूद देश में आर्थिक असंतुलन के संकेत बढ़ रहे हैं। तेल से मिली संपन्नता ने जहां सरकारी खर्च को आसान बना दिया है, वहीं राजनेताओं के लिए कठिन फैसले टालना भी आसान हो गया है। हेल्थकेयर पर खर्च यूरोपियन यूनियन की तुलना में 30% अधिक है। दूसरी ओर, आम लोगों में भी फिजूलखर्ची बढ़ी है। औसत परिवार पर कर्ज उनकी सालाना आय का 250% तक पहुंच चुका है, जो यूरोप में सबसे ज्यादा है। बेरोजगारी दर भी

बढ़ी है और शिक्षा प्रणाली में लंबी पढ़ाई व ड्रॉपआउट की समस्या सामने आ रही है। इससे मुद्रा कमजोर हुई है, निवेशकों का भरोसा घटा है और वास्तविक वेतन में गिरावट शुरू हो गई है। विशेषज्ञों का मानना है कि अत्यधिक संपन्नता अब नार्वे के लिए चुनौती बनती जा रही है।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

युद्ध • यूक्रेन जंग ने सैनिकों के लिए एक भ्रष्ट अर्थव्यवस्था निर्मित की है

रूसी सैनिक 'जिंदा' रहने के लिए रिश्वत दे रहे हैं

यूक्रेन युद्ध के मोर्चे पर तैनात रूसी सेना के वरिष्ठ अधिकारियों पर भ्रष्टाचार और शोषण के गंभीर आरोप सामने आए हैं। बेलगोरोड, लुहांस्क और डोनेत्स्क क्षेत्रों में तैनात एक दर्जन सैनिकों ने बताया कि वहां युद्ध का मैदान एक ऐसे 'बाजार' में बदल चुका है, जहां हर चीज की कीमत तय है– ड्रोन, पदक, छुट्टी और यहां तक कि जान बचाने की भी।

सैनिकों के अनुसार, अग्रिम मोर्चे पर यूक्रेन के घातक ड्रोन हमलों से बचने और पीछे सुरक्षित तैनाती पाने के लिए उन्हें वरिष्ठ अधिकारियों को रिश्वत देनी पड़ती है। कई सैनिकों ने बैंक ट्रांसफर, शिकायतों और आदेशों के स्क्रीनशॉट दिखाकर सबूत भी दिए हैं। रिपोर्ट्स के मुताबिक, नई भर्ती के जवानों को अक्सर बिना पर्याप्त प्रशिक्षण के सीधे मोर्चे पर भेज दिया जाता है। 26 वर्षीय मैक्सिम ने बताया कि अगस्त 2024 में भर्ती होने के बाद उसे बिना ट्रेनिंग के लुहांस्क भेज दिया गया। जनवरी 2026 में वह सेना से भाग गया। उसे कुल 80 लाख रूबल वेतन और बोनस मिले, जिनमें से 60 लाख उपकरण खरीदने और रिश्वत में खर्च हो गए। सैनिकों का कहना है कि उन्हें अधिकारियों के लिए शराब तक खरीदनी पड़ती है और कई मामलों में अपने वेतन का हिस्सा कमांडरों को देना पड़ता है।

अफसर को बनाकर दिया फ्लैट

एक स्थानीय रूसी सेना के यूनिट कमांडर के लिए लुहांस्क में बैहावका गांव के पास भूमिगत खंदकों में एक बेडरूम का नवनिर्मित सुसज्जित फ्लैट सैनिकों ने खुद बनाकर दिया है, जिसकी सामग्री तक उन्होंने दी।

एक अन्य सैनिक ने बताया कि अगर एक बार भुगतान शुरू किया, तो लगातार पैसा देना पड़ता है, वरना जान का खतरा बना रहता है। इंफेंट्री सैनिकों को अपने जूते और उपकरण तक खुद खरीदने पड़ते हैं, जबकि विशेष बलों को सेना से संसाधन मिलते हैं। भ्रष्टाचार का यह दायरा इतना व्यापक है कि सैनिकों से अधिकारियों के निजी काम भी करवाए जाते हैं। लुहांस्क के पास एक कमांडर के लिए भूमिगत खंदकों में पूरी तरह सुसज्जित फ्लैट तैयार कराया गया, जिसका खर्च भी सैनिकों से ही उठवाया गया। इन आरोपों ने रूसी सेना पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

जरूरत है भरोसे की

मालदा की हालिया घटना और सुप्रीम कोर्ट की कड़ी टिप्पणियों ने पश्चिम बंगाल में होने वाले विधानसभा चुनाव से पहले कानून-व्यवस्था और संवैधानिक संस्थाओं की स्थिति पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। मतदाता सूची के विशेष पुनरीक्षण को लेकर जनता के बीच बढ़ती नाराजगी, प्रशास. निक स्तर पर कमजोरियों के आरोप और बड़ी संख्या में मतदाताओं के नाम हटाए जाने की शिकायतों ने अविश्वास का माहौल और गहरा कर दिया है। मालदा के कालियाचक में घटी घटना, जिसमें उग्र भीड़ ने सात न्यायिक अधिकारियों को कई घंटों तक बंधक बनाकर रखा, यह दर्शाती है कि राज्य में हालात कितने तनावपूर्ण हो चुके हैं। लगातार विरोध-प्रदर्शन, सड़क जाम और प्रशासन के खिलाफ बढ़ती नाराजगी यह साफ संकेत देती है कि आम जनता के बीच स्पेशल इंटेंसिव रिवीजन को लेकर गहरी असंतुष्टि है। हालांकि किसी भी परिस्थिति में कानून को हाथ में लेना उचित नहीं ठहराया जा सकता, लेकिन इस घटना ने यह जरूर उजागर कर दिया है कि लोगों की चिंताओं को समय रहते सही तरीके से नहीं समझा गया। यह पूरी स्थिति प्रशासनिक विफलता की ओर भी इशारा करती है। कानून-व्यवस्था बनाए रखने में आई कमजोरी के कारण ही न्यायपालिका को सख्त रुख अपनाना पड़ा। राज्य में लंबे समय से तनावपूर्ण माहौल बना हुआ है और पहले भी चुनावी कार्यों में लगे कर्मचारियों को असुरक्षा का सामना करना पड़ा है। यदि जिम्मेदार अधिकारी समय रहते हालात की गंभीरता को भांपने में असफल रहे, तो यह निश्चित रूप से उनकी कार्यप्रणाली पर सवाल उठाता है। चुनाव की घोषणा के बाद बड़े पैमाने पर अधिकारियों के तबादले भी प्रशासनिक स्थिरता को प्रभावित करने वाले कारकों में शामिल हैं। इस पूरे मामले में जनता की चिंताओं को समझना भी उतना ही जरूरी है। पहले जहां राज्य में लगभग 7.6 करोड़ मतदाता थे, वहीं पुनरीक्षण के बाद इसमें करीब 10 प्रतिशत की कमी सामने आई है। अंतिम सूची जारी होने के बाद लाखों मतदाताओं को विभिन्न कारणों से चिन्हित किया गया, जिनमें से बड़ी संख्या में आपत्तियों का निपटारा भी किया जा चुका है। इसके बावजूद नाम खारिज होने की दर काफी अधिक बताई जा रही है, जिससे लोगों में यह आशंका बढ़ी है कि कहीं योग्य मतदाता भी सूची से बाहर न हो जाएं। यही कारण है कि जनता के बीच अविश्वास का माहौल तेजी से गहराता जा रहा है। भारत निर्वाचन आयोग ने आश्वासन दिया है कि कोई भी पात्र मतदाता मतदान के अधिकार से वंचित नहीं रहेगा। वहीं सुप्रीम कोर्ट भी इस पूरे मामले पर नजर बनाए हुए है और उसने प्रक्रिया को पारदर्शी बनाने के लिए न्यायिक अधिकारियों की नियुक्ति जैसे कदम उठाए हैं, जो एक असाधारण पहल मानी जा रही है। इन परिस्थितियों में सबसे बड़ी आवश्यकता जनता और प्रशासन के बीच भरोसा बहाल करने की है। राजनीतिक दलों की जिम्मेदारी भी यहां और बढ़ जाती है कि वे इस मुद्दे को केवल चुनावी लाभ-हानि के नजरिए से न देखें, बल्कि संवेदनशीलता के साथ जनता की समस्याओं को समझें।

हमेशा महिला आरक्षण का समर्थन किया

कुछ राज्यों के विधानसभा चुनावों के बीच 16 अप्रैल से महिला आरक्षण विधेयक में संशोधन पर चर्चा के लिए संसद की तीन दिवसीय बैठक बुलाना सरकार का एकतरफा निर्णय है और इस बैठक को लेकर विपक्ष को नजरअंदाज कर पूरी तरह से मनमानी की गई है, सरकार ने विपक्ष की मांग को दरकिनार करते हुए 16 अप्रैल से तीन दिन की संसद की बैठक बुलाई है, जिससे स्पष्ट संकेत मिलता है कि इस सत्र में महिला आरक्षण विधेयक के साथ-साथ परिसीमन का मुद्दा भी उठाया जा सकता है, परिसीमन जैसे महत्वपूर्ण विषय पर अब तक कोई व्यापक चर्चा नहीं हुई है, कांग्रेस ने हमेशा महिला आरक्षण का समर्थन किया है।

-जयराम रमेश, प्रभारी, कांग्रेस संचार विभाग

ईरान-अमेरिका युद्ध से दुनिया में महंगाई का लगा तड़का

> **अमेरिका-ईरान तनाव से वैश्विक महंगाई के मुख्य कारण कच्चे तेल की कीमतों में उछाल आना है। संघर्ष के कारण आपूर्ति रुकने के डर से तेल के दाम 105 डॉलर के पार पहुंच गए हैं। इससे पेट्रोल-डीजल और ऊर्जा की कीमतें बढ़ रही हैं, जो हर तरह की महंगाई का मुख्य कारण है। होर्मुज जल डमरूमध्य के पास तनाव से समुद्री व्यापार प्रभावित हो रहा है।**

रोहिताश सिंह वर्मा

अमेरिका-ईरान और इजरायल युद्ध का आज 35 वां दिन है। इस बीच अमेरिका का कहना है कि ईरान ने अपना बहुत कुछ खो दिया है, जबकि ईरान ने अमे. रिका के दावों को झूठा बताया है, दोनों में से कौन झूठ बोल रहा हैं और कौन सच, ये तो वहां के लोगों और मीडिया से बेहतर और कोई नहीं जान सकता, लेकिन इसके बीच बढ़ते तनाव ने वैश्विक अर्थव्यवस्था में भारी महंगाई का संकट पैदा कर दिया है। दुनिया के सभी देश इससे प्रभावित हुए हैं। भारत भी इससे अछूता नहीं है, क्योंकि कच्चे तेल की कीमतें 105 डालर प्रति बैरल के पार जाने से तेल संकट, परिवहन लागत में वृद्धि और आपूर्ति श्रंखला बाधित होने से जरूरी वस्तुओं के दाम बढ़ रहे हैं। अमेरिका-ईरान तनाव से वैश्विक महंगाई के मुख्य कारण कच्चे तेल की कीमतों में उछाल आना है। संघर्ष के कारण आपूर्ति रुकने के डर से तेल के दाम 105 डॉलर के पार पहुंच गए हैं। इससे पेट्रोल-डीजल और ऊर्जा की कीमतें बढ़ रही हैं, जो हर तरह की महंगाई का मुख्य कारण है। होर्मुज जल डमरूमध्य के पास तनाव से समुद्री व्यापार प्रभावित हो रहा है।

इससे वस्तुओं की आवाजाही रुकने से खाद्य पदार्थों और अन्य कच्चे माल की लागत बढ़ रही है। युद्ध के डर से निवेशकों ने भारतीय सहित दुनिया भर के बाजारों से पैसा निकालना शुरू कर दिया है, जिससे आर्थिक अनिश्चितता बढ़ गई है। सऊदी अरब और यूएई जैसे खाड़ी देशों के अमे. रिका से खफा होने और तनाव बढ़ने से तेल आपूर्ति का बड़ा संकट पैदा होने की आशंका है। भारत की ऊर्जा सुरक्षा, उर्वरक आपूर्ति और व्यापार पर इसका सीधा और नकारात्मक असर पड़ने का खतरा है, जिससे देश में महंगाई दर बढ़ सकती है। भारतीय तेल बास्केट की कीमत मार्च में 113.49 डॉलर प्रति बैरल दर्ज की गई है, जो पिछले चार वर्षों में सबसे अधिक है। इससे पहले मार्च 2023 में यूक्रेन युद्ध के समय यह 112.87 डॉलर तक पहुंचा था, लेकिन बाद में कीमतों में नरमी आई थी। पिछले रविवार को हुई ओपेक देशों की बैठक में ऑयल उत्पादन बढ़ाने पर चर्चा की गई।

1 अप्रैल को भारतीय रिफाइनरियों के लिए कच्चे तेल की कीमत 120.84 डॉलर प्रति बैरल दर्ज की गई, जबकि ब्रेंट क्रूड लगभग 107 डॉलर प्रति बैरल पर कारोबार कर रहा था। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतें फिलहाल 100 से 120 डॉलर प्रति बैरल के बीच बनी हुई हैं, जिससे दुनियाभर की अर्थव्यवस्थाओं पर दबाव बढ़ रहा है। आज शुक्रवार को कच्चे तेल की कीमत में फिर से तेजी आई। बुधवार 1 अप्रैल से निजी ईंधन खुदरा विक्रेता कंपनी शेल इंडिया ने अपने आउटलेट्स पर पेट्रोल और डीजल की कीमतों में भारी बढ़ोतरी की है। इससे पहले नायरा एनर्जी ने भी तेल के दाम बढ़ा चुकी है। बेंगलुरु में शेल आउटलेट्स पर पेट्रोल की कीमतों में 7.41 प्रति लीटर की बढ़ोतरी हुई है। अब सामान्य पेट्रोल की कीमत 119.85 और प्रीमियम पावर वेरिएंट की कीमत 129.85 प्रति लीटर हो गई है। डीजल की कीमतों में इससे भी अधिक 25.01 प्रति लीटर की भारी वृद्धि देखी गई है। सामान्य डीजल बढ़कर 123.52 और प्रीमियम डीजल 133.52 प्रति लीटर पर पहुंच गया है। हालांकि भारत सरकार की एजेंसियों ने अभी तक पेट्रोल व डीजल की कीमत में कोई बढ़ोतरी नहीं की गई है। गौरतलब है कि दो हफ्ते पहले भी शेल ने कुछ फिलिंग स्टेशनों पर मामूली संशोधन करते हुए पेट्रोल में 2 से 2.50 प्रति लीटर और डीजल की कीमतों को 93.50 तक बढ़ाया था। शेल से पहले 27 मार्च को नायरा एनर्जी ने पेट्रोल और डीजल की कीमतों में क्रमशः 5 और 3 प्रति लीटर की बढ़ोतरी की थी। महाराष्ट्र में अब नायरा पंपों पर पेट्रोल 103.82 से बढ़कर 108.82 प्रति लीटर हो गया है, जबकि डीजल 90. 09 से बढ़कर 93.09 प्रति लीटर पर बिक रहा है। भारत का ऑयल बास्केट ओमान, दुबई (खट्टे ग्रेड) और ब्रेंट (मीठे ग्रेड) के औसत पर आधारित होता है। इसे पिछले वित्त वर्ष में प्रोसेस किए गए कच्चे तेल के अनुपात के अनुसार तय किया जाता है। सऊदी अरब, इराक, कुवैत और यूएई जैसे प्रमुख उत्पादकों ने उत्पादन घटा दिया है। वहीं रूस का उत्पादन भी ड्रोन हमलों के कारण प्रभावित हुआ है। इस स्थिति को अब तक की सबसे बड़ी तेल आपूर्ति बाधा माना जा रहा है।

एक अप्रैल को भारतीय रिफाइनरियों के लिए कच्चे तेल की कीमत 120.84 डॉलर प्रति बैरल दर्ज की गई, जबकि ब्रेंट क्रूड लगभग 107 डॉलर प्रति बैरल पर कारोबार कर रहा था। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतें फिलहाल 100 से 120 डॉलर प्रति बैरल के बीच बनी हुई हैं, जिससे दुनियाभर की अर्थव्यवस्थाओं पर दबाव बढ़ रहा है। आज शुक्रवार को कच्चे तेल की कीमत में पिफर से तेजी आई। बुधवार 1 अप्रैल से निजी ईंधन खुदरा विक्रेता कंपनी शेल इंडिया ने अपने आउटलेट्स पर पेट्रोल और डीजल की कीमतों में भारी बढ़ोतरी की है। इससे पहले नायरा एनर्जी ने भी तेल के दाम बढ़ा चुकी है। बेंगलुरु में शेल आउटलेट्स पर पेट्रोल की कीमतों में 7.41 प्रति लीटर की बढ़ोतरी हुई है।

(ये लेखक के निजी विचार हैं)

आर्थिक साम्राज्य और बालेन सरकार का शिकंजा

पिछले दो दशक से इस शख्स की हैसियत इतनी थी कि यह न केवल गठबंधन दलों की सरकार बनाने बिगाड़ने की कुव्वत रखता था, संसद की राज्य व्यवस्था और सार्वजनिक लेखा समिति तक को प्रभावित करता था। दीपक भट्ट के खिलाफ वित्त मंत्रालय ने गोप. नीय जांच के आदेश दिए थे और जब उसके खिलाफ पुख्ता सबूत जुटा लिए गए तब दो अप्रेल को उसे काठमांडू के नक्शाल क्षेत्र से गिरफ्तार किया गया।

यशोदा श्रीवास्तव

नेपाल की बालेन सरकार एक साथ कई मोर्चों पर लड़ रही है। राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों से खुली जंग के साथ सफेदपोश अपराधियों के खिलाफ मोर्चा खोल दिया है। इस बीच बालेन सरकार के वित्त मंत्री स्वर्णिम बाग्ले की काठमांडू में भारतीय राजदूत नवीन वास्तव से मुलाकात भी चर्चा में है। इस मुलाकात की चर्चा इसलिए भी मायने रखती है क्योंकि यह परंपरा से थोड़ा हटकर थी। परंपरा यह रही है कि जब भी नेपाल में सत्ता परिवर्तन होता है तो सर्वप्रथम भारतीय राजदूत से पहली मुलाकात विदेश मंत्री अथवा प्रधानमंत्री की होती थी।

यद्यपि कि भारतीय राजदूत और नेपाल के वित्त मंत्री की यह मुलाकात बेहद गोपनीय रही फिर भी जब बालेन सरकार भ्रष्टाचार में लिप्त राजनेताओं और सफेदपोश अपराधियों पर लगाम कस रही है तो इस मुलाकात के तरह तरह के मायने निकाला जाना लाजिमी वह भी तब जब भ्रष्ट नेपाली नेताओं और भ्रष्ट अफसरों के तार भारत से जुड़े हुए हों। इस मुलाकात की एक बात यह भी हो सकती है कि चुनाव के बीच भारत ने नेपाल को भारतीय आठ सौ करोड़ की अनुदान राशि उपलब्ध कराई है,इस पर भी चर्चा संभव है। जहां तक बालेन सरकार के भ्रष्ट राजनेताओं पर शिकंजा कसने की बात है तो वह केवल के पी शर्मा ओली ,रमेश लेखक, महेश बस्नेत और पूर्व उर्जा मंत्री की गिरफ्तारी तक ही सीमित नहीं है। एमाले के अन्य नेता भी निशाने पर हैं। नेपाली कांग्रेस नेता और पूर्व प्रधानमंत्री शेर बहादुर देउबा और उनकी पत्नी आरजू राणा सहित इस पार्टी के अन्य नेता भी भ्रष्टाचार के आरा. प से घिरे हुए हैं। माओवादी केंद्र के अध्यक्ष पूर्व पीएम प्रचंड और पूर्व पीएम बाबू राम भट्टराई पर भी भ्रष्टाचार के आरोप है।

पूर्व पीएम शेर बहादुर देउबा सपत्नी अभी भारत में थे अब उनके थायलैंड में होने की चर्चा है शायद किसी बीमारी के इलाज के सिलसिले में। जाहिर भ्रष्टाचार में लिप्त नेपाली नेताओं का सुरक्षित ठिकाना भारत हो सकता है। भारतीय राजदूत और नेपाली वित्त मंत्री के मुलाकात में यह भी चर्चा का विषय हो सकता है। बालेन सरकार के भ्रष्टाचार विरोधी मुहिम में जिलाधिकारी स्तर के एकाध नेपाली अफसर भी सलाखों के पीछे हुए हैं। इसके बाद अभी मनी लांड्रिंग मामले में जो एक बड़े व्यवसाई की गिरफ्तारी हुई है, उससे व्यवसाय की आड़ में अवैध तरीके से धन अर्जन का चौंकाने वाला खुलासा हुआ है। इससे काठमांडू अथवा नेपाल में कहीं भी व्यवसाय की आड़ में लूट खसोट करने वाले सफेदपोशों में दहशत फैल गई है। गिरफ्तार किए गए दीपक भट्ट नाम के व्यवसाई का जो बैकग्राउंड सामने आया है वह काफी चौंकाने वाला है। और यह भी नेपाल जैसे छोटे देश में भी भ्रष्टाचार की जड़ें इतने गहरे तक है। नेपाली कांग्रेस नेता शेर बहादुर देउबा के चुनाव क्षेत्र डोडुलधुरा का रहने वाला दीपक भट्ट का संबंध नेपाली कांग्रेस के नेताओं के अलावा हर पार्टी के पूर्व प्रधानमंत्रियों से काफी निकट के रहे हैं।

एक से बढ़कर एक काले कारनामों से लैस इस व्यवसाई की जब कुंडली खंगाली कई तो प्याज के छिलके की तरह भ्रष्टाचार से जुड़े उसके ढेर सारे कारनामें सामने आने लगे। इसमें एक तो यह भी कि डाक्टर बाबू राम भट्टराई से उसके तार बहुत मजबूती से जुड़े हुए थे जब वे प्रधानमंत्री थे। बाबूराम भट्टराई से उसकी मुलाकात सत्ता रूढ़ दल के एक सांसद ने कराई थी जब वे नेपाली कांग्रेस में थे। डाक्टर बाबू राम भट्टराई बहुत ज्यादा समय तक प्रधानमंत्री नहीं रहे लेकिन जितने दिन भी थे, सत्ता के गलियारे में दीपक भट्ट की तूती बोलती थी। दीपक भट्ट अपनी एक कंपनी के मार्फत बड़ा व्यवसायिक साम्राज्य खड़ा कर लिया था। इसी समय नेपाल पुलिस को हथियार सप्लाई की दलाली में भी इसके हाथ सने हुए पाए गए। 44 वर्षीय दीपक भट्ट काठमांडू के सानेपा क्षेत्र में रहता है। काठमांडू का यह क्षेत्र दिल्ली की लुटियंस जोन की तरह चर्चित राजनी. तिक गलियारा है। यहां राजनीतिक दलों के कार्यालय और नेताओं के आवास हैं।

(ये लेखक के निजी विचार हैं)

शिक्षक, शोध और शिक्षा, सबका नया केंद्र बनेगी एनसीईआरटी

प्रो. आर.के. जैन

जब किसी देश की शिक्षा व्यवस्था करवट लेती है, तो बदलाव केवल पाठ्यपुस्तकों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि आने वाली पीढ़ियों की दिशा और दशा दोनों बदल जाती हैं। भारत की शिक्षा यात्रा में 2026 का आरंभ ऐसा ही एक निर्णायक पड़ाव बन गया है। पिछले 6 दशकों से करोड़ों विद्यार्थियों को अपनी पुस्तकों के माध्यम से मार्ग दिखाने वाली एनसीईआरटी अब 'डीम्ड-टू-बी-यूनिवर्सिटी' बनने जा रही है। अब वह केवल किताबें तैयार करने वाली संस्था नहीं रहेगी, बल्कि डिग्री प्रदान करेगी, शोध को बढ़ावा देगी, नए शिक्षकों का निर्माण करेगी और शिक्षा की नई नीतियों की आधारशिला रखेगी। यह बदलाव महज एक प्रशासनिक फैसला नहीं, बल्कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था को भीतर तक बदल देने वाली उस ऐतिहासिक क्रांति की शुरुआत है, जिसकी नींव राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने रखी थी।

1961 में स्थापित एनसीईआरटी ने दशकों तक भारतीय विद्यालई शिक्षा की आधारशिला बनकर कार्य किया। देश के अधिकांश स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकें, पाठ्यक्रम और मूल्यांकन पद्धतियां इसी संस्था की दृष्टि से आकार लेती रहीं। इसकी किताबों ने गांव के छोटे विद्यालय से लेकर महानगरों के प्रतिष्ठित स्कूलों तक शिक्षा का एक समान आधार तैयार किया। लेकिन समय बदलने के साथ यह स्पष्ट हो गया कि केवल पाठ्यपुस्तकें तैयार कर देना पर्याप्त नहीं है। नई शिक्षा व्यवस्था को ऐसे विशेषज्ञों की जरूरत है, जो शिक्षा को गहराई से समझें, उस पर शोध करें और बदलते समय के अनुसार उसे नया स्वरूप दे सकें। यही सोच एनसीईआरटी को विद्यालई शिक्षा की सीमाओं से आगे बढ़ाकर उच्च शिक्षा के केंद्र में ले आई।

वर्ष 2023 में केंद्रीय शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान ने पहली बार सार्वजनिक रूप से संकेत दिया था कि एनसीईआरटी को शोध और शिक्षक शिक्षा का राष्ट्रीय केंद्र बनाया जाएगा। लगभग 3 वर्षों की तैयारी, विशेषज्ञों की सिफारिशों और प्रशासनिक प्रक्रियाओं के बाद अब यह निर्णय अंतिम रूप लेने जा रहा है। दिल्ली स्थित एनसीईआरटी मुख्यालय के साथ-साथ अजमेर, भोपाल, भुवनेश्वर, मैसूर और शिलांग के क्षेत्रीय संस्थान भी इस नए स्वरूप का हिस्सा बनेंगे। इसका अर्थ केवल इतना नहीं कि एनसीईआरटी का दायरा बढ़ेगा, बल्कि यह कि देश के अलग-अलग हिस्सों में शिक्षा और शोध के नए केंद्र उभरेंगे। पहली बार विद्यालई शिक्षा और विश्वविद्यालई शोध एक ही मंच पर साथ दिखाई देंगे। डीम्ड यूनिवर्सिटी का दर्जा मिलने के बाद एनसीईआरटी को व्यापक शैक्षणिक अधिकार प्राप्त हो जाएंगे। अब वह स्वतंत्र रूप से डिप्लोमा, स्नातक, स्नातकोत्तर और पीएचडी स्तर तक के पाठ्क्रम संचालित कर सकेगा। शिक्षा, मनोविज्ञान, बाल विकास, समावेशी शिक्षा, डिजिटल शिक्षण, बहुभाषी अध्ययन और शिक्षक-प्रशिक्षण जैसे विषयों में विशेष डिग्रियां दी जा सकेंगी। संस्था को अपने पाठ्क्रम स्वयं बनाने, शैक्षणिक ऋण बैंक प्रणाली लागू करने और राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग ढांचे में शामिल होने की स्वतंत्रता मिलेगी। इसके साथ ही विद. ेशी विश्वविद्यालयों के साथ साझेदारी, छात्र-शिक्षक आदान-प्रदान तथा नए परिसर खोलने का मार्ग भी प्रशस्त होगा। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि एनसीईआरटी का उद्देश्य लाभ कमाना नहीं, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता को नई ऊंचाई तक पहुंचाना होगा। दशकों से भारतीय शिक्षा व्यवस्था दो हिस्सों में बंटी हुई दिखाई देती रही हैकृएक ओर स्कूल, दूसरी ओर विश्व. विद्यालय। विद्यालयों में पढ़ाई जाने वाली सामग्री और विश्वविद्यालयों में होने वाला शोध शायद ही कभी एक-दूसरे से जुड़ पाए। परिणामस्वरूप शोध पुस्तकालयों और रिपोर्टों तक सीमित रह गया, जबकि स्कूल पुराने ढर्रे पर चलते रहे। एनसीईआरटी का यह नया रूप अब इस दूरी को समाप्त करने वाला सशक्त सेतु बनेगा। जो विशेषज्ञ पाठ्यक्रम तैयार करेंगे, वही शिक्षक गढ़ेंगे और वही शिक्षा पर शोध भी करेंगे। इससे नई खोजें और नए विचार सीधे कक्षा तक पहुंचेंगे। बच्चों की पढ़ाई अधिक व्यावहारिक, वैज्ञानिक और भविष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप बन सकेगी। भारत की शिक्षा व्यवस्था में सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक हमेशा से प्रशिक्षित और सक्षम शिक्षकों की कमी रही है। अनेक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थान आज भी पुराने पाठ्यक्रमों और पारंपरिक तरीकों तक सीमित हैं। ऐसे समय में एनसीईआरटी का यह नया स्वरूप शिक्षक-शिक्षा के क्षेत्र में नई क्रांति ला सकता है। अब वह ऐसे पाठ्यक्रम प्रारंभ कर सकेगा, जिनमें डिजिटल शिक्षा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित शिक्षण, व्यावसायिक शिक्षा, समावेशी कक्षाएं और बहुभाषी अध्ययन जैसे आधुनिक विषय शामिल होंगे। क्षेत्रीय संस्थानों में पीजी और पीएचडी कार्यक्रम शुरू होने से युवा शोधकर्ताओं को विद्यालई शिक्षा की वास्तविक चुनौतियों पर काम करने का अवसर मिलेगा। उनके शोध के परिणाम सीधे पाठ्यक्रमों और शिक्षा नीतियों में दिखाई देंगे, जिससे शिक्षा अधिक जीवंत, प्रभावी और समयानुकूल बन सकेगी। हर बड़ा परिवर्तन अपने साथ चुनौतियां भी लाता है। एनसीईआरटी के सामने भी कई गंभीर प्रश्न हैं। कुछ शिक्षाविदों का मानना है कि यूजीसी के नियमों के अधीन आने से उसकी स्वतंत्र कार्यशैली प्रभावित हो सकती है। जिस संस्था की पहचान अब तक विद्यालई शिक्षा से रही है, उसके लिए विश्वविद्यालई ढांचे में ढलना आसान नहीं होगा। नए विभाग, प्रशिक्षित संकाय, शोध सुविधाएं, पर्याप्त बजट और प्रशासनिक सुधारों की आवश्यकता पड़ेगी। साथ ही यह भी सुनिश्चित करना होगा कि उच्च शिक्षा की नई भूमिका निभाते हुए एनसीईआरटी अपनी मूल जिम्मेदारी, यानी स्कूल शिक्षा को मजबूत बनाने, से दूर न हो। यदि योजना, पारदर्शिता और गुणवत्ता पर बराबर ध्यान दिया गया, तो यही चुनौतियां उसकी सबसे बड़ी शक्ति बन सकती हैं। यदि यह परिवर्तन सफल हुआ, तो आने वाले समय में एनसीईआरटी केवल एक संस्था नहीं, बल्कि भारतीय शिक्षा का सबसे बड़ा केंद्र बन जाएगी। एक ओर देश का विद्यार्थी उसकी किताबों से पढ़ेगा, दूसरी ओर उसी संस्था का शोधकर्ता नई शिक्षा नीति तैयार करेगा और वही शिक्षक गढ़े जाएंगे, जो आने वाली पीढ़ियों को दिशा देंगे। यह ऐसा मॉडल होगा, जहां शिक्षा, शोध और प्रशिक्षण एक-दूसरे से सीधे जुड़े होंगे। विकसित भारत का सपना केवल उद्योग, तकनीक और अर्थव्यवस्था से पूरा नहीं होगाय उसकी सबसे मजबूत आधारशिला शिक्षा ही बनेगी। एनसीईआरटी का यह नया स्वरूप उसी आधारशिला को अधिक मजबूत, व्यापक और विश्वस्तरीय बनाने की दिशा में उठाया गया एक ऐतिहासिक कदम है।

(ये लेखक के निजी विचार हैं)

सम्पादकीय

बंगाल में न्यायिक अधिकारियों को बंधक बनाना व्यवस्था का उपहास

पश्चिम बंगाल के मालदा में एसआईआर के दौरान 7 न्यायिक अधिकारियों को घंटों बंधक बनाने और उनकी गाड़ियों पर हमले का मामला बेहद गंभीर है और सुप्रीम कोर्ट ने अगर इस मामले पर बेहद गंभीर टिप्पणी और रुख अपनाया है तो यह स्वीकार्य है। राज्य में इस समय विधानसभा चुनाव हो रहे हैं और पूरी शासकीय मशीनरी चुनाव आयोग के तहत काम कर रही है, लेकिन राज्य के हालात इतने बुरे बना दिए गए हैं कि केंद्र से भेजे गए अधिकारियों, कर्मचारियों को तो छोड़िए, सीधे सुप्रीम कोर्ट की ओर से तैनात किए गए न्यायिक अधिकारियों की जान और सम्मान को बंधक बना लिया जाता है। राज्य में प्रत्येक चुनाव के दौरान यही तस्वीर सामने आ रही है, जोकि बेहद चिंताजनक और डरावनी है। इस प्रकरण से सहज समझा जा सकता है कि अगर न्यायिक अधिकारियों के साथ भीड़ किसी उकसावे में ऐसा कर सकती है तो फिर आम जनता जोकि किसी अन्य पार्टी या राजनीतिक विचारधारा का समर्थन करती है, उसके साथ क्या सलूक किया जाता है। माननीय सुप्रीम कोर्ट का यह कहना सर्वथा उचित है कि यह घटना न केवल न्यायिक अधिकारियों को डराने-धमकाने का घिनौना प्रयास है, अपितु कोर्ट के अधिकार को भी चुनौती देना है। गौरतलब है कि सीजेआई जस्टिस सूर्यकांत ने इस प्रकरण पर यह भी कहा है कि उन्होंने रात दो बजे तक नजर बनाए रखी, यानी वे इस पूरे प्रकरण से किस तरह हतप्रभ और व्यथित रहे, यह उजागर होता है। जाहिर है, पश्चिम बंगाल की स्थिति अब केवल कार्यपालिका की चिंता का विषय नहीं है, खुद न्यायपालिका इस बात को गहराई से समझ रही है कि राज्य के हालात कैसे हो गए हैं, और रोकथाम कितनी जरूरी है।

गौरतलब है कि इस समय जब चुनाव आयोग ही राज्य की प्रशासनिक मशीनरी को संचालित कर रहा है, तब भी राज्य के एडवोकेट जनरल राजनीतिक भाषा का प्रयोग करते हुए आरोप लगा रहे हैं कि चुनाव आयोग को विरोधी की तरह काम नहीं करना चाहिए। अजब यह है कि अगर राज्य में गलत हो रहा है तो चुनाव आयोग को चुप्पी साध लेनी चाहिए ताकि यह संदेश साफ हो जाए कि वह राज्य का विरोधी नहीं है। क्या आयोग की जिम्मेदारी निष्पक्ष और बगैर हिंसा के चुनाव करवाने की नहीं है तो फिर आयोग अपनी जिम्मेदारी को पूरा कर रहा है तो क्या इसे विरोधी होना करार दिया जाएगा। जाहिर है, पश्चिम बंगाल में हर कोई अगर राजनीतिक होकर केवल पक्ष या विरोध में आवाज रख रहा है तो यह बेहद चिंताजनक है।

गौरतलब है कि इस समय जब चुनाव आयोग ही राज्य की प्रशासनिक मशीनरी को संचालित कर रहा है, तब भी राज्य के एडवोकेट जनरल राजनीतिक भाषा का प्रयोग करते हुए आरोप लगा रहे हैं कि चुनाव आयोग को विरोधी की तरह काम नहीं करना चाहिए। अजब यह है कि अगर राज्य में गलत हो रहा है तो चुनाव आयोग को चुप्पी साध लेनी चाहिए ताकि यह संदेश साफ हो जाए कि वह राज्य का विरोधी नहीं है। क्या आयोग की जिम्मेदारी निष्पक्ष और बगैर हिंसा के चुनाव करवाने की नहीं है तो फिर आयोग अपनी जिम्मेदारी को पूरा कर रहा है तो क्या इसे विरोधी होना करार दिया जाएगा। जाहिर है, पश्चिम बंगाल में हर कोई अगर राजनीतिक होकर केवल पक्ष या विरोध में आवाज रख रहा है तो यह बेहद चिंताजनक है। होना तो यह चाहिए कि राज्य में निष्पक्ष विचारधारा रखी जाए लेकिन वहां का माहौल ऐसा हो गया है, जिसमें कोई सच बोलने से ही घबरा रहा है कि उसके ऐसा कहने के बाद क्या हश्र होगा।

पश्चिम बंगाल में इस बार चुनावी घमासान पहले से भी कहीं ज्यादा घनघोर हो चुका है। राज्य में इस समय धर्म, क्षेत्र और अपराध के नाम पर सियासत गरमा रही है। बीते पांच साल के अंदर एक भी दिन शायद ऐसा न रहा हो, जब राज्य की ममता बनर्जी सरकार और केंद्र सरकार के बीच टकराव की स्थिति न रही हो। वहीं राज्य के अंदर भाजपा और टीएमसी के बीच जिस प्रकार का सीधा घमासान हो रहा है, उसने चुनावी परिदृश्य को बेहद रोमांचक बना दिया है। बंगाल में कोई भी चुनाव शांतिपूर्वक तरीके से संपन्न नहीं हो पाता। राजनीति जैसे यहां के कण-कण में रच गई है, हालांकि देश के स्वतंत्रता आंदोलन में सर्वाधिक आवाज बुलंद करने वाले बौद्धिकों, राजनीतिकों, शिक्षकों, कलाकारों के प्रदेश से आज निष्पक्षता, न्याय, सत्य की अपेक्षा जैसे समाप्तप्राय हो गई है। जाहिर है, बिहार में जीत का ध्वज फहराने के बाद भाजपा अब पश्चिम बंगाल में भी सत्ता परिवर्तन चाहती है। निश्चित रूप से एक राजनीतिक दल के लिए यही आवश्यक होता है कि वह चुनाव में उतरे, जनमानस तैयार करे और सत्ता हासिल कर जनकल्याण के लिए कार्य करे। कमोबेश पूरे देश में पश्चिम बंगाल जैसे हाल कहीं नहीं है। दूसरे राज्यों में भी विरोध और टकराव देखने को मिलता है, लेकिन बंगाल में टीएमसी का स्वर ऐसा है, जैसे उनके अलावा यहां की सत्ता में कोई और दखल नहीं दे सकता, उसे हासिल नहीं कर सकता और कोई अगर ऐसा करने की कोशिश करे तो उसे चरम स्तर का विरोध झेलना पड़ता है। राज्य में चुनाव अब हिंसा का पर्याय हो गए हैं, जोकि बेहद चिंता की बात है। वास्तव में बंगाल के बदहाल अब बदले जाने की जरूरत है और यह काम यहां की जनता ही कर सकती है, जिसे यह जिम्मेदारी लेनी होगी। राजनीतिक विचारधारा का समर्थन सही है लेकिन यह भी देखा जाना चाहिए कि वह विचारधारा सत्ता में आकर क्या गुल खिलाती है। बंगाल एक महान धरा है, उसके यश को और बढ़ाने की जरूरत है, न कि उसे कलंकित किए जाने की।

अहंकार, मुखौटे और अध्यात्म

दैनिक अर्थ प्रकाश

स्पिरिचुअल हीलर
सिद्ध गुरू प्रमोद निर्वाण
गिनीज़ विश्व रिकॉर्ड विजेता लेखक

जीवन की यात्रा में एक समय ऐसा आता है जब मनुष्य थक जाता है। यह थकान शरीर की नहीं होती, परिस्थितियों की भी नहीं होती, यह थकान होती है खुद को निभाते-निभाते थक जाने की। वर्षों तक हम जो नहीं थे, वही बनने की कोशिश करते रहे। कभी समझदार दिखने के लिए, कभी ज्ञानी, कभी सफल, कभी त्यागी, कभी आध्यात्मिक। इन सब प्रयासों में हम एक बात भूलते चले गए, होना। होना, यानी, वह जो हम असल में हैं, हमारा सच्चा रूप, बिना किसी मुखौटे के, लेकिन हम लोगों को प्रभावित करने के लिए, प्रशंसा पाने के लिए, किसी का साथ पाने के लिए, या कुछ ज्यादा धन कमाने के लिए दिखावा करने में इतने व्यस्त हो गए कि 'होना' कहीं पीछे छूट गया।

मनुष्य जीवन जीते हुए न जाने कितने मुखौटे पहनता है। यह मुखौटे वह दूसरों को धोखा देने के लिए नहीं पहनता; वह इन्हें स्वयं को सुरक्षित रखने के लिए पहनता है। हर मुखौटा एक डर से पैदा होता है, अस्वीकृति का डर, महत्वहीन हो जाने का डर, साधारण रह जाने का डर। और इन डरों से बचने के लिए हम अपने बारे में कहानियां गढ़ते हैं। हम बताते हैं कि हम कौन हैं, क्या जानते हैं, क्या समझते हैं, क्या पा चुके हैं। धीरे-धीरे वही कहानियाँ हमारी पहचान बन जाती हैं।

अहंकार इसी प्रक्रिया का नाम है। अहंकार कोई अलग वस्तु नहीं है; वह इन कहानियों का समुच्चय है। वह वह छवि है जिसे हम हर समय संभाल कर रखते हैं ताकि वह छवि कहीं टूट न जाए। जब कोई प्रश्न उस छवि को चुनौती देता है, तो भीतर बेचैनी उठती है। तब हम उत्तर खोजते हैं, तर्क गढ़ते हैं, अपने पक्ष में प्रमाण इकट्ठा करते हैं। यह सारा श्रम आत्म-रक्षा का श्रम है, सत्य की खोज का नहीं।

सच्चा अध्यात्म यहीं से शुरू होता है जहाँ आत्म-रक्षा की आवश्यकता समाप्त होने लगती है। अध्यात्म हमें नया मुखौटा नहीं देता, वह पुराने मुखौटों से मुक्त करता है। वह हमें और अधिक प्रभावशाली नहीं बनाता, वह प्रभाव डालने की इच्छा को ही अप्रासंगिक कर देता है। जिस दिन यह स्पष्ट हो जाता है कि हमें किसी को प्रभावित करने की न इच्छा है, न आवश्यकता, उसी दिन भीतर एक मौन उतरता है। यह मौन खाली नहीं होता; यह अत्यंत भरा हुआ होता है। जब मुखौटे गिरते हैं, तब पहला अनुभव असहजता का होता है। क्योंकि अब हमारे पास दिखाने के लिए कुछ नहीं बचता। न उत्तर, न सिद्धांत, न पहचान। हम पहली बार स्वयं के सामने निर्वस्त्र खड़े होते हैं, न मानसिक अर्थ में, बल्कि अस्तित्वगत अर्थ में, और यह क्षण भयावह भी हो सकता है, क्योंकि अब कोई आवरण नहीं बचा जिसके पीछे छुपा जा सके। यदि हम इस असहजता से भागते नहीं, यदि हम इसमें ठहर जाते हैं, तो धीरे-धीरे यह असहजता विश्राम में बदल जाती है।

अध्यात्म का अर्थ किसी ऊंचाई पर पहुंचना नहीं है। अध्यात्म का अर्थ है अपने वास्तविक धरातल पर उतर आना। वहां न कोई विशेष है, न साधारण। वहाँ केवल होना है। जब हम वहां पहुंचते हैं, तब पहली बार हमें यह भी समझ में आता है कि हमें हर प्रश्न का उत्तर क्यों नहीं चाहिए। क्योंकि उत्तर देने की जरूरत वहाँ होती है जहां हमें कुछ साबित करना होता है, और जहां साबित करने की आवश्यकता नहीं रहती, वहां प्रश्न भी अपना भार खो देते हैं। हम ऐसा करेंगे तो पाएंगे कि जीवन अपने आप सरल होने लगता है। अब बातचीत में प्रदर्शन नहीं होता, संवाद होता है। अब मौन भद्दा नहीं लगता, फूहड़ नहीं लगता, अजीब नहीं लगता, सहज लगता है। अब यह चिंता नहीं रहती कि लोग हमारे बारे में क्या सोचेंगे, क्योंकि भीतर यह साफ़ हो चुका होता है कि लोग जो भी सोचेंगे, वह उनके मन का विषय है, हमारे अस्तित्व का नहीं।

अहंकार की पहली बड़ी विशेषता यह है कि वह हमेशा भविष्य में जीता है और दूसरी विशेषता यह है कि वह किसी भी तरह से अपना महत्व जताना चाहता है। महत्व जताने की क्रिया में लोगों के मन में हमारी छवि महत्वपूर्ण हो जाती है। तब यह सोचना और जानना महत्वपूर्ण हो जाता है कि लोग क्या कहेंगे, क्या मानेंगे, क्या प्रतिक्रिया देंगे। अध्यात्म वर्तमान में लौटना है। वर्तमान में कोई मुखौटा नहीं चाहिए, क्योंकि वर्तमान में हम जैसे असल में हैं, वैसे ही होते हैं, वैसे ही दिखते हैं। वहां केवल जीवन होता है, बहता हुआ, अनगढ़, सजीव।

जब हम अपने बारे में कहानियाँ बनाना छोड़ देते हैं, तब जीवन स्वयं कहानी बन जाता है। अब हमें यह नहीं बताना पड़ता कि हम कौन हैं। तब हमारा होना स्वयं बोलने लगता है। यह बोलना शब्दों में नहीं होता, यह व्यवहार में होता है, उपस्थिति में होता है, करुणा में होता है। खास बात यह है कि यह करुणा कोई सीखी हुई नैतिकता नहीं होती, यह अहं के पिघलने से उपजती है। जब मुखौटे गिरते हैं, तब जीवन में एक गहरी ईमानदारी आती है। इस अवस्था में मनुष्य पहली बार अपने दुख के साथ भी ईमानदार हो पाता है। अब वह दुख को ढकता नहीं, सजाता नहीं, उसे कथा नहीं बनाता, वह बस उसे महसूस करता है। और यही महसूस करना उपचार बन जाता है। क्योंकि दुख का बोझ उससे नहीं बढ़ता कि वह है; वह इसलिए बढ़ता है क्योंकि हम उसे छुपाते हैं, उसे गलत मानते हैं, उसे कमज़ोरी समझते हैं।

बहुत लोग अध्यात्म को भी एक पहचान बना लेते हैं। वे आध्यात्मिक दिखना चाहते हैं, आध्यात्मिक बोलना चाहते हैं, आध्यात्मिक सिद्ध होना चाहते हैं। यह भी एक मुखौटा है–शायद सबसे सूक्ष्म। लेकिन सच्चा अध्यात्म वहाँ शुरू होता है जहां 'मैं आध्यात्मिक हूँ' यह विचार भी गिर जाता है। क्योंकि जैसे ही 'मैं' आता है, वैसे ही दूरी बन जाती है। अध्यात्म हमें सिखाता है कि कमज़ोर होना कोई दोष नहीं है। दोष केवल यह है कि हम उसे छुपाने की कोशिश करें। जब हम छुपाना छोड़ देते हैं, तब कमज़ोरी भी शक्ति में बदल जाती है, क्योंकि वह हमें वास्तविक बना देती है।

अंततः, मुखौटे उतरने के बाद का जीवन बहुत साधारण दिखता है। उसमें कोई चमत्कार नहीं, कोई नाटकीय मोड़ नहीं, लेकिन उसी साधारणता में एक गहराई होती है, एक स्थिरता, एक सच्चाई। अब जीवन को साबित नहीं करना पड़ता, जीना होता है, और यही सच्चा अध्यात्म है। जहां कुछ दिखाना नहीं है, कुछ बनना नहीं है, कुछ साबित नहीं करना है, बस होना है, और होना ही पर्याप्त है।

अर्थ प्रकाश में **34 साल पहले** आज का दिन

समस्याओं से जूझ रहा है पंचकूला का सेक्टर-19

पंचकूला। यूं तो पंचकूला विकास की नित नई मंजिले तय कर रहा है लेकिन फिर भी कुछ सेक्टर ऐसे है जहां कई तरह की समस्याएं व्याप्त है। इसी श्रेणी में आता है यहां का सेक्टर-19। इस सेक्टर के लोगों के लिए सबसे बड़ी समस्या है जीरकपुर मार्ग पर लगे स्टोन क्रशर। जब कभी थोड़ी बहुत हवा चलती है तो इन क्रशरों से मिट्टी तथा रेत उड़कर लोगों के घरों में भर जाता है। यहां के निवासियों को सरकार से यह शिकायत है कि कई बार वादे करने के बावजूद भी इन क्रेशरों को अब स्थानांतरित नहीं किया गया। यहां की दूसरी समस्या है निकटवर्ती रबड़ फैक्ट्री की दुर्गनध क्योंकि इस दुर्गन्ध के कारण लोगों का सांस लेना दूभर हो जाता है। एक अन्य समस्या जो इस सेक्टर के वासियों को अक्सर पेश आती है वह है पानी की। अब क्योंकि इस सेक्टर में लगभग एक हजार मकान बन चुके है तथा लगभग इतने ही निर्माणाधीन है। लेकिन लोगों की इस सिलसिले में समस्या यह है कि जब उन्हें अपने मकान की छत डालनी होती है तो निकटवर्ती टयूबवेल से पानी की सप्लाई बंद हो जाती है। ऐसे में जब तक ट्यूबवेल कर्मियों को भेंट नहीं चढ़ा दी जाती तब तक पानी की सप्लाई बहाल नहीं होती। सेक्टर में सड़के भी अपनी दुर्गति की गाथा स्वयं सुना रही है।

सेवाओं का मनोबल मत तोड़ो

राजकीय सेवाओं में हतो-उत्साह को भावना उत्पन्न नहीं होने देनी चाहिए क्योंकि इससे कार्यकुशलता और ईमानदारी से कार्य निर्वाह में बाधा आती है। यह तभी संभव है जब सेवाओं में अधिकारियों एवं कर्मचारियों में निराशा और मनमुटाव की स्थिति उभरने का अवसर न आए। इसके लिए यह जरूरी है कि अन्याय, पक्षपात और भ्रष्टाचार को बढ़ावा न मिले। हरियाणा में इस सिद्धांत की अवहेलना करते हुए उनमें वरिष्ठता और दक्षता को सेवाओं की भावी पदोन्नति के अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से ठुकरा दिया। यह कोई अच्छी बात नहीं-बल्कि सेवाओं के लिए चिन्ता का विषय है। दरअसल राज्य में भारतीय प्रशासनिक सेवा आईएएस के 10 रिक्त पदों की पूर्ति के लिए वरिष्ठता क्रमानुसार पदोन्नति प्रदान न करके इनमें से कुछ व्यक्तियों को चल लिया गया है जो कुशल प्रशासनिक सेवाओं के विरुद्ध है। मौजूदा क्रमानुसार जो व्यक्ति वरिष्ठ थे और जिनका रिकार्ड भी बहुत अच्छा था उनकी दक्षता को भी ठुकराकर जूनियर व्यक्तियों को इन पदों पर पदोन्नत कर दिया गया। जिससे निश्चय ही वरिष्ठ और दक्ष अधिकारियों के मन में क्षोभ एवं शोक की लहर फैल गई।

ज्ञान सागर : देखें आज के दिन क्या घटा

1858 - रानी लक्ष्मीबाई को अंग्रेजों से भीषण युद्ध के बाद झांसी को छोड़ना पड़ा।

1889 - हिन्दी जगत के कवि, लेखक, पत्रकार माखन लाल चतुर्वेदी का जन्म।

1904 - हिंदी सिनेमा के हरदिल अजीज गायक और कलाकार कुंदन लाल सहगल का जन्म।

1905 - कांगड़ा घाटी में आए भूकंप में 20,000 लोगों की जाने गईं थी।

1924 - उड़िया भाषा के प्रसिद्ध कवि गंगाधर मेहेरे का निधन।

1949 - उत्तरी अटलांटिक सैन्य संगठन (नाटो) की स्थापना हुई जो शीतयुद्ध के शुरुआती दौर का नतीजा थी।

1949 - भारतीय अभिनेत्री परवीन बॉबी का जन्म।

1975 - बिल गेट्स और पॉल एलेन के बीच भागीदारी से न्यू मैक्सिको के अलबकर्क में माइक्रोसॉफ्ट की स्थापना।

1979 - पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो को फ़ाँसी।

1983 - अंतरिक्ष शटल चैलेंजर ने अपनी पहली उड़ान भरी।

1994 - तिब्बती धर्मगुरु दलाई लामा द्वारा तिब्बती बालक उग्येन थिनली दोरजी को नये कर्मापा के रूप में घोषणा।

1995 - भारत की प्रसिद्ध समाजसेवी, स्वतंत्रता सेनानी और शिक्षाविद हंसा मेहता का निधन।

1997 - क्रयशक्ति की क्षमता की दृष्टि से विश्व बैंक ने भारत को विश्व की पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाला देश घोषित किया।

2001 - चीन का अमेरिका विमान व चालक दल लौटाने से इन्कार, फिलीपींस के पूर्व राष्ट्रपति एरुत्रादा के खिलाफ़ आरोप पत्र दाखिल।

2004 - भारत-नेपाल की अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर माओवादियों ने 18 भारतीय तेल टैंकरों में आग लगाई।

2006 - ईराक के अपदस्थ राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन पर नये आरोप लगे।

2008 - दिल्ली के पूर्व मुख्यमंत्री मदन लाल खुराना ने भाजपा सदस्यता स्वीकार किया।

2010 - माओवादियों द्वारा किए गए उड़ीसा, भारत के कोरापुट ज़िले में बारुदी सुरंग विस्फोट में दस सुरक्षाकर्मियों की मौत हो गयी।

2021 - भारतीय हिन्दी सिनेमा की प्रसिद्ध खलनायिकाओं में से एक शशिकला का निधन।

2025 - फ़िल्म जगत के प्रसिद्ध भारतीय अभिनेता, निर्माता व निर्देशक मनोज कुमार का निधन।

बोल ब्यूटीफुल

अभिजीत अय्यर: अमेरिकी रक्षा मंत्री कह रहे हैं कि हम ईरान को पाषण युग में पहुंचा देंगे, जबकि मैंने सोचा था कि वे ईरानी लोगों को स्वतंत्रता दिलाना चाहते हैं।

जावेद हसन: ट्रंप कह रहे है कि अगले दो-तीन हफ्तों में हम ईरान पर जोरदार हमले करके उसे उसकी हैसियत दिखा देंगे। करीब नौ करोड़ की आबादी वाले देश को तबाह करने पर आमदा इन्हीं ट्रंप को नोबेल शांति पुरस्कार देने के लिए पाकिस्तान ने पुरजोर पैरवी की थी।

डोनाल्ड टस्क: नाटो को छिन्न-भिन्न करने की बात रुस पर लगे प्रतिबंधों में ढील, यूरोप में ऊर्जा संकट, यूक्रेन को मिलने वाली सैन्य मदद में गतिरोध और कीव के लिए वित्तीय सहायता में ठहराव, ये सब पुतिन की मनचाही मुरादे होगी, जो अब पूरी होती दिख रही है।

अरविंद चोटिया: राघव चड्ढा अपने उठाए मुद्दों से जनता का ध्यान खींच रहे थे तो जाहिर है कि अरविंद केजरीवाल बिल्कुल नहीं चाहेंगे कि पार्टी में कोई उनसे भी ज्यादा मुखर दिखें।

शिक्षक, शोध और शिक्षा : सबका नया केंद्र बनेगी एनसीईआरटी

दैनिक अर्थ प्रकाश

जब किसी देश की शिक्षा व्यवस्था करवट लेती है, तो बदलाव केवल पाठ्यपुस्तकों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि आने वाली पीढ़ियों की दिशा और दशा दोनों बदल जाती हैं। भारत की शिक्षा यात्रा में 2026 का आरंभ ऐसा ही एक निर्णायक पड़ाव बन गया है। पिछले 6 दशकों से करोड़ों विद्यार्थियों को अपनी पुस्तकों के माध्यम से मार्ग दिखाने वाली एनसीईआरटी अब 'डीम्ड-टू-बी-यूनिवर्सिटी' बनने जा रही है। अब वह केवल किताबें तैयार करने वाली संस्था नहीं रहेगी, बल्कि डिग्री प्रदान करेगी, शोध को बढ़ावा देगी, नए शिक्षकों का निर्माण करेगी और शिक्षा की नई नीतियों की आधारशिला रखेगी। यह बदलाव महज एक प्रशासनिक फैसला नहीं, बल्कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था को भीतर तक बदल देने वाली उस ऐतिहासिक क्रांति की शुरुआत है, जिसकी नींव राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने रखी थी।

1961 में स्थापित एनसीईआरटी ने दशकों तक भारतीय विद्यालयी शिक्षा की आधारशिला बनकर कार्य किया। देश के अधिकांश स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकें, पाठ्यक्रम और मूल्यांकन पद्धतियां इसी संस्था की दृष्टि से आकार लेती रहीं। इसकी किताबों ने गांव के छोटे विद्यालय से लेकर महानगरों के प्रतिष्ठित स्कूलों तक शिक्षा का एक समान आधार तैयार किया। लेकिन समय बदलने के साथ यह स्पष्ट हो गया कि केवल पाठ्यपुस्तकें तैयार कर देना पर्याप्त नहीं है। नई शिक्षा व्यवस्था को ऐसे विशेषज्ञों की जरूरत है, जो शिक्षा को गहराई से समझें, उस पर शोध करें और बदलते समय के अनुसार उसे नया स्वरूप दे सकें। यही सोच एनसीईआरटी को विद्यालयी शिक्षा की सीमाओं से आगे बढ़ाकर उच्च शिक्षा के केंद्र में ले आई।

वर्ष 2023 में केंद्रीय शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान ने पहली बार सार्वजनिक रूप से संकेत दिया था कि एनसीईआरटी को शोध और शिक्षक शिक्षा का राष्ट्रीय केंद्र बनाया जाएगा। लगभग 3 वर्षों की तैयारी, विशेषज्ञों की सिफारिशों और प्रशासनिक प्रक्रियाओं के बाद अब यह निर्णय अंतिम रूप लेने जा रहा है। दिल्ली स्थित एनसीईआरटी मुख्यालय के साथ-साथ अजमेर, भोपाल, भुवनेश्वर, मैसूर और शिलांग के क्षेत्रीय संस्थान भी इस नए स्वरूप का हिस्सा बनेंगे। इसका अर्थ केवल इतना नहीं कि एनसीईआरटी का दायरा बढ़ेगा, बल्कि यह कि देश के अलग-अलग हिस्सों में शिक्षा और शोध के नए केंद्र उभरेंगे। पहली बार विद्यालयी शिक्षा और विश्वविद्यालयी शोध एक ही मंच पर साथ दिखाई देंगे।

डीम्ड यूनिवर्सिटी का दर्जा मिलने के बाद एनसीईआरटी को व्यापक शैक्षणिक अधिकार प्राप्त हो जाएंगे। अब वह स्वतंत्र रूप से डिप्लोमा, स्नातक, स्नातकोत्तर और पीएचडी स्तर तक के पाठ्यक्रम संचालित कर सकेगा। शिक्षा, मनोविज्ञान, बाल विकास, समावेशी शिक्षा, डिजिटल शिक्षण, बहुभाषी अध्ययन और शिक्षक-प्रशिक्षण जैसे विषयों में विशेष डिग्रियां दी जा सकेंगी। संस्था को अपने पाठ्यक्रम स्वयं बनाने, शैक्षणिक ऋण बैंक प्रणाली लागू करने और राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग ढांचे में शामिल होने की स्वतंत्रता मिलेगी। इसके साथ ही विदेशी विश्वविद्यालयों के साथ साझेदारी, छात्र-शिक्षक आदान-प्रदान तथा नए परिसर खोलने का मार्ग भी प्रशस्त होगा। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि एनसीईआरटी का उद्देश्य लाभ कमाना नहीं, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता को नई ऊंचाई तक पहुंचाना होगा।

दशकों से भारतीय शिक्षा व्यवस्था दो हिस्सों में बंटी हुई दिखाई देती रही है–एक ओर स्कूल, दूसरी ओर विश्वविद्यालय। विद्यालयों में पढ़ाई जाने वाली सामग्री और विश्वविद्यालयों में होने वाला शोध शायद ही कभी एक-दूसरे से जुड़ पाए। परिणामस्वरूप शोध पुस्तकालयों और रिपोर्टों तक सीमित रह गया, जबकि स्कूल पुराने ढर्रे पर चलते रहे। एनसीईआरटी का यह नया रूप अब इस दूरी को समाप्त करने वाला सशक्त सेतु बनेगा। जो विशेषज्ञ पाठ्यक्रम तैयार करेंगे, वही शिक्षक गढ़ेंगे और वही शिक्षा पर शोध भी करेंगे। इससे नई खोजें और नए विचार सीधे कक्षा तक पहुंचेंगे। बच्चों की पढ़ाई अधिक व्यावहारिक, वैज्ञानिक और भविष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप बन सकेगी।

भारत की शिक्षा व्यवस्था में सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक हमेशा से प्रशिक्षित और सक्षम शिक्षकों की कमी रही है। अनेक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थान आज भी पुराने पाठ्यक्रमों और पारंपरिक तरीकों तक सीमित हैं। ऐसे समय में एनसीईआरटी का यह नया स्वरूप शिक्षक-शिक्षा के क्षेत्र में नई क्रांति ला सकता है। अब वह ऐसे पाठ्यक्रम प्रारंभ कर सकेगा, जिनमें डिजिटल शिक्षा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित शिक्षण, व्यावसायिक शिक्षा, समावेशी कक्षाएं और बहुभाषी अध्ययन जैसे आधुनिक विषय शामिल होंगे। क्षेत्रीय संस्थानों में पीजी और पीएचडी कार्यक्रम शुरू होने से युवा शोधकर्ताओं को विद्यालयी शिक्षा की वास्तविक चुनौतियों पर काम करने का अवसर मिलेगा। उनके शोध के परिणाम सीधे पाठ्यपुस्तकों और शिक्षा नीतियों में दिखाई देंगे, जिससे शिक्षा अधिक जीवंत, प्रभावी और समयानुकूल बन सकेगी।

हर बड़ा परिवर्तन अपने साथ चुनौतियां भी लाता है। एनसीईआरटी के सामने भी कई गंभीर प्रश्न हैं। कुछ शिक्षाविदों का मानना है कि यूजीसी के नियमों के अधीन आने से उसकी स्वतंत्र कार्यशैली प्रभावित हो सकती है। जिस संस्था की पहचान अब तक विद्यालयी शिक्षा से रही है, उसके लिए विश्वविद्यालयी ढांचे में ढलना आसान नहीं होगा। नए विभाग, प्रशिक्षित संकाय, शोध सुविधाएं, पर्याप्त बजट और प्रशासनिक सुधारों की आवश्यकता पड़ेगी। साथ ही यह भी सुनिश्चित करना होगा कि उच्च शिक्षा की नई भूमिका निभाते हुए एनसीईआरटी अपनी मूल जिम्मेदारी, यानी स्कूल शिक्षा को मजबूत बनाने, से दूर न हो। यदि योजना, पारदर्शिता और गुणवत्ता पर बराबर ध्यान दिया गया, तो यही चुनौतियां उसकी सबसे बड़ी शक्ति बन सकती हैं।

यदि यह परिवर्तन सफल हुआ, तो आने वाले समय में एनसीईआरटी केवल एक संस्था नहीं, बल्कि भारतीय शिक्षा का सबसे बड़ा केंद्र बन जाएगी। एक ओर देश का विद्यार्थी उसकी किताबों से पढ़ेगा, दूसरी ओर उसी संस्था का शोधकर्ता नई शिक्षा नीति तैयार करेगा और वही शिक्षक गढ़े जाएंगे, जो आने वाली पीढ़ियों को दिशा देंगे। यह ऐसा मॉडल होगा, जहां शिक्षा, शोध और प्रशिक्षण एक-दूसरे से सीधे जुड़े होंगे। विकसित भारत का सपना केवल उद्योग, तकनीक और अर्थव्यवस्था से पूरा नहीं होगा; उसकी सबसे मजबूत आधारशिला शिक्षा ही बनेगी। एनसीईआरटी का यह नया स्वरूप उसी आधारशिला को अधिक मजबूत, व्यापक और विश्वस्तरीय बनाने की दिशा में उठाया गया एक ऐतिहासिक कदम है।

> गृह सम्पति मंदिर महल, देश राज सब साज।
> सब प्रभु का जन जानते, आप भजन रत काज।।

संपादकीय

अनिश्चितता का वैश्विक माहौल

अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने बुधवार को राष्ट्र के नाम जो संबोधन दिया वह ईरान युद्ध के अंत को लेकर स्पष्ट मार्ग दिखाने में विफल रहा। वास्तव में ट्रंप ने इस अवसर का इस्तेमाल ऐसी धमकियां देने के लिए किया कि ईरान पर बमबारी करके उसे पाषाणकाल जैसी हालत में पहुंचाया जा सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि ईरान के साथ बातचीत चल रही है जबकि ईरान के अधिकारियों ने इस बात से बार-बार इनकार किया है। ऐसे में युद्ध शुरू होने के एक महीने बाद भी अभी तक यह स्पष्ट नहीं है कि यह लड़ाई कब खत्म होगी तथा अमेरिका और इजरायल वास्तव में क्या हासिल करना चाहते हैं। यह बात शेष विश्व को जबरदस्त अनिश्चितता में छोड़ देती है। यह भी स्पष्ट नहीं है कि यह युद्ध इस क्षेत्र की भूराजनीतिक व्यवस्था को कैसे नया आकार देगा। अतिरिक्त अनिश्चितता ने वैश्विक बाजार में कच्चे तेल की कीमतों को बढ़ा दिया है और यह इस क्षेत्र के व्यापार को भी प्रभावित कर रहा है। भारत खासतौर पर इन अनजान कारकों की जद में है क्योंकि हम तेल, व्यापार और धनप्रेषण के लिए पश्चिम एशिया पर बहुत ज्यादा निर्भर हैं। यह जंग जहां कई तरह से वृहद आर्थिक हालात को प्रभावित कर रही है और इसे लेकर हस्तक्षेप की आवश्यकता है, वहीं रिजर्व बैंक के लिए आर्थिक प्रबंधन काफी जटिल हो चला है। मुद्रा बाजार का उतारचढ़ाव इस संकट के सबसे स्पष्ट परिणामों में से एक है। रिजर्व बैंक मुद्रा का प्रबंधन करता है। मार्च में भारतीय रुपये में 4 फीसदी से अधिक की गिरावट आई। वास्तव में गत वित्त वर्ष जो कि इस सप्ताह के आरंभ में समाप्त हुआ, रुपये के लिए काफी मुश्किल साल था। 2025-26 में रुपया डॉलर के मुकाबले 10 फीसदी तक गिरा। रुपया 2025 में इसलिए भी दबाव में रहा क्योंकि व्यापार संबंधी अनिश्चितताएं बनी हुई थीं। इसका परिणाम पूंजी के बड़े पैमाने पर बाहर जाने के रूप में भी सामने आया। उदाहरण के लिए विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों ने 2025 में करीब 19 अरब डॉलर मूल्य के भारतीय शेयरों की बिकवाली की। 2026 में भी दबाव जारी रहा और ईरान युद्ध ने रुपये को मिलने वाली चुनौती को और मुश्किल बना दिया है। डॉलर की बिकवाली के अलावा रिजर्व बैंक ने हाल के दिनों में रुपये की गिरावट को रोकने के लिए अन्य कदम भी उठाए हैं। पिछले सप्ताह उसने बैंकों से विदेशी मुद्रा बाजार में रुपये की दैनिक शुद्ध ओपन पोजीशन को 10 करोड़ डॉलर तक सीमित रखने को कहा। अब उसने बैंकों को रुपये से जुड़े नॉन-डिलिवरेबल डेरिवेटिव कॉन्ट्रैक्ट्स (एक वित्तीय डेरिवेटिव, जिसका उपयोग मुद्रा विनिमय दरों पर हेजिंग या सट्टेबाजी के लिए किया जाता है) की पेशकश करने से रोक दिया है, जिसके परिणामस्वरूप गुरुवार को रुपये में तेजी से वापसी हुई। स्पष्ट है कि ये कदम सट्टेबाजी को रोकने के लिए उठाए गए हैं। यह रेखांकित करना आवश्यक है कि समस्या बुनियादी ज्यादा है। भारत ने अप्रैल-दिसंबर 2025 के दौरान 30 अरब डॉलर से अधिक का भुगतान संतुलन घाटा दर्ज किया। मार्च तिमाही में स्थिति बदलने की संभावना कम है। इसलिए रुपया विदेशी मुद्रा के लगातार शुद्ध बहिर्गमन की संभावना के अनुसार समायोजित हो रहा है। कम से कम निकट भविष्य में तो ऐसा ही हो रहा है। इस प्रकार, कारोबारी गतिविधि को रोकना बहुत मददगार नहीं होगा। नीति-निर्माताओं को मुद्रा बाजार के पूर्ण स्तरों से प्रभावित नहीं होना चाहिए। रुपया वास्तविक रूप से भी अवमूल्यित हुआ है। 40 मुद्राओं वाले वास्तविक प्रभावी विनिमय दर सूचकांक ने दिखाया कि फरवरी में रुपया लगभग 6 फीसदी ही अवमूल्यित था। कुछ हद तक अवमूल्यन भारतीय निर्यातकों को इस कठिन आर्थिक माहौल में मदद करेगा। युद्ध की स्थिति स्पष्ट होते ही, यह न केवल निर्यातकों को बाजार वापस पाने में लाभ देगा बल्कि पूंजी प्रवाह को भी आकर्षित करेगा, क्योंकि भारतीय परिसंपत्तियां विदेशी निवेशकों के लिए सस्ती हो जाएंगी, जिससे भुगतान संतुलन की स्थिति सुधरेगी। इस प्रकार, रिजर्व बैंक के मुद्रा बाजार में उठाए गए कदमों को सावधानीपूर्वक संतुलित करने की आवश्यकता होगी। निष्पक्ष रूप से देखें तो उसे युद्ध के अन्य प्रभावों से भी निपटना होगा। वैश्विक कच्चे तेल की कीमतों में वृद्धि महंगाई दर को बढ़ा देगी। रिजर्व बैंक के मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप के कारण बॉन्ड यील्ड आंशिक रूप से बढ़ गई हैं। इसने तरलता की स्थिति को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है।

आज का विचार

यदि अवसर मिले तो सारथी बनने की कोशिश करनी चाहिए, स्वार्थी नहीं ।

सहज योग संदेश

श्री सद्गुरु देव जी की अनुभव वाणी

शरीरान्तर्गत सारी इन्द्रियां, इसके सारे अवयव जब सुपुष्ट रहेगे तब हम संसार में चिरकाल तक जीवित रहकर अपने परिवार, समाज तथा देश के लिए भी कुछ कर सकेंगे। अतः शरीर को स्वस्थ तथा रोगमुक्त रखना हमारा कर्तव्य है। शरीर-रक्षा एवं शरीरिक स्वास्थ्य लाभ के अनेक उपाय बतलाये गये हैं।

–जारी

महर्षि सदाफल देव जी महाराज

साहित्यिक पत्रकारिता के कालजयी रचनाकार माखन लाल चतुर्वेदी

बाल मुकुन्द ओझा

हिन्दी जगत् के ख्यात और नामधारी कवि, लेखक, पत्रकार पंडित माखन लाल चतुर्वेदी का जन्म 4 अप्रैल, 1889 ई. में बावई, मध्य प्रदेश में हुआ था। वे बोलचाल की सरल भाषा और ओजपूर्ण भावनाओं के अनूठे रचनाकार थे। आजादी से पूर्व के महापुरुषों में माखन लाल चतुर्वेदी का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है। वे भारत में साहित्यिक पत्रकारिता के अगुवा थे। उनकी रचनाओं में देश प्रेम और कुदरत के साक्षात् दिग्दर्शन होते थे। स्वतंत्रता संग्राम में सक्रीय भाग लेने के कारण कई बार जेल यंत्रणा के शिकार हुए। प्रभा और कर्मवीर जैसे प्रतिष्ठित समाचार पत्रों के संपादक के रूप में उन्होंने ब्रिटिश शासन के खिलाफ जोरदार प्रचार किया और नई पीढ़ी का आह्वान किया कि वह गुलामी की जंजीरों को तोड़ कर बाहर आए। महात्मा गाँधी द्वारा आहूत असहयोग आंदोलन में महाकोशल अंचल से पहली गिरफ्तारी देने वाले माखनलालजी ही थे। देशसेवा के लिए आजीवन रूप से समर्पित माखन लाल चतुर्वेदी लोकमान्य तिलक के संकल्प आजादी हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है से अभिभूत हो सच्चे मन से देश के प्रति आजीवन समर्पित रहे। चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊं शीर्षक कविता उनकी कालजयी रचनाओं में से एक थी। राजनीति को त्याग कर साहित्य और पत्रकारिता को सेवा का मार्ग चुनने वाले कालजयी रचनाकार थे माखन लाल। उनके बारे में बताया जाता है कि जब भारत स्वतंत्र हुआ तो मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री पद के लिए इन्हें चुना गया। जब इन्हें इसकी सूचना दी गई तो इन्होंने कहा, शिक्षक और साहित्यकार बनने के बाद मुख्यमंत्री बना तो मेरी पदावनति होगी। माखनलालजी ने मुख्यमंत्री के पद को ठुकरा दिया। पंडित माखनलाल चतुर्वेदी का नाम छायावाद की उन हस्तियों में से है जिनके कारण वह युग ख्यात हो गया। उस युग के कवि प्रकृति प्रेमी थे और प्रकृति को स्वयं के करीब महसूस कर लिखा करते थे। चतुर्वेदी जी की कई रचनाएं ऐसी हैं जहां उन्होंने प्रकृति के माध्यम से अपनी भावनाओं को व्यक्त किया है। उनकी रचना पुष्प की अभिलाषा और फूल की मनुहार में उन्होंने एक कुसुम के द्वारा अपनी आंतरिक संवेदनाओं को प्रकट किया है जिससे संकेत मिलता है कि वह एक राष्ट्रप्रेमी व्यक्ति होने के साथ-साथ अपनत्व से आप्लावित व्यक्ति थे। भोपाल का माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय उन्हीं के नाम पर स्थापित किया गया है। 1943 में हिन्दी साहित्य का सबसे बड़ा देव पुरस्कार माखनलालजी को हिम किरीटिनी पर दिया गया था। उनके काव्य संग्रह हिमतरंगिणी के लिये उन्हें 1955 में हिन्दी के साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। संभवत वे देश के पहले ऐसे साहित्यकार थे जिन्होंने राजनीति के स्थान पर पत्रकारिता को वरीयता प्रदान की। माखन लाल चतुर्वेदी की सलाह पर डॉ.राम मनोहर लोहिया ने अंग्रेजी अखबारों की होली जलाने का विचार त्याग दिया था। यह बात 1958 की है। इस मुददे पर चतुर्वेदी जी से आशीर्वाद लेने डॉ. राम मनोहर लोहिया खंडवा गये थे। डा.लोहिया ने कहा कि 'दादा, लड़ाई लड़नी है। दक्षिण में जिससे पूछा, उसी ने एक ही बात कही, जो लड़ाई लड़नी है, उसके लिए हिंदी में केवल एक व्यक्ति हैं जिसका समर्थन पाना विजयश्री पाने के समान है, वह हैं माखन लाल चतुर्वेदी। डॉ. लोहिया की इस बात पर दादा ने कहा कि 'आते ही लड़ाई की बातें ! सन 28 के बाद मिले हो। इतने वर्षों के बाद भी तुममें कोई अंतर दिखाई नहीं देता। इस पर डॉ. लोहिया ने कहा वह लड़ाई तो अंग्रेजों से थी। यह तो घर की लड़ाई है। ज्यादा महत्वपूर्ण है। इन दिनों. दो दिग्गजों की उस ऐतिहासिक मुलाकात का विवरण सधी कलम से श्रीकांत जोशी ने लिखा है।

देशभक्ति की आवाज थे माखनलाल चतुर्वेदी

महेन्द्र तिवारी

भारतीय साहित्य के आकाश में माखनलाल चतुर्वेदी एक ऐसे देदीप्यमान नक्षत्र हैं, जिनकी आभा ने न केवल हिंदी काव्य जगत को आलोकित किया, बल्कि स्वाधीनता संग्राम की वेदी पर अपनी लेखनी को समिधा बनाकर अर्पित कर दिया। उनका व्यक्तित्व और कृतित्व राष्ट्रीयता, त्याग और अदम्य साहस का एक अनूठा संगम है, जिसने गुलामी की जंजीरों में जकड़े भारत की सोई हुई चेतना को झकझोरने का ऐतिहासिक कार्य किया। 4 अप्रैल 1889 को मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के बाबई गाँव में जन्मे माखनलाल जी का जीवन संघर्षों की एक ऐसी गाथा है, जहाँ शब्द केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं थे, बल्कि वे शत्रु के विरुद्ध एक सशक्त अस्त्र बनकर उभरे। उनके भीतर देशभक्ति की लौ बचपन से ही प्रज्वलित थी, जो समय के साथ एक प्रचंड अग्नि में परिवर्तित हो गई। मात्र सोलह वर्ष की कोमल आयु में उन्होंने शिक्षक के रूप में अपनी जीविका प्रारंभ की, किंतु उनके भीतर का क्रांतिकारी मन कक्षाओं की चारदीवारी में अधिक समय तक नहीं टिक सका। उनके समय का भारत पराधीनता के काले बादलों से घिरा था और एक संवेदनशील कवि हृदय के लिए यह असह्य था कि वह केवल श्रृंगारिक या पारंपरिक कविताएँ लिखकर संतुष्ट हो जाए। यही वह समय था जब उन्होंने पत्रकारिता को अपने विचारों का वाहक बनाया और 'प्रभा', 'प्रताप' तथा विशेष रूप से 'कर्मवीर' के माध्यम से ब्रिटिश हुकूमत की चूलें हिला दीं।

माखनलाल चतुर्वेदी जी को 'एक भारतीय आत्मा' के उपनाम से जाना जाता है और यह संज्ञा उनके व्यक्तित्व पर पूर्णतः खरी उतरती है क्योंकि उनके काव्य का कण-कण भारतीय मिट्टी की सोंधी सुगंध और यहाँ के जन-मानस की पीड़ा से ओतप्रोत है। उनकी पत्रकारिता कोई साधारण पेशा नहीं थी, बल्कि वह एक 'मिशन' था। उन्होंने गणेश शंकर विद्यार्थी जैसे महान क्रांतिकारियों के सानिध्य में अपनी लेखनी को पैना किया। जब उन्होंने 'कर्मवीर' का संपादन संभाला, तो उनके संपादकीय लेख अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों पर तीखे प्रहार करते थे। इसी का परिणाम था कि उन्हें अनेक बार जेल की कालकोठरी में दिन बिताने पड़े, परंतु जेल की उन सीलन भरी दीवारों ने उनके उत्साह को कम करने के बजाय और अधिक प्रखर बना दिया। जेल में बिताए गए उन कठिन क्षणों ने ही हिंदी साहित्य को वह अमर कृतियाँ दीं जो आज भी हमारे राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक हैं। *उनकी एक अत्यंत प्रसिद्ध रचना 'कैदी और कोकिला' उस समय की जेल की यंत्रणाओं और स्वाधीनता की तड़प का सजीव चित्रण करती है। उन्होंने कोयल को संबोधित करते हुए लिखा था कि*

'क्या देख न सकती जंजीरों का गहना? हथकड़ियाँ क्यों? यह ब्रिटिश राज का गहना, कोल्हू का चर्रक चूँ– जीवन की तान, गिट्टी पर अंगुलियों ने लिखे गान!'

ये पंक्तियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि एक सच्चे देशभक्त के लिए बेड़ियाँ भी आभूषण के समान होती हैं यदि वे मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए पहनी गई हों। चतुर्वेदी जी की कविताओं में छायावाद की सूक्ष्मता और रहस्यवाद की गहराई तो है ही, किंतु उनका मूल स्वर सदैव ओज और राष्ट्रप्रेम का रहा। उनकी सबसे कालजयी और लोकप्रिय रचना 'पुष्प की अभिलाषा' को माना जाता है, जो आज भी भारत के हर विद्यालय और सैन्य छावनी में प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है। इस कविता में उन्होंने एक तुच्छ फूल के माध्यम से आत्मोत्सर्ग की जो भावना व्यक्त की, वह अद्वितीय है। फूल किसी वनमाली से कहता है कि

'चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ, चाह नहीं प्रेमी-माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ, चाह नहीं सम्राटों के शव पर हे हरि डाला जाऊँ, चाह नहीं देवों के सिर पर चढ़ूँ भाग्य पर इठलाऊँ। मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथ पर देना तुम फेंक, मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक। '

इन पंक्तियों में निहित त्याग की पराकाष्ठा पाठक के भीतर एक बिजली जैसी कौंध उत्पन्न कर देती है। यहाँ फूल न तो सुंदरता का प्रतीक है और न ही विलासिता का, बल्कि वह देश के लिए सर्वोच्च बलिदान देने वाले गुमनाम शहीदों के सम्मान में स्वयं को समर्पित करने की कामना करता है। यह कविता उस कालखंड में भारतीय युवाओं के लिए मंत्र बन गई थी। माखनलाल जी का राष्ट्रप्रेम केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं था, बल्कि वे एक ऐसे समाज का स्वप्न देखते थे जहाँ मानवता सर्वोपरि हो। उनकी कविताओं में प्रकृति का मानवीकरण बहुत सुंदर ढंग से मिलता है। वे पहाड़ों, नदियों और बादलों को भी देशभक्ति के प्रतीकों के रूप में प्रस्तुत करते थे। उनकी एक और महत्वपूर्ण कृति 'हिम तरंगिणी' है, जिस पर उन्हें 1955 में हिंदी साहित्य का पहला साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ। उनकी काव्य शैली में शब्दों का चयन अत्यंत प्रभावशाली होता था, जहाँ 'ओज' और 'करुणा' का ऐसा संगम मिलता है जो विरल है। वे मानते थे कि साहित्यकार का धर्म केवल कला की साधना नहीं, बल्कि युग की पुकार को सुनना और उसे वाणी देना है। इसी कारण उन्हें 'युग चारण' भी कहा गया। उन्होंने अपनी रचना 'जवानी' में युवाओं का आह्वान करते हुए लिखा था कि

'द्वार बलि का खोल चल, भूडोल कर दें, एक हिम-गिरि एक सिर का मोल कर दें मसल कर, अपने इरादों-सी, उठा कर, दो हथेली हैं कि पृथ्वी गोल कर दें? रक्त है? या है नसों में क्षुद्र पानी! जाँच कर, तू सीस दे-देकर जवानी? '

यह पंक्तियाँ आज भी रक्त में उबाल पैदा करने की शक्ति रखती हैं। स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात भी चतुर्वेदी जी की सक्रियता में कोई कमी नहीं आई, यद्यपि उनके सरोकार बदल गए थे। वे तत्कालीन राजनीति की विसंगतियों और पद-लोलुपता से काफी दूर रहे। उन्हें कई उच्च सरकारी पदों और राज्यसभा की सदस्यता के प्रस्ताव मिले, किंतु उन्होंने अत्यंत विनम्रता और दृढ़ता के साथ उन्हें अस्वीकार कर दिया। उनका मानना था कि एक कवि का स्थान सत्ता के गलियारों में नहीं, बल्कि जनता के हृदय में और सत्य की पक्षधरता में होना चाहिए। उन्होंने आजीवन अपने सिद्धांतों से समझौता नहीं किया। उनके लिए स्वतंत्रता का अर्थ केवल विदेशी शासकों का चले जाना नहीं था, बल्कि गरीबी, अज्ञानता और सामाजिक असमानता से मुक्ति भी था। वे गांधीवादी विचारधारा के प्रबल समर्थक थे और जीवन भर सादगी और शुचिता का पालन किया। उनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा और भविष्य के भारत के लिए एक स्पष्ट विजन दिखाई देता है। उनकी एक अन्य प्रसिद्ध रचना 'दीप से दीप जले' में भी प्रेरणा और जागरण का स्वर मिलता है–

'दीप से दीप जले, तो जग में उजियारा हो जाए,
मन का अंधकार मिटे, हर घर में उजियारा छा जाए। '

यह कविता केवल प्रकाश का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह संदेश देती है कि एक व्यक्ति का जागरण पूरे समाज को प्रकाशित कर सकता है। इसी प्रकार उनकी अन्य कविताएँ जैसे 'वेणु लो गूँजे धरा' और 'अग्निपथ' भी राष्ट्रप्रेम और संघर्ष की प्रेरणा से ओतप्रोत हैं। माखनलाल चतुर्वेदी की लेखनी में एक अद्भुत आग थी जो पढ़ने वाले के हृदय में धधकने लगती थी। उनकी कविताएँ केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि जीवंत अनुभव थे। 'हिमालय' शीर्षक वाली उनकी कविता में वे भारत की गरिमा का गान करते हुए कहते हैं कि हिमालय केवल पत्थर का पहाड़ नहीं, बल्कि भारत की अडिग प्रतिज्ञा का प्रतीक है। उनके कृतित्व का फलक बहुत विस्तृत है, जिसमें 'युग चरण', 'वेणु लो गूँजे धरा', 'मरण ज्वार' और 'साहित्य देवता' जैसी अमर कृतियाँ शामिल हैं। 'साहित्य देवता' में उनके गद्य काव्य का वह रूप निखर कर आया है जहाँ दर्शन और काव्य आपस में मिल जाते हैं। उन्होंने भाषा को केवल संवाद का माध्यम नहीं रहने दिया, बल्कि उसे भावनाओं के अनुसार ढाला। उनकी भाषा में कहीं-कहीं बुंदेलखंडी का पुट भी मिलता है जो उसे और अधिक मिट्टी से जोड़ता है। अंतिम वर्षों में भी वे निरंतर लिखते रहे और समाज को दिशा देते रहे। 30 जनवरी 1968 को जब इस 'भारतीय आत्मा' ने पार्थिव देह का त्याग किया, तो हिंदी साहित्य का एक स्वर्णिम युग समाप्त हो गया, किंतु उनकी विरासत आज भी जीवित है। उनकी कविताएँ आज के संक्रमण काल में भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितनी कि ब्रिटिश शासन के दौरान थीं। वे हमें सिखाती हैं कि राष्ट्र केवल मानचित्र की रेखाओं से नहीं बनता, बल्कि वह उन नागरिकों के चरित्र और बलिदान की भावना से बनता है जो अपनी सुख-सुविधाओं से ऊपर उठकर राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखते हैं। उनकी पंक्तियाँ 'क्या लेकर तू आया था, क्या लेकर तू जाएगा' जैसे दार्शनिक भावों से लेकर 'बलिपंथ के यात्री' जैसे साहसी आह्वानों तक फैली हुई हैं। माखनलाल चतुर्वेदी एक ऐसे युगदृष्टा थे जिन्होंने अपनी कलम से इतिहास लिखा और अपने जीवन से एक आदर्श स्थापित किया। उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम उनके द्वारा जलाए गए देशभक्ति के दीप को बुझने न दें और उनके साहित्य में निहित मानवतावादी मूल्यों को अपने जीवन में उतारें। उनका नाम सदैव भारतीय साहित्य और स्वाधीनता के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित रहेगा, क्योंकि उन्होंने अपनी लेखनी से वह गौरव गान गाया जो अमर है और जो पीढ़ियों तक भारतीयों के मन में अपनी मातृभूमि के प्रति अगाध प्रेम और स्वाभिमान की ज्योति जलाता रहेगा।

नौकरी के लिए न्यूनतम अंक भी प्राप्त नहीं होना अध्ययन की गुणवत्ता पर सवाल

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा

अभी मेडिकल पीजी में 0 पर्सेंटाइल पर प्रवेश क मुद्दा पुराना भी नहीं हुआ है कि राजस्थान लोव सेवा आयोग द्वारा स्कूल लेक्चरर के लि आयोजित प्रतियोगिता परीक्षा के परिणाम ने देश क शिक्षा के हालातों के पोल खोलकर ही रख दी है शिक्षा के मंदिर में बच्चों को पढ़ाने के लिए लेक्चर के पद पर नियुक्ति के लिए आयोजित प्रतियोगित परीक्षा में पोलिटिकल साइंस के लेक्चरर के पद के लिए हजारों युवाओं परीक्षा दी और 225 पद होने के बावजूद केवल 6 परीक्षार्थी चयन के योग्‍ पाये गये। मजे की बात है कि परीक्षा देने वाले हजारों युवाओं में मात्र 21 युवा भी न्यूनतम प्राप्तांक 40 प्रतिशत अंक भी प्राप्त नहीं कर पायें। हालात क गंभीरता को इसी से समझा जा सकता है कि फिजिकल एजुकेशन के 37 पद के लिए एक भी नहीं और होमसाइंस जैसे विषय के लेक्चरर के पद के लि केवल एक परीक्षार्थी ही सफल हो सका। अब एक और देश में प्रतिपक्ष बेरोजगारी की समस्या को गंभीरता से उठा रहे हैं तो दूसरी और भर्ती वाले पद के लिए न्यूनतम अर्हता अंक प्राप्त करने में भी आज के युवा सफल नहीं ह पा रहे हैं। यह कोई राजस्थान की ही बात नहीं है अपितु यह समूचे देश क शिक्षा के स्तर की बानगी है। क्योंकि निश्चित रुप से राजस्थान लोक सेव आयोग की परीक्षा में अन्य प्रदेशों के युवा भी परीक्षार्थी रहे होंगे। बेरोजगार की समस्या अपनी जगह पर है पर दूसरी और स्नातक, स्नातकोत्तर औ तकनीकी शिक्षा प्राप्त युवाओं के ज्ञान के स्तर को इससे आंका जा सकता है यही कारण है कि आज मल्टी टास्क सर्विस जिसे परपंरागत शब्दों में कह जाए तो चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के पद या शहरी निकायों में सफाई कर्मचारी क कुछ पदों के लिए ही हजारों लाखों युवा आवेदन करने लगे हैं और तस्वीर क एक पहलू यह है कि इन युवाओं में उच्च और तकनीकी शिक्षा यहां तक क इंजीनियर, डॉक्टर, एमबीए तक आवेदन कर रहे हैं। यह हमारे शैक्षणिक संस्थानों के लिए किसी तमाचे से कम नहीं होना चाहिए। अब पोलिटिकल साइंस के स्कूल लेक्चरर के लिए परीक्षा देने वाले युवा निश्चित रुप स पोलिटिकल साइंस से स्नातक या स्नातकोत्तर और हो सकता है कि पीएच डी तक हो पर उनके द्वारा केवल और केवल न्यूनतम 40 प्रतिशत अंक भी प्रा नहीं करना कहीं ना कहीं शिक्षा की स्थिति को स्पष्ट करती है। वैसे देखा जा तो 40 प्रतिशत अंक प्राप्त कर चयनित होने वाले स्कूल लेक्चरर से आ बच्चों को अच्छी और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने की अपेक्षा करेंगे तो बेमानी होगी हालात वास्तव में गंभीर है और यही कारण है कि नौकरी के लिए आयोजि परीक्षाओं में नकल, गलत प्रयोग और पेपर आउट व डमी केंडिडेट द्वारा परीक्षा देने के माफियायों की बन पड़ी है।

जहां तक मेडिकल पीजी में जीरो पर्सेंटाइल पर प्रवेश के निर्णय पर य अवश्य संतोष की बात है कि फैडरेशन ऑफ ऑल इंडिया मेडिकल एसोसिएशन ने सरकार के इस निर्णय की खिलाफत करने की हिम्मत दिखा है। इसमें कोई दो राय नहीं कि देष में षिक्षण संस्थाओं का जाल बिछा क सबके लिए शिक्षा की सुविधा उपलब्ध हो सकी। अब तो डीम्ड यूनिवर्सिट सहित यूनिवर्सिटी नित नई खुलती जा रही है। इसे अच्छा भी माना जा सकत है पर सौ टके का सवाल यह है कि क्या शिक्षण संस्थान केवल डिग्री देने क माध्यम ही बन कर रह गए हैं। पोलिटिकल साइंस स्कूल लेक्चरर या अन्य पद के लिए न्यूनतम योग्यता प्राप्त करने वाली युवाओं की पीढ़ी तैयार हो रही है त इसके लिए सबसे अधिक शर्म की बात इन शिक्षण संस्थानों के लिए होन चाहिए। पोलिटिकल साइंस तो उदाहरण मात्र है, सवाल यह है कि परीक्षा दे वाले हजारों प्रतियोगी किसी एक संस्थान से तो डिग्री प्राप्त नहीं होंगे। मजे औ शर्म की बात यह है कि इन हजारों प्रतियोगी छात्रों में से कई युवा तो स्तरीयत का दावा करने वाले संस्थान के शिक्षार्थी रहे होंगे, उसके बाद नौकरी के लि परीक्षा में न्यूनतम 40 प्रतिशत अंक भी प्राप्त नहीं कर पाते हैं तो इससे अधिक बुरी बात क्या होगी? आखिर हम जा कहां रहे हैं। शिक्षण संस्थानों की स्तरीयत पर ही सवाल खड़े हो जाते हैं। इसके अलावा जिस तरह से कोचिंग संस्थान और लाइब्रेरियों की बाढ़ आई हुई है उसके परिणाम भी इन परिणामों में कह दूर दूर तक लक्षित नहीं हो रहे। सरकार और तकनीकी शिक्षण संस्थानों क कम से कम अपने स्तर का तो ध्यान रखना ही होगा। शिक्षा की गुणवत्ता औ तकनीकी अध्ययन की वैश्विक पहचान बनाना सरकार और अध्ययन केन्द्र की पहली और अंतिम प्राथमिकता होनी चाहिए, पर यहां तो स्थानीय स्तर प ही खरे नहीं उतर पा रहे हैं। कल्पना कीजिए कि जीरो पर्सेंटाइल वालों क विशेषज्ञ बनाकर ईलाज का लाइसेंस देंगे तो यह आमनागरिकों की जिंदगी स खिलवाड़ और शिक्षा पद्धति को मजाक बनाना ही है। सरकार और आयोग क समय रहते शिक्षा के स्तर को बनाए रखने की पहल करनी होगी। इसी से देश की शिक्षा की गुणवत्ता देश दुनिया में बनी रह सकेगी। सरकारी और गैरसरकार संस्थाओं को खासतौर से आगे आना होगा। हालात शिक्षण संस्थानों को शर्मिं करने के लिए काफी होने चाहिए। परिणाम एक बार युवाओं को तैयार कर र इन संस्थानों के लिए भी आत्मचिंतन के होने चाहिए। परिणाम साफतौर पर इ संस्थानों को चेहरा दिखाते नजर आ रहे हैं।

व्यक्तिगत स्वतंत्रता और विवाह संस्था पर अहम फैसले

रोहित माहेश्वरी

आम तौर पर दुनिया भर में न्यायपालिका को रूढ़ीवादी फैसलों को अहमियत देने वाला माना जाता रहा है। भारत में भी कुछ ऐसा ही रहा है। आजादी के कुछ दशकों बाद तक ऐसा रहा पर इधर कुछ सालों से भारतीय न्यायपालिका ने ऐसे फैसले सुनाए हैं, जिन्हें बेशक प्रगतिशील फैसले कहा जा सकता है। जाहिर है कि ऐसे फैसले सामाजिक बदलाव की दिशा में एक अहम कदम साबित होते हैं। इसी हफ्ते मेघालय हाईकोर्ट के एक फैसले में कहा गया कि 'रोमियो-जूलियट कैटेगिरी के मामलों में पॉक्सो एक्ट के तहत दर्ज मुकदमों को रद्द किया जा सकता है।

खासकर जब दो किशोरों के बीच सहमति से संबंध हो। इसी तरह, हाल ही में इलाहाबाद हाईकोर्ट ने साफ किया कि शादीशुदा शख्स भी किसी एडल्ट के साथ लिव-इन रिलेशनशिप में रह सकता है, बशर्ते वो सहमति के साथ हो। इन दोनों फैसलों से साफ झलकता है कि कोर्ट प्यार और रिश्तों को जुर्म की कैटेगरी से बाहर रखने के पक्ष में है। इससे ये भी साफ होता है कि अदालत व्यक्तिगत गरिमा को प्रोटेक्शन देने के पक्ष में है। ऐसे फैसले समाज की पारंपरिक मानसिकता के लिए किसी चुनौती से कम नहीं हैं। उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद हाई कोर्ट ने दो मामलों में ऐसा फैसला दिया है, जिसकी चर्चा हो रही है। हाई कोर्ट ने लिव इन रिलेशनशिप के मामले में सुनवाई के दौरान व्यक्तिगत स्वतंत्रता और जीवन के मूल अधिकारों का जिक्र किया। साथ ही, जोड़े की सुरक्षा की बात कही। वहीं, लव मैरिज के मामले की सुनवाई के क्रम में कोर्ट ने कहा कि प्रेम विवाह को जोड़ा सम्मान का मुद्दा नहीं बना सकता है।

इलाहाबाद हाई कोर्ट ने लिव-इन में रह रहे जोड़े की याचिका पर सुनवाई करते हुए व्यक्तिगत स्वतंत्रता और जीवन के मूल अधिकार को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए कहा है कि अंतर्धार्मिक कपल की सुरक्षा आवश्यक है। सोनभद्र के अंतरधार्मिक कपल की ओर से हाई कोर्ट में याचिका दायर की गई। इसमें कहा गया कि उन्हें अपने परिजनों से खतरा है। पुलिस से संपर्क करने पर भी हमारी सुनवाई नहीं हुई। इसके बाद उन्होंने हाई कोर्ट का दरवाजा खटखटाया। मामले की सुनवाई के क्रम में हाई कोर्ट ने कहा कि सहमति से अगर वयस्क जोड़े सहमति से लिव इन में रह रहे हैं, तो उनकी सुरक्षा का दायित्व सरकार का है। कोर्ट ने संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 21 के साथ-साथ वर्ष 2021 के विशेष अधिनियमों का जिक्र करते हुए कहा कि लिव इन में रहना किसी भी प्रकार का अपराध नहीं है। हाई कोर्ट के जस्टिस विवेक कुमार सिंह की एकल पीठ ने विभिन्न निर्णयों का हवाला देते हुए कहा कि लिव इन रिलेशन किसी भी मौजूदा कानून के तहत न प्रतिबंधित है और न ही दंडनीय। याचिकाकर्ताओं ने कोई कानूनी अपराध नहीं किया है। ऐसे में उन्हें सुरक्षा देने करने से इनकार नहीं किया जा सकता है। कोर्ट ने साफ कहा कि जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का दर्जा सांविधानिक व्यवस्था में सबसे ऊपर है।

हाईकोर्ट ने लव मैरिज के एक मामले की सुनवाई के क्रम में भी बड़ा आदेश जारी किया। हाई कोर्ट ने कहा है कि कोई भी व्यक्ति बालिगों की अपनी पसंद से की गई शादी यानी लव मैरिज को सम्मान का मुद्दा नहीं बना सकता है। कोर्ट ने कहा कि इस प्रकार के मामलों में सरकार का दायित्व है, वह कपल के जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति की रक्षा करे। कोर्ट ने कहा कि भले ही कपल को उनके परिवार से ही खतरा क्यों न हो। जस्टिस जेजे मुनीर और जस्टिस तरुण सक्सेना की खंडपीठ

की ओर से याचिका पर सुनवाई के क्रम में यह टिप्पणी की गई। याचिका में लव मैरिज करने वाले जोड़े ने अपनी सुरक्षा की मांग की। दोनों ने अपनी मर्जी से आर्यसमाज मंदिर में शादी की थी। उनके पास वैध विवाह पंजीकरण प्रमाण पत्र है। कोर्ट ने कहा कि परिवार को यह शादी मंजूर नहीं है।

इस कारण उन्होंने झूठा आपराधिक मुकदमा दर्ज करा दिया है। दरअसल, भारतीय कानून ने संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के हिस्से के रूप में, परंपरागत भारतीय समाज में लिव इन रिलेशनशिप को मान्यता देने की दिशा में सावधानीपूर्वक ही कदम बढ़ाया है। इसके बावजूद भी, यह विवाह को एक कानूनी रूप से स्वीकृत संस्था के रूप में सर्वोच्च प्राथमिकता देता रहा है। जिसके अंतर्गत वयस्कों के अपने अधिकार और दायित्व भी हैं। निर्विवाद रूप से, जिन्हें आसानी से दरकिनार भी नहीं किया जा सकता है। इस परिणाम के मूल में एक न्यायिक विसंगति भी है। जहां न्यायालय लिव इन रिलेशन को अपराध की श्रेणी से तो बाहर कर देता है, लेकिन उनके परिणामों को वैध ठहराने से हिचकिचाता है। दरअसल, वयस्कों के रिश्तों में यह तनाव सिर्फ कानूनी ही नहीं बल्कि सामाजिक और नैतिक भी है। निर्विवाद रूप से, आज भारतीय समाज एक बड़े संक्रमणकालीन दौर से गुजर रहा है। जिसमें भारतीय परंपरागत जीवन मूल्यों तथा तेजी से बदलते रिश्तों के बीच का एक द्वंद्व भी शामिल है। यह एक हकीकत है कि आधुनिक जीवन में रिश्तों में स्वतंत्रता की बयार स्त्री की आर्थिक आत्मनिर्भरता से परवान चढ़ी है।

लेकिन भारत जैसे परंपरावादी समाज में सदियों से विवाह एक अनुबंध होने के साथ-साथ एक गहरी सामाजिक मान्यता भी है। लेकिन इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि भारतीय समाज में आधुनिक रिश्तों की वास्तविकता कहीं अधिक परिवर्तनशील भी है। वयस्कों के रिश्तों में व्यक्ति आगे बढ़ता है, कभी-कभी बिना औपचारिक समापन के भी। लेकिन यह भी एक हकीकत है कि कानून भी मौजूदा परिदृश्य की इस वास्तविकता से अनभिज्ञ नहीं रह सकता। यह भी एक सत्य है कि वयस्कों के रिश्तों को संरक्षण या मान्यता से वंचित करना, ऐसे रिश्तों को समाप्त नहीं करता है। वास्तव में यह केवल उन्हें असुरक्षा और कानूनी अनिश्चितता की ओर धकेल देता है।

सही मायनों में आवश्यकता न्यायिक असंगति की नहीं है, बल्कि विधायी स्पष्टता की ही है। वास्तव में एक हकीकत य भी है कि भारतीय समाज में वैवाहिक अधिकारों और व्यक्तिग स्वतंत्रता के बीच संतुलन बनाने वाले एक प्रभावी ढांचे की लं समय से आवश्यकता महसूस की जाती रही है। हमें मौजू परिदृश्य में यह बात स्वीकार करनी होगी कि यद्यपि विवाह संस्थ संरक्षण की हकदार है, फिर भी पुरुष या स्त्री की व्यक्तिग स्वतंत्रता को अनिश्चित काल तक इसके अधीन बंधक बनाक नहीं रखा जा सकता है। इन परिस्थितियों में, अंततः कानून क एक सरल सत्य को प्रतिबिंबित करना चाहिए कि जब रिश्ते टू जाते हैं, तो व्यक्तियों को गरिमा के साथ आगे बढ़ने की अनुमति देना हमारी सामाजिक व्यवस्था के लिये खतरा नहीं है।

बल्कि यह उसका एक आवश्यक अनुकूलन ही है। ऐसे समय पर जब तकनीक व सूचना क्रांति से पूरी दुनिया एक संस्कृति में ढल रही है, हम अलग-थलग नहीं रह सकते। ह पीढ़ियों के अंतराल से उपजी सोच का भी सम्मान करना होगा लिव इन रिलेशन पर ये फैसला उन कपल्स के लिए राहत है जो पारिवारिक दबाव या सामाजिक कलंक से गुजर रहे हैं। दोन फैसलों से एक बात उभरती है कि कोर्ट अधिकतर मामलों में प्रेम को अपराध की बजाय मानवीय भावना मान रहा है। प्या को लेकर जज संविधान के आर्टिकल 21 को सही मायने में समझा रहे हैं। समय-समय पर न्यायपालिका को ऐसे फैसले नजीर बन जाते हैं. क्योंकि लोकतंत्र में चुनी हुई सरकारें बहुमत की भावनाओं को देखते हुए ऐसे कानून कभी नहीं बना सकत जिन्हें समाज पचा न सके। इलाहाबाद और मेघालय हाईकोर्ट क फैसला इस मामले में ऐतिहासिक है। ये फैसले समाज के लि चुनौती से भरे क्यों हैं? क्योंकि भारतीय समाज अभी भ पारंपरिक परिवार व्यवस्था, जाति, धर्म और नैतिकता के घेरे में बंधा है।

संपादकीय

मानवता की पुकार और शांति का भारतीय संकल्प

आज की दुनिया एक ऐसे दोराहे पर खड़ी है जहां तकनीक और प्रगति के दावों के बीच बारूद की गंध और मासूमों की चीखें अधिक मुखर हो गई हैं। महीनों और सालों से खिंचते युद्धों ने यह सिद्ध कर दिया है कि आधुनिक युग में 'विजय' एक छलावा मात्र है। यूक्रेन के मैदानों से लेकर मध्य-पूर्व की जलती बस्तियों तक, युद्ध की विभीषिका ने न केवल भूगोल को बदला है, बल्कि मानवीय संवेदनाओं को भी झकझोर कर रख दिया है। विडंबना यह है कि जो वैश्विक संस्थाएं और शक्तिशाली राष्ट्र शांति के प्रहरी होने का दंभ भरते थे, वे आज पूरी तरह निष्प्रभावी और असहाय नजर आ रहे हैं। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य को देखें तो ऐसा प्रतीत होता है कि दुनिया 'शतरंज की बिसात' बन गई है, जहां प्यादे तो आम इंसान हैं, लेकिन चालें चलने वाले सुरक्षित बंकरों में बैठे हैं। संयुक्त राष्ट्र जैसी संस्थाएं केवल निंदा प्रस्तावों तक सीमित रह गई हैं। महाशक्तियां सीधे हस्तक्षेप के बजाय हथियारों की आपूर्ति कर युद्ध की अग्नि को और प्रज्वलित कर रही हैं। जब कूटनीति विफल होती है और संवाद के दरवाजे बंद हो जाते हैं, तब केवल विनाश का मार्ग शेष रहता है। लंबे खिंचते युद्धों का सबसे भयावह पहलू यह है कि दुनिया धीरे-धीरे इनके प्रति संवेदनशून्य होने लगती है। शुरुआत में जो खबरें सुर्खियां बनती थीं, वे अब अखबार के किसी कोने में जगह पाती हैं। लेकिन क्या हम भूल रहे हैं कि हर गिरता बम किसी एक विचारधारा पर नहीं, बल्कि समूची मानवता पर गिर रहा है? आर्थिक मंदी, शरणार्थी संकट और खाद्य असुरक्षा इसके वे परिणाम हैं, जिनसे कोई भी देश अछूता नहीं है। ऐसे समय में जब दुनिया खेमों में बंटी हुई है, एक ऐसी निष्पक्ष और नैतिक आवाज की आवश्यकता है, जो बिना किसी डर या पक्षपात के शांति का आह्वान कर सके। भारत अपनी ऐतिहासिक विरासत, 'वसुधैव कुटुंबकम' के दर्शन और वर्तमान भू-राजनीतिक स्थिति के कारण इस भूमिका के लिए सबसे उपयुक्त है। भारत ने हमेशा युद्ध के बजाय संवाद और कूटनीति का समर्थन किया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का यह कथन कि 'यह युग युद्ध का नहीं है', आज वैश्विक शांति का एक मंत्र बन चुका है। भारत की विशिष्टता यह है कि उसके संबंध रूस के साथ भी प्रगाढ़ हैं और पश्चिम के देशों के साथ भी सामंजस्यपूर्ण। यह संतुलन भारत को एक ऐसे 'मध्यस्थ' के रूप में स्थापित करता है, जिसकी बात को सुना भी जाएगा और उस पर विश्वास भी किया जाएगा। 'जब शक्ति और स्वार्थ के बीच संवाद मौन हो जाए, तब केवल नैतिक साहस ही शांति का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। भारत के पास वह नैतिक पूंजी है।' हमारा मानना है कि भारत को अब केवल प्रतीकात्मक बयानों से आगे बढ़कर एक ठोस शांति प्रस्ताव की अगुवाई करनी चाहिए। भारत की आवाज जब केवल एक राष्ट्र की आवाज नहीं, बल्कि 'ग्लोबल साउथ' की सामूहिक पुकार है। वे देश जो इन युद्धों के कारण आर्थिक तबाही झेल रहे हैं, वे भारत की ओर आशा भरी नजरों से देख रहे हैं। शांति का मार्ग कठिन अवश्य है, लेकिन असंभव नहीं। इसके लिए कुछ कड़े कदम उठाने होंगे। भारत को युद्धरत पक्षों को नई दिल्ली या किसी तटस्थ स्थान पर चर्चा के लिए आमंत्रित करने का साहस दिखाना चाहिए। राजनीतिक समाधान से पहले, मानवीय सहायता और युद्धविराम के छोटे-छोटे चरणों पर जोर दिया जाना चाहिए। भारत को विश्व के अन्य शांतिप्रिय देशों के साथ मिलकर एक ऐसा गुट बनाना चाहिए जो युद्धरत देशों पर आर्थिक या रणनीतिक नहीं, बल्कि नैतिक दबाव बनाए कि वे मानवता के हित में शस्त्र त्यागें।

युद्ध का लंबा खिंचना केवल दो देशों की हार-जीत का मसला नहीं है। यह आने वाली पीढ़ियों के भविष्य का सवाल है। शिक्षा, स्वास्थ्य और पर्यावरण जैसे महत्वपूर्ण विषयों से ध्यान हटाकर केवल सैन्य बजट पर केंद्रित हो गया है। यदि आज मानवता के हित में इस युद्ध का पटाक्षेप नहीं किया गया, तो इतिहास हमें एक ऐसे मूक दर्शक के रूप में याद रखेगा, जिसने सर्वनाश को अपनी आंखों से देखा लेकिन उसे रोकने का प्रयास नहीं किया। भारत के पास आज वह अवसर है कि वह विश्वगुरु की अपनी छवि को सार्थक करे। बुद्ध और गांधी की यह भूमि यदि युद्ध की विभीषिका को रोकने में सफल होती है, तो यह केवल भारत की कूटनीतिक जीत नहीं, बल्कि समूची मानवता की विजय होगी। अब समय आ गया है कि भारत अपनी तटस्थता को एक 'सक्रिय शांतिदूत' की भूमिका में बदले। दुनिया को हथियारों की नहीं, मरहम की जरूरत है। भारत की ओर से उठने वाली शांति की एक प्रबल आवाज इस ठिठकी हुई दुनिया को नई दिशा दे सकती है। मानवता की पुकार यही है युद्ध का अंत हो, ताकि जीवन मुस्कुरा सके।

सुनहरे गेहूं की कहानी : प्राचीन रीति-रिवाजों से लेकर मशीन युग तक का एक बड़ा परिवर्तन

गेहूं पंजाब की धरती का वैभव है। जब खेतों में सुनहरी बालें हवा के झोंके से लहराती हैं, तो यह दृश्य किसान के साल भर के परिश्रम का प्रतीक बन जाता है। गेहूं सिर्फ एक फसल नहीं है, बल्कि हमारी संस्कृति, रीति-रिवाज और जीवन शैली से जुड़ी कहानी है। प्राचीन काल में गेहूं की खेती पूरी तरह से पारंपरिक तरीके से होती थी। बीज बोने से लेकर कटाई तक हर काम हाथ से किया जाता था। हल से जमीन उगाई जाती थी, बीज छिड़के जाते थे और पानी देने के लिए नहरों या कुओं का सहारा लिया जाता था। कटाई के समय परिवार के सभी सदस्य एक साथ मिलकर अनाज काटते थे। यह समय न केवल परिश्रम का होता था, बल्कि खुशी और मेलजोल का भी होता था। पंजाब की धरती और गेहूं का रिश्ता सदियों पुराना है। जिसे हम आज 'सोना' कहते हैं, उसने पिछले कुछ दशकों में एक लंबी और दिलचस्प यात्रा की है। हल के दस्तों से लेकर कंबाइनों की आवाज तक, गेहूं की कहानी मानव परिश्रम और वैज्ञानिक प्रगति का एक अद्भुत उदाहरण है। पुराना दौर: परिश्रम और साझेदारी की प्राचीन काल में गेहूं की खेती केवल एक व्यवसाय नहीं, बल्कि एक उत्सव के समान थी। उस समय के प्रमुख पहलू थे: बैलों की जोड़ी: खेतों की सफाई लकड़ी के हलकों और बैलों की मदद से की जाती थी। किसान सुबह-सुबह अंधेरे में ही खेतों की ओर निकल जाते थे। हाथ से बोना: बीजों को हाथ से कास्टर या 'पोरे' के माध्यम से बोया जाता था। दाती की गड़ासाझटः कटाई के दिनों में पूरा गांव एक-दूसरे की मदद करता था। दानी के साथ लंबी लाइनों में खड़े होकर गेहूं काटना होता था और 'भरी' बांधली जाती थी। फल और पिंडः गेहूं को निकालने के लिए बैलों के पीछे से दाल बांधकर काट दिया जाता था, फिर हवा के रुख के अनुसार अनाज को अलग कर दिया जाता था।

हरित क्रांतिः एक बड़ा मोड़ 1960 के दशक में आई हरित क्रांति ने सब कुछ बदल दिया। मैक्सिकन प्रजातियों के आगमन से झाड़ियों में भारी वृद्धि हुई। 'भूखमरी के डर से भारत में अन्न की आपूर्ति बढ़ गई, और इसका सबसे बड़ा श्रेय पंजाब के किसानों को जाता है।

मशीन युगः गति और सुविधा आज के समय में कृषि का स्वरूप पूरी तरह बदल गया है: ट्रैक्टर और सुपर सीडरः अब सप्ताहों का काम घंटों में हो जाता है। सुपर सीडर जैसी मशीनों से बिना जलाए पत्ली को उगाना संभव हो गया है। कंबाइन हार्वेस्टरः जहां पहले कटाई और गहाने में महीनों का समय लगता था, अब कंबाइन कुछ ही मिनटों में खेत साफ कर देता है। ड्रोन और तकनीकः अब ड्रोन के माध्यम से खाद और कीटनाशकों का छिड़काव करने की तकनीक भी फैल रही है।

-डॉ. विजय गर्ग

पश्चिम बंगाल बढ़ती अराजकता: लोकतंत्र के लिए चुनौती

ललित गर्ग

राजनीतिक दलों की भूमिका भी इस पूरे परिदृश्य में अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। लोकतंत्र में राजनीतिक दल केवल सत्ता प्राप्त करने का माध्यम नहीं होते, बल्कि वे लोकतांत्रिक मूल्यों के संवाहक भी होते हैं। उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे अपने कार्यकर्ताओं को संयम, कानून के सम्मान और लोकतांत्रिक मर्यादाओं का पालन करने के लिए प्रेरित करें। लेकिन जब राजनीतिक प्रतिस्पर्धा कटु संघर्ष में बदल जाती है और कार्यकर्ताओं को किसी भी तरह से राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, तो अराजकता की स्थिति उत्पन्न होती है। स्वस्थ लोकतंत्र के लिए आवश्यक है कि राजनीतिक दल चुनाव को युद्ध नहीं, बल्कि लोकतांत्रिक उत्सव के रूप में देखें।

पश्चिम बंगाल, जो कभी सांस्कृतिक चेतना, बौद्धिकता और राजनीतिक परिपक्वता का प्रतीक माना जाता था, आज एक ऐसे संक्रमणकाल से गुजर रहा है, जहां लोकतांत्रिक मूल्यों की जड़ें लगातार कमजोर होती प्रतीत हो रही हैं। जैसे-जैसे चुनाव का समय नजदीक आता जा रहा है, वैसे-वैसे राज्य में हिंसा, अराजकता अलोकतांत्रिकता और राजनीतिक असहिष्णुता की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं। यह केवल राजनीतिक प्रतिस्पर्धा का परिणाम नहीं है, बल्कि लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति घटते सम्मान और कानून व्यवस्था की गिरती स्थिति का भी द्योतक है। हाल ही में मालदा जिले में मतदाता सूची पुनरीक्षण अर्थात एसआईआर को लेकर जिस प्रकार का असंतोष और तनाव देखने को मिला, वह भी लोकतांत्रिक प्रक्रिया के प्रति अविश्वास को दर्शाता है। मतदाता सूची में नाम जुड़ना या हटना एक कानूनी और प्रशासनिक प्रक्रिया है, जिसके लिए स्पष्ट नियम और प्रावधान होते हैं। यदि इस प्रक्रिया को राजनीतिक चश्मे से देखा जाएगा या प्रशासनिक अधिकारियों पर दबाव बनाया जाएगा, तो निष्पक्ष चुनाव की पूरी प्रक्रिया ही संदिग्ध हो जाएगी। एसआईआर प्रक्रिया में बाधक बनते-बनते इस तरह से न्यायिक अधिकारियों को नौ घंटे तक बंधक बनाए जाने की घटना सामने आयी है, वह न केवल चिंताजनक है बल्कि लोकतंत्र के लिए एक गंभीर चेतावनी भी है। यह उस व्यापक घातक एवं विडम्बनापूर्ण प्रवृत्ति का हिस्सा है, जिसमें प्रशासनिक और न्यायिक तंत्र को भी राजनीतिक दबाव और भीड़तंत्र के आगे झुकने के लिए मजबूर किया जा रहा है। विशेष रूप से यह तथ्य कि बंधक बनाए गए अधिकारियों में महिलाएं भी शामिल थीं, इस घटना को और अधिक गंभीर बना देता है। यह न केवल कानून के शासन पर प्रश्नचिह्न लगाता है, बल्कि समाज में बढ़ती असंवेदनशीलता को भी उजागर करता है।

पश्चिम बंगाल में राजनीतिक हिंसा का इतिहास नया नहीं है। 1960 और 70 के दशक में नक्सल आंदोलन के दौरान हिंसा का जो दौर शुरू हुआ था, उसने राज्य की राजनीतिक संस्कृति को गहराई से प्रभावित किया। इसके बाद वामपंथी शासन के लंबे कालखंड में भी राजनीतिक विरोधियों के प्रति असहिष्णुता और हिंसा की घटनाएं समय-समय पर सामने आती रहीं। सत्ता परिवर्तन के बाद तृणमूल कांग्रेस एवं ममता बनर्जी के शासन में यह प्रवृत्ति समाप्त नहीं हुई, बल्कि नए स्वरूप में सामने आई। यह स्पष्ट संकेत है कि समस्या केवल किसी एक दल या विचारधारा की नहीं, बल्कि पूरे राजनीतिक तंत्र में व्याप्त एक गहरे संकट की है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, चुनावों के निकट आते ही जिस प्रकार की घटनाएं सामने आ रही हैं, वे लोकतंत्र के लिए गंभीर खतरे का संकेत देती हैं। मतदाता सूची के पुनरीक्षण जैसे संवेदनशील कार्य में लगे अधिकारियों को बंधक बनाना यह दर्शाता है कि कुछ तत्व चुनाव प्रक्रिया को प्रभावित करने के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं। यह केवल कानून का उल्लंघन नहीं, बल्कि मतदाता की स्वतंत्रता और निष्पक्ष चुनाव के अधिकार पर सीधी हमला है।

इस संदर्भ में सुप्रीम कोर्ट की सक्रियता उल्लेखनीय है। समय-समय पर न्यायालय ने राज्य सरकार को कड़े निर्देश दिए हैं और कानून व्यवस्था बनाए रखने की जिम्मेदारी की याद दिलाई है। किंतु यह भी एक चिंताजनक तथ्य है कि इन निर्देशों का जमीनी स्तर पर अपेक्षित प्रभाव नहीं दिखाई देता। इससे यह प्रश्न उठता है कि क्या राज्य प्रशासन एवं सत्तारूढ़ पार्टी इन निर्देशों को लागू करने में अक्षम है या इच्छुक नहीं है? यदि सर्वोच्च न्यायालय के आदेश भी प्रभावी नहीं हो पा रहे हैं, तो यह लोकतंत्र के लिए एक गंभीर चेतावनी है। चुनाव के समय बढ़ती अराजकता के पीछे राजनीतिक बौखलाहट भी एक महत्वपूर्ण कारण हो सकती है। जब किसी दल को अपनी लोकप्रियता में गिरावट का भय होता है, तो वह अक्सर लोकतांत्रिक मर्यादाओं को दरकिनार कर असंवैधानिक उपायों का सहारा लेने लगता है। पश्चिम बंगाल में भी कुछ ऐसी ही प्रवृत्तियां देखने को मिल रही हैं, जहां सत्तारूढ़ दल के कार्यकर्ताओं पर विपक्ष को उकसाने, प्रशासनिक कार्यों में बाधा डालने और चुनाव प्रक्रिया को प्रभावित करने के आरोप लगते रहे हैं। यदि इन आरोपों में सच्चाई है, तो यह स्थिति अत्यंत चिंताजनक है और लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों के विपरीत है।

नागरिक समाज सक्रिय रूप से लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा के लिए आगे नहीं आएगा, तब तक केवल प्रशासनिक उपायों से इस समस्या का समाधान संभव नहीं है। लोकतंत्र केवल चुनावों तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह एक सतत प्रक्रिया है जिसमें कानून का शासन, संस्थाओं की स्वतंत्रता और नागरिकों की भागीदारी महत्वपूर्ण होती है। पश्चिम बंगाल की वर्तमान स्थिति इन सभी पहलुओं पर गंभीर प्रश्न खड़े करती है। यदि चुनाव प्रक्रिया ही निष्पक्ष और शांतिपूर्ण नहीं रह जाती, तो लोकतंत्र का मूल उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। लोकतंत्र की सबसे बड़ी शक्ति मतदाता का विश्वास होता है, और यदि मतदाता को यह लगने लगे कि मतदाता सूची, चुनाव प्रक्रिया या प्रशासन किसी राजनीतिक दबाव में काम कर रहा है, तो लोकतंत्र की विश्वसनीयता स्वतः कमजोर होने लगती है। इस पूरे घटनाक्रम में प्रशासनिक नाकामी का प्रश्न भी गंभीरता से सामने आता है। किसी भी राज्य में यदि अधिकारी सुरक्षित नहीं हैं, न्यायिक अधिकारी तक बंधक बना लिए जाते हैं और पुलिस या प्रशासन समय पर प्रभावी कार्रवाई नहीं कर पाता, तो यह प्रशासनिक तंत्र की कमजोरी का स्पष्ट प्रमाण है। प्रशासन की सबसे बड़ी जिम्मेदारी कानून व्यवस्था बनाए रखना और सरकारी कार्यों को निर्भय वातावरण में संपन्न कराना होता है। यदि प्रशासन यह सुनिश्चित नहीं कर पा रहा है, तो इससे जनता में भय और अविश्वास दोनों बढ़ते हैं। जनता का विश्वास ही किसी सरकार की सबसे बड़ी पूंजी होता है, और जब यही विश्वास डगमगाने लगता है, तो शासन की वैधता पर भी प्रश्नचिह्न लगने लगते हैं।

राजनीतिक दलों की भूमिका भी इस पूरे परिदृश्य में अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। लोकतंत्र में राजनीतिक दल केवल सत्ता प्राप्त करने का माध्यम नहीं होते, बल्कि वे लोकतांत्रिक मूल्यों के संवाहक भी होते हैं। उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे अपने कार्यकर्ताओं को संयम, कानून के सम्मान और लोकतांत्रिक मर्यादाओं का पालन करने के लिए प्रेरित करें। लेकिन जब राजनीतिक प्रतिस्पर्धा कटु संघर्ष में बदल जाती है और कार्यकर्ताओं को किसी भी तरह से राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, तो अराजकता की स्थिति उत्पन्न होती है। स्वस्थ लोकतंत्र के लिए आवश्यक है कि राजनीतिक दल चुनाव को युद्ध नहीं, बल्कि लोकतांत्रिक उत्सव के रूप में देखें। आज आवश्यकता इस बात की है कि पश्चिम बंगाल की घटनाओं को केवल एक राज्य की समस्या न मानकर लोकतंत्र के लिए चेतावनी के रूप में देखा जाए। यदि प्रशासनिक तंत्र कमजोर होगा, राजनीतिक दल मर्यादा नहीं रखेंगे, और जनता का विश्वास कम होता जाएगा, तो लोकतंत्र केवल कागजों तक सीमित रह जाएगा। लोकतंत्र की रक्षा केवल संविधान या न्यायालय नहीं कर सकते, इसके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति, प्रशासनिक निष्पक्षता और जनता की जागरूकतातीनों का संतुलन आवश्यक है। पश्चिम बंगाल की वर्तमान परिस्थितियां हमें यही संदेश देती हैं कि लोकतंत्र को केवल चुनाव से नहीं, बल्कि व्यवस्था की निष्पक्षता, कानून के शासन और नागरिक विश्वास से मजबूत बनाया जा सकता है।

इस परिप्रेक्ष्य में आवश्यक है कि राज्य सरकार, चुनाव आयोग और न्यायपालिका मिलकर ठोस कदम उठाएं। कानून व्यवस्था को सख्ती से लागू किया जाए, दोषियों के खिलाफ त्वरित और निष्पक्ष कार्रवाई हो और प्रशासनिक तंत्र को राजनीतिक दबाव से मुक्त रखा जाए। इसके साथ ही राजनीतिक दलों को भी आत्ममंथन करना होगा और यह सुनिश्चित करना होगा कि उनके कार्यकर्ता लोकतांत्रिक मर्यादाओं का पालन करें। निश्चित ही यह समझना होगा कि लोकतंत्र की रक्षा केवल संस्थाओं की जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। पश्चिम बंगाल की वर्तमान स्थिति एक चेतावनी है कि यदि समय रहते सुधारात्मक कदम नहीं उठाए गए, तो यह अराजकता और गहराई तक फैल सकती है। लोकतंत्र की मजबूती के लिए आवश्यक है कि हम सभी मिलकर कानून, नैतिकता और सहिष्णुता के मूल्यों को पुनः स्थापित करें। पश्चिम बंगाल आज एक ऐसे मोड़ पर खड़ा है, जहां से वह या तो लोकतांत्रिक पुनर्जागरण की ओर बढ़ सकता है या अराजकता के गहरे गर्त में गिर सकता है। यह निर्णय न केवल राजनीतिक नेतृत्व, बल्कि पूरे समाज को मिलकर लेना होगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं स्तंभकार हैं)

उज्ज्वला का उजाला या आपूर्ति का अंधेरा ?

डॉ. प्रियंका सौरभ

हालिया एलपीजी संकट ने प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना जैसी महत्वाकांक्षी कल्याणकारी पहलों की चमक धूमिल कर दी है। मार्च 2026 में पश्चिम एशिया के भू-राजनीतिक तनावों से उत्पन्न यह संकट, जब ईरान-इजरायल-अमेरिका संघर्ष ने होर्मुज जलडमरूमध्य को अवरुद्ध कर दिया, तब भारत की लगभग 60 प्रतिशत आयात निर्भरता पूरी तरह उजागर हो गई। दुनिया के सबसे बड़े एलपीजी उपभोक्ता देशों में शामिल भारत में अचानक सिलेंडरों की लंबी कतारें दिखने लगीं, ग्रामीण महिलाओं के रसोईघर ठंडे पड़ गए और व्यावसायिक गतिविधियां बुरी तरह प्रभावित हुईं। उज्ज्वला योजना ने 10 करोड़ से अधिक कनेक्शन वितरित कर स्वच्छ ईंधन क्रांति का दावा किया था, किंतु इस संकट ने यह स्पष्ट कर दिया कि केवल विस्तार ही प्रभावी वितरण की गारंटी नहीं होता। घरेलू उत्पादन मांग के मुकाबले अपर्याप्त रहा, भंडारण क्षमता महज पांच दिनों की साबित हुई और आपूर्ति श्रृंखला की नाजुकता खुलकर सामने आ गई।

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना का प्रारंभ 2016 में धुएं से मुक्ति के एक आकर्षक और मानवीय स्वप्न के साथ हुआ था। लकड़ी और कोयले के चूल्हों से उत्पन्न स्वास्थ्य संकट को कम करने के उद्देश्य से गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों को मुफ्त गैस कनेक्शन उपलब्ध कराए गए। योजना का विस्तार तीन चरणों में हुआ—प्रथम चरण में 5 करोड़, द्वितीय में 6 करोड़ और तृतीय में अतिरिक्त लक्ष्य निर्धारित किए गए। परिणामस्वरूप एलपीजी कवरेज 95 प्रतिशत से अधिक हो गया, जो एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। किंतु हालिया संकट ने रिफिल दरों की वास्तविकता को उजागर कर दिया। औसतन लाभार्थी वर्ष केवल 3 से 4 बार ही सिलेंडर रिफिल कराते हैं, जबकि निरंतर उपयोग के लिए कम से कम 8 से 10 रिफिल आवश्यक होते हैं। सब्सिडी के बावजूद 600 से 800 रुपये की लागत दैनिक मजदूरी पर निर्भर परिवारों के लिए भारी पड़ती है। परिणामस्वरूप, अनेक परिवार पुनः पारंपरिक ईंधनों की ओर लौट जाते हैं। सिलेंडर घरों में 'आपातकालीन विकल्प' बनकर रह जाता है, न कि नियमित उपयोग का साधन। एलपीजी संकट ने केवल मांग और कीमत का ही प्रश्न नहीं उठाया, बल्कि भारत की आपूर्ति श्रृंखला की नाजुकता को भी उजागर कर दिया। घरेलू उत्पादन मांग के मुकाबले कम है, भंडारण क्षमता सीमित है और आयात बाधित होते ही वितरण तंत्र चरमरा जाता है। पूर्वोत्तर राज्यों में भौगोलिक चुनौतियों ने स्थिति को और भी गंभीर बना दिया। यह स्पष्ट हो गया कि ऊर्जा सुरक्षा के बिना कल्याणकारी योजनाएं केवल कागजी उपलब्धियां बनकर रह जाती हैं।

डिजिटल प्रणालियों ने पारदर्शिता तो बढ़ाई है, किंतु डिजिटल विभाजन ने बड़ी संख्या में लोगों को बाहर भी कर दिया है। ग्रामीण भारत का एक बड़ा हिस्सा अभी भी इंटरनेट और तकनीकी संसाधनों से वंचित है, जिससे रिफिल बुकिंग और शिकायत निवारण जैसी प्रक्रियाएं उनके लिए कठिन बनी रहती हैं। इस प्रकार, जो व्यवस्था समावेशन के लिए बनाई गई थी, वही कई बार बहिष्करण का कारण बन जाती हैयह समस्या केवल उज्ज्वला योजना तक सीमित नहीं है, बल्कि भारत की व्यापक कल्याणकारी संरचना की कमजोरी को भी उजागर करती है। देश में अनेक योजनाएं सुभेद्य वर्गों को लक्षित करती हैं, किंतु जागरूकता के अभाव, दस्तावेजी जटिलताओं, भ्रष्टाचार और निगरानी की कमी के कारण उनका प्रभाव सीमित रह जाता है। अधिकांश योजनाएं अल्पकालिक राहत तक सीमित रहती हैं और संकट के दौरान सरकार द्वारा उठाए गए कदम तत्काल राहत के लिए आवश्यक थे, किंतु वे स्थायी समाधान प्रस्तुत नहीं करते। यदि सुभेद्य आबादी के लिए वास्तविक सुरक्षा सुनिश्चित करनी है, तो आयात निर्भरता को कम कर घरेलू उत्पादन बढ़ाना होगा, भंडारण क्षमता का विस्तार करना होगा और वितरण तंत्र को मजबूत बनाना होगा। साथ ही, डिजिटल समावेशन सुनिश्चित करते हुए वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों—जैसे बायोगैस और सौर ऊर्जा—को बढ़ावा देना होगा। अंततः, एलपीजी संकट यह स्पष्ट करता है कि कल्याण केवल वितरण का प्रश्न नहीं, बल्कि सतत और समान पहुंच सुनिश्चित करने की प्रक्रिया है। उज्ज्वला योजना ने लाखों जीवनों को प्रभावित किया है, किंतु इस संकट ने उसकी सीमा को भी उजागर कर दिया है। सुभेद्य वर्गों का वास्तविक सशक्तीकरण तभी संभव है, जब योजनाओं की संरचना समावेशी, लचीली और उत्तरदायी हो। अन्यथा, ये पहलें केवल कागजी उपलब्धियों तक सीमित रह जाएंगी। भारत की कल्याण यात्रा को अब विस्तार के साथ-साथ गहराई और स्थायित्व की आवश्यकता है, ताकि अगला संकट सबसे कमजोर वर्ग को सबसे अधिक प्रभावित न कर सके। **(लेखक कवयित्री एवं सामाजिक चिंतक हैं।)**

मुख्यमंत्री हेल्पलाइन में उठती पुकार: जब समाधान ही शिकायत बन जाए

वीरेश तरार

उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री हेल्पलाइन 1076 को आमजन की आवाज का सबसे सशक्त माध्यम माना जाता है। यह वह मंच है, जहां से शासन तक सीधे शिकायत पहुंचती है और समाधान की अपेक्षा की जाती है। लेकिन विडंबना यह है कि आज उसी हेल्पलाइन से जुड़े कर्मचारी स्वयं सड़कों पर उतरकर अपनी पीड़ा व्यक्त कर रहे हैं। जिनके कंधों पर जनता की समस्याओं के समाधान का दायित्व है, वे ही अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत हों, तो यह केवल एक प्रशासनिक कमी नहीं, बल्कि व्यवस्था की गंभीर विफलता का संकेत है।

सूत्रों का कहना है कि हेल्पलाइन में कार्यरत कर्मचारी एक निजी कंपनी 'वी विन' के माध्यम से ठेका पद्धति पर नियुक्त हैं। उनका आरोप है कि उन्हें कई महीनों से वेतन नहीं मिला है और जो भुगतान होता भी है, वह तय मानकों से बेहद कम—सात से आठ हजार रुपये मासिक के आसपास-है। यह स्थिति न केवल आर्थिक अन्याय है, बल्कि सामाजिक असंतुलन को भी जन्म देती है। आज के महंगाई के दौर में इतनी अल्प आय में किसी परिवार का भरण-पोषण असंभव है। यह सवाल केवल वेतन का नहीं, बल्कि श्रमिक की गरिमा और उसके जीवन के अधिकार का है। स्थिति तब और गंभीर हो जाती है जब इन कर्मचारियों ने अपनी मांगों को लेकर लखनऊ में प्रदर्शन किया और उन्हें बलपूर्वक रोका गया। लोकतंत्र में विरोध और अभिव्यक्ति का अधिकार मौलिक है, लेकिन यदि अपनी ही सरकार के कर्मचारी अपनी ही सरकार के खिलाफ आवाज उठाने पर लाठियों का सामना करें, तो यह लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए चिंताजनक संकेत है। यह दृश्य कहीं न कहीं औपनिवेशिक मानसिकता की याद दिलाता है, जहां पहले अन्याय होता है और फिर विरोध को दबाया जाता है।

यह पूरा मामला ठेका और संविदा पद्धति के उस व्यापक ढांचे पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा करता है, जिसे बीते वर्षों में सरकारी कार्यप्रणाली का अहम हिस्सा बना दिया गया है। यह तर्क दिया गया था कि श्रम कानूनों में लचीलापन और ठेका व्यवस्था से कार्यक्षमता बढ़ेगी, यूनियनबाजी पर अंकुश लगेगा और विकास कार्यों में तेजी आएगी। लेकिन वर्तमान परिदृश्य यह दर्शाता है कि इस लचीलेपन का झुकाव एकतरफा हो गया है—नियोक्ता एजेंसियों के पक्ष में।

परिणामस्वरूप, श्रमिक न केवल असुरक्षित हुआ है, बल्कि उसके शोषण की आशंकाएं भी कई गुना बढ़ गई हैं।

दरअसल, पहले जहां यूनियन के नाम पर कामकाज प्रभावित होने की शिकायतें थीं, वहीं अब एक नया असंतुलन सामने आया है—जहां श्रमिक की आवाज ही कमजोर कर दी गई है। न तो उसके पास स्थायी रोजगार की सुरक्षा है, न ही न्यूनतम वेतन और समय पर भुगतान की गारंटी। इस स्थिति को 'सुधार' नहीं, बल्कि 'विकृति' कहना अधिक उचित होगा।

सरकार के लिए यह केवल एक विभागीय मुद्दा नहीं है, बल्कि उसकी साख और संवेदनशीलता की परीक्षा है। मुख्यमंत्री हेल्पलाइन जैसी प्रतिष्ठित व्यवस्था में यदि कर्मचारियों के साथ अन्याय होता है, तो यह पूरे शासन तंत्र की विश्वसनीयता को प्रभावित करता है। यह विपक्ष को अवसर देने के साथ-साथ आम जनता के मन में भी असंतोष का बीज बोता है।

आवश्यक है कि सरकार इस मामले का तत्काल संज्ञान ले। संबंधित कर्मचारी की जवाबदेही तय की जाए, लंबित वेतन का शीघ्र भुगतान सुनिश्चित किया जाए और ठेका पद्धति में पारदर्शिता व जवाबदेही के स्पष्ट मानक तय किए जाएं। साथ ही, संविदा कर्मचारियों के लिए न्यूनतम वेतन, समयबद्ध भुगतान और सामाजिक सुरक्षा जैसे बुनियादी अधिकारों को सुनिश्चित करना अब टाला नहीं जा सकता।

लोकतंत्र की असली ताकत केवल संस्थानों में नहीं, बल्कि उन लोगों में निहित होती है जो इन संस्थानों को चलाते हैं। यदि वही लोग उपेक्षित और शोषित होंगे, तो कोई भी व्यवस्था लंबे समय तक टिकाऊ नहीं रह सकती। मुख्यमंत्री हेल्पलाइन की यह पुकार केवल कर्मचारियों की नहीं, बल्कि पूरे तंत्र के आत्ममंथन का अवसर है-जिसे नजरअंदाज करना भविष्य के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।

(लेखक पब्लिक एशिया से सम्बद्ध हैं)

सम्पादकीय

इंसानों की चीखों के बीच नोबेल की चाह

जब स्कूलों की घंटियां गोलियों की आवाज में दब रही हों, जब धरती पर खून के धब्बे पपड़ी बन रहे हों तब 'नोबेल' शब्द भी शायद थोड़ा कांप जाता होगा। ऐसी घड़ी में शांति पुरस्कार का हर दावा शर्मिंदा हो जाता है।

कुछ समय पहले तक दुनिया के सबसे ताकतवर नेताओं में से एक ट्रम्प महाशय बड़े गर्व से कह रहे थे कि उन्हें नोबेल पीस प्राइज मिलना ही चाहिए। जैसे शांति का नोबेल पुरस्कार कोई पदक हो जिसे ताकत और शोर से हासिल किया जा सकता है। उस समय शायद उन्हें लगा होगा कि बड़े-बड़े बयान देने से इतिहास उनके नाम के आगे 'शांति दूत' लिख देगा। पर समय के चक्र ने इस खून के सौदागर के मस्तक पर 'युद्ध दूत' लिख दिया है।

इतिहास इतना भोला नहीं होता और इंसानियत की अदालत में फैसले भाषणों से नहीं बल्कि इंसानों की जिंदगियों से लिखे जाते हैं। जब दुनिया के किसी कोने में बम गिरता है, किसी स्कूल की दीवारें गोलियों से छलनी हो जाती हैं, मासूम बच्चों की चीखें हवा में तैरती हैं, किसी मां की गोद उजड़ती है और किसी पिता का भविष्य मलबे में दब जाता है। ऐसे समय में जब बच्चे डर के साए में जी रहे हों, जब स्कूलों की घंटियां गोलियों की आवाज़ में दब रही हों, जब धरती पर खून के धब्बे पपड़ी बन रहे हों तब 'नोबेल' शब्द भी शायद थोड़ा कांप जाता होगा। ऐसी घड़ी में शांति पुरस्कार का हर दावा शर्मिंदा हो जाता है।

नोबेल उन हाथों को मिलता है जो हथियार नहीं उठाते और जो घाव भरते हैं। नोबेल उन आवाज़ों को मिलता है जो युद्ध का ऐलान नहीं करतीं बल्कि युद्ध रोकने की गुहार लगाती हैं। आज दुनिया को ऐसे नेताओं की जरूरत नहीं जो मंच से खड़े होकर अपने लिए पुरस्कार मांगें। दुनिया को उन लोगों की जरूरत है जो चुपचाप किसी अनजान बच्चे की जान बचा लें। किसी मां-बहन-बेटी का सिंदूर बचा लें।

जिस दुनिया में बच्चों का खून बह रहा हो, उस दुनिया में कोई भी नेता नोबेल का नाम लेने से पहले आईने में अपनी इंसानियत जरूर देखे। और शायद उस आईने में एक सवाल हमेशा खड़ा रहेगा- क्या शांति का पुरस्कार मांगने से पहले सचमुच शांति बचाने की कोशिश की थी? कोई भी नेता शान्ति पुरस्कार का नाम लेने से पहले याद रखे कि नोबेल की चमक से ज्यादा मासूम बच्चों के आंसुओं की कसक होती है। आज इतिहास बड़े शांत स्वर में एक ही बात कह रहा है कि जो लोग सत्ता के शोर में इंसानियत की आवाज़ नहीं सुन पाते उन्हें पुरस्कार नहीं बल्कि लोगों के कठोर प्रश्नों का सामना करना पड़ता है।

एक बर की बात है अक सुरजे मास्टर नैं बूज्झी अक यो अंगूठा क्यां खात्तर बणाया है? नत्थू बोल्या- इब्बे ताहिं तो मैं सोच्चा करता अक गुट्ठा चूस्सण खात्तर अर चिडान खात्तर बणाया है पर ईब बेरा पाट्या अक यो तो व्हटसऐप चलाण खात्तर बणाया है।

परस्पर निर्भर भारत और खाड़ी देश

संयुक्त अरब अमीरात यानी यूएई के राष्ट्रपति रहे शेख जायद बिन मोहम्मद के निमंत्रण पर मई 1981 में भारतीय प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने इस खाड़ी देश का दौरा किया था। करीब 45 वर्ष पहले हुई इस मुलाकात में दोनों नेताओं ने सहमति जताई थी कि खाड़ी क्षेत्र और भारत की सुरक्षा एवं कल्याण की कड़ियां आपस में जुड़ी हुई हैं। समय के साथ यह धारणा और मजबूत ही हुई कि दोनों क्षेत्रों की सुरक्षा और समग्र कल्याण परस्पर निर्भर हैं। एक ऐसे समय जब ईरान युद्ध के चलते समूचे क्षेत्र में अशांति बढ़ने से पूरे समीकरण बदल गए हैं तो यह विचार और प्रासंगिक हो गया है।

अरब प्रायद्वीप में सऊदी अरब, कुवैत, बहरीन, कतर, यूएई और ओमान जैसे छह प्रमुख देश हैं। यहां दक्षिण एशियाई देशों की बड़ी प्रवासी जनसंख्या रहती है। इनमें से भी सबसे बड़ी संख्या भारतीयों की है, जिनकी तादाद नब्बे लाख से एक करोड़ के बीच है। पाकिस्तानियों और बांग्लादेशियों की संख्या भी पचास लाख से अधिक है। नेपाल और श्रीलंका के भी लाखों लोग यहां हैं। ये लोग इन देशों की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये लोग पेशेवर, कार्यकारी और प्रबंधकीय से लेकर अर्धकुशल और सामान्य श्रमिक जैसी भूमिकाओं में सक्रिय हैं। यह कहना एकदम सही होगा कि भले ही खाड़ी देशों में यूरोपीय प्रवासी भी रहते हैं, लेकिन उनका काम दक्षिण एशियाई श्रमिक रूप से भारतीयों के बिना नहीं चल सकता।

काम से जुड़ा भारतीयों का कौशल और भरोसा उन्हें इन देशों में व्यापक रूप से स्वीकार्य बनाता है। जितना खाड़ी के देशों को प्रवासियों की आवश्यकता है, उतनी ही उन्हें भी है, क्योंकि वे अपने देश को भारी मात्रा में धनराशि भेजते हैं। रेमिटेंस कही जाने वाली यह धनराशि इन देशों के वृहद आर्थिक स्थायित्व में संतुलन की भूमिका और बाहरी झटकों से बचाने में उपयोगी होती है। भारत के चालू खाते के लिए यह राशि बड़ा योगदान देती है, लेकिन मौजूदा हालात में पाकिस्तान के लिए यह अस्तित्व का संकट पैदा कर सकती है, क्योंकि उसकी अर्थव्यवस्था पहले से ही नाजुक बनी हुई है। राजनीतिक उथल-पुथल से प्रभावित बांग्लादेश के लिए भी रेमिटेंस की अहमियत कहीं ज्यादा बढ़ गई है। वृहद आर्थिक स्थिरता के अलावा खाड़ी देशों में कार्यरत लोगों द्वारा भेजे जाने वाला रेमिटेंस उनके स्वजनों के लिए भी बहुत आवश्यक है, क्योंकि अधिकांश परिवारों की योजनाएं इसी भेजी गई राशि के आधार पर टिकी होती हैं। उसके अभाव में उनके परिवारों का भविष्य अधर में भी लटक सकता है।

रेमिटेंस के अलावा खाड़ी देश भारत की ऊर्जा सुरक्षा के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण हैं। पाकिस्तान और अन्य दक्षिण एशियाई देशों के लिए तो खाड़ी देशों की महत्ता और भी अधिक है। ऐसा इसलिए, क्योंकि भारत कच्चे तेल और गैस की आवश्यकताओं का आधे से अधिक हिस्सा इन देशों से आयात करता है, लेकिन उसने अमेरिका और यूरोपीय देशों जैसे अन्य स्रोतों से भी तेल आयात को विविधीकृत किया है। ये कुछ महंगे होंगे, लेकिन कम से कम उनकी उपलब्धता तो रहेगी। होर्मुज जलमार्ग के बाधित होने से बाकी दुनिया के साथ ही दक्षिण एशियाई देशों की समस्याएं भी बढ़ी हैं। पाकिस्तान के लिए समस्या यह है कि उसे सऊदी अरब और यूएई से क्रेडिट यानी बाद में भुगतान के साथ भी तेल मिलता है, जो वह अन्य देशों से प्राप्त नहीं कर सकता। इसके चलते भुगतान की स्थिति में पहले से ही आर्थिक मुश्किलों से जूझ रही पाकिस्तानी अर्थव्यवस्था पर दबाव और बढ़ेगा। उर्वरकों की आपूर्ति में संभावित गतिरोध से भी कृषि आधारित दक्षिण एशियाई देशों की चिंता बढ़ाई है।

खाड़ी देश भारत के साथ ही अन्य दक्षिण एशियाई देशों के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। भारत का खाड़ी देशों के लिए निर्यात उसके कुल निर्यात का एक बड़ा हिस्सा है। ईरान युद्ध ने इसे प्रभावित किया है। दुबई बंदरगाह कई निर्यात गंतव्यों के लिए पड़ाव भी है। खाड़ी क्षेत्र भारत समेत कई दक्षिण एशियाई देशों के लिए निवेश के महत्वपूर्ण स्रोत भी हैं। भारतीयों और अन्य दक्षिण एशियाई लोगों ने भी खाड़ी देशों में भारी निवेश किया है। इस युद्ध से उस पर आशंकाओं के बादल छाए हैं। इस तरह देखा जाए तो दशकों पहले इंदिरा गांधी और शेख जायद ने दोनों पक्षों के परस्पर हितों के जुड़ाव की जो बात कही थी, वह एकदम सही थी। उन्होंने जिन बिंदुओं पर सहमति बनाई थी, उन्हें आगे बढ़ाने का काम शेख जायद के पुत्र और यूएई के वर्तमान राष्ट्रपति शेख मोहम्मद बिन जायद अल नाहयान और भारतीय प्रधानमंत्री मोदी ने बखूबी आगे बढ़ाया है। दोनों के बीच मजबूत एवं

आत्मीय व्यक्तिगत संबंध भी है।

ईरान युद्ध ने यह भी दर्शाया है कि भारत और दक्षिण एशियाई देश एक ही नाव पर सवार हैं। यदि पाकिस्तान भारत के प्रति इतनी नफरत से भरा न होता और बांग्लादेश ने भी हालिया अस्थिरता का परिचय न दिया होता तो संभव है कि दक्षिण एशिया में भारत उनके साथ मिलकर अमेरिका, इजरायल और ईरान से अपील कर सकता था कि वे टकराव के बजाय कूटनीति का सहारा लें। अभी प्रत्येक पक्ष निजी हैसियत से ऐसा कह रहा है, लेकिन सामूहिक स्वर की बात ही कुछ और होती। दक्षिण एशिया की एकजुट आवाज में सबसे बड़ी बाधा पाकिस्तान है। वहां के शासक वर्ग की सत्ता भारत के प्रति नफरत पर टिकी रही है।

प्रधानमंत्री मोदी ने अपने कार्यकाल की शुरुआत में उसके साथ संबंध सामान्य बनाने की दिशा में पहल की, जिसे वहां की सेना ने सफल नहीं होने दिया। अब पाकिस्तान ईरान और अमेरिका के बीच मध्यस्थता के लिए प्रयासरत है, लेकिन ईरान ने उसके प्रयासों की हवा निकाल दी। पाकिस्तान अपनी इस्लामी पहचान को दक्षिण एशियाई पहचान से ऊपर रख रहा है। इस्लामिक देशों में पाकिस्तान के पास ही परमाणु हथियार हैं, पर उसके चरित्र को देखते हुए इस्लामिक देश ही उसे गंभीरता से नहीं लेते, क्योंकि उसकी राजनीति अस्थिर और अर्थव्यवस्था डांवाडोल है। पाकिस्तान ईरान युद्ध को अपना कद बढ़ाने के मौके के रूप में देख रहा है, पर वह हमेशा की तरह एक मोहरे के रूप में ही इस्तेमाल होगा। शायद यही उसकी नियति भी है।

विवेक काटजू

नई सोच रोकेगी मनुष्यता के खिलाफ अपराध

महाड के जल-सत्याग्रह का शताब्दी वर्ष है यह। वह सत्याग्रह वस्तुतः मानव-समाज की समानता के लिए एक नए संघर्ष की शुरुआत थी। यह संघर्ष तब तक पूरा नहीं होगा, जब तक कानून या संविधान में दिये गये अधिकारों को सामाजिक स्तर पर पूरी मान्यता नहीं मिल जाती।

स्वतंत्रता सेनानी और अस्पृश्य समझे जाने वाले वर्ग के नेता बाबू जगजीवन राम को बचपन में स्कूल में इसलिए सज़ा मिली थी कि उन्होंने उस मटके से पानी पी लिया था जो स्कूल के सवर्ण अध्यापकों के लिए रखा गया था। यह बात तब की है जब हम गुलाम थे। पर ऐसे ही 'अपराध' के लिए स्वतंत्र भारत में भी नौ साल के एक दलित बच्चे को भी सज़ा मिली थी।गुजरात के जालौर के एक स्कूल में उन बच्चों से भी अनजाने में ही अध्यापकों के मटके से पानी पीने का 'अपराध' हो गया था। यह घटना हमारी आज़ादी की 75वीं सालगिरह के दिन घटी थी। दोनों ही घटनाओं में लगभग एक सदी की दूरी है। सदियों से दलितों के साथ इस तरह के अत्याचार होते आ रहे हैं। उम्मीद थी कि स्वतंत्र भारत में हमारी समाज व्यवस्था के माथे से यह कलंक मिट जायेगा। पर आज भी, यानी इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक में इस आशय के समाचार मिल जाते हैं कि फलां गांव में या फलां कस्बे में दलित समाज के किसी व्यक्ति को इसलिए सज़ा भुगतान पड़ी कि उसने घोड़े पर बैठकर दूल्हा बनने का दुस्साहस किया था! आज़ादी प्राप्त करने के बाद जब हमने अपना संविधान बनाया तो उसमें यह स्पष्ट व्यवस्था की थी कि स्वतंत्र भारत में किसी भी नागरिक को अस्पृश्यता जैसे अभिशाप को झेलना न पड़े। एक लंबे संघर्ष के बाद यह स्थिति आयी थी, पर अभी भी अस्पृश्यता के अभिशाप से हम मुक्त नहीं हो पाये। सौ साल पहले बाबासाहेब अम्बेडकर ने महाराष्ट्र के महाड में अगड़ों के लिए आरक्षित समझे जाने वाले एक तालाब से पानी पीने के अधिकार का संघर्ष शुरू किया था। उस तालाब में जानवर तो

पानी पी सकते थे, पर अस्पृश्य समझे जाने वाले दलित को यह अधिकार नहीं था। ऊंची समझी जाने वाली जातियों के लोग यह मानते थे कि दलितों के छूने से वह भी अपवित्र हो जायेंगे। पता नहीं यह धारणा कब से चली आ रही है, पर यह एक शर्मनाक सच्चाई है कि हमारे देश में आज भी छुआछूत से हमारा पीछा नहीं छूट पाया। शहरी भारत में भले ही माथे पर यह कलंक न दिखता हो, पर ग्रामीण भारत आज भी जैसे इस त्रास को भोगने के लिए शापित है। यहां यह याद रखना ज़रूरी है कि लगभग अस्सी प्रतिशत भारत गांवों में बसता है!

सन्? 1950 में हमने अपने संविधान में अस्पृश्यता पर प्रतिबंध लगाने की व्यवस्था की थी। हमारा संविधान कहता है, 'सरकार धर्म, जाति, जन्म आदि के आधार पर किसी नागरिक से भेदभाव नहीं करेगी'। लगता है, भेदभाव करने वालों ने मान लिया है कि यह व्यवस्था सरकार के लिए है, समाज के लिए नहीं!

सौ साल पहले डाक्टर भीमराव अम्बेडकर ने समाज को यह अहसास कराने की कोशिश की थी। सौ साल पहले 20 मार्च, 1927 को महाराष्ट्र के एक तालाब के पानी को न केवल दलितों ने छुआ, बल्कि उस तालाब का पानी पिया भी। वस्तुतः यह मनुष्यता की रक्षा के लिए किये जाने वाले एक संघर्ष की शुरुआत थी। यह सौवां वर्ष है इस संघर्ष का— और संघर्ष आज भी जारी है। हम इस बात पर तो गर्व कर सकते हैं कि सौ साल पहले ऐसा कोई संघर्ष प्रारंभ हुआ था, पर देखा जाये तो यह शर्म की ही बात है कि अब तक इस संघर्ष में पूरी विजय नहीं मिल पायी। पर इस असफलता से संघर्ष की महत्ता कम नहीं हो जाती। ज़रूरी है कि महाड में शुरू किये गये इस जल-सत्याग्रह की महत्ता को समझा जाये, इस संघर्ष को तार्किक परिणति तक पहुंचाया जाये।

उस दिन अम्बेडकर के नेतृत्व में लगभग ढाई हज़ार दलितों ने महाड के चौदार तालाब के पवित्र समझे जाने वाले जल को अंजलि में भरकर एक नई आज़ादी के संघर्ष की शुरुआत की थी। यह संघर्ष इस सिद्धांत को स्वीकारने के लिए भी था कि जल, जंगल और हवा प्रकृति ने हर प्राणी के लिए दिये हैं, किसी जन्म या किसी धर्म के नाम पर इनका बंटवारा नहीं हो सकता। किसी भी आधार पर प्रकृति के इन अवदानों पर कोई अपना अधिकार नहीं जता सकता। पर इस बात को सवर्ण समझे जाने वाले समाज ने आसानी से स्वीकार नहीं किया। महाड सत्याग्रह से नाराज सवर्णों ने न केवल तालाब का 'शुद्धीकरण' किया, बल्कि सत्याग्रहियों को मारा-पीटा भी गया था। वे मामले को अदालत में भी लेकर पहुंचे। दस साल लगे न्यायालय को पानी पर सबके अधिकार का फैसला सुनाने में। और यह भी हकीकत है कि आज भी देश का एक बहुत बड़ा तबका मन से यह मानने को तैयार नहीं है कि दलितों को अस्पृश्य मानना मनुष्यता के खिलाफ एक अपराध है। सदियों से चले आ रहे इस अपराध का प्रायश्चित होना ही चाहिए। यह अपराध-बोध ही समता के इस संघर्ष को किसी तार्किक परिणति तक पहुंचा सकता है। महाड के जल-सत्याग्रह का शताब्दी वर्ष है यह। वह सत्याग्रह वस्तुतः मानव-समाज की समानता के लिए एक नए संघर्ष की शुरुआत थी। यह संघर्ष तब तक पूरा नहीं होगा, जब तक कानून या संविधान में दिये गये अधिकारों को सामाजिक स्तर पर पूरी मान्यता नहीं मिल जाती। इस मान्यता को मिलने का मतलब है इस सत्य को स्वीकार करना कि किसी भी आधार पर मनुष्य और मनुष्य के बीच खाई नहीं होनी चाहिए। संविधान में समता, स्वतंत्रता, न्याय और बंधुता के चार स्तंभों पर एक मानवीय समाज की संरचना को आकार दिया गया है। अम्बेडकर ने जल-सत्याग्रह के माध्यम से समानता की लड़ाई को नया आयाम दिया था। चावदार तालाब के इस सत्याग्रह के तीन साल बाद उन्होंने नासिक के कालाराम मंदिर में दलितों की समानता की लड़ाई का एक और मोर्चा खोला था। यहां विवाद दलितों के मंदिर प्रवेश के अधिकार को लेकर था। गांधीजी इससे दो दशक पहले दलितों को यह अधिकार दिये जाने के संघर्ष को प्रारंभ कर चुके थे। इतिहास की इन सारी बातों को याद करने का एक अवसर है जल-सत्याग्रह का यह शताब्दी वर्ष। इसे याद करने का मतलब समानता की एक अधूरी लड़ाई को आगे बढ़ाने के संकल्प की पूर्ति की दिशा में आगे बढ़ना है।

यह बात समझना जरूरी है कि समानता की यह लड़ाई किसी कानून या किसी सरकार के सहारे नहीं जीती जा सकती। आवश्यकता एक सामाजिक आंदोलन को चलाने, उसे गति देने की है। अम्बेडकर का जल-सत्याग्रह या गांधी का नमक- सत्याग्रह या दलित के मंदिर प्रवेश के अधिकार के लिए किया गया मानवीय समानता का संघर्ष कुल मिलाकर समानता की एक ऐसी लड़ाई है जिसके पूरा हुए बिना मनुष्यता की लड़ाई किसी तार्किक परिणति तक नहीं पहुंच सकती।

डाक्टर अम्बेडकर को हम संविधान के प्रमुख शिल्पी की तरह याद करते हैं। इस याद करने को सार्थक बनाने का अर्थ आदमी और आदमी के बीच की खाई को पाटना है।

तीन साल पहले जारी किये गये एक आंकड़े के अनुसार देश में दलितों पर अत्याचार की पांच घटनाएं रोज घट रही हैं। जालौर के नौ साल के इंद्र मेघवाल के साथ हुआ अन्याय इन्हीं पांच में से एक है।

विशेष आलेख /राशिफल

होर्मुज संकट से बेहाल दुनिया को चीन की ऊर्जा नीति से सीख लेनी चाहिए

वैश्विक ऊर्जा संकट के बीच एक सख्त सच्चाई उभर कर सामने आ रही है। होर्मुज जलडमरूमध्य पर मंडराते खतरे ने पूरी दुनिया की सांसें रोक दी हैं, लेकिन इस उथल पुथल के बीच चीन एक अलग ही खेल खेलता नजर आ रहा है। जहां एशिया के कई देश ऊर्जा बचाने की अपील कर रहे हैं, वहीं चीन आत्मविश्वास से भरा हुआ है और दावा कर रहा है कि उसके पास ऊर्जा का पर्याप्त रणनीतिक भंडार है।

दरअसल, यह आत्मविश्वास यूं ही नहीं आया। चीन ने पिछले कई वर्षों में एक ऐसी रणनीति तैयार की है जिसने उसे वैश्विक तेल आपूर्ति के झटकों से काफी हद तक सुरक्षित बना दिया है। जब दुनिया तेल के लिए समुद्री मार्गों पर निर्भर है, चीन ने अपनी निर्भरता को योजनाबद्ध तरीके से कम किया है।

सबसे बड़ा बदलाव चीन के इलेक्ट्रिक वाहन अभियान में दिखता है। जहां 2020 में लक्ष्य रखा गया था कि 2025 तक नए वाहनों में 20 प्रतिशत हिस्सेदारी इलेक्ट्रिक वाहनों की होगी, वहीं यह आंकड़ा अपेक्षा से कहीं आगे निकल गया और आधे से ज्यादा नई गाड़ियां इलेक्ट्रिक हो गईं। इसका सीधा असर यह हुआ कि चीन की तेल खपत अब स्थिर होने लगी है। आंकड़े बताते हैं कि केवल इलेक्ट्रिक वाहनों के कारण जितना तेल बचा है, वह लगभग उतना ही है जितना चीन सऊदी अरब से आयात करता था। यह बदलाव मामूली नहीं है, बल्कि यह ऊर्जा भू राजनीति की दिशा बदलने वाला संकेत है। चीन की दूसरी सबसे बड़ी ताकत उसका विविधीकृत आयात तंत्र है। जहां जापान और दक्षिण कोरिया जैसे देश एक या दो आपूर्तिकर्ताओं पर निर्भर हैं, वहीं चीन ने अपने तेल स्रोतों को आठ से ज्यादा देशों में फैला रखा है। रूस, ईरान, वेनेजुएला जैसे देशों से सस्ता तेल लेकर उसने पश्चिमी प्रतिबंधों को भी अपने हित में बदल लिया है। रणनीतिक दृष्टि से यह कदम बेहद महत्वपूर्ण है। इसका मतलब है कि यदि किसी एक क्षेत्र में संकट आता है, तो चीन पूरी तरह ठप नहीं होगा।

तीसरा और सबसे खतरनाक दांव है चीन का विशाल तेल भंडार। अनुमान है कि उसके पास इतना तेल जमा है कि वह होर्मुज मार्ग बंद होने की स्थिति में करीब सात महीने तक अपनी जरूरतें पूरी कर सकता है। यह भंडारण केवल आर्थिक सुरक्षा नहीं बल्कि सामरिक हथियार भी है। देखा जाये तो ऊर्जा सुरक्षा के इस खेल में चीन ने केवल तेल पर ही भरोसा नहीं किया है। उसकी बिजली व्यवस्था लगभग आत्मनिर्भर हो चुकी है। कोयले और तेजी से बढ़ती नवीकरणीय ऊर्जा के दम पर चीन ने अपने ग्रिड को बाहरी निर्भरता से लगभग मुक्त कर लिया है। इसके साथ ही सौर और पवन ऊर्जा का विस्फोटक विस्तार इस बात का संकेत है कि चीन भविष्य की ऊर्जा लड़ाई के लिए पहले ही तैयार है। इसका सीधा असर यह हुआ है कि उसे कम एलएनजी आयात करना पड़ रहा है और तटीय इलाकों की निर्भरता भी घट रही है। गैस के मामले में भी चीन ने चालाकी दिखाई है। पाइपलाइन नेटवर्क के जरिए उसने रूस, मध्य एशिया और म्यांमार से सीधी आपूर्ति सुनिश्चित कर ली है। इससे समुद्री मार्गों पर निर्भरता और कम हो गई है। सामरिक नजरिए से देखें तो यह पूरी रणनीति एक गहरी सोच का परिणाम है। चीन ने समझ लिया था कि भविष्य की जंग केवल हथियारों से नहीं बल्कि ऊर्जा पर नियंत्रण से जीती जाएगी। आज जब होर्मुज जलडमरूमध्य पर खतरा मंडरा रहा है, तब भारत, जापान और दक्षिण कोरिया जैसे देश चिंता में डूबे हुए हैं। लेकिन चीन इस संकट को अवसर में बदलने की स्थिति में है। सबसे बड़ी बात यह है कि चीन की तेल मांग अब चरम पर पहुंचकर घटने की ओर बढ़ रही है। इसका मतलब है कि आने वाले समय में उसकी आयात

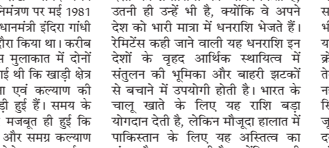

निर्भरता और कम होगी, जिससे वैश्विक बाजार में उसकी स्थिति और मजबूत होगी। बहरहाल, यह पूरा घटनाक्रम एक साफ संदेश देता है। जो देश समय रहते अपनी ऊर्जा रणनीति नहीं बदलेंगे, वे आने वाले संकटों में बुरी तरह फंस सकते हैं। चीन ने यह साबित कर दिया है कि दीर्घकालिक योजना, आक्रामक निवेश और रणनीतिक विविधीकरण के दम पर किसी भी वैश्विक संकट को मात दी जा सकती है। अब सवाल यह है कि क्या बाकी दुनिया इस सबक को समझेगी या फिर अगला संकट उन्हें पूरी तरह झकझोर देगा।

क्या कहते है आपके सितारें....?

मेष — आज के दिन ज़रा सा भी असंयमित और अनैतिक व्यवहार आपको तकलीफ में डाल सकते हैं। वाणी की शिथिलता के कारण उग्र तकरार हो सकती है।

सिंह — आर्थिक और व्यावसायिक दृष्टि से दिन लाभदायक होगा। शारीरिक और मानसिक स्फूर्ति और ताजगी का अनुभव होगा। स्वजनों की ओर से उपहार मिलेगा।

धनु — बौद्धिक काम या साहित्य लेखन जैसी प्रवृत्तियों के लिए आज अनुकूल दिन है। आपके व्यवसाय में नई विचारधारा आपके कामों को नया स्वरूप देंगे।

वृषभ — दैनिक कामों से बाहर आकर आज आप घूमने-फिरने और मनोरंजन प्रवृत्तियों के लिए समय निकालेंगे। इसमें परिजनों और मित्रों को भी शामिल करेंगे, जो उनके लिए भी आनंदप्रद रहेगी।

कन्या — आज आपकी वैचारिक समृद्धि बढ़ेगी। मीठी वाणी से आप लाभप्रद, सौहार्दपूर्ण संबंध विकसित कर सकेंगे। उत्तम भोजन, भेंट उपहारों और वस्त्रों की प्राप्ति होगी।

मकर — शारीरिक और मानसिक ताजगी के साथ घर में भी आनंद का वातावरण रहेगा। मित्रों एवं स्नेहीजनों के साथ मुलाकात होगी। शुभ काम का आरंभ करने के लिए आज का दिन अनुकूल है।

मिथुन — आज आपकी वाणी का जादू किसी को अभिभूत करके आपको लाभ दिलाएगा। वाणी की सौम्यता नए संबंध स्थापित करने में सहायक होगी। परिश्रम का अपेक्षित परिणाम नहीं मिलने से थोड़े निराश हो सकते हैं।

तुला — पारिवारिक सदस्यों के साथ सुख-शांति में दिन व्यतीत होगा। उनका सहयोग मिलेगा। स्त्री मित्रों से विशेष मदद मिल सकेगी। दूरस्थ मित्र और स्नेहीजनों के साथ संपर्क लाभदायक साबित होंगे।

कुंभ — आज आपकी यश, कीर्ति और प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। कार्यक्षेत्र में उच्च अधिकारियों के खुश रहने से पदोन्नति की संभावना बढ़ेगी। स्वास्थ्य अच्छा बना रहेगा।

कर्क — आज आपको नकारात्मक विचारों से दूर रहने की सलाह दी जाती है। झगड़े-विवाद से बचें, क्रोध और वाणी पर संयम रखें। अत्यधिक मंथन करने से मानसिक थकान का अनुभव होगा।

वृश्चिक — नौकरी-धंधे या व्यवसाय में लाभ की प्राप्ति होगी। मित्रों के साथ मुलाकात, प्रवास का आयोजन होगा। विवाहोत्सुक युवक-युवतियों के लिए सुनहरे अवसर आएंगे।

मीन — मानसिक दुविधा में होने के कारण आप महत्वपूर्ण निर्णय नहीं ले सकेंगे। वैचारिक तूफानों से मानसिक अस्वस्थता का अनुभव होगा।

नक्सलवाद के अंत की ओर बढ़ता भारत सुरक्षा विकास और विश्वास की नई विजयगाथा

कांतिलाल मांडोत

गृह मंत्रालय के नेतृत्व में बीते वर्षों में जो रणनीति अपनाई गई वह बहुआयामी रही। केवल सुरक्षा बलों की तैनाती तक सीमित न रहकर सरकार ने विकास और विश्वास दोनों को साथ लेकर चलने का प्रयास किया। यही कारण है कि जिन क्षेत्रों में कभी बंदूक की आवाज गूंजती थी वहां आज स्कूल खुल रहे हैं सड़कें बन रही हैं और जीवन सामान्य हो रहा है। यह बदलाव अचानक नहीं आया बल्कि इसके पीछे वर्षों की योजनाबद्ध मेहनत और स्पष्ट नीति रही है।

भारत ने लंबे समय तक जिस आंतरिक चुनौती का सामना किया वह नक्सलवाद के रूप में देश के अनेक हिस्सों में फैली रही। यह समस्या केवल कानून व्यवस्था तक सीमित नहीं थी बल्कि इसने सामाजिक आर्थिक और मानवीय जीवन को भी गहराई से प्रभावित किया। दशकों तक आदिवासी क्षेत्रों में भय असुरक्षा और पिछड़ापन बना रहा। गांवों में विकास की रफ्तार थम गई और लोगों का भरोसा व्यवस्था से डगमगाने लगा। आज जब देश नक्सलवाद के अंत की दिशा में निर्णायक कदम बढ़ा चुका है तब यह आवश्यक हो जाता है कि इस परिवर्तन के पीछे की नीति संकल्प और प्रयासों को समझा जाए।

गृह मंत्रालय के नेतृत्व में बीते वर्षों में जो रणनीति अपनाई गई वह बहुआयामी रही। केवल सुरक्षा बलों की तैनाती तक सीमित न रहकर सरकार ने विकास और विश्वास दोनों को साथ लेकर चलने का प्रयास किया। यही कारण है कि जिन क्षेत्रों में कभी बंदूक की आवाज गूंजती थी वहां आज स्कूल खुल रहे हैं सड़कें बन रही हैं और जीवन सामान्य हो रहा है। यह बदलाव अचानक नहीं आया बल्कि इसके पीछे वर्षों की योजनाबद्ध मेहनत और स्पष्ट नीति रही है।

नक्सलवाद की जड़ें अक्सर गरीबी और पिछड़ेपन से जोड़कर देखी जाती रही हैं। लेकिन वास्तविकता इससे अधिक जटिल रही है। कई ऐसे क्षेत्र भी थे जहां आर्थिक स्थिति कमजोर थी फिर भी वहां नक्सलवाद नहीं पनपा। इसका अर्थ यह है कि नक्सलवाद केवल आर्थिक समस्या नहीं बल्कि एक वैचारिक और रणनीतिक चुनौती भी था। वामपंथी उग्रवाद ने आदिवासी समाज को अपने प्रभाव में लेकर उन्हें मुख्यधारा से दूर करने का प्रयास किया। स्कूलों को जलाना विकास कार्यों को रोकना और भय का वातावरण बनाना इस रणनीति का हिस्सा रहा।

गृह मंत्रालय ने इस सच्चाई को समझते हुए अपनी नीति तैयार की। सुरक्षा बलों को आधुनिक संसाधनों से लैस किया गया। खुफिया तंत्र को मजबूत बनाया गया और स्थानीय पुलिस को सशक्त किया गया। इसके साथ ही आत्मसमर्पण की नीति को प्रभावी ढंग से लागू किया गया जिससे बड़ी संख्या में नक्सली मुख्यधारा में लौटे। यह केवल सैन्य सफलता नहीं बल्कि सामाजिक पुनर्वास का भी उदाहरण है।

बस्तर जैसे क्षेत्रों में जो परिवर्तन देखने को मिला वह इस नीति की सफलता का प्रमाण है। जहां कभी प्रशासन की पहुंच सीमित थी वहां आज सरकारी योजनाएं प्रभावी ढंग से लागू हो रही हैं। राशन की दुकानों से लेकर स्वास्थ्य केंद्र तक लोगों को सुविधाएं मिल रही हैं। आधार और राशन कार्ड के माध्यम से लाभ सीधे लोगों तक पहुंच रहा है। इससे लोगों का विश्वास बढ़ा है और वे हिंसा से दूर होकर विकास की राह पर चलने लगे हैं।

इसके विपरीत यदि पिछले दशकों की स्थिति पर नजर डालें तो स्पष्ट होता है कि लंबे समय तक इस समस्या को गंभीरता से नहीं लिया गया। पूर्ववर्ती सरकारों के दौरान नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं का अभाव बना रहा। सड़कें नहीं बनीं स्कूल नहीं खुले और स्वास्थ्य सेवाएं नहीं पहुंचीं। इस शून्य का लाभ उठाकर उग्रवादी संगठनों ने अपनी पकड़ मजबूत की। लोगों को यह विश्वास दिलाया गया कि व्यवस्था उनके खिलाफ है और हथियार उठाना ही एकमात्र रास्ता है।

यह भी देखा गया कि उस समय नक्सलवाद के खिलाफ स्पष्ट और कठोर नीति का अभाव था। कई बार राजनीतिक इच्छाशक्ति कमजोर दिखाई दी और समस्या को टालने का प्रयास किया गया। इससे नक्सलवाद का विस्तार हुआ और वह कई राज्यों तक फैल गया। देश के एक बड़े भूभाग में इसका प्रभाव देखा गया जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा को भी खतरा उत्पन्न हुआ।

वर्तमान समय में स्थिति बदल चुकी है। गृह मंत्रालय ने स्पष्ट संदेश दिया है कि हिंसा का रास्ता अपनाने वालों को बख्शा नहीं जाएगा। इसके साथ ही यह भी सुनिश्चित किया गया कि जो लोग भटक गए हैं उन्हें वापस लाने का अवसर मिले। इस संतुलित दृष्टिकोण ने सकारात्मक परिणाम दिए हैं। बड़ी संख्या में नक्सलियों ने आत्मसमर्पण किया है और हिंसा की घटनाओं में उल्लेखनीय कमी आई है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अब आदिवासी समाज स्वयं इस बदलाव का भागीदार बन रहा है। वे समझ चुके हैं कि विकास और शांति ही उनके भविष्य का आधार हैं। सरकार द्वारा चलाए जा रहे शिक्षा स्वास्थ्य और रोजगार के कार्यक्रमों ने उन्हें नई दिशा दी है। युवा पीढ़ी अब हथियार नहीं बल्कि शिक्षा और रोजगार को अपना लक्ष्य बना रही है।

नक्सलवाद के अंत की यह यात्रा केवल सरकार की उपलब्धि नहीं बल्कि पूरे समाज की जीत है। इसमें सुरक्षा बलों का साहस प्रशासन की प्रतिबद्धता और आम नागरिकों का सहयोग सभी शामिल हैं। यह उदाहरण दर्शाता है कि यदि सही नीति और दृढ़ संकल्प के साथ कार्य किया जाए तो सबसे जटिल समस्याओं का समाधान भी संभव है।

आज जब देश इस चुनौती से लगभग मुक्त होने की ओर बढ़ रहा है तब यह आवश्यक है कि इस उपलब्धि को बनाए रखा जाए। विकास की गति को निरंतर बनाए रखना होगा और यह सुनिश्चित करना होगा कि कोई भी क्षेत्र फिर से पिछड़ापन और असुरक्षा का शिकार न बने। यही सच्चे अर्थों में नक्सलवाद के अंत की स्थायी गारंटी होगी।

अंततः यह कहा जा सकता है कि भारत ने एक लंबी और कठिन लड़ाई में महत्वपूर्ण सफलता हासिल की है। गृह मंत्रालय के नेतृत्व में अपनाई गई रणनीति ने यह सिद्ध कर दिया है कि सुरक्षा और विकास साथ साथ चल सकते हैं। यह केवल एक समस्या का समाधान नहीं बल्कि नए भारत की दिशा का संकेत है जहां हर नागरिक को समान अवसर और सुरक्षित जीवन का अधिकार प्राप्त है।

संपादकीय

रुपए का गंभीर अवमूल्यन

एक अमरीकी डॉलर की तुलना में भारतीय रुपए की कीमत 95 तक पहुंच चुकी है। अर्थात् हम 95 रुपए खर्च कर एक डॉलर प्राप्त कर सकते हैं अथवा अंतरराष्ट्रीय व्यापार कर सकते हैं। 'रुपए' का लगातार अवमूल्यन होता रहा है। डॉलर ही नहीं, ब्रिटिश मुद्रा 'पौंड' के लिए भी हमें 123.84 रुपए खर्च करने होंगे और यूरोप की मुद्रा 'यूरो' की कीमत भी 108 रुपए से अधिक है। 'रुपया' लगातार कमजोर होता रहा है, उसका असर हमारी अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा है और आयात-बिल भी महंगे होते रहे हैं। 2013-14 के संसदीय चुनाव के दौरान भाजपा ने 'रुपए' को भारत की संप्रभुता और प्रतिष्ठा से जोड़ कर एक संवेदनशील मुद्दा बना दिया था। लोगों ने विश्वास किया और जनादेश भाजपा को दिया। मोदी सरकार के करीब 12 साल के कालखंड में 'रुपए' में करीबन 61 फीसदी की गिरावट दर्ज हो चुकी है और वह सिलसिला अभी जारी है। वह बेहद गंभीर मौद्रिक स्थिति है, बेशक भारत विश्व की चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। इस मुद्दे को आसानी से यूं समझा जा सकता है कि फरवरी, 2026 में ईरान युद्ध से पहले कच्चे तेल की कीमत 69 डॉलर प्रति बैरल थी। तब हमें एक बैरल कच्चा तेल 6700 रुपए से कुछ अधिक में पड़ता था, लेकिन मार्च में वही तेल 10, 640 रुपए बैरल में खरीदा जा रहा है। यानी कीमत 70 फीसदी बढ़ी है, लिहाजा आम आदमी को भी महंगा पेट्रोल-डीजल खरीदना पड़ेगा। बेशक कुछ विधानसभा चुनावों के मद्देनजर सरकार ने पेट्रोल-डीजल महंगे नहीं किए हैं, लेकिन अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल के दाम 117 डॉलर प्रति बैरल तक उछल चुके हैं। भाजपा तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह को लगातार निशाना बनाती थी, जबकि उन्होंने ही देश को आर्थिक मंदी से बचाया था। तब भाजपा अर्थव्यवस्था की कमजोरी और 'रुपए' के अवमूल्यन पर चिंताएं जताती थी। मौजूदा वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण उस दौर में भाजपा की राष्ट्रीय प्रवक्ता थीं। 'रुपए' की स्थिति को लेकर यूपीए और भाजपा-एनडीए सरकारों की तुलना करना बेहद तार्किक है। तब मई, 2004 में मनमोहन सरकार के शुरुआती दिनों में एक डॉलर की तुलना में 'रुपया' 45.37 पर था। मई, 2014 में यूपीए कालखंड की समाप्ति के वक्त डॉलर की कीमत 58.58 रुपए थी। केंद्र में नरेन्द्र मोदी की सरकार आई, तो 'रुपए' का अवमूल्यन लगातार क्यों होता रहा है? डॉलर 58 रुपए से उछल कर 90-91 रुपए तक कैसे पहुंच गया? आर्थिक विशेषज्ञों का मानना है कि यदि रिजर्व बैंक दखल न दे, तो एक डॉलर 110 रुपए में पड़ सकता है। ईरान युद्ध की शुरुआत के एक दिन पहले, 27 फरवरी, तक 'रुपया' 90.98 तक गिरा था, लेकिन 31 मार्च, 2026 को 95 तक गिर गया। 100 रुपए की 'चरम स्थिति' कितनी दूर है? बेशक मोदी कालखंड में 'रुपए' का अवमूल्यन ऐतिहासिक रहा है और भारतीय मुद्रा के लिए यह असंतुलित और गंभीर स्थिति है।

चिंतन-मनन

श्रद्धा के मुताबिक पूजा

हरेक व्यक्ति में चाहे वह जैसा भी हो, एक विशेष प्रकार की श्रद्धा पाई जाती है। लेकिन उसके द्वारा अर्जित स्वभाव के अनुसार उनकी श्रद्धा उत्तम (सतोगुणी), राजस (रजोगुणी) अथवा तामसी कहलाती है। अपनी श्रद्धा के अनुसार ही वह कतिपय लोगों से संगति करता है। अब वास्तविक तथ्य तो यह है कि जैसा कि गीता के 15 वें अध्याय में कहा गया है कि प्रत्येक जीव परमेश्वर का अंश है। अतएव वह मूलतः इन समस्त गुणों से परे होता है।

लेकिन जब वह भगवान के साथ अपने सम्बन्ध को भूल जाता है और बद्ध जीवन में भौतिक प्रकृति के संसर्ग में आता है तो वह विभिन्न प्रकार की प्रकृति के साथ संगति करके अपना स्थान बनाता है। इस प्रकार से प्राप्त कृत्रिम श्रद्धा तथा अस्तित्व मात्र भौतिक होते हैं। भले ही कोई किसी धारणा या देहात्मबोध द्वारा प्रेरित हो लेकिन मूलतः वह निगरुण या दिव्य होता है। अतएव भगवान के साथ अपना सम्बन्ध फिर से प्राप्त करने के लिए उसे भौतिक कल्मष से शुद्ध होना पड़ता है। यही एकमात्र मार्ग है, निर्भय होकर कृष्णभावनामृत में लौटने का।

श्रद्धा मूलतः सतोगुण से उत्पन्न होती है। मनुष्य की श्रद्धा किसी देवता, किसी कृत्रिम ईश्वर या मनोधर्म में हो सकती है लेकिन प्रबल श्रद्धा सात्त्विक कार्यों से उत्पन्न होती है। किंतु भौतिक बद्धजीवन में कोई भी कार्य शुद्ध नहीं होता। वे मिश्रित होते हैं। वे शुद्ध सात्त्विक नहीं होते। शुद्ध सत्त्व दिव्य होता है। इसमें रहकर मनुष्य भगवान के स्वभाव को समझ सकता है। जब तक श्रद्धा पूर्णतया सात्त्विक नहीं होती, वह प्रकृति के किसी भी गुण से दूषित हो सकती है। वे दूषित गुण हृदय तक फैल जाते हैं।

अतः किसी विशेष गुण के सम्पर्क में रहकर हृदय जिस स्थिति में होता है, उसी के अनुसार श्रद्धा होती है। यदि किसी का हृदय सतोगुण में स्थित है तो उसकी श्रद्धा भी सतोगुणी है। यदि हृदय रजोगुण में स्थित है तो उसकी श्रद्धा रजोगुणी और तमोगुण में स्थित है तो उसकी श्रद्धा तमोगुणी होती है। पूजा इसीके आधार पर होती है।

बलिदान से जन्मी रोशनी: गुड फ्राइडे का शाश्वत संदेश

योगेश कुमार गोयल

सूली से उठती शांति की पुकार... यीशु (ईसा मसीह) के बलिदान और उनकी शिक्षाओं को याद करने का दिन है 'गुड फ्राइडे'। दरअसल ईसा मसीह ने मानवता की भलाई के लिए बलिदान दिया। ईसाई मान्यता के अनुसार दुनिया को प्रेम, दया, करुणा, परोपकार, अहिंसा, सद्भ्यवहार और पवित्र आचरण का संदेश देने वाले यीशु को इसी दिन उस जमाने के धार्मिक कट्टरपंथियों द्वारा क्रॉस पर चढ़ाया गया था। जिस दिन ईसा मसीह ने प्राण त्यागे थे, उस दिन शुक्रवार था और इसी वाद में ह्यगुड फ्राइडेह्व मनाया जाता है। ईस्टर के रविवार से पहले पड़ने वाले शुक्रवार को मनाया जाता है और इस वर्ष गुड फ्राइडे 3 अप्रैल को मनाया जा रहा है। ईसाई समुदाय द्वारा इस त्यौहार को शोक के रूप में मनाया जाता है। गुड फ्राइडे को यीशु द्वारा मानवता की भलाई के लिए दिए बलिदान के रूप में देखा जाता है। गुड फ्राइडे के दिन गिरजाघरों में घंटा नहीं बजाया जाता बल्कि लकड़ी के खटखटे बजाए जाते हैं और लोग चर्च में क्रॉस को चूमकर यीशु का स्मरण करते हैं। कुछ स्थानों पर लोग काले कपड़े पहनकर प्रभु यीशु के बलिदान दिवस पर शोक भी व्यक्त करते हैं और यीशु से अपने गुनाहों की माफी मांगते हैं। ईसा मसीह के सूली पर चढ़ाए जाने की बात में इस दिन उनके अनुयायी समस्त लौकिक सुविधाओं का त्याग कर देते हैं। इस दिन चर्च और घरों से सजावटी वस्तुएं हटा दी जाती हैं या उन्हें कपड़े से ढक दिया जाता है।

कैथोलिकों द्वारा शुरू की गई प्रथा के अनुसार गुड फ्राइडे के ठीक 40 दिन पहले आने वाले बुधवार से ईसाई समुदाय में प्रार्थना और उपवास प्रारंभ हो जाते हैं। इस बुधवार को ह्यराख का बुधवारह्व कहा जाता है। उपवास के दौरान लोग केवल शाकाहारी और सात्विक भोजन करते हैं। माना जाता है कि यीशु ने मानव सेवा प्रारंभ करने से पहले चालीस दिन तक व्रत किया था और संभवतः इसीलिए उपवास की यह परम्परा शुरू हुई। इस दिन दुनियाभर के ईसाई सामाजिक कार्यों को बढ़ावा देने के लिए चर्च में चंदा या दान देते हैं। ईसाई धर्म में ईसा मसीह को परमेश्वर का पुत्र माना जाता है। उन्होंने लोगों को क्षमा, शांति, दया, करुणा, परोपकार, अहिंसा, सद्भ्यवहार और पवित्र आचरण का उपदेश दिया और उनके इन्हीं सद्गुणों के कारण लोग उन्हें शांति दूत, क्षमा मूर्ति और महात्मा कहकर पुकारने लगे थे। कहा जाता है कि वे यरूशलम के गैलिली प्रांत में लोगों को मानवता, सत्य, एकता, प्रेम, अहिंसा और शांति का उपदेश दिया करते थे। उनके संदेश दूर-दूर तक फैलने लगे और उनके विचारों को लोग अपने जीवन में अपनाने लगे। वहां के लोग उन्हें परमपिता परमेश्वर का दर्जा देने लगे थे। समाज में धार्मिक अंधविश्वास और झूठ फैलाने वाले धर्मगुरूओं को इसी कारण ईसा मसीह से काफी जलन होने लगी थी क्योंकि लोग अपनी समस्याओं को लेकर अब उनके पास नहीं आ रहे थे। करीब दो हजार वर्ष पूर्व उन्हें मृत्युदंड इसीलिए दिया गया क्योंकि वे अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने और घोर विलासिता तथा अज्ञानता के अंधकार को दूर करने के लिए लोगों को शिक्षित और जागरूक कर रहे थे।

ईसा मसीह केवल एक धार्मिक व्यक्तित्व नहीं बल्कि परिवर्तन और करुणा के जीवंत प्रतीक थे। उन्होंने मानव प्रेम की सीमाओं को तोड़ते हुए उसे आत्मकेन्द्रितता और स्वार्थ से परे ले जाने का संदेश दिया। उनका जीवन इस सत्य का प्रमाण है कि सच्चा प्रेम त्याग, क्षमा और समर्पण में निहित होता है। जब पृथ्वी पर पाप और अन्याय बढ़ रहे थे, तब ईसा ने अपने बलिदान के माध्यम से निःस्वार्थ प्रेम की पराकाष्ठा को चरितार्थ किया। क्रॉस पर उनकी पीड़ा केवल एक व्यक्ति का कष्ट नहीं थी बल्कि संपूर्ण मानवता के उद्धार का प्रतीक बन गई। ईसाई मान्यताओं के अनुसार, क्रूस पर चढ़ाए जाने के तीसरे दिन, रविवार को ईसा मसीह पुनः जीवित हो उठे थे। यही कारण है कि गुड फ्राइडे के बाद आने वाला रविवार 'ईस्टर संडे' के रूप में मनाया जाता है। यह दिन केवल पुनरुत्थान का उत्सव नहीं, बल्कि आशा, नवजीवन और विश्वास की पुनर्स्थापना का संदेश देता है।

कहा जाता है कि पुनर्जीवित होने के बाद ईसा ने लगभग 40 दिनों तक अपने शिष्यों और अनुयायियों को दर्शन दिए, उन्हें सत्य, प्रेम और धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। ईस्टर की आराधना विशेष रूप से उषाकाल में की जाती है। मान्यता है कि पुनरुत्थान का यह चमत्कार प्रातःकाल ही हुआ था और सबसे पहले मरियम मदोलिनी ने ईसा को जीवित देखा था। यह प्रसंग इस तथ्य को भी उजागर करता है कि सत्य और आस्था का प्रकाश सबसे पहले उन हृदयों में जागृत होता है, जो श्रद्धा और विश्वास से परिपूर्ण होते हैं। इस प्रकार, गुड फ्राइडे हमें त्याग, धैर्य और प्रेम की शिक्षा देता है तो ईस्टर संडे जीवन में आशा और नवचेतना का संदेश लेकर आता है। दोनों मिलकर यह बताते हैं कि अंधकार चाहे कितना भी गहरा क्यों न हो, अंततः प्रकाश और सत्य की ही विजय होती है।

बुजुर्गों के भरण-पोषण के लिये एक सराहनीय पहल

ललित गर्ग

भारतीय संस्कृति में माता-पिता को देवतुल्य माना गया है- 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव' केवल शास्त्रों की पंक्ति नहीं, बल्कि हमारी सामाजिक संरचना की आत्मा रही है। इसलिए यह किसी भी सभ्य समाज के लिए अत्यंत शर्मनाक स्थिति है कि जन्म देने और पालन-पोषण करने वाले माता-पिता को जीवन की सांझ में उपेक्षा, अपमान और आर्थिक असुरक्षा का सामना करना पड़े, और उन्हें अपने ही बच्चों से गुजारा भत्ता पाने के लिए कानून और प्रशासन का सहारा लेना पड़े। दुर्भाग्य से यह आज के समय की कठोर वास्तविकता बनती जा रही है। बुढ़ापा अपने आप में एक बड़ी चुनौती है। उम्र बढ़ने के साथ शरीर की क्षमताएं कम होने लगती हैं, बीमारियां बढ़ने लगती हैं और आय के स्रोत लगभग समाप्त हो जाते हैं। सेवानिवृत्ति के समय जो थोड़ी बहुत जमा-पूंजी होती है, वह बच्चों की पढ़ाई, शादी-ब्याह और मकान बनाने में खर्च हो जाती है। सरकारी नौकरी करने वालों को पेंशन मिल भी जाती है, लेकिन निजी क्षेत्र या छोटे व्यवसाय से जुड़े लोगों की स्थिति अधिक कठिन हो जाती है। ऐसे समय में यदि बच्चे ही माता-पिता की देखभाल न करें तो यह केवल पारिवारिक विफलता नहीं, बल्कि सामाजिक अपराध की श्रेणी में आता है। इन्हीं परिस्थितियों को देखते हुए तेलंगाना विधानसभा द्वारा पारित 'तेलंगाना कर्मचारी जवाबदेही और माता-पिता सहायता निगरानी विधेयक 2026' एक महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक पहल के रूप में सामने आया है। इस विधेयक का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि यदि बच्चे अपने माता-पिता की देखभाल नहीं करते, तो उनके वेतन से एक निश्चित राशि काटकर माता-पिता को दी जाए। यह कानून सरकारी कर्मचारियों के साथ-साथ निजी क्षेत्र के कर्मचारियों, सांसदों, विधायकों और स्थानीय निकायों के जनप्रतिनिधियों पर भी लागू होगा। इस प्रकार यह कानून केवल एक कानूनी प्रावधान नहीं, बल्कि सामाजिक जिम्मेदारी को कानूनी रूप देने का प्रयास है। हालांकि भारत में पहले से 'माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों के भरण-पोषण एवं कल्याण अधिनियम 2007' मौजूद है, लेकिन तेलंगाना का यह नया विधेयक अधिक व्यापक, संवेदनात्मक और प्रभावी माना जा रहा है। इसमें प्रावधान है कि यदि बच्चे माता-पिता की देखभाल नहीं करते, तो शिकायत मिलने पर उनके वेतन से पंद्रह प्रतिशत या दस हजार रुपये (जो भी कम हो) काटकर माता-पिता के खाते में जमा किए जाएंगे। शिकायत का निस्तारण जिला कलेक्टर द्वारा साठ दिनों के भीतर किया जाएगा और इसके लिए वरिष्ठ नागरिक आयोग का गठन भी किया जाएगा। इस कानून का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि इसमें केवल जैविक माता-पिता ही नहीं, बल्कि सौतेले माता-पिता भी शिकायत कर सकते हैं।

यह कानून इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि आज भारतीय परिवार व्यवस्था तेजी से बदल रही है। संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार में बदल चुके हैं और अब तो एक व्यक्ति परिवार की अवधारणा भी विकसित हो रही है। करियर की दौड़, आर्थिक दबाव, शहरी जीवनशैली, सुविधावाद और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की बढ़ती भावना ने परिवार की पारंपरिक संरचना को कमजोर किया है। कई बार माता-पिता को घर से निकालकर वृद्धाश्रम भेज दिया जाता है, और यदि घर में रख भी लिया जाए तो उन्हें उपेक्षा, तिरस्कार और मानसिक पीड़ा सहनी पड़ती है। उनकी दवाइयों, भोजन और देखभाल तक में लापरवाही बरती जाती है। ऐसी परिस्थितियों में यह प्रश्न उठता है कि क्या माता-पिता की सेवा केवल संस्कारों से सुनिश्चित की जा सकती है या इसके लिए कानून की भी आवश्यकता है? आदर्श स्थिति में तो संस्कार ही पर्याप्त होने चाहिए। भारतीय इतिहास और परंपरा में माता-पिता की सेवा के अनेक प्रेरक उदाहरण मिलते हैं। श्रवण कुमार का उदाहरण तो भारतीय संस्कृति में आदर्श पुत्र का प्रतीक बन चुका है, जिसने अपने अंधे माता-पिता को कंधे पर बैठाकर तीर्थ यात्रा करवाई। इसी प्रकार भगवान श्रीराम ने पिता के वचन को निभाने के लिए राजपाट छोड़कर वनवास स्वीकार किया। यह केवल धार्मिक कथाएं नहीं, बल्कि भारतीय समाज की नैतिक संरचना के आदर्श हैं।

इतिहास में छत्रपति शिवाजी, महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानंद जैसे अनेक व्यक्तित्वों के जीवन में भी माता-पिता के प्रति गहरी श्रद्धा और सम्मान देखने को मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि माता-पिता के प्रति सम्मान और सेवा भारतीय संस्कृति की मूल आत्मा रही है। लेकिन आज जब संस्कार कमजोर हो रहे हैं, तब समाज को कानून का सहारा लेना पड़ रहा है। लेकिन इस पूरे विषय को केवल एकतरफा दृष्टि से देखना भी उचित नहीं होगा। यह भी एक सच्चाई है कि कई बार माता-पिता भी बच्चों के प्रति अत्यधिक अनुशासन, नियंत्रण और अपेक्षाओं का दबाव बनाते हैं। वे चाहते हैं कि बच्चे हमेशा उनकी इच्छाओं के अनुसार ही जीवन जिएं, अपने निर्णय स्वयं न लें, विवाह, करियर, जीवनशैली हर चीज में माता-पिता की इच्छा सर्वोपरि रहे। कई बार माता-पिता बच्चों की निजी जिंदगी में अत्यधिक हस्तक्षेप करते हैं, जिससे परिवार में तनाव उत्पन्न होता है। ऐसी परिस्थितियों में बच्चों और माता-पिता के बीच दूरी बढ़ जाती है और पारिवारिक वातावरण तनावपूर्ण हो जाता है।

इसलिए समस्या का समाधान केवल कानून नहीं है, बल्कि परिवार के भीतर संतुलन, संवाद और समझ भी उतनी ही आवश्यक है। बच्चों को यह समझना चाहिए कि माता-पिता ने उनके लिए अपना पूरा जीवन समर्पित किया है, इसलिए बुढ़ापे में उनकी सेवा और सम्मान उनका नैतिक कर्तव्य है। वहीं माता-पिता को भी यह समझना चाहिए कि समय बदल गया है, नई पीढ़ी की जीवनशैली और सोच अलग है, इसलिए उन्हें बच्चों को समझने और उन्हें स्वतंत्रता देने की आवश्यकता है। वास्तव में परिवार एक संस्था है, जो प्रेम, त्याग, सम्मान और संवाद पर चलती है, न कि केवल अधिकार और अनुशासन पर। जहां केवल अधिकार होंगे, वहां टकराव होगा; जहां केवल त्याग होगा, वहां असंतुलन होगा; लेकिन जहां प्रेम और संतुलन होगा, वहां परिवार मजबूत होगा।

तेलंगाना का यह कानून एक महत्वपूर्ण पहल है, लेकिन यह अंतिम समाधान नहीं है। कानून बच्चों को माता-पिता का भरण-पोषण करने के लिए मजबूर कर सकता है, लेकिन वह प्रेम, सम्मान और संवेदना पैदा नहीं कर सकता। इसके लिए समाज में नैतिक शिक्षा, पारिवारिक संस्कार और सामाजिक जागरूकता की आवश्यकता है। स्कूलों में, सामाजिक संस्थाओं में और धार्मिक संगठनों में परिवार और बुजुर्गों के सम्मान की शिक्षा दी जानी चाहिए। आज 'नया भारत' और 'विकसित भारत' की बात की जा रही है, लेकिन केवल आर्थिक विकास ही पर्याप्त नहीं है। यदि समाज में बुजुर्ग असुरक्षित, उपेक्षित और अपमानित होंगे, तो विकास अधूरा रहेगा। वास्तविक विकास वही है जिसमें समाज का हर वर्ग-बच्चे, युवा, महिलाएं और बुजुर्ग सुरक्षित और सम्मानित जीवन जी सकें।

अतः आवश्यक है कि हम तीन स्तरों पर कार्य करें- पहला, सरकार और कानून बुजुर्गों की आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करें। दूसरा, समाज में माता-पिता के सम्मान और सेवा के संस्कार विकसित किए जाएं। तीसरा, परिवार के भीतर माता-पिता और बच्चों के बीच संतुलित और संवादपूर्ण संबंध स्थापित किए जाएं। यदि ये तीनों स्तर मजबूत हो जाएं, तो न केवल बुजुर्गों का जीवन सुरक्षित और सम्मानजनक होगा, बल्कि परिवार संस्था भी मजबूत होगी और समाज में मानवीय संवेदनाएं जीवित रहेंगी। निश्चितरूप पर कहा जा सकता है कि माता-पिता केवल परिवार का हिस्सा नहीं होते, वे परिवार की जड़ होते हैं। यदि जड़ कमजोर होगी, तो वृक्ष भी कमजोर होगा। इसलिए बुजुर्गों का सम्मान और सुरक्षा केवल एक पारिवारिक या कानूनी मुद्दा नहीं, बल्कि समाज की नैतिकता और सभ्यता की परीक्षा है। जो समाज अपने बुजुर्गों का सम्मान नहीं करता, वह कभी महान नहीं बन सकता।

जन विश्वास बिल : सकारात्मक बदलाव की ओर बड़ा कदम

राकेश सिंह

ड्राइविंग लाइसेंस से लेकर आग लगने के झूठे अलार्म तक, कई पर सजा के प्रावधान बदल जाएंगे। क्या हैं इसके मायने, इसका आम आदमी पर क्या असर पड़ेगा और कैसे लागू होगा। लाइसेंस एक महीने पहले एक्सपायर हो गया, लेकिन पता नहीं चला। पहले तो पुलिस ने पकड़ा तो सीधे जेल या भारी सजा का डर। अब 30 दिन की ग्रेस पीरियड मिल जाएगी, लाइसेंस रिन्यू करा लो, बस। या फिर घर में आग लगने का झूठा अलार्म बज गया, पहले ये अपराध था, अब बिल्कुल हटा दिया गया। ये सब बदलाव जन विश्वास (प्रावधानों में संशोधन) बिल 2026 के आने से हो रहे हैं। ये बिल दरअसल 2023 वाले जन विश्वास एक्ट का बड़ा वर्जन है। सरकार ने लोकसभा में मार्च 2026 में पेश किया और अप्रैल में पास कर दिया। इसमें 23 मंत्रालयों के 79-80 केंद्रीय कानूनों में 784 प्रावधानों को छेड़ा गया है। इनमें से 717 छोटे-मोटे अपराधों को पूरी तरह अपराध की लिस्ट से हटा दिया गया।

जन विश्वास बिल लागू यानी सकारात्मक बदलाव की ओर बड़ा कदम। हो जाने पर मौजूदा कानून के कई मामले अपराध के दायरे से बाहर हो जाएंगे। ड्राइविंग लाइसेंस से लेकर आग लगने के झूठे अलार्म तक, कई पर सजा के प्रावधान बदल जाएंगे। क्या हैं इसके मायने, इसका आम आदमी पर क्या असर पड़ेगा और कैसे लागू होगा। लाइसेंस एक महीने पहले एक्सपायर हो गया, लेकिन पता नहीं चला। पहले तो पुलिस ने पकड़ा तो सीधे जेल या भारी सजा का डर। अब 30 दिन की ग्रेस पीरियड मिल जाएगी, लाइसेंस रिन्यू करा लो, बस। या फिर घर में आग लगने का झूठा अलार्म बज गया, पहले ये अपराध था, अब बिल्कुल हटा दिया गया। ये सब बदलाव जन विश्वास (प्रावधानों में संशोधन) बिल 2026 के आने से हो रहे हैं। ये बिल दरअसल 2023 वाले जन विश्वास एक्ट का बड़ा वर्जन है। सरकार ने लोकसभा में मार्च 2026 में पेश किया और अप्रैल में पास कर दिया। इसमें 23 मंत्रालयों के 79-80 केंद्रीय कानूनों में 784 प्रावधानों को छेड़ा गया है। इनमें से 717 छोटे-मोटे अपराधों को पूरी तरह अपराध की लिस्ट से हटा दिया गया। अब उनकी जगह सिविल पेनल्टी यानी सिर्फ जुमार्ना या पहले चेतावनी। बाकी 67 प्रावधानों को आम जीवन को आसान बनाने के लिए बदला गया। सरकार कह रही है कि ये ट्रस्ट बेस्ड गवर्नेंस यानी भरोसे वाली व्यवस्था की दिशा में कदम है। मतलब, हर छोटी गलती को अपराध मानकर इंस्पेक्टर राज नहीं चलाना। पहले तो लोग डर के मारे छोटी-छोटी गलतियों में भी अदालत-कचहरी के चक्कर काटते थे। अब सरकार कह रही है झ गलती हुई तो पहले समझाओ, जुमार्ना दो, सुधारो। जानबूझकर नुकसान पहुंचाने वाली गलतियां अभी भी अपराध ही रहेंगी। जैसे नशे में गाड़ी चलाना या बड़ा घोटाला, वो छूट नहीं मिलेगा।

कौन-कौन से नियम बदले?

बिल में सबसे ज्यादा चर्चा ड्राइविंग लाइसेंस और फायर अलार्म की हुई। मोटर वाहन अधिनियम 1988 में बदलाव किया गया। लाइसेंस एक्सपायर होने पर 30 दिन तक ग्रेस पीरियड। अगर लाइसेंस एक अप्रैल को खत्म हुआ, तो 30 अप्रैल तक भी गाड़ी चला सकते हैं, बस रिन्यू करा लो। पहले ऐसा नहीं था, पकड़े गए तो सीधा चालान, केस, कभी-कभी जेल तक। फायर अलार्म वाला उदाहरण दिल्ली पुलिस एक्ट 1978 से लिया गया। पहले झूठा फायर अलार्म बजाने पर अपराध माना जाता था। अब वो प्रावधान ही हटा दिया गया।

मतलब, अगर कोई गलती से या मजाक में अलार्म बजा दे, तो अब पुलिस केस नहीं दर्ज होगा। बस जुमार्ना या चेतावनी। और भी ढेर सारे उदाहरण हैं। मेट्रो में सिगरेट पीना? अब अपराध नहीं, जुमार्ना। सड़क पर हॉर्न बजाना? पहले चेतावनी, फिर फाइन। कूड़ा फेंकना, सार्वजनिक जगह पर शौच करना, कुत्ते को बिना पट्टे घुमाना, गाय-भैंस सड़क पर छोड़ देना। ये सब अब क्रिमिनल ऑफेंस नहीं रह गए।

म्यूनिसिपल एक्ट, फूड सेफ्टी एक्ट, एनवायरनमेंट एक्ट वगैरह में भी सैकड़ों छोटी-छोटी तकनीकी गलतियां (जैसे रजिस्टर में गलत एंट्री, छोटा कंप्लायंस ब्रेक) अब जेल के बजाय फाइन पर सेटल हो जाएंगी। कुछ मामलों में जुमार्ने की रकम बढ़ाई गई है, लेकिन जेल गई। हर तीन साल में फाइन में 10% बढ़ोतरी का भी प्रावधान है, ताकि महंगाई के साथ-साथ दंड भी अपडेट रहे। सरकार का तर्क साफ है। छोटी गलती पर इंसान को क्रिमिनल क्यों बनाएं? इससे अदालतों पर बोझ कम होगा, पुलिस का समय बचेगा, और आम आदमी को अनावश्यक परेशानी नहीं होगी।

आम आदमी पर असर

अब सवाल यह है कि आम आदमी यानी साधारण इंसान पर इसका क्या असर पड़ेगा? सबसे बड़ा फायदा तो ये कि डर कम होगा। आप छोटा सा बिजनेस चलाते हैं, दुकान पर वेट माप की छोटी गलती, या फैक्ट्री में कोई तकनीकी पेपरवर्क मिस। पहले इंस्पेक्टर आता, धमकी देता, केस बनाता, अदालत घसीटता। अब, जुमार्ना भर दो और काम पर चलो। छोटे व्यापारी, ड्राइवर, घरेलू लोग, सबको राहत। ट्रैफिक में पकड़े जाने पर भी अब जेल का खौफ नहीं। गाड़ी बिना इंश्योरेंस या पॉल्यूशन सर्टिफिकेट के? पहले क्रिमिनल केस, अब सिविल पेनल्टी। मतलब, पुलिस अरेस्ट नहीं करेगी, बस फाइन काटेगी और छोड़ देगी। अदालतों में पेंडिंग केसों की संख्या घटेगी, क्योंकि हजारों छोटे-छोटे मामले अब बाहर सेटल हो जाएंगे। लेकिन कुछ लोग कह रहे हैं कि ये पूंजीपति विश्वास तो नहीं बन जाएगा? मतलब, बड़े लोग तो बच जाएंगे, लेकिन आम आदमी पर फाइन का बोझ बढ़ सकता है। सरकार का जवाब है, नहीं, फाइन भी सीमित है और अपील का रास्ता खुला है। साथ ही, पहली गलती पर चेतावनी, दूसरी पर फाइन, तीसरी पर बढ़ा हुआ दंड और फिर केस। यानी सुधारने का मौका मिलेगा। रोजमर्रा की जिंदगी में असर ये कि लोग ज्यादा आत्मविश्वास से नियमों का पालन करेंगे। डर के मारे छुपकर काम नहीं करेंगे। जिम्मेदारी भी बढ़ गई। बार-बार गलती करोगे तो फाइन बढ़ेगा और गंभीर मामलों में अभी भी जेल हो सकती है। कुल मिलाकर, आम आदमी के लिए ये राहत पैकेज है। समय बचेगा, पैसे बचेंगे और इज्जत भी बचेगी। क्योंकि छोटी गलती पर क्रिमिनल स्टिग्मा नहीं लगेगा।

बिल कैसे लागू होगा

अब सबसे अहम सवाल यह है कि बिल लागू कैसे होगा? अलग-अलग कानूनों के लिए अलग-अलग तारीख हो सकती है। हर मंत्रालय अपने-अपने नियम बनाएगा। जैसे, ट्रैफिक के लिए ट्रांसपोर्ट डिपार्टमेंट, म्यूनिसिपल मामलों के लिए लोकल बॉडीज। लागू करने के लिए अडजुडिकेटिंग ऑफिसर यानी फैसला सुनाने वाले अधिकारी नियुक्त किए जाएंगे। वो ही फाइन लगाएंगे, अपील का सिस्टम भी बनेगा। मतलब, अदालत जाना आखिरी विकल्प। सरकार ने कहा है कि ये मिनिमम गवर्नमेंट, मैक्सिमम गवर्नेंस की दिशा में है। भविष्य में क्या? अगर ये सफल रहा तो और कानूनों में ऐसे बदलाव आ सकते हैं। 2023 में 42 कानूनों में 183 प्रावधान बदले गए थे। अब 2026 में 80 कानून। आगे और बढ़ सकता है। लेकिन सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि इंस्पेक्टर राज सच में कम होता है या नहीं। अगर फाइन वसूलने का नया बिजनेस बन गया तो समस्या आ सकती है। कुल मिलाकर, जन विश्वास बिल एक सकारात्मक बदलाव की ओर कदम है। इससे डर की जगह समझदारी और सुधार की संस्कृति आएगी। लेकिन सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि प्रशासन इसे सही तरीके से लागू करे और लोग भी इसका दुरुपयोग न करें। अगर आप भी रोजमर्रा की जिंदगी में छोटी-मोटी नियमों की चिंता करते हैं, तो यह बिल आपके लिए अच्छी है।

(लेखक आईटीवी नेटवर्क के प्रबंध संपादक हैं।)

सौरभ वार्ष्णेय

हम भारी मात्रा में तेल और गैस के उत्पादन और बिक्री में बहुत अच्छा तालमेल बिठा रहे हैं, जो संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद पृथ्वी पर दूसरा सबसे बड़ा भंडार अब हम कच्चे तेल के लिए मध्य पूर्व पर पूरी तरह से निर्भर नहीं हैं और फिर भी हम वहां सहायता के लिए मौजूद हैं। हालांकि, ट्रंप ने भले ही वेनेजुएला के तेल भंडार पर कब्जा कर लिया हो लेकिन इसमें सबसे अधिक फायदा भारत को हो सकता है। भारत इसमें सत्ता का केंद्र बन सकता है ? यानी भारत तेल के खेल में विश्व उर्जा का केंद्र बन सकता है क्योंकि भारत भले ही दूसरे देशों से कच्चे तेलों का निर्यात करता हो लेकिन कच्चे तेल की रिफाइनिंग के लिए अन्य देशों को हम भारत पर ही निर्भर रहना पड़ता है, क्योंकि रिफाइनरी के मामले में भारत दुनिया के सभी देशों से आगे हैं। अगर अमेरिका वेनेजुएला के कच्चे तेल को यूरोपियन देश को बेचता है तो इसमें भी भारत का ही सबसे अधिक फायदा है। क्योंकि, यूरोपियन देश भारत से सबसे अधिक रिफाइंड तेल खरीदते हैं। अमेरिका खुद भारत से सबसे अधिक रिफाइंड तेल का निर्यात करता है।

तेल के खेल में सत्ता का नया केंद्र बनेगा भारत

अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के दिए एक बयान से तेल के खेल में भारत सत्ता का नया केंद्र बन सकता है? राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने वेनेजुएला को लेकर एक बयान दिया है जिसमें साफ-साफ कहा है कि अब अमेरिका वेनेजुएला के साथ मिलकर काम कर रहा है। हम भारी मात्रा में तेल और गैस के उत्पादन और बिक्री में बहुत अच्छा तालमेल बिठा रहे हैं, जो संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद पृथ्वी पर दूसरा सबसे बड़ा भंडार अब हम कच्चे तेल के लिए मध्य पूर्व पर पूरी तरह से निर्भर नहीं हैं और फिर भी हम वहां सहायता के लिए मौजूद हैं। हालांकि, ट्रंप ने भले ही वेनेजुएला के तेल भंडार पर कब्जा कर लिया हो लेकिन इसमें सबसे अधिक फायदा भारत को हो सकता है। भारत इसमें सत्ता का केंद्र बन सकता है ? यानी भारत तेल के खेल में विश्व उर्जा का केंद्र बन सकता है क्योंकि भारत भले ही दूसरे देशों से कच्चे तेलों का निर्यात करता हो लेकिन कच्चे तेल की रिफाइनिंग के लिए अन्य देशों को हम भारत पर ही निर्भर रहना पड़ता है, क्योंकि रिफाइनरी के मामले में भारत दुनिया के सभी देशों से आगे हैं। अगर अमेरिका वेनेजुएला के कच्चे तेल को यूरोपियन देश को बेचता है तो इसमें भी भारत का ही सबसे अधिक फायदा है। क्योंकि, यूरोपियन देश भारत से सबसे अधिक रिफाइंड तेल खरीदते हैं। अमेरिका खुद भारत से सबसे अधिक रिफाइंड तेल का निर्यात करता है। ऐसे में आने वाला भविष्य भारत के लिए अच्छा संकेत दे रहा है। वैश्विक राजनीति में तेल (ऊर्जा) हमेशा से शक्ति का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत रहा है। 20वीं सदी में (ऑर्गनाइजेशन ऑफ दॅ प्रेट्रोलियम इ एंड पोर्टिंग कंट्रीज) देशों और पश्चिमी शक्तियों के बीच तेल की राजनीति ने विश्व व्यवस्था को आकार दिया। आज 21वीं सदी के तीसरे दशक में, बदलते ऊर्जा समीकरणों के बीच यह सवाल फिर उठ रहा है कि क्या भारत इस तेल के खेल में सत्ता का नया केंद्र बन सकता है? इस बदलते वैश्विक ऊर्जा परिदृश्य में रूस-यूक्रेन युद्ध के बाद वैश्विक तेल आपूर्ति श्रृंखलाओं में बड़ा बदलाव आया। यूरोप ने रूसी तेल पर निर्भरता घटाई, वहीं भारत ने सस्ते रूसी कच्चे तेल का आयात बढ़ाकर अपनी ऊर्जा रणनीति को मजबूत किया। इससे भारत न केवल लागत में बचत कर सका, बल्कि वैश्विक ऊर्जा बाजार में अपनी वॉर्गेनिंग पॉवर भी बढ़ाई। ऐसे में समय में भारत की रणनीतिक स्थिति की बात करे तो भारत दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा तेल उपभोक्ता है। इसकी भौगोलिक स्थिति—मध्य पूर्व, रूस और एशिया के बीच—इसे एक प्राकृतिक ऊर्जा हब बनने का अवसर देती है। भारत ने एक ओर रूस से तेल आयात बढ़ाया, तो दूसरी ओर संयुक्त अरब अमीरात और सऊदी अरब के साथ संबंधों को भी संतुलित रखा। भारत रिफाइनिंग और निर्यात की ताकत रखता है। भारत केवल तेल आयातक ही नहीं, बल्कि एक प्रमुख रिफाइनिंग हब भी बन चुका है। भारतीय रिफाइनरियां कच्चे तेल को प्रोसेस करके यूरोप और अन्य देशों को पेट्रोलियम उत्पाद निर्यात कर रही हैं। इस प्रक्रिया में भारत एक मध्यस्थ शक्ति के रूप में उभर रहा है,जहां कच्चा तेल कहीं से आता है और तैयार उत्पाद कहीं और जाता है। अब सवाल उठता है क्या भारत बनेगा नया शक्ति केंद्र? भारत के पास अवसर जरूर है, लेकिन यह पूर्ण सत्ता केंद्र बनने से ज्यादा संतुलनकारी शक्ति बनने की दिशा में आगे बढ़ रहा है। भारत की असली ताकत उसकी कूटनीति, बाजार आकार और ऊर्जा विविधीकरण में है, न कि केवल तेल में। तेल का खेल अभी खत्म नहीं हुआ है, लेकिन इसके नियम बदल रहे हैं। भारत इस बदलते खेल का एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी बन चुका है। यदि वह अपनी ऊर्जा नीति में संतुलन, आत्मनिर्भरता और हरित विकल्पों को साथ लेकर चलता है, तो भविष्य में वह केवल उपभोक्ता नहीं, बल्कि वैश्विक ऊर्जा राजनीति का निर्णायक केंद्र भी बन सकता है। ओपेक दुनिया के प्रमुख तेल उत्पादक देशों का एक अंतरराष्ट्रीय संगठन है (ऑर्गनाइजेशन ऑफ दॅ प्रेट्रोलियम इ एंड पोर्टिंग कंट्रीज), जिसका मुख्य उद्देश्य सदस्य देशों की तेल नीतियों का समन्वय करना और वैश्विक तेल बाजार को प्रभावित करना है। इसके संस्थापक १९६० में और इसमें ईरान, इराक, कुवैत, सऊदी अरब और वेनेजुएला देश शामिल हैं। इसका मुख्यालय वियना (ऑस्ट्रिया) में हैं। इसके मुख्य कार्य तेल उत्पादन को नियंत्रित करना, सदस्य देशों के हितों की रक्षा करना, वैश्विक बाजार में तेल की कीमतों को स्थिर रखना, उपभोक्ता देशों को नियमित आपूर्ति सुनिश्चित करना आदि है। समय-समय पर बैठकों में यह तय करता है कि सदस्य देश कितना तेल उत्पादन करेंगे।

अगर कीमतें गिरती हैं ? उत्पादन घटाया जाता है। अगर कीमतें बढ़ती हैं ? उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। इस तरह वैश्विक तेल कीमतों पर सीधा प्रभाव डालता है। यह गठबंधन वैश्विक तेल बाजार पर और भी ज्यादा प्रभावशाली बन गया है। केवल एक संगठन नहीं, बल्कि वैश्विक अर्थव्यवस्था और राजनीति को प्रभावित करने वाली एक शक्तिशाली ताकत है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं। यह इनके निजी विचार हैं।)

अमरपाल सिंह वर्मा

कभी यहां पान की बेलें सिर्फ खेतों में नहीं, लोगों की जिंदगी में भी लहलहाती थीं। आज वही बेलें सिकुड़ गई हैं और उनके साथ सिकुड़ गई है एक पूरे समुदाय की आर्थिक और सामाजिक दुनिया। एक आज ये गांव खाली हो रहे हैं। वहां के ग्रामीण कामकाज के लिए बड़े शहरों में पलायन कर गए हैं। खाली पड़े मकान गांवों को भुतहा सा दशार्ते हैं। पिछले दिनों मैंने जब इस इलाके के बारे में सुना था तो एक बात बार-बार मन में आ रही थी कि क्या सचमुच यह सिर्फ मौसम की मार है? या फिर हम अपनी जिम्मेदारियों को 'जलवायु परिवर्तन' जैसे बड़े शब्दों के पीछे छिपा रहे हैं? यह सच है कि मौसम बदल गया है। सर्दियां पहले जैसी नहीं रही हैं, गर्मियां झुलसा देती हैं और बारिश अपने समय पर नहीं आती। पान जैसी नाजुक फसल के लिए यह बदलाव जानलेवा साबित हुआ है। मैं जब इस इलाके में गया तो गांवों की समृद्ध अर्थ व्यवस्था को उजड़े हुए पाया। खरैरी, बागरैन और खानखेड़ा गांवों के किसान बताते हैं कि पहले पान की एक बेल पंद्रह फीट तक जाती थी, अब सात-आठ फीट पर ही दम तोड़ देती है।

जलवायु परिवर्तन : खतरे में पान की पारंपरिक खेती

राजस्थान के भरतपुर जिले की बयाना तहसील के कुछ गांव आजकल किसी रिपोर्ट के आंकड़े नहीं बल्कि एक धीमी त्रासदी की तरह सामने आते हैं। कभी यहां पान की बेलें सिर्फ खेतों में नहीं, लोगों की जिंदगी में भी लहलहाती थीं। आज वही बेलें सिकुड़ गई हैं और उनके साथ सिकुड़ गई है एक पूरे समुदाय की आर्थिक और सामाजिक दुनिया। एक आज ये गांव खाली हो रहे हैं। वहां के ग्रामीण कामकाज के लिए बड़े शहरों में पलायन कर गए हैं। खाली पड़े मकान गांवों को भुतहा सा दशार्ते हैं। पिछले दिनों मैंने जब इस इलाके के बारे में सुना था तो एक बात बार-बार मन में आ रही थी कि क्या सचमुच यह सिर्फ मौसम की मार है? या फिर हम अपनी जिम्मेदारियों को 'जलवायु परिवर्तन' जैसे बड़े शब्दों के पीछे छिपा रहे हैं? यह सच है कि मौसम बदल गया है। सर्दियां पहले जैसी नहीं रही हैं, गर्मियां झुलसा देती हैं और बारिश अपने समय पर नहीं आती। पान जैसी नाजुक फसल के लिए यह बदलाव जानलेवा साबित हुआ है। मैं जब इस इलाके में गया तो गांवों की समृद्ध अर्थ व्यवस्था को उजड़े हुए पाया। खरैरी, बागरैन और खानखेड़ा गांवों के किसान बताते हैं कि पहले पान की एक बेल पंद्रह फीट तक जाती थी, अब सात-आठ फीट पर ही दम तोड़ देती है। पत्ते कम हो गए हैं, और जो हैं, वे भी अक्सर दागदार या जले हुए मिलते हैं। लेकिन यहां कहानी यहीं खत्म नहीं होती है। असल कहानी वहां से शुरू होती है, जहां किसान मौसम से लड़ते-लड़ते थक जाता है और फिर उसे अहसास होता है कि इस लड़ाई में वह अकेला है। कोई उसके साथ नहीं है। पान की खेती आज भी फसल बीमा के दायरे से बाहर है। यह एक ऐसी हकीकत है, जिसे सुनकर हैरानी नहीं बल्कि चिंता होनी चाहिए। बड़ा सवाल यह है कि जब जोखिम बढ़ रहा है, तब सुरक्षा का दायरा क्यों नहीं बढ़ता? क्या हमारी नीतियां केवल गेहूं-चावल जैसी मुख्यधारा की फसलों तक सीमित रह गई हैं? या फिर हम उन फसलों को नजरअंदाज कर रहे हैं, जो भले ही राष्ट्रीय आंकड़ों में बड़ी न दिखें लेकिन स्थानीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं? बयाना का खरैरी गांव इसका जीता-जागता उदाहरण है। कभी यहां पान की वजह से इतनी रौनक थी कि बैंक की मुख्य शाखा तक खुल गई थी। आज हालात ऐसे हैं कि यह बैंक भी अपना बोरिया-बिस्तर समेट चुका है। यह सिर्फ एक आर्थिक गिरावट नहीं, बल्कि एक पूरे दौर के खत्म होने की निशानी है। इसके बाद आता है पलायन। गांव के युवा अब खेतों में नहीं, शहरों की भीड़ में मिलते हैं। बड़े शहरों में कोई सिक्योरिटी गार्ड है, कोई हलवाई के यहां काम कर रहा है, कोई ऑटो चला रहा है। यह बदलाव सिर्फ पेशे का नहीं है बल्कि पहचान का भी है। जो लोग कभी अपने खेतों के दम पर समृद्ध थे, वे अब शहरों में मजदूरों की कतार का हिस्सा बन गए हैं।

सवाल यह भी है कि क्या हम गांवों को धीरे-धीरे खाली होते देखने के आदी हो चुके हैं? सरकार की भूमिका पर बात करना यहां जरूरी है लेकिन इसे केवल आलोचना के रूप में नहीं बल्कि जिम्मेदारी के रूप में देखना चाहिए। अगर किसी क्षेत्र में सदियों पुरानी खेती खत्म होने के कगार पर है तो क्या यह सिर्फ किसानों की समस्या है? या यह नीति-निमार्ताओं के लिए भी एक चेतावनी है? पान की खेती को अगर बीमा, अनुदान, प्रशिक्षण और बाजार से जोड़ा जाता तो शायद हालात यह न होते। आसपास मंडी नहीं है, परिवहन की सुविधा कमजोर है—ऐसे में किसान अपनी उपज बेचने के लिए दूर-दराज के शहरों पर निर्भर है। इससे लागत बढ़ती जाती है, मुनाफा घटता जाता है और अंततः किसान खेती छोड़ देता है। हमें कई सवालों पर विचार करने की जरूरत है। क्या हम केवल संकट के बाद राहत देने वाली व्यवस्था बनकर रह जाएंगे? क्या हमारी कृषि नीति में विविधता के लिए जगह है? और क्या हम परंपरागत खेती को बचाने के प्रति सचमुच गंभीर हैं? अगर सोचें तो इन सवालों के जवाब और समस्या का समाधान बहुत जटिल नहीं हैं लेकिन इरादा तो होना चाहिए। पान जैसी खेती को विलुप्त होने से बचाने के लिए प्रयास करने की जरूरत है। इसके लिए सरकार और नीति नियंताओं को मिल कर प्रयास करने होंगे। सबसे पहले जरूरी है कि पान जैसी फसलों को फसल बीमा के दायरे में लाना जाए। ऐसा करके हम किसानों को कोई अहसान नहीं करेंगे बल्कि यह तो न्यूनतम सुरक्षा है, जो उन्हें मिलनी ही चाहिए। इसके साथ-साथ जलवायु के अनुरूप खेती के तरीकों पर स्थानीय स्तर पर प्रशिक्षण और शोध की जरूरत है। इसके अलावा, छोटे-छोटे कृषि केंद्र और मंडियां विकसित करनी होंगी जिससे किसानों को बाजार से जोड़ा जा सके। बयाना के गांवों का अनुभव कड़वा है। जब खेतों में पान के पत्ते जलते है तो वहां सिर्फ फसल नहीं जलती, उसके साथ कई उम्मीदें, परंपराएं और भविष्य भी झुलस जाता है। ऐसा न हो, इसके लिए जरूरी कदम उठाने ही होंगे।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। यह इनके निजी विचार हैं।)

संपादकीय

अर्थव्यवस्था दुरुस्त है

देर से ही सही लेकिन जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने ईरान इजरायल-अमेरिका युद्ध को लेकर संसद में और बाहर भी जब कभी भी कुछ कहा है तो वे स्थिति को गंभीर बताते हैं। लेकिन सोमवार को जब वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण, जिनके ऊपर अर्थव्यवस्था के प्रबंधन का असली जिम्मा है, ने संसद में बयान दिया तो उनके कहने का मतलब ठीक वैसा नहीं था जैसा प्रधानमंत्री की चिंता है। उन्होंने अर्थव्यवस्था की स्थिति को मजबूत बताने के साथ ही रुपये की गिरावट को अन्य एशियाई देशों की मुद्राओं की तुलना में कम ही बताया। जिस दिन रुपया डालर के मुकाबले 95 के स्तर को छूकर वापस आया उस दिन ही हमारी वित्त मंत्री 4.1 फीसदी की गिरावट को कुछ ऐसा बता रही थीं कि पश्चिम एशिया संकट कोई चीज नहीं है। उन्होंने उसी दिन शेयर बाजार और सरार्फा बाजार की गिरावट का जिक्र करना भी जरूरी नहीं माना और सरकार द्वारा इस बीच उठाए कदमों की चर्चा भी नहीं की। हम जानते हैं कि सरकार ने पहले तो पेट्रोलियम वितरण में सबसे बड़ी निजी कंपनी को दाम बढ़ाने की छूट दी और फिर कमर्शियल गैस के दाम बढ़ाए। इससे भी आगे बढ़ाकर उसने विभिन्न करों में कटौती वापस लेकर तेल कंपनियों को लगभग दस रुपये लीटर का अतिरिक्त लाभ लेने की इजाजत दी। पहले यह धन सरकारी खजाने में आता था। बीते वर्षों में इससे सरकार को चालीस लाख करोड़ रुपये मिलने का अनुमान है। यह अभी घटा है, खत्म नहीं हुआ है। अब वित्त मंत्री को इन पक्षों की चर्चा करने में क्या दिक्कत थी इसे समझना तो मुश्किल है लेकिन यह समझने में कोई दिक्कत नहीं है कि अगर पांच राज्यों में विधान सभा चुनाव न होते तो अब तक तेल और गैस की कीमतों में आग लग चुकी होती। और जो प्रधानमंत्री आजकल अर्थव्यवस्था की या मुल्क की हालत की चर्चा करते समय गंभीरता की चादर ओढ़े रहते हैं वही परेशानियों का शोर मचाते रहते हैं। आज वे और उनके समर्थक(जिसमें मीडिया के लोग भी शामिल हैं) लगातार यही सूचना दे रहे हैं कि कहीं कमी नहीं है, सिर्फ विपक्ष अफवाह फैला रहा है। जाने कितने जहाज तेल और गैस लेकर होर्मुज से आगे बढ़ चुके हैं। जबकि ऐसे जहाजों की संख्या पहले की तुलना में काफी घट गई है और ईरान ने भी बहुत मान मनौव्वल के बाद कुछ जहाजों को आने की इजाजत दी। उन पर बीमा का खर्च समेत बाकी क्या बोझ बढ़ा है उसका हिसाब अलग है। इस बीच हमारी सरकार ने रूस से तेल लेने में जो व्यवहार दिखाया है (और उसमें अमेरिकी दबाव बहुत साफ दिखता है) उससे नाराज रूस अब तेल देना ही बंद कर रहा है। इसलिए सिर्फ तेल वाले पक्ष की ही चर्चा हो तो उस पर वित्तमंत्री को काफी कुछ कहना था। वे बोलें न बोलें सामान्य समझ और बाहर दिख रहे दृश्य यह बताते हैं कि सचमुच के हाहाकार की स्थिति है। और अगर युद्ध अब जरा भी लंबा खींचा तो अर्थव्यवस्था के पूरे स्वास्थ्य को तो प्रभावित करेगा ही हमारी रसोई और पारिवारिक बजट को चौपट कर देगा। गैस की कमी ने होटलों-रेस्तरां में मेन्यू बदला है तो कई चीजों के दाम बढ़ गए हैं। कुछ उद्योग तो सीधे प्रभावित हो रहे हैं तो बाकी पर भी असर आएगा ही। निश्चित रूप से सरकार की एजेंसियां अपने काम में कुछ ज्यादा तत्पर हुई हैं लेकिन यह तत्परता देर से शुरू हुई है। जब प्रधानमंत्री युद्ध शुरू होने के दो दिन पहले इजरायल में घूमने फिरने जाते हैं तो बाकी लोग कैसे आपात स्थिति की तैयारी कर सकते हैं। जब युद्ध की मार पड़ती है तो इजरायल अपनी स्थिति देखेगा और अमेरिका खाड़ी के अपने चेले चपाटियों की रक्षा करेगा या आपकी चिंता करेगा। और जब ईरान के ऊपर गलत हमले और उसके शासन प्रमुख की हत्या पर आपके मुंह से दो शब्द नहीं निकलते तो वह युद्ध लड़ते हुए आपको कैसे कंधे पर बैठाए घूमेगा। फिर तो आपको अपनी तैयारी और प्रबंधन से ही काम करना होता जो आपने दिखाई नहीं। आज चुनावी चिंता से जो चौकसी दिखती है वही कुछ समय पहले से शुरू रहती तो कई मामलों में हम बेहतर स्थिति में होते क्योंकि युद्ध से हमारा नाता बहुत दूर-दूर का ही है और हमने बाद में बेमतलब टांग अड़ाकर अपना नुकसान कराने वाली स्थिति नहीं बनाई है। लेकिन इस दौरान शेयर बाजार, करेंसी बाजार और सरार्फा बाजार में जिस तरह की घबराहट और बेचौनी दिख रही है उसका काफी कुछ तो हमारा खुद का बनाया हुआ है। जाने कब से जानकार कह रहे हैं कि हमारा शेयर बाजार ओवर रेटेड है अर्थात जितना अच्छा हाल कम्पनियों का नहीं है उससे कहीं ज्यादा बढ़िया हाल उनके शेयरों का है। जाहिर है इस बनावटी खेल में सरकार और उसकी कर्ता-धर्ता संस्थाओं ने भी अपनी भूमिका निभाई है, साझा कोषों (निजी और सार्वजनिक क्षेत्र की) ने सरकार के निर्देश पर ही बाजार को ऊपर ही ऊपर बनाए रखा है-कुछ खास कंपनियों और समूहों के शेयरों पर खास कृपया बरसती रही है। अब युद्ध का असर तो दुनिया भर के बाजारों पर हुआ है। कायदे से उन बाजारों पर ज्यादा असर आना चाहिए था जिनके देश युद्ध में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उलझे हैं। लेकिन बिना युद्ध में लगे हमारे बाजार गिरावट में सबको मात देने के खेल में जुटे हैं। सरार्फा बाजार सिर्फ और सिर्फ मुनाफाखोरी और काला सफेद का खेल खेलने का मैदान बन गया है। चांदी की सट्टेबाजी की चर्चा ज्यादा रही लेकिन सरकार ने वायदा बाजार पर भी किसी तरह की सख्ती करके सट्टेबाजी पर अंकुश लगाने का प्रयास नहीं किया है। दुर्भाग्य यह है कि सोना चांदी में निवेश का रोग इधर धीरे-धीरे वैश्विक बन गया है। आज यह गिरावट भारत में ही नहीं वैश्विक है लेकिन भारत जैसी स्थिति कहीं और नहीं है। यहां तो चांदी आधी कीमत पर आ गई है जबकि बाजार में चांदी की कमी सभी मानते हैं।

धीरे-धीरे हकीकत में बदल रहे हैं भारत के ईरान युद्ध के डर

पहला चेतावनी संकेत हमेशा ईंधन और गैस आपूर्ति श्रृंखलाओं में व्यवधान ही रहा है। यह व्यवधान अब पूरी ताकत से आ चुका है, जिससे अधिकारियों और बाजार प्रतिभागियों के अनुसार दशकों में सबसे गंभीर गैस संकट पैदा हो गया है। एक अप्रैल को वाणिज्यिक एलपीजी की कीमतें फिर से बढ़ा दी गईं, औद्योगिक उपयोग को प्रतिबंधित करके घरेलू आपूर्ति को सुरक्षित रखा गया है, और विकल्पों की तलाश ने पहले ही सभी क्षेत्रों में उत्पादन लागत को प्रभावित करना शुरू कर दिया है। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत में एलपीजी केवल एक उपभोक्ता ईंधन नहीं है। यह घरेलू कल्याण, छोटे व्यवसायों की व्यवहार्यता और राजनीतिक संवेदनशीलता के चौराहे पर स्थित है। कमी या कीमतों में अचानक वृद्धि केवल ऊर्जा व्यापारियों तक ही सीमित नहीं रहती। यह रेस्तरां, खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों, सिरेमिक इकाइयों, धातु कार्यशालाओं और अन्य उन समूहों तक तेजी से फैलती है ।

के. रवींद्रन

ईरान युद्ध को लेकर भारत की सबसे गहरी आर्थिक चिंताएं अब काल्पनिक नहीं रह गई हैं। ये धीरे-धीरे सामने आ रही हैं, और उस क्रम में जिसका नीति निमार्ताओं को शुरू से ही डर था। एक दूरस्थ लेकिन ऊर्जा-महत्वपूर्ण क्षेत्र में भू-राजनीतिक संघर्ष के रूप में शुरू हुआ यह मामला अब भारतीय रसोई, कारखानों, एयरलाइन बैलेंस शीट और मुद्रा बाजारों तक पहुंच गया है। पहला चेतावनी संकेत हमेशा ईंधन और गैस आपूर्ति श्रृंखलाओं में व्यवधान ही रहा है। यह व्यवधान अब पूरी ताकत से आ चुका है, जिससे अधिकारियों और बाजार प्रतिभागियों के अनुसार दशकों में सबसे गंभीर गैस संकट पैदा हो गया है। एक अप्रैल को वाणिज्यिक एलपीजी की कीमतें फिर से बढ़ा दी गईं, औद्योगिक उपयोग को प्रतिबंधित करके घरेलू आपूर्ति को सुरक्षित रखा गया है, और विकल्पों की तलाश ने पहले ही सभी क्षेत्रों में उत्पादन लागत को प्रभावित करना शुरू कर दिया है। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत में एलपीजी केवल एक उपभोक्ता ईंधन नहीं है। यह घरेलू कल्याण, छोटे व्यवसायों की व्यवहार्यता और राजनीतिक संवेदनशीलता के चौराहे पर स्थित है। कमी या कीमतों में अचानक वृद्धि केवल ऊर्जा व्यापारियों तक ही सीमित नहीं रहती। यह रेस्तरां, खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों, सिरेमिक इकाइयों, धातु कार्यशालाओं और अन्य उन समूहों तक तेजी से फैलती है जो वाणिज्यिक सिलिंडरों या गैस-आधारित इनपुट पर निर्भर हैं। एक बार जब औद्योगिक और वाणिज्यिक उपयोगकताओं को सीमित आपूर्ति के लिए प्रतिस्पर्धा करने के लिए मजबूर होना पड़ता है, तो वे या तो बहुत अधिक कीमत चुकाते हैं या डीजल जैसे महंगे विकल्पों की ओर रुख करते हैं। यह प्रतिस्थापन फिर ऊर्जा श्रृंखला में अन्य जगहों पर दबाव को और गहरा कर देता है। दूसरे शब्दों में,

एलपीजी संकट युद्ध का प्रकारान्तर से दुष्प्रभाव नहीं है। यह व्यापक मुद्रास्फीति संचरण तंत्र में पहली स्पष्ट दरार है। भारत आपूर्ति को राशन कर सकता है, चरणबद्ध कर सकता है और मोड़ सकता है, लेकिन ये आपातकालीन प्रबंधन उपकरण हैं, स्थायी समाधान नहीं। दूसरा डर कच्चे तेल का था, और यह हमेशा से अधिक अनुमानित झटका था। आयातित तेल पर भारत की भारी निर्भरता खाड़ी देशों में अस्थिरता की स्थिति में इसे अत्यधिक असुरक्षित बना देती है। एक बार जब युद्ध तेज हो गया और होर्मुज जलडमरूमध्य एक वास्तविक रणनीतिक जोखिम बन गया, तो पेट्रोलियम की कीमतों में वृद्धि केवल समय की बात थी। मार्च में अभूतपूर्व उछाल के बाद ब्रेंटक्रूड की कीमत 100 डॉलर प्रति बैरल से ऊपर पहुंच गई है, जबकि पूवार्नुमानकताओं ने इस वर्ष के लिए अपने तेल अनुमानों में भारी संशोधन किया है। भारत के लिए, यह केवल आयात बिल की समस्या नहीं है। कच्चे तेल की ऊंची कीमतें परिवहन, उर्वरक, विमानन, विनिर्माण, रसद और मुद्रास्फीति की उम्मीदों पर एक साथ असर डालती हैं। नई दिल्ली ने झटके को कम करने के लिए ईंधन उत्पाद शुल्क में कटौती की है, लेकिन ऐसे कदम उपभोक्ताओं, तेल कंपनियों और सरकारी खजाने के बीच दर्द का केवल पुनर्वितरण करते हैं। वे इसे खत्म नहीं करते। यहीं पर रुपये पर विशेष ध्यान दिया जाता है। मुद्रा युद्ध के प्रति भारत की संवेदनशीलता की सबसे स्पष्ट बाजार अभिव्यक्ति बन गई है। तेल की ऊंची कीमतें चालू खाते के दृष्टिकोण को खराब करती हैं। पहले से ही सतर्क विदेशी निवेशक इक्विटी और बॉन्ड से पैसा निकाल रहे हैं। वैश्विक जोखिम से बचने की प्रवृत्ति पूंजी को डॉलर की ओर धकेल रही है। इनमें से प्रत्येक कारक अपने आप में असहज करने वाला है। संयुक्त रूप से, वे बाहरी दबाव पैदा करते हैं। रुपया डॉलर के मुकाबले 94 से नीचे के रिकॉर्ड निचले स्तर पर गिर गया है और वित्तीय वर्ष में एशिया की सबसे कमजोर मुद्राओं में गिना गया है, कई गणनाओं के अनुसार इसका मूल्यह्रास लगभग 10 प्रतिशत या उससे अधिक रहा है। इससे उपयोगकर्ता का दृष्टिकोण मोटे तौर पर सही साबित होता है, मुद्रा तेल संकट, पोर्टफोलियो बहिर्वाह और भू-राजनीतिक अनिश्चितता के संयुक्त प्रभावों से भारी दबाव में है, न कि अलग-अलग प्रभावों से। फिर भी, रुपये के 100 प्रति डॉलर के स्तर को पार करने के प्रश्न के लिए अधिक सावधानीपूर्वक विश्लेषण की आवश्यकता है। यह अब कोई अप्रत्याशित परिदृश्य नहीं है, लेकिन यह तत्काल निश्चित भी नहीं है। बाजार गोल संख्याओं को मनोवैज्ञानिक सीमा के रूप में देखते हैं क्योंकि वे वास्तव में पहुंचने से पहले ही व्यवहार को बदल सकती हैं। आयात कहेजिंग के लिए दौड़ पड़ते हैं, निर्यातक मुद्रा रूपांतरण में देरी करते हैं, परिवार समाचारों पर ध्यान देते हैं, और अटकलें तेज हो जाती हैं। विश्लेषकों ने पहले ही मध्यम तनाव की स्थिति में 98 रुपये प्रति डालर को एक संभावित बिंदु के रूप में सुझाया है, जबकि संघर्ष के लंबे समय तक चलने और ऊर्जा व्यवधान के स्थायी होने की स्थिति में कहीं अधिक गंभीर परिणामों पर चर्चा की जा रही है। इसका मतलब है कि 100 का स्तर अब अकल्पनीय नहीं है। लेकिन मुद्रा के संदर्भ में वर्तमान स्तर से 100 तक की दूरी अभी भी काफी अधिक है, और इसके लिए संभवतरू या तो तेल की कीमतों में फिर से उछाल, पूंजी का अधिक पलायन, या अधिकारियों द्वारा भंडार को अधिक आक्रामक रूप से खर्च करने के बजाय आगे समायोजन को सहन करने का जानबूझ कर निर्णय लेना आवश्यक होगा। भारतीय रिजर्व बैंक, अपनी ओर से, निष्क्रिय नहीं रहा है, लेकिन उसकी चुनौती संरचनात्मक है। हस्तक्षेप अस्थिरता को कम कर सकता है। यह व्यापार संकट को स्थायी रूप से समाप्त नहीं कर सकता। आरबीआई ने बैंकों को अपनी मुद्राएं समाप्त करने के लिए दबाव डाला और विदेशी मुद्रा बाजार में सख्त सीमाएं लागू कीं, जिससे अस्थायी राहत तो मिली लेकिन बैंकों की ट्रेडिंग आय पर भी दबाव पड़ा और व्यापक दबाव की दिशा में कोई खास बदलाव नहीं आया। सार्वजनिक बहस में अक्सर इस बात को गलत समझा जाता है। जब केंद्रीय बैंक की बार-बार की कार्रवाई के बावजूद कोई मुद्रा कमजोर पड़ती है, तो इसका मतलब हमेशा यह नहीं होता कि वह कार्रवाई पूरी तरह से विफल रही है। इसका सीधा सा मतलब यह हो सकता है कि अंतर्निहित दबाव अल्पकालिक हस्तक्षेपों से कम नहीं है। उन कदमों के बिना रुपया शायद और भी तेजी से गिर जाता। लेकिन अगर तेल की कीमतें ऊंची बनी रहती हैं और विदेशी निवेश निकलता रहता है, तो बचाव का खर्चा महंगा हो जाता है और केवल आंशिक रूप से ही प्रभावी रह जाता है। इसलिए, सबसे बड़ी चिंता एक डॉलर के मुकाबले 100 रुपये जैसी कोई एक बड़ी संख्या नहीं है, बल्कि नीतिगत गुंजाइश का संचयी क्षरण है।

पाषाण युग का सच !

यह सवाल इसलिए क्योंकि अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने ईरान को नयी धमकी देते हुए कहा है कि अगले दो से तीन हफ्तों में, हम उन्हें पाषाण युग में वापस भेज देंगे, जहां वे वास्तव में हैं। पाठक जानते हैं कि ट्रंप इससे पहले ईरान के लोगों को बेहद खतरनाक बताते हुए ईरान जैसे देश को पूरी तरह नेस्तनाबूद करने की बात भी कह चुके हैं। ईरान के पास परमाणु हथियार है और इसकी वजह से अमेरिका समेत पूरी दुनिया पर बड़ा खतरा है, इसी बहाने के साथ इजरायल और अमेरिका ने 28 फरवरी 2026 को ईरान पर हमला बोला था और उसके सर्वोच्च नेता अयातुल्लाह अली खामेनेई की हत्या कर दी थी। जब इंसान सभ्यता की सीढ़ियों पर चढ़ने की कोशिश कर रहा था, उस समय के कबीलाई जीवन में इसी तरह का व्यवहार दो कबीलों में किया जाता था। अपना वर्चस्व कायम करने के लिए दूसरे कबीले के नेता को मार दो और फिर उसके लोगों से कहो कि हमारा आधिपत्य स्वीकार कर लो। उससे भी पहले जो पाषाण युग हुआ था, जिसका जिक्र ट्रंप इस सदी में कर रहे हैं, उस युग में पत्थर से हथियार बनाने का हुनर इंसान ने सीख लिया था, जिसके बूते अब वो जंगली जानवरों से खुद को बेहतर बताने लगा था। जानवरों के पास उनके पंजे और नाखून ही हुआ करते थे, इंसान के पास पंजे, नाखून के साथ अब औजार भी थे। उनके बीच फर्क केवल इन्हीं औजारों का ही था। बाकी प्रवृत्ति दोनों की एक जैसी ही थी कि अपना अस्तित्व बचाने के लिए दूसरे को मार डालो। लड़ाई के नियम-कायदे नहीं होते थे, ताकत और ही मायने रखती थी।

क्या पाषाण युग में रहने वाले लोग दूरी तक मार करने वाली मिसाइल, अत्याधुनिक संचार प्रणाली, चिकित्सा विज्ञान में आधुनिक आविष्कार कर सकते हैं या इन सबसे बढ़कर परमाणु हथियार बना सकते हैं। यह सवाल इसलिए क्योंकि अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने ईरान को नयी धमकी देते हुए कहा है कि अगले दो से तीन हफ्तों में, हम उन्हें पाषाण युग में वापस भेज देंगे, जहां वे वास्तव में हैं। पाठक जानते हैं कि ट्रंप इससे पहले ईरान के लोगों को बेहद खतरनाक बताते हुए ईरान जैसे देश को पूरी तरह नेस्तनाबूद करने की बात भी कह चुके हैं। ईरान के पास परमाणु हथियार है और इसकी वजह से अमेरिका समेत पूरी दुनिया पर बड़ा खतरा है, इसी बहाने के साथ इजरायल और अमेरिका ने 28 फरवरी 2026 को ईरान पर हमला बोला था और उसके सर्वोच्च नेता अयातुल्लाह अली खामेनेई की हत्या कर दी थी। जब इंसान सभ्यता की सीढ़ियों पर चढ़ने की कोशिश कर रहा था, उस समय के कबीलाई जीवन में इसी तरह का व्यवहार दो कबीलों में किया जाता था। अपना वर्चस्व कायम करने के लिए दूसरे कबीले के नेता को मार दो और फिर उसके लोगों से कहो कि हमारा आधिपत्य स्वीकार कर लो। उससे भी पहले जो पाषाण युग हुआ था, जिसका जिक्र ट्रंप इस सदी में कर रहे हैं, उस युग में पत्थर से हथियार बनाने का हुनर इंसान ने सीख लिया था, जिसके बूते अब वो जंगली जानवरों से खुद को बेहतर बताने लगा था। जानवरों के पास उनके पंजे और नाखून ही हुआ करते थे, इंसान के पास पंजे, नाखून के साथ अब औजार भी थे। उनके बीच फर्क केवल इन्हीं औजारों का ही था। बाकी प्रवृत्ति दोनों की एक जैसी ही थी कि अपना अस्तित्व बचाने के लिए दूसरे को मार डालो। लड़ाई के नियम-कायदे नहीं होते थे, ताकत और ही मायने रखती थी। कोई कमजोर है, निहत्था है, लड़ाई के लिए तैयार है या नहीं, लड़ाई की जरूरत है या नहीं, ऐसे सवालों में उलझे बिना केवल अपने फायदे के लिए हमले होते थे। इस लिहाज से देखें तो आज ईरान नहीं अमेरिका पाषाण युग का प्रतिनिधित्व करता हुआ दिख रहा है और डोनाल्ड ट्रंप इस कबीले के मुखिया के तौर पर जहां मर्जी वहां हमला कर रहे हैं। ईरान के साथ युद्ध पांचवे हफ्ते में प्रवेश कर चुका है, और अब तक डोनाल्ड ट्रंप और बेंजामिन नेतन्याहू को सफलता नहीं मिली है। ऐसे में ट्रंप ने जब राष्ट्र के नाम संबोधन का ऐलान किया तो सभी को लगा कि शायद युद्ध खत्म करने की बात कही जाएगी, इस वजह से शेयर बाजार भी चढ़ गया। लेकिन ट्रंप के भाषण में अब तक सोशल मीडिया और मीडिया में कही गई बातों का दोहराव ही था। यह बिल्कुल साफ हो गया कि ईरान युद्ध को लेकर अमेरिका के पास कोई रणनीति नहीं है और वह पूरी तरह से इजरायल लॉबी की गिरफ्घ्त में है। इस युद्ध के कारण दुनिया में पहले ही काफी तबाही हो चुकी है और अब नजर आ रहा है कि युद्ध लंबा खिंचेगा और भारत समेत दुनिया के अधिकतर देशों के लिए आर्थिक चुनौतियां गंभीर होती जायेंगी। ऐसे में मोदी सरकार को अब वाकई संकट से निपटने के लिए कमर कस लेना चाहिए। अपने भाषण में ईरान को बर्बाद करने का दावा करते हुए ट्रंप ने कहा कि उसकी नौसेना श्नष्टश हो गई है और उसकी वायुसेना खंडहर हो गई है। उनके अधिकांश नेता अब मर चुके हैं। मिसाइल और ड्रोन लॉन्च करने की उनकी क्षमता में भारी कमी आई है, और उनके हथियार, कारखाने और रॉकेट लॉन्चर टुकड़े-टुकड़े हो रहे हैं। जब यह सब कहा जा रहा था, उस समय ईरान ने इजरायल पर कई मिसाइलें दागीं। ईरानी सेना के प्रवक्ता ने कहा है कि अभी अमेरिका हमारे बारे में पूरी तरह जानता नहीं है। वैसे ट्रंप ने अपने बड़बोलेपन में पूर्व राष्ट्रपतियों का मजाक भी उड़ाया। उन्होंने कहा कि प्रथम विश्व युद्ध में अमेरिकी भागीदारी एक वर्ष, सात महीने और पांच दिन तक चली। द्वितीय विश्व युद्ध तीन वर्ष, आठ महीने और 25 दिन तक चला। कोरियाई युद्ध तीन वर्ष, एक महीने और दो दिन तक चला। वियतनाम युद्ध 19 वर्ष, पांच महीने और 29 दिन तक चला। इराक युद्ध आठ वर्ष, आठ महीने और 28 दिन तक चला। हम इस सैन्य अभियान में 32 दिनों से हैं। और ईरान पूरी तरह से तबाह हो चुका है और वास्तव में अब कोई खतरा नहीं है। यानी पहले के अमेरिकी नेतृत्व ने लंबे युद्धों में हिस्सा लिया, जबकि ट्रंप केवल 32 दिनों की लड़ाई लड़ रहे हैं, हालांकि उन्होंने ये भी कहा कि युद्ध अगले श्दो से तीन सप्ताहश तक चलेगा। यदि कोई समझौता नहीं हुआ तो अमेरिका ईरानी बिजली प्लांट पर हमला करेगा। शायद ट्रंप अब तक समझे नहीं कि ईरान ऐसी धमकियों से पीछे हटने वाला नहीं है। ट्रंप के संबोधन से पहले ही ईरान के राष्ट्रपति मसूद पेजेश्कियान ने अमेरिकी जनता को संबोधित एक खुला पत्र लिखकर उनसे अपील की है कि वे गढ़ी हुई कहानियों से परे देखें और यह सवाल करें कि मौजूदा युद्ध वास्तव में किसके हितों की सेवा कर रहा है।

जनजातीय खेल प्रतिभा, हमारा राष्ट्रीय गौरव

वे मिट्टी में लकीरें खींचकर और आकृतियां बनाकर, खेलने की जगह तैयार कर लेते हैं। वे फलों के सूखे बीजों का खेल की गोटियों की तरह इस्तेमाल कर लेते हैं। सूखे पत्तों, पेड़ों की जड़ों और फटे-पुराने कपड़ों से गेंद बना लेते हैं। बांस का उपयोग करके हॉकी और फुटबाल के गोल-पोस्ट बना लेते हैं। बहुत से बच्चे बिना जूते और जर्सी के पूरे जोश से खेलते रहते हैं। पोखरों-तालाबों में बच्चे खूब तैरते हैं। तैराकी की इस सहज प्रतिभा को अब उपलब्ध प्रशिक्षण और संसाधनों की सहायता से विकसित करके, केवल 15 वर्ष की, जाजपुर की बेटी अंजलि मुंडा ने प्रथम ह्यखेलो इंडिया जनजातीय खेल 2026ह्न में पहले ही दिन 3 स्वर्ण पदक जीत कर पूरे देश के युवाओं को प्रेरित किया। तीरंदाजी के प्रति जनजातीय लोगों में सहज तरंग सी होती है। संताल-समुदाय ने वर्ष 1855 में शोषण के विरुद्ध एक घनघोर संग्राम किया था, जो ह्यसंताल हूलह्न के नाम से अमर है। आधुनिक हथियारों से लैस ब्रिटिश सेनाओं ने उस क्रांति को दबा तो दिया लेकिन अपने विवरणों में अंग्रेजों ने संताल वीरों के युद्ध कौशल, खासकर तीरंदाजी का विशेष उल्लेख किया है। संताल-हूल का नेतृत्व करने वाले बहादुर भाइयों सिद्धो-कान्हू तथा चांद-भैरव एवं वीरांगना बहनों, फूलो-झानो की प्रतिमाओं का झारखंड में उनके गांव उरी-मारी में जाकर अनावरण करने का सौभाग्य मुझे तब मिला था, जब मैं राज्यपाल थी। तीरंदाजी में एकलव्य की महानता से देश का बच्चा-बच्चा परिचित है। वे श्रेष्ठतम धनुर्धर के रूप में सम्मानित हैं। एकलव्य सभी देशवासियों के लिए, विशेषकर जनजातीय समाज के लिए एक प्रेरक विभूति हैं। एकलव्य आदर्श आवासीय विद्यालयों में स्थापित ह्यखेल उत्कृष्टता केंद्रह्न बच्चों को खेल-कूद की आधुनिक सुविधाओं और पद्धतियों से सक्षम बना रहे हैं।

द्रौपदी मुर्मु

मैंने देखा है कि ग्रामीण क्षेत्रों और वनांचलों में, बच्चे घर के बाहर प्रकृति के सानिध्य में अधिक समय बिताते हैं। वे खेल-कूद के सहज तरीके खोज लेते हैं। वे मिट्टी में लकीरें खींचकर और आकृतियां बनाकर, खेलने की जगह तैयार कर लेते हैं। वे फलों के सूखे बीजों का खेल की गोटियों की तरह इस्तेमाल कर लेते हैं। सूखे पत्तों, पेड़ों की जड़ों और फटे-पुराने कपड़ों से गेंद बना लेते हैं। बांस का उपयोग करके हॉकी और फुटबाल के गोल-पोस्ट बना लेते हैं। बहुत से बच्चे बिना जूते और जर्सी के पूरे जोश से खेलते रहते हैं। पोखरों-तालाबों में बच्चे खूब तैरते हैं। तैराकी की इस सहज प्रतिभा को अब उपलब्ध प्रशिक्षण और संसाधनों की सहायता से विकसित करके, केवल 15 वर्ष की, जाजपुर की बेटी अंजलि मुंडा ने प्रथम ह्यखेलो इंडिया जनजातीय खेल 2026ह्न में पहले ही दिन 3 स्वर्ण पदक जीत कर पूरे देश के युवाओं को प्रेरित किया। तीरंदाजी के प्रति जनजातीय लोगों में सहज तरंग सी होती है। संताल-समुदाय ने वर्ष 1855 में शोषण के विरुद्ध एक घनघोर संग्राम किया था, जो ह्यसंताल हूलह्न के नाम से अमर है। आधुनिक हथियारों से लैस ब्रिटिश सेनाओं ने उस क्रांति को दबा तो दिया लेकिन अपने विवरणों में अंग्रेजों ने संताल वीरों के युद्ध कौशल, खासकर तीरंदाजी का विशेष उल्लेख किया है। संताल-हूल का नेतृत्व करने वाले बहादुर भाइयों सिद्धो-कान्हू तथा चांद-भैरव एवं वीरांगना बहनों, फूलो-झानो की प्रतिमाओं का झारखंड में उनके गांव उरी-मारी में जाकर अनावरण करने का सौभाग्य मुझे तब मिला था, जब मैं राज्यपाल थी। तीरंदाजी में एकलव्य की महानता से देश का बच्चा-बच्चा परिचित है। वे श्रेष्ठतम धनुर्धर के रूप में सम्मानित हैं। एकलव्य सभी देशवासियों के लिए, विशेषकर जनजातीय समाज के लिए एक प्रेरक विभूति हैं। एकलव्य आदर्श आवासीय विद्यालयों में स्थापित ह्यखेल उत्कृष्टता केंद्रह्न बच्चों को खेल-कूद की आधुनिक सुविधाओं और पद्धतियों से सक्षम बना रहे हैं। मेरे व्यक्तिगत प्रयासों से, मेरे गांव में वंचित वर्गों के बच्चों के लिए एक आवासीय स्कूल की स्थापना की गई है। इस विनम्र प्रयास के तहत स्कूल के परिसर में ही तीरंदाजी के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी कराई गई है। मेरे गांव के अन्य जनजातीय बच्चों की तरह, मुझमें भी तैराकी सहित व्यायाम और खेलों के प्रति बहुत रुझान था। मैं स्कूल की खेल प्रतियोगिताओं में प्रायरू प्रथम स्थान पर रहती थी। एक प्रतियोगिता में जानबूझकर मैंने अपने को इसलिए पीछे रखा, ताकि मेरी एक सहेली को प्रथम पुरस्कार का आनंद मिल सके। खेल-कूद से टीम भावना विकसित होती है तथा सामाजिक संबंध मजबूत होते हैं। मैदान पर कड़ी प्रतिस्पर्धा और मैदान के बाहर गहरी मित्रता खिलाडियों में प्रायरू देखने को मिलती है। मेरे भाई फुटबाल के बहुत अच्छे खिलाड़ी रहे हैं, जो गंभीर चोट लगने के कारण आगे नहीं खेल सके। मेरे परिवार के कुछ अन्य सदस्यों ने भी विभिन्न खेलों में उत्कृष्टता प्रदघ्शत की है। इस निजी विवरण से मैं यह बताना चाहती हूं कि जनजातीय परिवारों में खेल-कूद की जीवन्त परंपरा विद्यमान है। उनमें खेलों के लिए असीम प्रतिभा, ऊर्जा, रुचि है और आगे बढने का हौसला भी है। सुविधाओं और प्रशिक्षण के द्वारा ऐसी प्रतिभाओं को निखारने से, खेल-कूद उनके लिए केवल मनोरंजन और सामाजिक मेल-जोल का जरिया न होकर जीवन में आगे बढने का, आघ्थक आत्म-निर्भरता और सामाजिक सम्मान प्राप्त करने का माध्यम बन सकता है। कुछ वर्षों पहले तक हमारे देश में खेल-कूद की अच्छी सुविधाएं केवल महानगरों तक सीमित थीं, जबकि ग्रामांचलों और वनांचलों में अनेक प्रतिभावान खिलाड़ी रहते हैं। जनजातीय क्षेत्रों में खेल-अकादमी और प्रशिक्षण सुविधाएं सुलभ नहीं होती थीं। अब एकलव्य आदर्श आवासीय विद्यालयों में बच्चों के खेल-कूद पर विशेष ध्यान देने से लेकर ह्यखेलो इंडिया जनजातीय खेलह्न जैसे प्रयत्नों के बल पर जनजातीय प्रतिभाओं को प्रशिक्षण और प्रोत्साहन मिल रहा है। मुझे याद है कि मेरे विद्यार्थी जीवन के दौरान ग्रामीण स्तर पर, 5-6 गांवों के लोग मिलकर खेल प्रतियोगिताएं आयोजित किया करते थे। प्रायरू ग्रामीण क्षेत्र की प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले अच्छे खिलाड़ी भी ग्रामीण स्तर से ऊपर नहीं उठ पाते थे। पिछले कुछ वर्षों में, इस स्थिति को बदलने के अनेक सराहनीय प्रयास किए गए हैं। ऐसे प्रयासों को आगे बढ़ाते हुए ह्यखेलो इंडिया जनजातीय खेल 2026ह्न का आयोजन किया गया। इस आयोजन से जमीनी स्तर के जनजातीय खिलाडियों को भी पहचान मिली है तथा उन्हें सुविधाएं और प्रशिक्षण उपलब्ध कराए गए हैं। इन राष्ट्रीय खेलों में लगभग सभी राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों के खिलाडियों ने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया है। भारत ने खिलाडियों की नैसघ्गक प्रतिभा के बल पर ओलिम्पिक खेलों में पहला स्वर्ण पदक हॉकी के लिए वर्ष 1928 में जीता था। उस विजय में जनजातीय समुदाय के खिलाडियों की महत्वपूर्ण भूमिका थी। तब से लेकर आज तक दिलीप तिर्की, सुबोध लाकड़ा और सलीमा टेटे जैसे स्टार हॉकी खिलाड़ी भारत की पुरुष तथा महिला टीमों को जनजातीय प्रतिभा से समृद्ध करते रहे हैं। ह्यखेलो इंडियाह्न नामक राष्ट्रीय खेल विकास कार्यक्रम के तहत स्थानीय स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक सभी भौगोलिक क्षेत्रों, सामाजिक वर्गों और संस्थाओं के लिए समुचित खेल इको-सिस्टम उपलब्ध कराने का समावेशी प्रयास किया जा रहा है। इसी कार्यक्रम के तहत, खेल-कूद में बेटियों की भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए चलाई जा रही ह्यअस्मिताह्न नामक योजना से जनजातीय बेटियों की क्षमता भी विकसित हो रही है। पिछले कुछ महीनों में आयोजित बस्तर एवं सरगुजा ओलिम्पिक में कुल 7 लाख से अधिक खिलाडियों ने भाग लिया, जिनमें कुछ ऐसे युवा भी शामिल थे जो नक्सलवाद के रास्ते को छोड़कर खेल-कूद के सन्मार्ग पर चल पड़े हैं। सरकार द्वारा युवाओं में खेल-प्रतिभा को पहचानने और विकसित करने के अच्छे परिणाम राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में दिखाई देने लगे हैं। युवाओं, विशेषकर जनजातीय युवाओं की खेल प्रतिभा हमारे राष्ट्र की अमूल्य सामाजिक पूंजी है। मुझे विश्वास है कि इस अनमोल संसाधन का सदुपयोग करते हुए हमारा देश खेल-कूद के क्षेत्र में उत्कृष्टता के अनेक गौरवशाली प्रतिमान स्थापित करेगा। इसी विश्वास के साथ मेरा संदेश है-खेलो इंडिया! खूब खेलो इंडिया!

आज तक

संपादक की कलम से

'आप' का क्या होगा?

कभी देशवासियों के लिए उम्मीद बन चुकी आम आदमी पार्टी (आप) का भविष्य आज एक गंभीर सवाल बन गया है. पार्टी के गठन के समय देश भर के अपने-अपने क्षेत्र के महारथी लोग जुड़े थे. एक्टिविस्ट, पत्रकार, वकील, प्रोफेसर, उद्योगपति आदि ने मिलकर पार्टी को एक मजबूत आधार दिया था. लेकिन सत्ता मिलते ही वे एक-एक कर सभी विदा लेते गए. अब राज्यसभा सदस्य राघव चड्ढा भी उसी कड़ी में शामिल होने वाले हैं. 2 अप्रैल 2026 को आम आदमी पार्टी ने उन्हें राज्यसभा में डिप्टी लीडर के पद से हटा दिया, उनकी जगह आशोक मित्तल को नियुक्त कर दिया. पार्टी ने सदन में उनके बोलने का समय नहीं देने की मांग की है. चड्ढा ने जवाब में वीडियो जारी कर कहा कि 'साइलेंस्ड, नॉट डिफीटेड'. इसके बाद पार्टी नेताओं ने उन पर जमकर आरोप लगाए हैं. एक नेता ने तो उन्हें 'डर गया तो मर गया' तक कह डाला. हालांकि, राजनीतिक गलियारों में चड्ढा की पार्टी से विदाई कोई अनहोनी घटना नहीं मानी जा रही है. काफी दिनों से चड्ढा की पार्टी से दूरी स्पष्ट दिखाई दे रही थी. पर सवाल उठता है कि राघव चड्ढा जैसी शख्सियत जो पार्टी के मुखिया और दिल्ली के पूर्व सीएम अरविंद केजरीवाल के बहुत खास हुआ करते थे, के साथ ये नौबत क्यों आई. जाहिर है कि चड्ढा के साथ जो हुआ उससे पार्टी की पुरानी बीमारी से जोड़ा जा रहा है. पार्टी के संस्थापक अरविंद केजरीवाल ने 2012 में 'अन्ना आंदोलन' के बाद आप की नींव रखी थी. ⊙

दर्शन

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता: समदर्शिन: ॥ 18॥

भाव- सच्चे ज्ञानी महापुरुष एक ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ते और चाण्डाल को अपने दिव्य ज्ञान के नेत्रों से समान नजर से देखते हैं.

श्लोक-18, अध्याय-5, श्रीमद्भगवद्गीता

ट्रंप का मनोविश्लेषण

एक निहायत ही अप्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा किया गया अध्ययन, जो स्वतः ही मुझे राष्ट्रपति ट्रम्प की कैबिनेट में किसी पद के लिए योग्य बनाता है.

कमलेश सिंह | आजतक

मैं मनोवैज्ञानिक नहीं हूं. मेरे पास मनोविज्ञान, मनोचिकित्सा, व्यवहार विज्ञान, या क्लीनिकल एनलिसिस में कोई प्रशिक्षण नहीं है. हां, मैं वर्षों से डोनाल्ड ट्रम्प को देखता आ रहा हूं. वही पहले के तीनों को मिलाकर भी कहीं अधिक भारी अनुभव है और जिसने मेरे भीतर गहरे घाव छोड़े हैं.चूंकि टेलीविज़न पर हर बिना सनद वाले इंसान को अब विशेषज्ञ मान लिया जाता है, तो लीजिए, मैं भी अपने निष्कर्ष यहां इंटरनेट पर पेश करता हूं. तैयार हो जाइए.

डोनाल्ड ट्रम्प जब जन्मे थे तो मुंह में चांदी का चम्मच थी और सिर पर सोने से बाल. उन्हें "ऑरेंज मैन" इसलिए कहा जाता है क्योंकि वे विटामिन C से भरपूर हैं. अब C विटामिन के विस्तार और फायदे में जाने की बजाय हम यह मानकर चलें कि बहुत C फॉर करेंसी या D फॉर डॉलर के बीच इनकी परवरिश हुई. भगवान की दया से सबकुछ था.

दौलत, शोहरत, इज़्ज़त, सब. पर पूत सपूत और धन संचय का इतिहास. यह शख़्स ढाई शब्दों के लिए मशहूर है: You're fired. यह उन्होंने The Apprentice में कहा. यह उन्होंने व्हाइट हाउस में कहा. यह वे अपनी पूरी ज़िंदगी कहते आए हैं, बढ़ते उत्साह और घटते औचित्य के साथ. शुरू से ही यह शब्द उन पर फ़ब्ता था, क्योंकि वे हमेशा ऐसे लोगों की संगत में रहे जिन्हें वे निकाल सकते थे. हाल ही में उन्होंने बिना किसी संकोच के स्वीकार किया कि वे उन सफल लोगों की संगत से अधिक लूज़र्स की संगत पसंद करते हैं जो उनकी सफलताओं की तारीफ़ें सुनना चाहते हैं. अचीवर्स अपनी सुनाने लगते हैं. ट्रंप सुनना वैसे ही पसंद नहीं करते. दूसरों की महानता के किस्से क्यों सुनें? यह कोई संयोग नहीं, यह एक कला है. जो आदमी किसी बराबर वाले को बर्दाश्त नहीं कर सकता, उसे अपना दर्शक खरीदना पड़ता है. ट्रम्प कॉर्पोरेशन ने उन लोगों को काम पर रखा जो उन्हें पसंद आए. जब वे लोग उन्हें पसंद करना बंद कर देते, तो उन्हें निकाल दिया. सबसे हॉट कंपनी. सबसे हॉट बॉस. इवांका सबसे हॉट. मेलानिया सबसे हॉट. ट्रम्प के दायरे में हर चीज़ और हर इंसान "सबसे हॉट" है जब तक वे उनके जूती के नीचे बने रहें. डोनाल्ड ट्रम्प दशकों तक उन लोगों की छाती पर मूंग दलते रहे जो उनके एहसानों के तले पहले से दबे मिले थे. जिन्हें उन्होंने सीधे-सीधे मोल लिया था इस्तेमाल के लिए. अधीनस्थ, कर्मचारी, ठेकेदार जिन्हें उन्होंने ठगा. वकील जिन्हें उन्होंने पकाया. महिलाएं जिनका मुंह बंद किया. वे अपनी कंपनी में पूर्ण सत्ता के इतने अभ्यस्त हो गए कि राष्ट्रपति पद पर पहुंचते-पहुंचते उनकी बुनियादी समझ ही गड़बड़ा गई थी. उन्होंने सोचा था कि ओवल ऑफ़िस एक बड़ा बोर्डरूम है. साइज़ के बारे में वे ग़लत भी नहीं थे. ⊙

हेनरी किसिंजर ने एक बार कहा था कि अमेरिका का दुश्मन होना ख़तरनाक है और उसका दोस्त होना घातक. इसे हमारे दौर के लिए दोबारा लिखा जाना चाहिए. डोनाल्ड का दुश्मन होना ख़तरनाक है और उनका दोस्त होना घातक.

बल्लेबाजों का 'खिलौना' क्यों बन गए वरुण?

विश्व मोहन मिश्र | आजतक

टी20 क्रिकेट में ऐसा दौर आता है, जब खिलाड़ी नहीं बदलता- बल्कि खेल उसके खिलाफ बदल जाता है. वरुण चक्रवर्ती फिलहाल उसी मोड़ पर खड़े नजर आ रहे हैं. कुछ महीने पहले तक बल्लेबाजों के लिए पहेली रहे इस स्पिनर पर अब हमले हो रहे हैं, और यही बदलाव उनकी हालिया गिरावट की सबसे बड़ी वजह बन रहा है. गुरुवार रात ईडन गार्डन्स में कोलकाता नाइट राइडर्स (KKR) के इस धुरंधर की गेंदों पर जमकर वार हुआ. सनराइजर्स हैदराबाद (SRH) के खिलाफ मैच में अभिषेक शर्मा ने वरुण चक्रवर्ती के खिलाफ एक ओवर में 2 छक्के और 3 चौके जड़कर टीम को 5 ओवरों में बिना किसी नुकसान के 71 रन तक पहुंचा दिया. चक्रवर्ती ने अपने पहले ओवर में 25 रन लुटाए. दरअसल, हाल ही में टी20 वर्ल्ड कप में दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ मैच के बाद से वरुण (4-0-47-1) के आंकड़ों में अचानक गिरावट आई है. पिछले 7 टी20 मुकाबलों पर नजर डालें तो तस्वीर साफ हो जाती है- 25 ओवरों में 304 रन और इकोनॉमी 12.16. इस दौरान उनके खाते में सिर्फ पांच विकेट जुड़े. यह वही गेंदबाज है, जिसे हाल तक टीम की रणनीति का सबसे

बड़ा हथियार माना जा रहा था. टी20 वर्ल्ड कप में दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ मैच से पहले के 7 मैचों के आंकड़े देखें, तो वरुण चक्रवर्ती ने 24 ओवरों में 170 रन दिए और इस दौरान उनकी इकोनॉमी 7.08 की ही रही. तो आंकड़ों ने वरुण चक्रवर्ती के प्रदर्शन के ग्राफ को एक्सपोज कर दिया है. लेकिन असली कहानी सिर्फ कुल आंकड़ों में नहीं, बल्कि गेंदबाजी के बारीक पहलुओं में छिपी है. फुल लेंथ गेंदें, जो पहले नियंत्रण और विविधता के साथ आती थीं. ⊙

इतिहास में आज

माइक्रोसॉफ्ट की स्थापना हुई थी

April 04

4 अप्रैल 1975 को कंप्यूटर साइंस की दुनिया में एक क्रांतिकारी घटना हुई. जब 20 साल के बिल गेट्स और उनके दोस्त पॉल एलन ने कंप्यूटर सॉफ्टवेयर बनाने वाली कंपनी माइक्रोसॉफ्ट की स्थापना की. कंपनी की शुरुआत अल्बुकर्क, न्यू मैक्सिको में हुई थी. 1979 में माइक्रोसॉफ्ट में शिफ्ट कर दिया गया. ⊙

संपादकीय

सुनहरे गेहूं की कहानीः प्राचीन रीति-रिवाजों से लेकर मशीन युग तक का एक बड़ा परिवर्तन

डॉ. विजय गर्ग

गेहूं पंजाब की धरती का वैभव है। जब खेतों में सुनहरी बालें हवा के झोंके से लहराती हैं, तो यह दृश्य किसान के साल भर के परिश्रम का प्रतीक बन जाता है। गेहूं सिर्फ एक फसल नहीं है, बल्कि हमारी संस्कृति, रीति-रिवाज और जीवन शैली से जुड़ी कहानी है।

प्राचीन काल में गेहूं की खेती पूरी तरह से पारंपरिक तरीके से होती थी। बीज बोने से लेकर कटाई तक हर काम हाथ से किया जाता था। हल से जमीन उगाई जाती थी, बीज छिड़के जाते थे और पानी देने के लिए नहरों या कुओं का सहारा लिया जाता था। कटाई के समय परिवार के सभी सदस्य एक साथ मिलकर अनाज काटते थे। यह समय न केवल परिश्रम का होता था, बल्कि खुशी और मेलजोल का भी होता था।

पंजाब की धरती और गेहूं का रिश्ता सदियों पुराना है। जिसे हम आज 'सोना' कहते हैं, उसने पिछले कुछ दशकों में एक लंबी और दिलचस्प यात्रा की है। हल के दस्तों से लेकर कबाइनों की आवाज तक, गेहूं की कहानी मानव परिश्रम और वैज्ञानिक प्रगति का एक अद्भुत उदाहरण है।

पुराना दौरः परिश्रम और साझेदारी का प्रतीक प्राचीन काल में गेहूं की खेती केवल एक व्यवसाय नहीं, बल्कि एक उत्सव के समान थी। उस समय के प्रमुख पहलू थेः बैलों की जोड़ीः खेतों की सफाई लकड़ी के हलकों और बैलों की मदद से की जाती थी। किसान सुबह-सुबह अंधेरे में ही खेतों की ओर निकल जाते थे। हाथ से बोनाः बीजों को हाथ से काटकर या 'पोरे' के माध्यम से बोया जाता था। दाती की गड़गड़ाहटः कटाई के दिनों में पूरा गांव एक-दूसरे की मदद करता था। दानी के साथ लंबी लाइनों में खड़े होकर गेहूं काटना होता था और 'भरी' बांधली जाती थीं। फल और पिंडः गेहूं को निकालने के लिए बैलों के पीछे से दाल बांधकर काट दिया जाता था, फिर हवा के रुख के अनुसार अनाज को अलग कर दिया जाता था।

हरित क्रांतिः एक बड़ा मोड़ 1960 के दशक में आई हरित क्रांति ने सब कुछ बदल दिया। मैक्सिकन प्रजातियों के आगमन से झाड़ियों में भारी वृद्धि हुई। 'भूखमरी के डर से भारत में अन्न की आपूर्ति बढ़ गई, और इसका सबसे बड़ा श्रेय पंजाब के किसानों को जाता है। 'मशीन युगः गति और सुविधा आज के समय में कृषि का स्वरूप पूरी तरह बदल गया हैः ट्रैक्टर और सुपर सीडरः अब सप्ताहों का काम घंटों में हो जाता है। सुपर सीडर जैसी मशीनों से बिना जलाए परली को उगाना संभव हो गया है। कंबाइन हार्वेस्टरः जहां पहले कटाई और गहाने में महीनों का समय लगता था, अब कंबाइन कुछ ही मिनटों में खेत साफ कर देता है। ड्रोन और तकनीकः अब ड्रोन के माध्यम से खाद और कीटनाशकों का छिड़काव करने की तकनीक भी फैल रही है।गेहूं की कटाई भी एक अलग प्रक्रिया थी। बिल्लियों को इकट्ठा करके बेलों से रोया जाता था, ताकि दाने अलग हो जाएं। इसके बाद हवा में फेंका गया भूसा और दाने अलग कर दिए जाते थे। इन सभी कार्यों में बहुत समय लगता था, लेकिन इसमें साझाकरण और सहयोग की भावना भी होती थी। मशीनरी युग के आगमन से गेहूं की खेती में बड़े बदलाव आए हैं। अब खेतों को ट्रैक्टरों से जोड़ा जाता है, बीज ड्रिल से बोए जाते हैं और कटाई और कटाई एक ही समय में होती है। इससे समय और श्रम दोनों की बचत होती है तथा उत्पादन भी बढ़ जाता है। लेकिन इस प्रगति के साथ कुछ चुनौतियां भी सामने आई हैं। मशीनों के उपयोग से खर्च बढ़ गया है और छोटे किसानों के लिए ये मशीनें खरीदना आसान नहीं है। इसके अलावा, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अधिक उपयोग से मिट्टी की उपज और पर्यावरण पर भी प्रभाव पड़ा है।आज हमें पुरानी प्रथाओं और नई प्रौद्योगिकी के बीच संतुलन बनाने की आवश्यकता है। जहां मशीनों से सुविधा और उत्पादन बढ़ता है, वहां हमें प्रोगेमिक तरीकों और मिट्टी के स्वास्थ्य को भी महत्व देना चाहिए।

डॉ. विजय गर्ग सेवानिवृत्त प्रधानाचार्य शैक्षिक स्तंभकार मलोट पंजाब

यादों का गांव या बदलता सच, भागते वक्त में खोती जा रही सामूहिकता की कहानी

दो पीढ़ी पहले के लोग अपने दौर या अपने बचपन को याद कर सकते हैं कि जब गांव में कोई बारात या तिलक समारोह का अवसर होता था, तो एक कापी-पेन लेकर लड़कों की एक टोली आसपास के घरों से तकिया-चद्दर, दरी, चौकी-खटिया इकट्ठा करती।

वक्त जितनी तेजी से आगे भाग रहा है, उतनी ही तेजी से शायद समाज और लोगों की जीवनशैली में बदलाव भी हो रहा है। दो-ढाई दशक पहले तक ग्रामीण इलाकों में होने वाले शादी समारोहों में तस्वीर बिल्कुल अलग होती थी। वहां परिवार के साथ समाज होता था, केवल भोजन करने या समारोह में शामिल होने के लिए नहीं, बल्कि हर स्तर पर सब कुछ ठीक से निबाह देने में अपने स्तर पर हर सहयोग करने के लिए भी। शादी समारोह में शामिल सभी लोगों के लिए यह अपना आयोजन होता था। एक-दो पीढ़ी पहले के दौर में दो या तीन दिनों की अवधि के मुकाबले अब सब कुछ चंद घंटे में किसी विवाह भवन या 'बैंक्वेट' या 'विवाह भवन' में संपन्न हो जाता है। मगर अब भी कभी-कभी किसी शादी समारोह में पुराने दिनों की झलक मिल जा सकती है, जहां लोगों ने परंपरा को कायम रखने की कोशिश की।

दो पीढ़ी पहले के लोग अपने दौर या अपने बचपन को याद कर सकते हैं कि जब गांव में कोई बारात या तिलक समारोह का अवसर होता था, तो एक कापी-पेन लेकर लड़कों की एक टोली आसपास के घरों से तकिया-चद्दर, दरी, चौकी-खटिया इकट्ठा करती। बारात-तिलक के अतिथियों के जाने के बाद फिर से सबके घर सामान पहुंचा दिया जाता। बड़े बर्तन भी सामूहिक रहते थे। परात-जग, बाल्टी आस-पड़ोस से मंगनी या मुफ्त में आता। विवाह में आटा, गांव के पुरुष गूंदते और पूरी बेलने के लिए लड़कियां-महिलाएं अपने घरों से चौकी-बेलन ले कर आतीं। हलवाई के साथ एक-दो व्यक्ति ही आते, बाकी सहयोग के लिए गांव के लोग तैयार रहते।

कई महीने पहले से गेहूं को साफ करना, धोना-पीसना, तेल-मसालों का इंतजाम शुरू हो जाता था। दो-तीन महीने पहले से गांव में लोगों को पता होता था कि किसको क्या करना है। किसे पत्तल देना है, किसे कुल्हड़-भरुका, हांडी-पतुकी तैयार करना है, किसे सूप-बेना-पंखी बनाना है, किसे पीढ़ा बनाना है, किसे मंडप के लिए बांस छीलना है! विवाह के दिन रिश्तेदारी के लोगों से कोई दही लाता, कोई दूध, कोई कटहल-लौकी।

इस तरह विवाह-तिलक एक सामूहिक जिम्मेदारी का आयोजन हो जाता था। गांव के लोग तब खाना खाते, जब बारात में आए लोग खा चुके होते। दरअसल, यह गांव के सम्मान का मामला होता था और इस तरह तीन दिन वाली बारात भी सकुशल विदा हो जाती! लेकिन अब एक रात और कुछ घंटों की बारात है। गांव-गांव में टेंट हाउस है, जहां चारपाई-कुर्सी से लेकर जयमाला-हल्दी के लिए मंच, डीजे, लहंगा-चश्मा सब किराए पर उपलब्ध है। गांव में वाशिंग मशीन से लेकर स्वेटर-सूट तक आनलाइन पहुंच रहा है। अब गांव में भी धोती-कुरता-पजामा की जगह आधुनिक वस्त्रों पसंद किया जा रहा है। मैगी अब गांव के लिए कोई अनजाना उत्पाद नहीं है। चाउमीन-मंचूरियन और पिज्जा भी गोलगप्पे-चाट के साथी बन गए हैं। शादी समारोह में अब गांव के लोग पहले खा लेते हैं या फिर घराती-बाराती सब अपनी सुविधा से खा लेते हैं।

करीब तीन दशक पहले बारात को खाना ताजे पत्तल पर पांत में बिठाकर खिलाया जाता था। पूर्वांचल में बिहार के किसी भी वैवाहिक आयोजन में कटहल-परवल-कद्दू की सब्जी विशेष मानी जाती थी, लेकिन वक्त के साथ कुर्सी-मेज पर खाना शुरू हुआ। अब तो गांव में भी 'बुफे' का चलन है। बुफे तक आते-आते, कटहल-परवल को पनीर और मशरूम ने बेदखल कर दिया है। वैवाहिक आयोजन में कभी जिस कटहल-परवल का वर्चस्व होता था, अब वे हाशिये पर आ गए हैं।

गांव से शहर में आ जाने के बाद हम अक्सर यह मान बैठते हैं कि जो गांव हम छोड़ कर आए थे, वह वहीं रुका हुआ होगा और शहर तेजी से बदल रहा है! समूह में सहयोग और संवेदना की जगह रफ्तार और नए दायरों का निर्माण दिखने लगा है। अब विवाह में नौ बांस लाकर मंडप बनाने की जगह बांस की 'कईन' से काम चल जाता है। बैल तो रहे नहीं, तो 'हरिस' रख कर क्या होता? तो अब विवाह के लिए छोटे 'हरिस' बाजार में और किराये पर उपलब्ध हैं, जिन्हें मंडप में लगा दिया जाता है। टेंट हाउस वाले जरूरत के हिसाब से शादी के लिए माड़ो-मंडप सजा देते हैं! 'कोहबर' के लिए पोस्टर मिलते हैं। जिस कमरे-दीवार पर कोहबर का पोस्टर चिपका दें, वही कोहबर बन जाता है! कोहबर का महत्त्व, नव-दंपति के बीच प्रेम, उर्वरता, समृद्धि और वैवाहिक सुख की मंगल कामना के रूप में माना जाता है।

जब मशीन का हस्तक्षेप बढ़ा, तो गांव के बाहर खलिहान की जरूरत नहीं रही। फसल खेत में ही काटकर बोरे में भरी जानी लगी! खाली जगहों को घेरा जाने लगा। घरों में दालान और खंभिया को घेर कर लोहे के ग्रिल और चैनल लगने लगे, ताकि उसमें ताला लगाया जा सके। घर के सामने का दुआर छोटा होता जा रहा है, क्योंकि कई लोगों ने अपने घर के सामने की खुली जगहों को दीवार से घेर कर गेट लगा लिया है! पक्के घरों के बन जाने के बाद पुरुषों का दुआर पर सोने का रिवाज लगभग खत्म हो गया है। अब वे घर के अंदर या छत पर सोते हैं!

जैसे-जैसे गांव में चार पहिये वाली गाड़ियां बढ़ रही हैं, वैसे-वैसे गांव के भीतरी रास्ते संकरे होते जा रहे हैं। उत्तर भारत में अब गांव में सामूहिकता का अभाव अक्सर दिखता है, क्योंकि अगर कुछ लोग गांव के भीतर के खड़ंजे-रास्ते के ही दो-चार फुट घेर कर शौचालय या भैंस-गाय बांधने का इंतजाम कर लें, तो उन्हें कोई मना नहीं करता है। सामूहिकता का बोध अब तेजी से निजी सुविधा और स्वार्थ के दायरे में सिमटता जा रहा है।

डिजिटल बाल यौन शोषण — ऑनलाइन युग में एक बढ़ता संकट

डॉ विजय गर्ग

डिजिटल प्रौद्योगिकी के तीव्र विस्तार ने लोगों के जुड़ने, सीखने और संवाद करने के तरीके को बदल दिया है। हालांकि, इन लाभों के साथ-साथ एक अंधकारमय वास्तविकता भी उभर आई है। डिजिटल बाल यौन शोषण एक गंभीर और बढ़ती वैश्विक चिंता है जो बच्चों की सुरक्षा, गरिमा और भविष्य को खतरा बनाती है। डिजिटल बाल यौन शोषण क्या है?

डिजिटल बाल यौन शोषण से तात्पर्य बच्चों का यौन शोषण करने के लिए इंटरनेट, मोबाइल उपकरणों या डिजिटल प्लेटफार्मों का उपयोग है। इसमें संवारना, अपमानजनक छवियों को साझा करना या बनाना, दबाव डालना और लाइव-स्ट्रीम दुर्व्यवहार जैसी गतिविधियां शामिल हैं। दुर्व्यवहार के पारंपरिक रूपों के विपरीत, यह शोषण अक्सर शारीरिक संपर्क के बिना होता है, जिससे इसका पता लगाना और रोकथाम करना कठिन हो जाता है। अपराधी गुमनाम रूप से और सीमा पार करके काम कर सकते हैं, जिससे समस्या से निपटने की जटिलता बढ़ जाती है।

ऑनलाइन शोषण के रूप

डिजिटल शोषण कई रूप ले सकता है, जिनमें शामिल हैं

ऑनलाइन संवारनाः किसी बच्चे के साथ यौन शोषण या हेरफेर करने के लिए उसका विश्वास बढ़ाना

बाल यौन शोषण सामग्री (सीएसएएम): स्पष्ट छवियों या वीडियो का निर्माण और वितरण

यौन उत्पीड़नः अंतरंग चित्रों या धमकियों का उपयोग करके बच्चों को ब्लैकमेल करना

लाइव स्ट्रीमिंग दुरुपयोगः इंटरनेट पर वास्तविक समय शोषण प्रसारण

स्व-जनित सामग्री का दुरुपयोगः बिना सहमति के साथियों द्वारा निजी छवियों को साझा करना

इन गतिविधियों में अक्सर जबरदस्ती, धोखा या सत्ता का दुरुपयोग शामिल होता है, जहां बच्चा सूचित सहमति देने में असमर्थ हो जाता है।

समस्या क्यों बढ़ रही है?

डिजिटल बाल शोषण के उदय में कई कारकों ने योगदान दिया है

1। व्यापक इंटरनेट पहुंचः बच्चे पहले से कहीं अधिक कम उम्र में ऑनलाइन होते हैं

2। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मः दुनिया भर में अजनबियों के साथ आसान संवाद

3। अपराधियों की गुमनामीः छिपी हुई पहचान ट्रैकिंग को कठिन बना देती है

4। तकनीकी प्रगतिः एन्क्रिप्टेड मैसेजिंग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस जैसे उपकरण

हाल की रिपोर्टें चिंताजनक प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालती हैं। हर साल लाखों मामले दर्ज किए जाते हैं, और विशेषज्ञों का अनुमान है कि दुनिया भर में करोड़ों बच्चे प्रत्येक वर्ष किसी न किसी रूप में ऑनलाइन यौन शोषण का अनुभव करते हैं।

इससे भी अधिक चिंताजनक बात यह है कि एआई-जनित अपमानजनक सामग्री बढ़ रही है, जो तेजी से बढ़ती जा रही है और इसका पता लगाना कठिन हो रहा है।

बच्चों पर प्रभाव

डिजिटल यौन शोषण के परिणाम गंभीर और दीर्घकालिक हैंः

भावनात्मक आघात, चिंता और अवसाद

विश्वास और आत्मसम्मान का नुकसान

सामाजिक अलगाव और भय

दीर्घकालिक मनोवैज्ञानिक नुकसान

भले ही दुर्व्यवहार ऑनलाइन हो, लेकिन इसका प्रभाव बहुत वास्तविक है, क्योंकि डिजिटल सामग्री को बार-बार साझा किया जा सकता है, जिससे पीड़ित का कष्ट बढ़ जाता है।

मुद्दे को सुलझाने में चुनौतियां

डिजिटल बाल शोषण से लड़ने में अनूठी चुनौतियां हैं

कम रिपोर्टिंगः कई पीड़ित अपनी बात कहने में शर्म या डर महसूस करते हैं

सीमा पार अपराधः अपराधी अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर काम करते हैं

तेजी से विकसित हो रही प्रौद्योगिकीः कानून प्रवर्तन को तालमेल बनाए रखने में संघर्ष करना पड़ रहा है

जागरूकता की कमीः माता-पिता और बच्चे जोखिम को नहीं पहचान पाते

अध्ययनों से यह भी पता चलता है कि कई पीड़ित कभी अपने दुर्व्यवहार करने वालों से व्यक्तिगत रूप से नहीं मिलते, फिर भी नुकसान बहुत गहरा होता है और कभी-कभी ऑफ़लाइन दुर्व्यवहार में बदल जाता है।

रोकथाम और संरक्षण

इस संकट से निपटने के लिए सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है

डिजिटल शिक्षाः बच्चों को सुरक्षित ऑनलाइन व्यवहार सिखाना

माता-पिता की जागरूकताः निगरानी और खुला संचार

मजबूत कानून और प्रवर्तनः अपराधियों को वैश्विक स्तर पर निशाना बनाना

टेक कंपनी की जिम्मेदारीः हानिकारक सामग्री का पता लगाना और हटाना

रिपोर्टिंग तंत्रः पीड़ितों और गवाहों को दुर्व्यवहार की रिपोर्ट करने के लिए प्रोत्साहित करना

एक सुरक्षित डिजिटल वातावरण बनाना सिर्फ एक तकनीकी चुनौती नहीं है, यह एक सामाजिक जिम्मेदारी है।

निष्कर्ष

डिजिटल बाल यौन शोषण आधुनिक डिजिटल युग के सबसे जरूरी मुद्दों में से एक है। जैसे-जैसे प्रौद्योगिकी विकसित होती जा रही है, बच्चों की सुरक्षा के लिए हमारे प्रयास भी विकसित होने चाहिए। जागरूकता, शिक्षा और समन्वित वैश्विक कार्रवाई यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि इंटरनेट अवसर का स्थान बना रहे। समाज के सबसे युवा और सबसे कमजोर सदस्यों के लिए नुकसान नहीं होगा।

समस्या के पैमाने को स्वीकार करके और एक साथ काम करके ही हम एक सुरक्षित डिजिटल भविष्य का निर्माण करने की आशा कर सकते हैं।

डॉ विजय गर्ग
सेवानिवृत्त प्रधान शैक्षिक स्तंभकार प्रख्यात शिक्षाशास्त्री स्ट्रीट कौर चंद एमएचआर मलोट पंजाब

सड़कें वही, लेकिन सफर हो रहा महंगा टोल बढ़ोतरी ने यात्रियों की बढ़ाई मुश्किलें

ऐसे में भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा एकल और दोहरी यात्रा में पांच रुपए से लेकर पैंतीस रुपए तक की बढ़ोतरी पर सवाल उठना स्वाभाविक है। मसलन, गुरुग्राम में द्वारका एक्सप्रेस-वे पर बजघेड़ा टोल प्लाजा पर एकल यात्रा के लिए 225 रुपए देना यात्रियों के लिए भारी साबित हो सकता ह

देशभर में महंगाई में बढ़ोतरी के बीच अब लोगों के लिए कहीं आना-जाना भी महंगा साबित होने लगा है। दरअसल, वैश्विक परिस्थितियों की वजह से पहले ही संकट का दायरा फैल रहा है और चीजों की कीमतों में इजाफा हो रहा है। इस बीच हरियाणा में राजमार्गों पर टोल दरों में बेतहाशा वृद्धि की घोषणा आम लोगों के सामने एक नई परेशानी पैदा करने वाली है। इसके अमल में आने के साथ ही निजी वाहनों से यात्रा करने वालों को अब अधिक टोल चुकाना होगा। यह हाल तब है, जबकि अधिकतर राजमार्गों पर बुनियादी सुविधाओं का घोर अभाव है, आए दिन लोगों को लंबे जाम का सामना करना पड़ता है।

ऐसे में भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा एकल और दोहरी यात्रा में पांच रुपए से लेकर पैंतीस रुपए तक की बढ़ोतरी पर सवाल उठना स्वाभाविक है। मसलन, गुरुग्राम में द्वारका एक्सप्रेस-वे पर बजघेड़ा टोल प्लाजा पर एकल यात्रा के लिए 225 रुपए देना यात्रियों के लिए भारी साबित हो सकता है। दूसरी ओर वाणिज्यिक वाहनों से वसूली का असर भी दिखेगा और आखिरकार आम आदमी पर ही इसकी मार पड़ेगी। सवाल है कि बुनियादी सुविधाओं में सुधार किए बिना टोल दरों में वृद्धि की क्या तुक है। नए वित्तीय वर्ष की शुरुआत के साथ ही राजमार्गों पर यात्रा महंगी किए जाने से लोगों में निराशा बढ़ेगी।

इस समय ज्यादातर राजमार्गों पर वाहनों का दबाव बढ़ रहा है। वहीं रास्ते में साफ-सुथरे जन-सुविधा परिसरों का अभाव खटकता है। रात में कई मार्गों पर अंधेरा होने से हादसे का अंदेशा बना रहता है। राजमार्ग प्राधिकरण के गश्ती दल तुरंत मौके पर नहीं पहुंचते। इससे लोग असहाय स्थिति में होते हैं। कई बार हादसे के बाद फिर हादसा होना यह बताता है कि प्राधिकरण को टोल की तो चिंता है, लेकिन यात्रियों की जान की नहीं। अक्सर देखा गया है कि टोल नाकों पर वाहनों की लंबी कतार लग जाती है।इससे न केवल समय की, बल्कि ईंधन की भी बर्बादी होती है। हालांकि हरियाणा में टोल पर अब केवल फास्टैग या आनलाइन भुगतान ही किया जा सकेगा। ऐसे में संभव है कि वाहनों की कतार कुछ कम हो। फिर भी राजमार्गों पर सुविधाएं बढ़ाए बिना टोल शुल्क बढ़ाना यात्रियों पर नाहक ही बोझ डालने जैसा है।शनिवार को नोएडा अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे के पहले चरण का उद्घाटन होगा। इससे वाणिज्य और संपर्क को बढ़ावा मिलेगा। यह दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे (आइजीआइ) पर भीड़भाड़ कम करेगा। नोएडा हवाई अड्डा भारत की सबसे बड़ी नई हवाई अड्डा परियोजनाओं में से एक है। हवाईअड्डे के पहले चरण को सार्वजनिक-निजी भागीदारी माडल के तहत 11,200 करोड़ की लागत से विकसित किया गया है। इस हवाईअड्डे की यात्री संभालने की क्षमता शुरुआत में प्रतिवर्ष 1.2 करोड़ यात्रियों की होगी। पूरी तरह विकसित होने पर इसे बढ़ाकर प्रतिवर्ष सात करोड़ यात्रियों तक बढ़ाया जा सकेगा। हवाई अड्डे की विशेषताओं में 3,900 मीटर लंबा रनवे शामिल है, जो चौड़े आकार के विमानों को संभालने में सक्षम है।

पाषाण युग' की धमकी के बीच जलता विश्व, जंग से ज्यादा खतरनाक होती बयानबाजी

यह कोई पहला मौका नहीं है, जब ट्रंप ने कोई ऐसा बयान दिया है, जिससे युद्ध खत्म होने की कोई राह निकलने के बजाय स्थिति और बिगड़ने की ही भूमिका बनी। इससे पहले भी वे अपने गैरजरूरी बयानों के जरिए तनाव और टकराव को ज्यादा तीखा बनाने की कोशिश कर चुके हैं

ईरान के खिलाफ इजराइल और अमेरिका के साझा हमले के बाद दुनिया भर में इस बात को लेकर चिंता जताई जा रही है कि अगर युद्ध और लंबा खिंचा तो इसके असर से बहुत सारे देशों में बहुस्तरीय संकट पैदा होंगे। युद्ध शुरू होने के करीब एक महीने के बाद यह साफ देखा जा सकता है कि कई देशों में तेल और गैस का व्यापक संकट खड़ा हो गया है और आम जनजीवन बुरी तरह प्रभावित हो रहा है। युद्ध में शामिल देशों के शीर्ष नेतृत्व से यह उम्मीद की जाती है कि वे संयम और धीरज के साथ घटनाओं और परिस्थितियों पर परिपक्व टिप्पणी करें, ताकि तनाव को कम करने में मदद मिले और युद्ध को खत्म करने का कोई रास्ता निकले। मगर अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप को शायद इन बातों को गंभीरता से लेने की जरूरत महसूस नहीं होती। यह बेवजह नहीं है कि आए दिन वे कोई न कोई ऐसी टिप्पणी कर देते हैं, जिससे स्थितियां ज्यादा जटिल हो जाती हैं। गौरतलब है कि गुरुवार को राष्ट्र के नाम संबोधन में ट्रंप ने कहा कि अमेरिका आने वाले दो-तीन हफ्तों में ईरान पर बड़ा हमला करने जा रहा है और हम उन्हें पाषाण युग में पहुंचा देंगे।यह कोई पहला मौका नहीं है, जब ट्रंप ने कोई ऐसा बयान दिया है, जिससे युद्ध खत्म होने की कोई राह निकलने के बजाय स्थिति और बिगड़ने की ही भूमिका बनी। इससे पहले भी वे अपने गैरजरूरी बयानों के जरिए तनाव और टकराव को ज्यादा तीखा बनाने की कोशिश कर चुके हैं। सवाल है कि उन्हें ऐसा क्यों लगता है कि अमेरिका के राष्ट्रपति होने के नाते कही गई उनकी बातों से केवल डर और समर्पण ही पैदा होगा। ऐसे बयानों का हासिल आखिर क्या होता है, सिवाय इसके कि तनाव में और ज्यादा बढ़ोतरी हो जाती है, दोतरफा हमले और तेज हो जाते हैं। अपने ऊपर हमले के बाद ईरान ने जिस तरह लगातार कड़ी प्रतिक्रिया दी है, मिसाइलों के जरिए अमेरिकी और इजराइली ठिकानों पर सटीक हमले किए हैं, उससे साफ है कि वह फिलहाल सामना करने के रुख पर कायम है। मगर इस सबका नतीजा यह सामने आ रहा है कि दुनिया के बहुत सारे देश अब धीरे-धीरे कई तरह की संकटों से घिर रहे हैं।ईरान ने जब से होर्मुज जलमार्ग को बाधित किया है, उसके बाद भारत सहित कई देशों में तेल और गैस की आपूर्ति व्यापक पैमाने पर बाधित हुई है। ऊर्जा की कमी से उपजी मुश्किल अब जिस स्तर पर गहराती जा रही है, उससे समूची दुनिया किसी न किसी रूप से प्रभावित होने वाली है। अभी से दबे स्वर में ऊर्जा संकट की वजह से सब ठप पड़ने की आशंका जताई जाने लगी है। जिन देशों के पास अपने संसाधन हैं, वे शायद संकट का सामना कुछ समय तक कर लेंगे, लेकिन जहां कच्चे तेल और गैस की आपूर्ति के लिए अन्य देशों पर निर्भरता है, वहां आने वाले दिनों में कैसी परिस्थिति पैदा हो सकती है, इसका अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं है।

इस संकट की व्यापकता की अनदेखी करते हुए ट्रंप जिस तरह जंग की आग को और भड़काने वाले बयान देते हैं, उससे यही लगता है कि शायद समस्या का हल निकालने और शांति कायम करने में उनकी कोई रुचि नहीं है। यह ध्यान रखने की जरूरत है कि युद्ध भले ही अमेरिका-इजराइल और ईरान के बीच हो रहा हो, लेकिन उसकी मार कई देशों को झेलनी पड़ रही है। जबकि यह भी तय है कि समस्या का हल आखिर संवाद के जरिए ही निकलना है।

अमेरिका के रक्षा मंत्री पीट हेगसेथ ने